UNIVERSAL
LIBRARY

OU_186523

UNIVERSAL
LIBRARY

आपका मुन्ना

[बाल-मनोविज्ञान-सम्बन्धी भारतीय ग्रन्थ]

लेखिका
सावित्री देवी वर्मा

प्रस्तावना-लेखिका
राजकुमारी अमृत कौर
स्वास्थ्य-मन्त्री, केन्द्रीय सरकार
नई दिल्ली

द्वितीय भाग
बच्चों की समस्याएँ

१९५३
आत्माराम एण्ड संस
प्रकाशक तथा पुस्तक-विक्रेता
काश्मीरी गेट
दिल्ली ६
मूल्य पाँच रुपये

प्रकाशक
रामलाल पुरी
आत्माराम एण्ड संस
काश्मीरी गेट, दिल्ली ६

आपका मुन्ना

प्रथम भाग

बच्चों का पालन-पोषण

तृतीय भाग

बच्चों का शिक्षण

आत्माराम एण्ड संस, दिल्ली ६

मुद्रक
अमरजीतसिंह नलवा
सागर प्रेस
काश्मीरी गेट, दिल्ली ६

विषय-सूचि

अध्याय		पृष्ठ
१.	बड़ों की भूल	१
२.	अनुकूल वातावरण	७
३.	समस्या-पूर्ण बच्चे	२०
४.	कुछ अन्य परेशानियां	२७
५.	हर काम का सही ढंग	३३
६.	स्वास्थ्य की रक्षा	४१
७.	मुन्ना रोता है	५२
८	भयभीत बच्चा	५८
९.	मुन्ना गुस्से में है	६७
१०.	कुछ अन्य मनोवेग	७३
११.	प्रश्नों की झड़ी	७९
१२.	सहयोगी मुन्ना	८५
१३.	आज्ञाकारी मुन्ना	९६
१४.	अनुकरण-प्रवृत्ति	१०६
१५.	व्यक्तित्व का आधार	११३
१६.	व्यक्तित्व का विकास	११७
१७.	संगी-साथी	१२१
१८.	सामाजिक जीवन	१३०
१९.	खेलने की प्रवृत्ति	१३८
२०.	मुन्ना के खेल-खिलौने	१४६
२१.	पढ़ाई के प्रति रुचि	१५५
२२.	बच्चों से बातचीत	१६३
२३.	बेचारे मुन्ना-मुन्नी !	१७२
२४.	नियमों की पाबंदी	१८३
२५.	रूप क्या अभिशाप भी है ?	१९२
२६.	प्रेम और मोह	१९८

२७.	मुन्ना और मुन्नी में भेद क्यों ?	२०९
२८.	अधिक दुलारा बच्चा	२१५
२९.	असामाजिक दृष्टिकोण	२२३
३०.	अधिकार तथा सम्मान की रक्षा	२२९
३१.	बड़ों का अनावश्यक सहयोग	२३९
३२.	उपयोगिता और आत्मनिर्भरता	२५१
३३.	बच्चों में बुरी आदतें क्यों ?	२५८
३४.	सद्गुणों का विकास	२६९

प्रस्तावना

बच्चों की देख-रेख और विकास पर सरल भाषा में यह विस्तृत पुस्तक प्रस्तुत करने के लिए श्रीमती सावित्री देवी वर्मा बधाई की पात्र हैं। उन्होंने भारतीय परिस्थितियों पर विशेष ज़ोर देकर ठीक ही किया है और अपने कथनों की पुष्टि में नित्य-प्रति के जीवन से उदाहरण रखे हैं।

मैं महसूस करती हूँ कि यह पुस्तक बच्चों के पालन-पोषण में अभिभावकों की अनेक कठिनाइयों को हल करने में तथा बहुत सी माताओं को शिशु-पालन-सम्बन्धी सही जानकारी कराने में विशेष उपयोगी सिद्ध होगी।

अमृत कौर

स्वास्थ्य-मन्त्री,
केन्द्रीय सरकार

नई दिल्ली
२५-१०-५२

भूमिका

हमारे देश में अधिकांश घरो में बच्चों के पालन-पोषण का स्तर बहुत निम्न कोटि का है। इसके लिए माता-पिता की आर्थिक कठिनाइयाँ इतनी दोषी नहीं हैं जितनी कि बच्चों के प्रति माता-पिता की उपेक्षा, उनके प्रति अपने कर्तव्य की अज्ञानता तथा बाल-विज्ञान से अनभिज्ञता। बच्चे का जन्म उनके लिए एक अकस्मात् घटना है, मानो इसमे उनका कुछ हाथ ही नही है। वह उनके लिए एक पवित्र धरोहर न होकर ईश्वर की ओर से भेजा हुआ एक खिलौनामात्र है, जिससे वे अपने ढंग से खेल सकते है। ऐसे माता-पिता द्वारा पाले गये बच्चो की वही दुर्दशा होती है जैसी कि एक कार की किसी अनाडी ड्राइवर के हाथ में पड़कर। वह स्वय को दोष न देकर कार के पुर्जों को अपने ढंग से कसता और ढीला करता है और जब कार थोड़ी दूर चलकर फिर रुक जाती है तो वह उसे एक मुसीबत समझकर किसी प्रकार ढकेलता हुआ ले जाने को लाचार होता है।

अधिकाश स्त्रियाँ शारीरिक और मानसिक रूप से इस गौरवशील भार को संभालने में असमर्थ और अयोग्य होती हैं कि वे माँ बन जाती है। ऐसी स्थिति में उनके लिए शिशु-पालन का कार्य एक आनन्द का हेतु न होकर गले पड़ा ढोल बन जाता है। फलस्वरूप बच्चे की शारीरिक और मानसिक शक्तियो का विकास सुचारू रूप से नहीं हो पाता। पौधा पनपने से पहले ही अपने थाले में ही मुरझा जाता है या फिर उसकी शक्तियाँ बहुमुखी होकर विकसित नहीं हो पाती। उदाहरणार्थ यहाँ के अशिक्षित धनी वर्ग के बच्चों अथवा सोसायटी की तितली कहलानेवालियों के 'डार्लिंग बेबी' को देखिए। एक ओर जहाँ ऐसे सेठ-महाजनों के बच्चे केवल सहजबुद्धि और परम्परागत रीति-रिवाजो के अनुसार ही पाले जाते हैं तथा माताओं के आलस्य और मोहवश वे हर तरह से एक समस्या बने हुए हैं, वहाँ दूसरी ओर इससे विपरीत तितली माताओं के बच्चे आया और नौकरों की बेपरवाही या अनावश्यक रोक-टोक के कारण, स्वाभाविक सुविधाओं से वंचित, जन्म ही से डॉक्टरों के मरीज बने हुए हैं।

बच्चों के विकास के लिए ये दोनों ही प्रकार की परिस्थितियाँ हानिकारक और अप्राकृतिक हैं।

पशुओं और पक्षियों के बच्चों का पालन-पोषण मनुष्य के बच्चों से कहीं अधिक प्राकृतिक ढंग से होता है। यही कारण है कि उनके बच्चों में अपनी जाति के स्वाभाविक गुण और संस्कार स्वस्थ रूप से चले आ रहे हैं। परन्तु मनुष्य का बच्चा

अपने माता-पिता के आडम्बर, आलस्य, स्वार्थ तथा अज्ञान का शिकार बन जाता है। बहुत कम माता-पिता बच्चे की शक्ति, रुचि और योग्यता का अध्ययन करके उसके अनुरूप प्रेरणा देने और वातावरण पैदा करने की चेष्टा करते है। अधिकांश व्यक्ति अपने बच्चों को अपनी सुविधा, रुचि तथा ज़रूरत के अनुसार ढालने का प्रयत्न करते है। यही कारण है कि उनके बच्चे प्रतिक्रियावादी बन जाते हैं।

माता-पिता को यह बात नही भूल जानी चाहिए कि जिस प्रकार क्यारी का प्रत्येक पौधा विकास सम्बन्धी अपनी विशेषता रखता है, उसी प्रकार प्रत्येक बच्चा अपनी शारीरिक और मानसिक शक्ति मे एक दूसरे से भिन्न हो सकता है। यही कारण है कि कोई विशेष वस्तु या तरीका किसी बच्चे को मफ़िक बैठ जाता है और किसी को नही। कोई बच्चा जल्द दाँत निकाल लेता है, छ. महीने की आयु मे बैठने लगता है, साल भर की आयु में चलने लगता है और जल्द ही बोलना भी सीख जाता है, जब कि कई बच्चे इन कामो को ज़रा देर से करते है, पर केवल इन्ही बातो पर किसी बच्चे को स्वस्थ और तेज़ अथवा उससे विपरीत समझना उचित नही है।

बच्चे का ढाँचा, पाचन-शक्ति, घर का वातावरण तथा खानदानी गुण-दोषो का भी बच्चे के विकास पर काफी प्रभाव पड़ता है। माता-पिता को चाहिए कि वे बच्चे की व्यक्तिगत विशेषताओ का ध्यान रखकर उसका पालन-पोषण करे। हाँ, स्वास्थ्य तथा सफ़ाई सम्बन्धी कुछ नियम और बच्चे की आवश्यक ज़रूरतो का ध्यान तो हर सूरत में रखना ही होगा।

प्रेम, प्रोत्साहन, सम्मान तथा सुरक्षा की गारटी—इन बातों की आवश्यकता बड़ों से भी अधिक बच्चों को है। एक अनचाहा और उपेक्षित बच्चा, सहज ही एक रोगी और समस्यापूर्ण बच्चा बन जाता है। प्रतिकूल वातावरण के कारण कई होनहार बच्चों की शक्तियाँ कुठित या गुमराह हो जाती है, जब कि कई दुर्बल और अस्वाभाविक बच्चे भी अनुकूल वातावरण में पनप जाते हैं। यह अनुकूल वातावरण पैदा करना ही माता-पिता का काम है। बच्चों को हर समय नकारात्मक नियमों से जकड़बन्द करना उचित नही है, बड़ों के उदाहरण ही ऐसे होने चाहिएँ कि उन्हें यथा-समय ठीक ढंग से काम करने की प्रेरणा मिलती रहे। बच्चे का घर में रहना बड़ों के लिए एक चेतावनी है। मानों वह पुकारकर कहता है—'देखो, सँभलकर रहना, तुम्हारी हरकतों का मैं आइना हूँ, जैसा तुम करोगे मुझे भी वैसा ही करता पाओगे।'

बच्चे के विकास में पिता भी बहुत बड़ा पार्ट अदा करता है। पिता के द्वारा दी गई प्रेरणा, सुझाव और सहयोग बच्चे के लिए बहुत महत्त्वपूर्ण है। माताओं की भूल के कारण अधिकांश पिता बच्चे के लिए एक डाँटने और सज़ा देने वाले दरोगा-मात्र बनकर रह जाते हैं। ऐसी भूल करके माताएँ अपना महत्त्व भी कम करती हैं।

बहुत कम घरों में सहयोग से काम होता है। अगर माता-पिता दोनों में से एक शासक है और दूसरा शासित अथवा दोनो मे प्रायः मतभेद रहता है, तो इसका बच्चे पर बड़ा बुरा प्रभाव पड़ता है। दोअमली राज्य में भला कौन प्रजा सुखी हुई है ? बच्चे की समझ में नही आता कि किसकी बात ठीक समझूं और किसकी गलत। फलस्वरूप वह मनमौजी ढग से व्यवहार करने लगता है।

इसलिए विवाह करने से पहले प्रत्येक युवक और युवती के लिए यह आवश्यक है कि वे माता-पिता के कर्तव्यों को समझे, बच्चों का पालन-पोषण, बच्चो की समस्याएँ तथा बच्चो का शिक्षण इन तीन मुख्य विषयो की उन्हे अच्छी जानकारी होनी चाहिए, ताकि आगे जाकर जब उनके अपने बच्चे हो, तो वे संतोषजनक ढंग से उनका पालन-पोषण कर अपने गृहस्थ-जीवन को सुखद और सफल बना सकें। अब युग का यह तकाज़ा है कि कोई भी स्त्री अनचाहे बच्चे की माँ बनने की गलती न करे। माँ-बाप बच्चे के न केवल शरीर के ही अपितु उसके चरित्र के भी निर्माता है। इस दृष्टि से मातृ-विज्ञान की शिक्षा प्रत्येक व्यक्ति के लिए आवश्यक होनी चाहिए।

बच्चो के संग तो प्रत्येक व्यक्ति का सम्पर्क प्रायः रहता ही है। घरों में, स्कूलो मे, मौहल्ले-टोलो मे—सभी जगह बच्चो से वास्ता पडता है। बच्चो के सम्पर्क मे आने वाले व्यक्ति ही उनको अपने उदाहरण और बातचीत तथा व्यवहार से प्रभावित करते है। जिन व्यक्तियो का बच्चो पर प्रभाव पडता है, अगर वे बाल-मनोविज्ञान से अपरिचित है, तो सभव है कि वे बच्चो को अपनी हरकतो से गुमराह कर दे, फिर चाहे यह प्रभाव परोक्ष रूप से पडता हो, चाहे प्रत्यक्ष रूप से। इस व्यापक दृष्टि से तो प्रत्येक व्यक्ति के लिए बाल-मनोविज्ञान की जानकारी रखनी आवश्यक है। अगर स्कूलो मे इस विषय की शिक्षा अनिवार्य कर दी जाय, तो बड़े होकर ये ही विद्यार्थी और विद्यार्थिनें अपने सम्पर्क मे आने वाले बच्चों को सही ढंग से समझने की चेष्टा करेगी और उनका अनुभव दिन-प्रति-दिन बढता ही जायगा। उनके लिए बच्चे जी का जजाल न होकर, एक खुली रोचक पुस्तक होगे, जिसे अध्ययन करने तथा समझने को वे सर्वदा उत्सुक रहेगे।

मैने इस पुस्तक को तीन भागों मे विभाजित किया है। प्रथम भाग में बच्चों के पालन-पोषण सम्बन्धी सुझाव दिए है। बच्चे के माता के गर्भ में आने से लेकर तीन-चार वर्ष की आयु तक उसकी सभी मुख्य बातो पर प्रकाश डाला गया है। पालने से लेकर नर्सरी तक की अनेक समस्याओ को सुलझाने की चेष्टा की गई है।

द्वितीय भाग में बच्चों की विकास सम्बन्धी अनेक समस्याओं पर विवेचन किया है। बड़ों की भूल, अनुकूल वातवरण की आवश्यकता, हर काम का सही ढंग,

स्वास्थ्य की रक्षा, बच्चों की अच्छी-बुरी आदतें, उनकी वृत्ति, शक्ति तथा गति का विकास, उनके सगी-साथी, खेलने की प्रवृत्ति, खेल-खिलौने, लाड़-प्यार, उनके मनोवेग, उनकी सामाजिक और असामाजिक भावनाएँ, सद्‌गुणों का विकास, उनके अधिकार, बडों का सहयोग, बच्चो से बातचीत आदि पर सुझाव दिये हैं।

तृतीय भाग मे बच्चे की बुद्धि और चरित्र-विकास पर प्रकाश डाला है। स्कूल भेजने से पूर्व किन-किन बातो का ध्यान रखा जाय ? शिक्षण को रोचक कैसे बनाया जाय ? सिखाते समय किन बातो का ध्यान रखा जाय ? प्रथम गुरू—माँ-बाप का क्या कर्तव्य है ? बालको और अध्यापको की आम शिकायते तथा इनको सहयोग द्वारा कैसे दूर किया जाय ? सहशिक्षा, धार्मिक शिक्षा, छुट्टियाँ आदि कैसी और कब हो ? शिक्षा का ध्येय और उसकी सार्थकता की परख, बच्चे की समझ का विकास, खेल-विधि से शिक्षण और शिक्षण-विधि के मूल सिद्धान्तो पर भी अपने विचार प्रकट किये है।

अपने दस वर्ष के अध्यापन-जीवन में मुझे बच्चों की शिक्षा सम्बन्धी अनेक समस्याओ को समझने और सुलझाने का अवसर मिला है। पालकों और अध्यापको के असहयोग से बच्चे की कितनी हानि होती है, इसे जब तक पालक और अध्यापक नही समझेंगे, बच्चो की शिक्षा सुचारू रूप से नही हो सकती। बच्चे को केवल स्कूल भेज देने से ही पालको का कर्तव्य समाप्त नही हो जाता। बच्चे की रुझान, उसकी अड़चनें तथा असुविधाओं को समझने की योग्यता प्रत्येक माँ-बाप में होनी चाहिए। अन्यथा वे अध्यापक को सहयोग नही दे सकते। अनेक पालको की यह शिकायत है कि हमारा बच्चा वैसे तो बड़ा तेज़ है पर पढ़ने में उसका मन नहीं लगता। उन पालकों से मेरा यही कहना है कि उन्होंने अपने बच्चे पर पढ़ाई लादी हुई है, उसे मार-मारकर, डरा-डराकर पढ़ने और स्कूल जाने के लिए बाध्य किया हुआ है। बहुत कम माता-पिता बच्चे की पढ़ाई की ओर रुचि जाग्रत करने की चेष्टा करते है। फलस्वरूप पढ़ाई की ओर उनका आकर्षण ही नही हो पाता।

अधिकांश घरों में बच्चों की अनसुलझाई हुई समस्याएँ, पारिवारिक सुख-शांति को नष्ट कर देती है। माँ-बाप में परस्पर गलतफ़हमी पैदा हो जाती है। वे एक दूसरे को दोष देकर खुद बरी होना चाहते हैं। बच्चे शारीरिक और मानसिक रूप से प्रायः स्वस्थ ही जन्मते हैं। पर माँ-बाप की भूलें, बेपरवाही, अत्यधिक लाड़-प्यार तथा अधीरता उन्हें बिगाड़ देती है। वे समस्यापूर्ण बन जाते हैं। वास्तव में समस्यापूर्ण माँ-बाप के बच्चे ही समस्यापूर्ण होते हैं।

केवल धन ही पारिवारिक जीवन को सुखी नहीं बनाता। असल में धन है—सुसन्तान। आप कल्पना करें किसी धनी माँ-बाप की परेशानियों की, जो कि अपने

कपूतों के कारण चिन्ता-सागर में गोते खाते रहते हैं। अच्छे बच्चे घर के रत्न हैं। पर उन रत्नों को गढ़ने और बनाने का श्रेय माता-पिता रूपी जौहरी को ही दिया जाता है। बच्चों के प्रति अपने कर्तव्यों को समझने पर प्रत्येक माता-पिता अपने इन रत्नों की अधिक-से-अधिक सँभाल और परख करना सीख जायँगे। आदर्श बच्चे कोई कल्पना की चीज़ नहीं है। प्रयत्न से सभी बच्चे नेक और अच्छे बन सकते है।

आशा है कि 'आपका मुन्ना' के ये तीनों भाग माता-पिता, गुरू तथा शिशु-विज्ञान के पाठकों की बच्चों सम्बन्धी अधिकांश समस्याओ को हल करने में सफल होंगे।

भोजन के विषय में मैंने अनेक फ़ारमूले और चार्ट इसलिए नही दिए है कि दूध के डिब्बों पर जो फॉरमूले दिए होते हैं वे हमारे यहाँ के बच्चों के अनुकूल नही होते। प्रत्येक माता को अपने-अपने बच्चे की पाचन-शक्ति, पारिवारिक सुविधाएँ और आर्थिक सामर्थ्य के अनुसार ही उसकी आवश्यकताओ को ठीक से पूरा करने की यथाशक्ति चेष्टा करनी चाहिए। इस विषय में सहजबुद्धि और विज्ञान का सुन्दर सम्मिश्रण वांच्छनीय है।

अगर बाल्यकाल में बच्चे को माँ का दूध प्राप्य है तब तो माँ के लिए केवल इतना करना बाकी रह जाता है कि वह स्वय सहज पचने वाला और बलदायक भोजन करे, ताकि उसके स्तनों में पर्याप्त दूध उतरता रहे, और उसमे पौष्टिक तत्त्व बने रहें। जब बच्चा पाँच-छः महीने का हो जाय तो उसे शनैः-शनैः ज़रा सा दलिए का पानी, फलों का रस, उबली हुई भाजी या अंडा उसकी पाचन-शक्ति और रुचि का ध्यान रखकर दिया जाय। नियमित दिनचर्या और खुराक में शनैः-शनैः परिवर्तन, इन दोनों बातों का भी ध्यान रखना ज़रूरी है।

प्रत्येक भाग में मैंने अपने कथन की पुष्टि में जो उदाहरण दिए है वे नित्यप्रति के जीवन से ही लिए हैं। मैंने बच्चों और माता-पिता तथा गुरुओं से अधिक-से-अधिक सम्पर्क बढ़ाकर उनकी समस्यायो को समझने की चेष्टा की है और उनको सुलझाने में जिन तरीकों से सफलता हुई, उन तरीकों को भी यहाँ उद्धृत किया है।

बच्चों के आम रोगों में जो घरेलू दवाइयाँ या उपचार सफल रहें, उनका उल्लेख भी यथास्थान किया गया है। हो सकता है कि मेरी कुछ बहनें या डॉक्टर भाई मेरे इन उपचारों से सहमत न हों, पर ये सुझाव अनुभव पर आधारित हैं, और उन्हें सफल रूप से कार्यान्वित करने में मुझे अपने पति डॉक्टर वर्मा का भी पर्याप्त सहयोग प्राप्त हुआ है।

मैंने नर्सरी तथा आया और खान-पान सम्बन्धी ऐसे आडम्बरपूर्ण सुझाव जिन को कार्यरूप में लाना केवल धनिकों के लिए ही संभव है, जान-बूझकर नहीं

दिए है । यह पुस्तक ही मध्यवर्ग और निम्न मध्यवर्ग के बच्चों की विकास सम्बन्धी समस्याओं को सुलझाने के दृष्टिकोण से लिखी गई है । इसलिए इस बात का पूर्ण ध्यान रखा गया है कि प्राप्य सुविधाओ को चेष्टा करके, वैज्ञानिक ढंग से बच्चों के अनुकूल बनाना माता-पिता के लिए अधिक-से-अधिक संभव हो सके, ताकि मुन्ना-मुन्नी का पालन-पोषण और शिक्षण सन्तोषजनक ढग से हो और वे घर तथा समाज के उपयोगी अंग प्रमाणित हो सकें ।

इस पुस्तक में बच्चे के स्थान पर अधिकाश स्थल पर मुन्ना शब्द का ही प्रयोग हुआ है । जिस प्रकार बच्चा शब्द से बच्चा और बच्ची दोनो का बोध होता है, उसी अभिप्राय से मैने सब स्थलो पर मुन्ना-मुन्नी न लिखकर, सुविधा के लिए केवल मुन्ना ही लिखा है । पर बीच-बीच मे मुन्ना-मुन्नी शब्द का भी प्रयोग किया है। मुन्नी शब्द का उल्लेख कम हुआ है, इससे यह मतलब नही है कि मुन्नी की समस्याएँ मुन्ने की समस्याओ से भिन्न है ।

मै माननीया स्वास्थ्य-मन्त्री श्री राजकुमारी अमृत कौर को धन्यवाद देती हूँ, जिन्होंने 'आपका मुन्ना' को अपने आशीर्वाद से अनुगृहीत किया है । उनकी सक्षिप्त पर सुन्दर प्रस्तावना ऐसी है, मानो गागर में सागर भर दिया हो ।

मैं अपनी उन बहनो की भी बहुत अनुगृहीत हूँ जिन्होंने समय-समय पर अपने बच्चों की समस्याओ को सुलझाने की चेष्टा की और मेरे सहयोग की सराहना करते हुए, इस पुस्तक को लिखने की प्रेरणा दी। साथ ही उन विद्वानों की भी मैं कृतज्ञ हूँ जिनके उद्धरणों से मैने इस पुस्तक को सजाया है और अन्त में मै अपनी स्वर्गीय जननी के प्रति अपनी श्रद्धांजलि भेंट करती हूँ, जिन्होने मुझे बचपन में ही 'सफल मातृत्व मे ही प्रत्येक स्त्री के जीवन की सार्थकता है'—यह आदर्श पाठ पढ़ाया ।

पुस्तक में अगर कहीं पर प्रेस की असावधानी से कुछ भूलें रह गई हो तो विज्ञ पाठक-पाठिकाएँ उन्हें कृपया सुधारकर पढ़ें ।

१४, फैंज बाजार, दिल्ली
बैसाखी, संवत् २०१०

—सावित्री देवी वर्मा

आपका मुन्ना

पहला अध्याय

बड़ों की भूल

अशान्ति का मूल—आये दिन देश में दंगे, समाज में उच्छृङ्खलता, स्कूल और विद्यालयों में विद्यार्थियों की उद्दण्डता तथा पारिवारिक जीवन में जो कलह बढ़ रही है, उन सब के मूल में हैं बच्चों की अनसुलझाई छोड़ी हुई समस्याएँ। मनोवैज्ञानिकों का कहना है कि मनुष्य की शारीरिक और मानसिक सभी व्याधियों का सम्बन्ध



बचपन की घटनाओं से होता है। बचपन के प्रारम्भिक पाँच वर्षों में बच्चों के चरित्र की जो नींव पड़ती है, उसकी छाप आगे जाकर जीवन भर उनके चरित्र पर बनी रहती है। अगर घर के प्रतिकूल वातावरण के कारण मुन्ना असहनशील और स्वार्थी बन गया है, तो इसका कटु अनुभव मुन्ना के संगी-साथियों, पत्नी तथा मुन्ना के बच्चों तक को होगा। इसके विपरीत अगर मुन्ना अपने माँ-बाप को परस्पर सहयोग, प्रेम और समझदारी से अपनी गृहस्थी चलाते, कठिनाइयों को मिलकर सुलझाते, साथ ही अच्छे पड़ौसी और नागरिक के कर्तव्य निभाते देखता है, तो वह स्वयं भी अपने संगी-साथियों, पत्नी तथा बच्चों के प्रति कर्तव्य-परायण और सहनशील बनेगा।

इन सब बातों को समझते हुए माता-पिता और गुरु का यह कर्तव्य है कि

बच्चों को ऐसी शिक्षा दें, उनके प्रति ऐसा व्यवहार करें और ऐसे उदाहरण पेश करें कि उनका भविष्य-जीवन सफल और सुखद बन सके।

बड़ों की असहनशीलता—बच्चों पर जब तक वे छोटे हैं, माता के चरित्र का बहुत प्रभाव पड़ता है। संसार में जितने महापुरुष हुए हैं, उनके जीवन-चरित्रों से इस बात की पुष्टि होती है कि उनकी माताओं ने बचपन में उनको स्फूर्ति और प्रेरणा दी तथा उन्हें आदर्शवादी बनाया। अधिकांश माताएँ यह समझती हैं कि बच्चे को नहला-धुलाकर खिला-पिला देना, या बीमारी में उसकी सेवा करना, अथवा किसी पड़ौसी के आक्षेप करने पर (चाहे इसमें उनके बच्चे का कसूर ही क्यों न हो) उससे लड़-कर अपने बच्चे को सही प्रमाणित करने की चेष्टा करना, उनके लिए धन जोड़ना, तथा बड़े होने पर उनका विवाह कर देना, बस इसी प्रकार के कुछ अन्य फर्ज पूरे करना ही उनका काम है। उनके चरित्र-निर्माण में आमतौर पर माताएँ कुछ भी दिलचस्पी नहीं लेतीं। आरम्भ में अधिक लाड-दुलार तथा पक्षपात से जब उनके बच्चे बिगड़कर जिद्दी, रोंदू, मुँहफट, बदमिज़ाज तथा उद्दण्ड बन जाते हैं, तो वे उसे बाल-लीला समझकर टालने की चेष्टा करती हैं। बड़े होकर यही बच्चे माँ-बाप का अपमान करते हैं, तब आजकल की पढ़ाई, जमाने की हवा तथा नई सभ्यता को कोसा जाता है, या फिर बहू के सिर बुराई धर दी जाती है।

कई बार ऐसा देखने में आया है कि बचपन में बाप की डाँट-डपट से डरकर और माँ के अनुरोध से पिघलकर, बच्चा बिल्कुल दबा-सा रहता है। जैसे-जैसे वह बड़ा होता है, अपने संगी-साथियों तथा अन्य सम्बन्धी नवयुवकों की देखा-देखी वह भी आत्म-निर्भर होकर कुछ स्वतंत्रता प्राप्त करने और अपने दृष्टिकोण को प्रगट करने के लिए उतावला हो उठता है। पर डिक्टेटर पिता को उसका यह रुख असहनीय हो जाता है, वह उसकी पढ़ाई का खर्चा बंद कर देने की धमकी देता है तथा माता की ओर से भी बच्चे पर दबाव डलवाता है। ऐसे बच्चे माँ के रोने-धोने से पिघलकर, और बाप की नाराज़गी से डरकर दब्बू बने रहने में ही अपनी कुशल समझते हैं। विवाह के पश्चात् इनकी स्त्री को भी दब्बूपन का अभिनय करना पड़ता है। इसी पराधीन वातावरण में इनके बच्चे भी होते हैं, वे भी अपने माँ-बाप को लाचार-सा पाते हैं, उन में से कुछ उन्हीं के सदृश्य दब्बू बनकर अविकसित रह जाते हैं। कभी-कभी ऐसा भी होता है कि अपने इस दब्बूपन में बच्चों के असहयोग तथा स्त्री के प्रतिरोध करने पर बाप का पुरुषत्व चोट खाकर प्रतिक्रियावादी हो जाता है, और वह बहुत बुरी तरह से अपने माँ-बाप की उपेक्षा करने लगता है। यही कारण है कि आजकल बहुत से माँ-बाप अपने सीधे-सादे दब्बू मुन्ने को विवाह के पश्चात् प्रतिक्रियावादी पाते हैं पर इस बात का सारा दोष बहू पर थोप दिया जाता है।

अगर बचपन में ऐसे नेक बच्चों के प्रति समझदारी से व्यवहार किया जाय, बाप की डिक्टेटरशिप और माँ की लाचारी से दबाकर अगर उनका व्यक्तित्व कुचलने न दिया जाय, तो ऐसे बच्चे बड़े होकर माँ-बाप के सच्चे सहयोगी और मददगार प्रमाणित हो सकते है।

गुटबंदी का बुरा प्रभाव—अधिकांश घरों में एक प्रकार की गुटबन्दी देखने को मिलती है। बच्चे देखते है कि हमारी माँ बाप से बहुत सी बाते छिपाती है, उनसे छिपाकर घर मे चीजें आती है, हिसाब-किताब बढ़ा-चढ़ा कर बताया जाता है, और इस प्रकार से जो धन बचाया जाता है उसे माँ बाप से चोरी-छुपे खर्च करती है। बाप अगर चार दिन के लिए बाहर चला जाय तो माँ अपने पीहरवालों को बुलवा भेजती है। सिनेमा-तमाशे तथा शापिंग जाने का प्रोग्राम भी बाप की अनुपस्थिति में ही बनता है और इस बात मे बच्चे का भी सहयोग लिया जाता है। अगर छोटे मुन्ने को इस स्थिति से पूरा लाभ न हुआ, तो वह चिढ़कर पिताजी से सारी पोल खोल देता है। उस समय घर में जो कलह मचती है, उसका पूरा-पूरा कारण नासमझ मुन्ने की समझ मे नहीं आता, पर वह इतना तो समझ ही जाता है कि माँ ने कोई अपराध किया है। भविष्य में माँ मुन्ना-मुन्नी को अधिक फुसलाने की चेष्टा करती है और उन्हें भी बहानेबाजी करने का पाठ रटाया जाता है। इस प्रकार मुन्ना-मुन्नी प्रपंची और बहाने-बाज बन जाते है।

इसके अतिरिक्त कई जगह स्थिति ऐसी भी होती है कि गृहिणी की घर मे अधिक चलती है। अधीन सम्बन्धियों के बच्चे उसकी आलोचना और ईर्ष्या के पात्र बनते है। बहू या देवरानी से बदला लेने के लिए वह अपने बच्चो से मदद लेती है। ये छोटे मुन्ना-मुन्नी घरों मे सी० आई० डी० का काम करने के लिए प्रेरणा पाते है—भैय्या से भाभी ने क्या बात की ? भाभी ने कहाँ चिट्ठी लिखी ? किसके साथ घूमने गई ? बाहर जाकर क्या खाया ? क्या खरीदा ? चाची ने अपने बच्चों को क्या दिया ? चाचा ने क्या कहा ? आदि खबरें लाने का काम इन्हीं बच्चों का होता है। कुसंस्कारों से ये बच्चे इतने झूठे और बदतमीज बन जाते है कि बड़ों-बड़ों की इज्जत धूल में मिला देते है। चुगलखोरी, बात का बतंगड़ बनाना, ईर्ष्या, द्वेष, घृणा, ठगबाजी, झूँठ, मक्कारी, मुँहजोरी आदि की शिक्षा इन्हें अनजाने मे माता से ही मिलती रहती है। परन्तु तारीफ यह है कि अधिकांश माताएँ इस कटु सत्य को स्वीकार करना नहीं चाहतीं।

बड़ों की बातचीत—स्त्रियाँ एक मूर्खता और करती है, जहाँ चार मिलकर बैठीं कि घर के झगड़े, परिजनों की आलोचना, गोपनीय बातों की चर्चा, और गंदे हास-परिहास वे छोटे-छोटे बच्चों के सामने ही करने लगती है। फलस्वरूप छोटी उम्र

में ही बच्चों को बड़ों की बहुत सी पोल तथा 'सेक्स' विषयक बातों का पता चल जाता है। उत्सुकतावश वह कच्ची उम्र में ही परस्पर उसकी चर्चा करते हैं और ऐसे भी प्रमाण मिलते हैं कि वे क्रिया रूप में भी उसका अनुभव प्राप्त करने को उत्सुक रहते हैं। अपरिपक्व आयु में 'सेक्स' उत्सुकता को जाग्रत करने का दोष भी माता-पिता को ही है। मुन्ना-मुन्नी को नासमझ जानकर उनकी उपस्थिति में अशिष्ट हरकतें कभी भूलकर भी नहीं करनी चाहिएँ। प्रेम की उच्चता और पवित्रता का अनुभव बच्चों को माँ-बाप के व्यवहारों से ही होता है। बच्चा बड़ों के व्यवहार को चाहे पूर्ण रूप से समझ न सकता हो, परन्तु इतना वह जरूर ताड़ जाता है कि अमुक व्यवहार बुरा है और उससे छिपाने की चेष्टा की जा रही है। बड़े होकर बाल्यकाल की वह स्मृति फिर ताजी हो जाती है और तब बच्चा अपने बड़ों की हरकतों की व्याख्या करके, उन्हें निकृष्ट समझने लगता है।

बच्चों से इस प्रकार के प्रश्न भी नहीं पूछने चाहिएँ जिससे उनकी सेक्स-सम्बन्धी उत्सुकता जागे, यथा—'तुम कहाँ सोते हो ?' 'तुम्हारी माँ कहाँ सोती है ?' 'तुम्हारे पिताजी तुम्हें प्यार करते हैं, और किसको करते हैं ?' काफी उम्र तक बच्चे पति-पत्नी सम्बन्ध को नहीं समझते। वे जब किसी परिचित स्त्री-पुरुष को देखते हैं, उन्हें या तो वे अपने मित्र के डैडी-ममी या अंकल-आंटी समझते हैं या फिर उनका परिचय देते हुए यो भी कह देते हैं—छोटी चाची के चाचा जी, बड़ी जीजी के जीजा जी, मझले मामा की मामी जी।

एक बार मेरी छोटी लड़की बोली, 'माँ आपके पीछे कोई मिलने आये थे।' नाम पूछने पर उसने बताया, 'एक थी ममी, एक थे डैडी और साथ में था एक प्यारा सा बेबी।' इस से अधिक परिचय प्राप्त करने की उसने आवश्यकता ही नहीं समझी।

पक्षपातपूर्ण व्यवहार का बुरा परिणाम—कभी-कभी व्यक्तिगत लाभ के लिए भी बड़े, बच्चों के चरित्र का खून कर देते हैं। किसी से बदला लेने के लिए, या किसी को बुरा-भला कहलाने के लिए माँ या बड़े बहन-भाई मुन्ना-मुन्नी को अपना गवाह बनाकर अपनी बात को पुष्ट करने का पाठ रटा देते हैं। ऐसे तमाशे पब्लिक-गार्डन में आम देखने को मिल जाते हैं।

एक बार एक सेठ जी का बच्चा महेन्द्र, आंख-मिचौनी खेलते समय ग्राउंड के आस-पास खिंची हुई तार में से निकलकर भागने लगा, तार से उसकी जंघा में लम्बी-सी खरोंच आ गई। दूसरे दिन जब सब बच्चे खेल के लिए इकट्ठे हुए तो महेन्द्र की माँ अपनी देवरानी के लड़के रामू को पकड़कर लाई और मुझ से बोली, 'बहन जी, मैं इसे मारे बिना नहीं छोड़ूंगी, इसने कल महेन्द्र की जंघा में बड़े जोर से काट

खाया था। सेठ साहब ने इसे खूब पीटा है और कहलवाया है कि आप इसे क्लब से निकाल दें।"

कान के ऐंठे जाने से रामू का मुंह लाल हो गया था, वह डरकर रो रहा था, मैंने लपककर राम् को सेठानी के चंगुल से छुड़ाया और महेन्द्र की ओर ताका। वह डरकर सहमा हुआ-सा एक बड़ी लड़की के पीछे छिपने की चेष्टा कर रहा था। मैंने उसे दम-दिलासा देकर सामने बुलाया और निकर उठाकर उसकी खरोंच सेठानी जी को दिखाते हुए कहा, "बड़े अफसोस की बात है सेठानी जी कि आपने पूरी जाँच किये बिना ही रामू को सजा दिलवाई। आपने यह तो देखा होता कि यह खरोंच है, दाँत का काटा हुआ नहीं है।"

सेठानी जी झट बात पलटकर बोलीं, "दाँत से नहीं, तो नाखून से नोचा होगा, यह रामू बड़ा पाजी है।"

जब मैंने कहा कि, "यह चोट तो कल तार से लगी है और मैंने उसी समय उस पर टिंचर भी लगा दी थी", तब वह बोली, "खैर, तार से ही सही, पर रामू ने ही धक्का दिया था।"

अब मैं महेन्द्र की ओर मुड़ी। "क्यों, महेन्द्र यह कैसी बात है ? कल तो रामू धाई बनकर खड़ा था, उसने तुम्हें किस समय धक्का दे दिया ?"

महेन्द्र ने आँखों में आँसू भरकर कहा, "माँ ने कहा था कि रामू का ही नाम लगा देना, नहीं तो तुझे पीटूंगी।"

अब तो सेठानी जी खिसियानी-सी होकर, लगीं महेन्द्र को झूठा, दगाबाज बनाने। सेठानी जी की झेंप को मिटाने के लिए मैंने कहा, "आपको बच्चों की बातों में नहीं पड़ना चाहिए, खेल-खेल में चोट लग ही जाती है। ऐसी बातों का गिला नहीं किया जाता और न ही बड़ों तक शिकायत ही करनी उचित है।"

दूसरे दिन मैंने सुना कि जब रामू और महेन्द्र हाथ में हाथ डाले घर पहुँचे तो सेठानी जी ने रामू के यह कहकर दो थप्पड़ लगाये कि, 'तेरी संगति में रहकर मेरा मुन्नू बिगड़ गया है। जिस क्लब में तेरे जैसे कमीने खेलते हों, वहाँ मैं इसे नहीं जाने दूँगी।'

क्लब में जाना बन्द होने से महेन्द्र बड़ा छटपटाया, कुछ दिन तो वह मन मार कर रह गया, फिर उसने माँ से भी एक चाल खेली; बोला, "अगर तुम मुझे क्लब में नहीं जाने दोगी, तो पिताजी से तुम्हारी रोज चोरी-चोरी चाट खाने की पोल खोल दूंगा।"

अब सेठानी जी को दबना पड़ा।

आये दिन, इस प्रकार की घटनाएँ परिवारों में होती हैं और बच्चों पर उनका

बहुत बुरा प्रभाव पड़ता है। बच्चे की चरित्र की आधार-शिला बाल्यकाल में ही रखी जाती है। बच्चों को आदर्श बनाने के लिए माता-पिता का चरित्र भी आदर्श होना चाहिए, साथ ही घर का वातावरण भी बहुत स्वस्थ और सुखद होना आवश्यक है।' पिता के द्वारा शासित और अपमानित माता या माता के द्वारा दबाया हुआ पिता, दोनो ही मुन्ना-मुन्नी के पथ-प्रदर्शक बनने मे असमर्थ है। माताएँ बच्चे को डराने के लिए भी कहती हैं—"ठहर जा, आने दे अपने पिताजी को, आज तेरी हड्डियाँ न तुड़वाईं तो कहना, तूने तो नाकों-दम किया हुआ है। ठहर, अब अगले महीने से तुझे स्कूल भेजूंगी, वहाँ गुरू जी के डंडे से तू सीधा हो जायगा।"

जो माताएँ बच्चों को इस प्रकार धमकाती है, वे अपना महत्त्व तो कम करती ही है, क्योकि मुन्ना माँ को दुर्बल समझने लगता है, साथ-ही-साथ वह मार से ही काबू मे आने का आदी हो जाता है। दूसरी बात, माँ की धमकी से पढ़ाई और स्कूल मुन्ना के लिए एक हौवा बन जायँगे, फिर भला पढ़ाई की ओर उसकी रुचि कैसे जाग्रत होगी ?

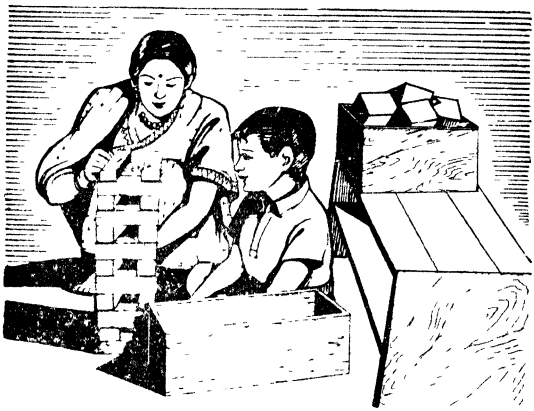
माता-पिता के अतिरिक्त अन्य परिजनो के व्यवहार का भी बच्चों पर प्रभाव पड़ता है। अगर बड़ा भाई क्रोधालु स्वभाव का है और घर में उसकी धांधली चलती है, तो छोटा मुन्ना भी वैसा ही निकलेगा। अगर बड़ी जीजी झगड़ालू और कामचोर है, तो छोटी मुन्नी मे भी वे दोष सहज ही आ जायँगे। संगी-साथियो की देखा-देखी बहानेबाजी तथा गाली-गलौज करना, झूठ बोलना, परस्पर लड़ना-झगड़ना आदि बातें मुन्ना-मुन्नी भी सीख जाते है। घर के वातावरण की छाप बच्चो पर इतनी स्पष्ट होती है कि किसी भी बच्चे को देखकर आप उसके रहन-सहन और माता-पिता के आदर्श तथा विचारो का सहज ही पता लगा सकते है।

अनेक सावधानी बरतने पर भी अगर बच्चो मे दोष रह जायँ, तो उसके कारण को खोजकर, उनकी समस्याओ को सहानुभूतिपूर्वक सुलझायें। डाँट-डपट द्वारा बच्चे की बुराई चाहे कुछ समय के लिए दब भले जाय, परन्तु उसका पूरा इलाज नही हो पाता। यही कारण है कि बड़े होकर वह फिर अधिक भयंकर रूप मे उभर आती है। बच्चे स्वयं एक खुली किताब है, आप उनमे दिलचस्पी ले, उनका विश्वास प्राप्त करें, उनकी उलझनो को सहानुभूतिपूर्वक सुने और धीरे-धीरे उन्हें सही रास्ते की ओर ले चले। उनमे लचक है, वे जल्द ही आप का अनुकरण करते हुए, सही मोड़ पर आकर मुड़ जायँगे। अगर बच्चों के मार्ग-प्रदर्शक सही रास्ते पर चल रहे है, बच्चे स्वयं उनका अनुकरण करेंगे। अगर आप अपने बच्चों से परेशान है, तो खुद को टटोलें। कहीं आप की भूल तो उन्हें गुमराह नहीं कर रही है ?

दूसरा अध्याय

अनुकूल वातावरण

मानसिक विकास की पृष्ठभूमि—बच्चे के स्वस्थ विकास के लिए, शारीरिक और मानसिक भोजन के अतिरिक्त, अनुकूल वातावरण की भी बहुत आवश्यकता है। जिस घर में दोअमली राज्य होता है, जहाँ माता-पिता में परस्पर मित्रतापूर्ण व्यवहार न होकर शासित और शासक की भावना होती है, या वे परस्पर



विरोधी विचार और आदर्श रखते हैं, जहाँ बच्चे के सम्मान, सुविधा तथा अधिकारों की उपेक्षा की जाती है, वहाँ पर बच्चे की गति, वृत्ति तथा शक्तियाँ कुंठित हो जाती हैं। वह माता-पिता के नियंत्रण से बाहर निकल जाता है। बच्चे के विकास के लिए अनुकूल वातावरण तो जन्म से पहले ही तैयार किया जाना चाहिए। अगर पति आर्थिक रूप से परिजनों पर निर्भर है, या पत्नी की शारीरिक और मानसिक अवस्था, दुर्बलता तथा पारिवारिक कलह के कारण सन्तोषजनक नहीं है, तो मुन्ना की नींव अनुकूल वातावरण में नहीं पड़ सकती।

एक उदाहरण पेश करती हूँ :—

सुशीला की जब शादी हुई उसकी आयु १६ वर्ष की थी। उसका पति उसी साल सेकिण्ड लेफ्टीनेन्ट लगा था। पति की आर्थिक स्थिति इतनी सुदृढ़ न थी कि वह पत्नी और बच्चे का खर्च सँभाल सकता, परन्तु माता-पिता के आगे उसकी एक नहीं चली और उसका विवाह कर दिया गया। सुशीला ने उसी साल थर्ड ईयर पास किया था।

उसकी बड़ी इच्छा थी कि बी० ए० पास कर लूं, पर जैसा कि ग्राम घरों में समझा जाता है कि पढ़ाई से विवाह ग्रधिक महत्त्वपूर्ण है । माँ-बाप कन्या को पढ़ाते भी केवल इसी दृष्टि से हैं कि कुछ योग्यता प्राप्त करले, ताकि इसका विवाह हो सके । यही दशा सुशीला की हुई ।

घर की वह ही सबसे बड़ी बहू थी, इस कारण यह भी ग्रावश्यक था कि वह सास-ससुर के पास रहे । इधर मोहन (सुशीला के पति) को फेमिली क्वार्टर भी नहीं मिला, ग्रतएव विवाह के कुछ दिन बाद ही वह उसे ससुराल छोड़कर चला गया । सुशीला गर्भवती थी । उसकी तबियत गिरी-गिरी-सी रहने लगी, इधर पति का वियोग भी उसे खलता था । दुर्भाग्यवश खड़ाऊं के फिसल जाने से सुशीला की सास के पाँव की हड्डी में मोच ग्रा गई, ग्रब बेचारी सुशीला पर घर का सारा काम ग्रा पड़ा । सुशीला ने घर की व्यवस्था में ग्रनेक सुधार करे, यह सब देखकर सुशीला के ससुर जी बड़े प्रसन्न हुए ग्रौर उन्होंने बहू की बड़ी प्रशंसा की । इससे सुशीला की सास ग्रौर ननदों के हृदय में बड़ी ईर्ष्या जागृत हुई ग्रौर वह सुशीला को नीचा दिखाने ग्रौर जलील करने की चेष्टा में लग गईं ।

पीहर से क्या ग्राया ? लड़के ने सुशीला को क्या उपहार भेजे ? सुशीला लड़के को पत्रों में राम जाने क्या पट्टी पढ़ाती होगी ? घर का काम नहीं करती, दिन भर मुंह लपेटे पड़ी रहती है । क्या एक इसी के बच्चा होनेवाला है ? मानों एक ग्रनोखी घटना होनेवाली है, इसके तो नखरे ही नहीं · · ग्रादि कटूक्तियों का सुशीला के मानसिक स्वास्थ्य पर बहुत बुरा प्रभाव पड़ा । वह मन-ही-मन कुढ़ने ग्रौर घुलने लगी । उसे फिट्स ग्राने लगे ।

इस वातावरण का गर्भस्थ बालक पर भी बड़ा बुरा प्रभाव पड़ा, वह समय से कुछ पूर्व ही पैदा हो गया । रोगी बालक की माता बनकर सुशीला का जीवन ग्रौर भी दुःखी हो गया ग्रौर कुछ दिनों बाद बच्चे की मृत्यु भी हो गई ।

तीन वर्ष बाद सुशीला फिर गर्भवती हुई, पर इस बार वह ग्रपने पति की नौकरी पर साथ गई हुई थी । मोहन सुशीला की मानसिक प्रसन्नता तथा शारीरिक सुविधा के लिए बहुत प्रयत्नशील रहता था, फलस्वरूप सुशीला का स्वास्थ्य निखर ग्राया । प्रसव के लिए पहले ही से व्यवस्था कर दी गई थी । यथासमय सुशीला ने एक स्वस्थ ग्रौर सुन्दर बालक को जन्म दिया । जब कि पहला प्रसव उसे बड़ा कष्टदायी प्रतीत हुग्रा था, कारण उस घर में वह स्वयं को ग्ररक्षित ग्रौर तिरस्कृत समझती थी, इस कारण बच्चे के जन्म ने उसे ग्रौर भी चिन्तित कर दिया था । वह उसको जन्म देने के लिए मानसिक रूप से तैयार नहीं थी ।

बच्चा जब गर्भ में होता है, तभी से उस पर माता के मानसिक ग्रौर शारी-

रिक स्वास्थ्य का प्रभाव पड़ने लगता है। यही कारण है कि मनोविज्ञान-वेत्ताओं का यह कहना है कि गर्भवती स्त्री की सभी इच्छाओं की पूर्ति की जाय, उसे प्रसन्न और सुखी रखा जाय, अन्यथा गर्भस्थ बालक को हानि पहुँचती है।

माता-पिता के परस्पर असहयोग का कुफल—जिस घर में माता-पिता का परस्पर व्यवहार मित्रतापूर्ण नहीं होता या वे विरोधी आदर्श तथा विचारोंवाले होते हैं, वहाँ भी बच्चों पर उसका बहुत बुरा प्रभाव पड़ता है। उपेक्षित माँ का बच्चा यह समझने लगता है कि स्त्री-जाति केवल सेवा करने तथा आज्ञा-पालन के लिए पैदा हुई है। वह अपनी माता तथा बहनों के प्रति विनयशील नहीं रहता और बड़ा होकर अपनी पत्नी पर भी शासन करने की भावना रखता है। अगर इसमें उसे विफलता मिलती है, तो वह प्रतिक्रियावादी हो उठता है, स्त्री-मात्र के प्रति वह अभद्र तथा अविनय-शील बन जाता है। यही कारण है कि आजकल कालिजों के लड़के अपनी सहपाठिनियों के प्रति इतना उद्दण्ड और अश्लील व्यवहार करते हैं। अगर ऐसे नवयुवकों ने बचपन में अपने पिता को माता के प्रति मित्रतापूर्ण व्यवहार करते देखा होता, उसकी सुवि-धाओं तथा अधिकारों के प्रति जागरूक पाया होता, तो वह भी यही समझते कि स्त्री जाति-मात्र सम्मान की अधिकारिणी है।

किसी-किसी घर में माता एक हुक्म देती है, पिता दूसरा। पिता कन्या को पढ़ते देख प्रशंसा करता है, पर माता चाहती है कि कन्या पढ़ाई छोड़कर घर के कामों में हाथ बटाये। अतएव कन्या को पढ़ते देख वह तीव्र आलोचना करती हुई कहती है—"चूल्हे में जाय तेरी पढ़ाई, क्या सारे घर के काम करने का ठेका मैंने ही लिया हुआ है? पढ़ाई-लिखाई कौन तुझे तार देगी? आगे जाकर तो मेरी ही तरह चूल्हे और चक्की से सिर फोड़ना होगा। पढ़ने का ऐसा शौक था तो लड़का होकर जन्म लेना था, औरत के नसीब तो दासता लिखी है।"

यह सुनकर मुन्नी का नन्हा-सा दिल सहम जाता है, वह शनैः-शनैः अपनी माता के कथन में सत्यता का अनुभव करने लगती है। क्योंकि वह देखती है कि घर में पिता की ही चलती है, सब सुविधाएँ उनके लिए ही हैं, वे माता का किसी काम में भी हाथ नहीं बटाते। सुख, आराम, मनोरंजन आदि की पिताजी और भैया को सुविधाएँ हैं, जबकि वह और माताजी दिन-रात चहारदीवारी में ही बंद रहती हैं।

माता चाहती है बच्चा देवोपासना करे, इसके विपरीत पिता उसके इष्टदेव की हँसी उड़ाता है। पिता चाहता है, हर एक काम समय पर हो, बच्चा समय पर खाना खाकर स्कूल जाय, सब वस्तु करीने से रखनी सीखे, और वह बच्चों को समय की पाबन्दी तथा व्यवस्था बनाए रखने का उपदेश देता है, परन्तु माता का सहयोग न मिलने के कारण बच्चे लाचार हो जाते हैं। खाना समय पर तैयार नहीं होने पर

बच्चा जब बिना खाना खाए स्कूल जाने को उद्यत होता है, तो माता कह उठती है, "अरे कुछ देर हो गई तो कौन-सा गजब हो गया ? स्कूल मे पिछवाड़े के दरवाजे से घुस जाना, खाना तो खा ले।" "छोटे भाई ने तेरी किताबे बिखेर दीं तो क्या मुसीबत आ गई ? फिर ठीक कर लेना।" इस प्रकार के विरोधी आदेश सुन-सुनकर बच्चा सोचने लगता है, किसका हुक्म माना जाय, माँ का कि बाप का ?

अंत मे वह अपनी सुविधा को प्रधानता देने लगता है और माता-पिता के आदेशो की अवहेलना करना सीख जाता है।

आदेशों मे असादृश्यता—माता-पिता के व्यवहार तथा आदेशो में अगर सादृश्यता नही होगी, तो बच्चा उनके बनाये हुए नियमो का पालन नहीं करेगा। बच्चे को आज्ञाकारी बनाने के लिए माता-पिता को परस्पर सहयोग रखना चाहिए। जो माता-पिता परस्पर लड़ते-झगड़ते रहते है या एक दूसरे के प्रति अपमानजनक व्यवहार करते है, उनके बच्चे अवश्य ही अशिष्ट बन जाते है।

बच्चो को कुछ समय बाद यह समझते देर नही लगती कि माता-पिता दोनों में कौन शासित है और कौन शासक। घर की कलह तथा दुखद वातावरण का बच्चों पर बहुत ही बुरा प्रभाव पड़ता है। वे अपने को असुरक्षित अनुभव करने लगते है। घर और समाज के प्रति उनको घृणा-सी हो जाती है। बच्चे स्वभाव से कोमल और दयालु होते है, इस कारण उनकी सहानुभूति शासित व्यक्ति की ओर होनी स्वाभाविक है। अगर किसी घर मे पिता की डिक्टेटरशिप चलती है, और बच्चे यह देखते है कि उनकी माता डरी हुई तथा सहमी हुई-सी रहती है, बिगड़ी हुई बात को छिपाने के लिए वह बहाने गढ़ती है, झूठ बोलती है, अपनी बात का समर्थन करवाने के लिए बच्चों का सहयोग प्राप्त करती है, बच्चे ममतावश शनैः-शनैः अपनी माता के सहयोगी बन जाते है। इस प्रकार उनमें आत्म-सम्मान, तथा सत्यप्रियता की भावना नष्ट होती जाती है।

बड़ों का उदाहरण—इसी प्रकार बड़ों के व्यवहार की छोटों पर छाप पड़ती जाती है। वह चुगलखोर, झूठे, बेईमान तथा गुस्ताख़ बन जाते है। माता-पिता के संस्कारों तथा उदाहरणों का बच्चों पर बहुत अधिक प्रभाव पड़ता है। उनके मैनर्स, चाल-ढाल, रुचि, आदतें सभी का बच्चों पर रंग चढ़ता रहता है। अगर माता कर्कशा स्वभाव की है; पिता फिजूलखर्च और स्वार्थी है, तो उनके मुन्ना-मुन्नी में भी यह दुर्गुण थोड़ी-बहुत मात्रा में आ ही जाते है।

मुन्ना देखता है कि मेरे पिता जी किस प्रकार अपने मित्रों को चकमा देने की कहानियाँ सुनाते है ! मेरी माता उनके इस कार्य को व्यवहार-कुशलता कह कर कैसी प्रशंसा करती है ! बस मुन्ना भी चलतापुर्जा बनने की चेष्टा करता है। वह अपने

माता-पिता के व्यवहार से यह निर्णय निकालता है कि दुनिया में जो अपना मतलब साध ले वही व्यक्ति होशियार समझा जाता है, बस वह भी अपने संगी-साथिनों को मूर्ख बनाकर अपना काम साधने मे ही अपनी कार्य-कुशलता को परखता है। यह देखकर माँ-बाप कहते हैं—"वाह ! हमारा मुन्ना बड़ा होशियार है।" फलस्वरूप मुन्ना धीरे-धीरे स्वार्थी और असामाजिक बन जाता है। उपरोक्त प्रकार के वातावरण मे मुन्ने का चरित्र-विकास स्वस्थ रूप से होना असंभव है।

मुन्ना-मुन्नी देखते है कि 'जिसकी लाठी उसकी भैंस' वाला सिद्धान्त ही घर मे चलता है। पिता जी बाहर से बिगड़कर आते है, तो वह आकर माँ पर अपना गुस्सा निकालते है, माँ अपना गुस्सा मुन्ना-मुन्नी पर निकालती है। बस मुन्ना-मुन्नी को अपने कमजोर सगी-साथियों को मारपीटकर उनकी चीजे हथिया लेने मे आनन्द आता है।

रमेश नाम का एक बच्चा था। वह जब कभी भी अपने से छोटे बच्चे को देखता, उसे पकड़कर पीटता। अपने स्कूल मे, खेल के मैदान में, सड़क पर जहाँ भी उसे कोई छोटा या अपने से कमजोर बच्चा दीखता, वह उसकी कोई चीज छीन लेता या उसे चपतिया देता। इस अपराध के कारण उसे कई बार सजा भी मिली, पर उसकी आदत सुधरी नही। उसके स्कूल का हेडमास्टर समझदार था। उसने रमेश के पिता को बुलाकर पूछ-ताछ की, तो पता चला कि रमेश घर मे छः बहन-भाइयों में सबसे छोटा है, इस कारण उसे सभी दबाते है, उसकी खिल्ली उडाते है, चीजें छीन लेते है, तथा उस पर हुक्म चलाते है और कहना न मानने पर उसे चपतिया भी देते है। यही कारण था कि जो रमेश घर मे भीगी बिल्ली बना रहता था, बाहर आकर छोटे बच्चों के आगे शेर बन जाता था और इस प्रकार मय ब्याज के अपने अपमान का बदला कमजोर बच्चों से चुकाने मे उसे सन्तोष होता था। हेडमास्टर साहब के कहने पर रमेश के पिता ने घर पर अन्य बच्चो को ताकीद कर दी कि रमेश के प्रति इस प्रकार का अधिकारपूर्ण व्यवहार न किया जाय। फलस्वरूप कुछ ही दिनों मे रमेश की हिंसा-वृत्ति सुधर गई।

बच्चे का मज़ाक न बनायँ—बहुत से लोग यह समझते है कि बच्चा तो छोटा है, भला उसे सम्मान तथा अपमान की क्या परख ? बच्चे के शरीर के सदृश्य ही उसका मन भी बड़ा कोमल होता है। जरा सी उपेक्षा या झिड़की से बच्चे का नन्हा-सा दिल टूट जाता है। आप आठ-दस महीने के बच्चे को पुचकारे तो वह हँस देता है, परन्तु अगर उसी क्षण आप जरा सा झिड़क दें, तो वह होंठ निकालकर पहले तो सिसकता है फिर जोर-जोर से रो देता है। और उसकी आँखों से बड़े-बड़े आँसू ढुलक आते है। बड़ों के लिए यह तमाशा है, उन्हें अकारण ही बच्चे को झिड़क-

कर रुलाने में आनन्द आता है। देखो ! देखो ! मुन्ना होंठ निकालकर कैसे रो रहा है ! कितने बड़े-बड़े मोती से आँसू बह रहे हैं ! मुन्ना राजा, रोओ मत, हम तो तमाशा कर रहे थे, डाँट नहीं रहे थे। यह कहकर मुन्ना को बाद में दुलार लिया जाता है। बेचारे मुन्ने के लिए बड़ों का ऐसा व्यवहार एक पहेली बनकर रह जाता है।

मुन्ने का बड़ा भाई जब मुन्ने का ऐसा तमाशा बनते देखता है, वह मन-ही-मन हँसता है, और सोचता है—"मैं ऐसा मूर्ख नहीं हूँ, जो माता-पिता की घुड़की से सहम जाऊँ, इनका तो स्वभाव ही है घुड़कने का। बस, छोटी-मोटी घुड़की पर तो ध्यान ही नहीं देना चाहिए।" इस प्रकार बड़ा मुन्ना ढीठ बनने का पाठ पढ़ता है।

कुसंस्कारी क्यों ?—बच्चा देखता है, माता-पिता जब किसी मित्र या सम्बन्धी को कोई चीज़ नहीं देना चाहते, तो वे झूठ बोलकर या बहाने बनाकर उन्हें टाल देते हैं। पड़ौसिन तराजू मांगने आई, तो माँ मुन्नी को कहती है—"कह दे हमारा तराजू टूटा पड़ा है।" इसी प्रकार पिताजी अपने मित्रों में बैठकर गप्प मारते हैं—"पिछले साल हम शिकार पर गये थे, तो मैंने दो हिरण मारे थे।" पर मुन्ना यह सुनकर चट बोल उठता है—"वाह ! वे हिरण तो शिकारी चाचा ने मारे थे, आपने तो दो तीतर ही मारे थे।" बाद में इस सच बोलने पर मुन्ना के कान गर्म होते हैं—"बेवकूफ, बड़ों की बात में बोलता है।

धीरे-धीरे मुन्ने-मुन्नी को भी दुनियादारी की, तथा मुँहदेखी बात करनी आ जाती है। बड़े कहते हैं कि हम बच्चों का चरित्र बनाते हैं, असल में देखा जाय तो बच्चों का निर्मल चरित्र, बड़ों के छल-प्रपंच की छाप से दिन-पर-दिन कलुषित होता जाता है।

कभी-कभी सज्जन और कर्तव्य-परायण माता-पिता की सन्तान भी दुराचारी निकल जाती है। इसका हेतु या तो गर्भावस्था में बालक को कोई मानसिक या शारीरिक आघात पहुँचना, अथवा माता-पिता की शोचनीय आर्थिक और शारीरिक अवस्था के कारण बच्चे का उपेक्षित बचपन भी हो सकता है। कभी-कभी ऐसा भी होता है कि जब बच्चा यह देखता है कि अपनी सज्जनता और कर्तव्य-परायणता के कारण अन्य परिजन मेरे माता-पिता को हमेशा दबाते और सताते रहते हैं, तो वह मन-ही-मन परिजनों की चालबाजी तथा अपने माता-पिता के सीधेपन पर कुढ़ता है और बड़े होकर वह प्रतिक्रिया दिखाता है। अन्य लोगों को चकमा देने अथवा छल-फरेब द्वारा अपना स्वार्थ सिद्ध करने में उसे एक विशेष प्रकार का आनन्द तथा सन्तोष होता है।

अगर हम बच्चे की शारीरिक और मानसिक समस्याओं के हेतु की छान-बीन करें तो पता चलेगा कि जिस दिन से बच्चा गर्भ में आया था, उस दिन से

माता-पिता का परस्पर व्यवहार तथा स्वास्थ्य; बच्चे के सामने उनका उदाहरण; घर की महत्त्वपूर्ण घटनाएँ; घर, स्कूल तथा अड़ौस-पड़ौस का वातावरण ये सभी उसके लिए उत्तरदायी हैं। यहाँ तक कि सामाजिक और राजनीतिक परिवर्तन और उथल-पुथल की भी बच्चे पर छाप पड़ती है। जब कभी भी देश में युद्ध होते हैं, बच्चे भी उसके दुष्परिणाम के शिकार हो जाते हैं। सुरक्षा की भावना कम होने पर, वे ग़ैर-ज़िम्मेदार बन जाते हैं। उनकी शिक्षा, स्वास्थ्य तथा खान-पान सभी पर इसका प्रभाव पड़ता है।

देश के बटवारे और झगड़ों का सब से अधिक कटु अनुभव हुआ है बच्चों को। उनका सुरक्षित जीवन छिन्न-भिन्न हो गया। फलस्वरूप शरणार्थियों के बहुत से बच्चे मानसिक और शारीरिक आघात के शिकार हुए। आज वे समाज के लिए एक समस्या बने हुए हैं। आवारा, चोर, जेब-कतरे, उद्दण्ड तथा निकम्मे बच्चों की एक बाढ़-सी आ गई है। अब इन बच्चों की समस्या देश की समस्या बन गई है। क्योंकि राजनीतिक उथल-पुथल के कारण माँ-बाप से बिछुड़े हुए अपनी जमी हुई परिस्थितियों से उखाड़े हुए, ये बच्चे दुर्गुणों का सहज ही शिकार हो रहे हैं।

मानसिक आघात—बच्चे के लिए शारीरिक आघात से भी अधिक भयंकर होता है मानसिक आघात। किसी बच्चे की अगर माँ मर जाय, तो माता के प्रेम के अभाव में सभी सुविधाओं के बावजूद भी वह मुरझाने लगता है। माँ के बिना वह स्वयं को खोया-खोया और असुरक्षित अनुभव करता है, मृत्यु उसके लिए एक पहेली प्रतीत होती है। उसे माता की कही हुई बातें याद आती हैं, कि जब माँ बीमार थी और मुन्ना हल्ला करता था तो माँ खीज कर कहती थी, "क्यों मेरा सिर खा रहा है? मैं तो दर्द के मारे मरी जा रही हूँ, तूने तो मुझे सता दिया, मर जाऊँ, तो जान छूटे, तब तुझे पता चलेगा।" बेचारा बच्चा रात के अँधेरे में तकिये में मुँह छिपाकर सुबक-सुबककर रोता है। वह समझता है शायद मुझ से नाराज होकर, माँ मुझे छोड़कर चली गई है।

इसी बीच में कुछ दिन बाद वह देखता है कि दूसरी माँ आ गई है। पर वह इस माँ को अपनी माता से रूप-रंग, स्वभाव में बिल्कुल भिन्न पाता है। थोड़े दिनों बाद वह देखता है कि माँ के सिखाये में आकर उसका प्यारा पिता भी उसके प्रति उदासीन हो गया है। प्रेम, प्रोत्साहन, ममता तथा मित्रता के अभाव में उसकी शक्तियाँ मंद पड़ जाती हैं। अब तक जो मुन्ना होशियार, हँसमुख तथा तेज और स्वस्थ समझा जाता था, वही भौंदू, सुस्त, चिड़चिड़ा और रोगी दीखने लगता है।

घर के प्रतिकूल वातावरण ने उसके जीवन-वृक्ष की हरियाली को नष्ट कर दिया है। उसका हृदय फोड़े के मदृश दुखता रहता है। पहले जिन बातों की वह परवाह भी नही करता था, अब उन्ही बातो से उसे व्यथा होती है। वह स्कूल से अपने सहपाठी चुन्नू के संग लौटता है, मार्ग मे चुन्नू का घर पड़ता है, उसकी माता दरवाजे पर खड़ी चुन्नू की राह देख रही है, चुन्नू लपककर माँ की ओर बढ जाता है। माता भी उसके सिर पर हँसकर दुलार से हाथ फेरती हुई पूछती है, "अरे तू स्कूल मे क्या स्याही पीता है ? देख तो दाँतों मे स्याही लगी हुई है।" चुन्नू हँस कर अन्दर भाग जाता है, क्योकि उसे मालूम हो गया है कि उसकी दीदी चौके मे गर्म-गर्म कचौड़ियाँ बना रही है।

बेचारा मुन्नू यह सब देखता है और उसके हृदय मे एक हूक उठती है और उसके मुँह से एक आह निकल पड़ती है, "हाय मां ! तू कहाँ है ?" मुन्नू दिन-पर-दिन मुरझाता जाता है। आज वह लखपति का बेटा होकर भी अपने को दरिद्र समझता है—"मेरा कौन है ? मुझे कौन प्यार करता है ? मेरी किसे फिक्र है ? मेरी सफलता पर किसको खुशी है ? असफल होने पर अब कौन मुझे प्रोत्साहन देगा ?" आदि उधेड़-बुन मे वह पड़ा रहता है।

बच्चो के लिए माँ की ममता एक ऐसी चीज है जिसकी समता संसार मे कोई नहीं कर सकता। जिन बच्चो की माँ मर जाती है, उनकी-सी दयनीय दशा किसी की नही। बहुत कम पिता बच्चे के इस अभाव का सही अन्दाजा लगाकर उसकी पूर्ति करने की चेष्टा करते है। वे समझते है कि खेल-खिलवाड़ मे बच्चा कुछ दिनो मे अपने माँ का अभाव भूल जायगा, पर असल मे ऐसा नहीं होता।

एक बार कुछ बच्चों को उनकी माताओ से अलग करके अधिक सुविधाएँ देकर एक नर्सरी मे रखा गया। बाद मे वही सुविधाएँ उन्हे उनकी माता की देख-भाल में दी गई, जाँच करने पर पता चला कि माताओ से बिछुड़कर कई बच्चे तो सुविधाओ के बावजूद भी दुबले और चिड़चिड़े हो गए, परन्तु माता की देख रेख मे वही सुविधाएँ पाकर वे कुछ ही दिनो मे सन्तोषजनक तरक्की कर गए। तभी बड़ी-बूढ़ियाँ कहती है—"अपनी माँ तो सूखा हाथ ही फेर दे, तब भी बच्चा हरा-भरा हो जाता है।"

उपेक्षित बचपन—कोई-कोई माता-पिता, मित्र या अध्यापक सुन्दर बच्चे को अधिक प्यार करते है, उसी को साथ ले जाते है, खेल-खिलौने उसी को देते है अथवा खेल-कूद मे उसी को प्रधानता देते है। इससे भी घर के अन्य बच्चों के मन पर बड़ा आघात लगता है। उन्हें अपने उस सुन्दर बहन-भाई या सहपाठी के प्रति ईर्ष्या उत्पन्न हो जाती है।

घर में नये बच्चे के पैदा होने पर बड़े बच्चे की उपेक्षा करना भी भूल है। अगर माता छोटे बच्चे मे व्यस्त रहती है तो पिता को चाहिए कि बड़े बच्चे मे अधिक दिलचस्पी ले। हमारे एक मित्र के दो लड़के हे। उन्होने अपने बड़े लड़के अरुण की चर्चा करते हुए हमे बताया कि, जब छोटा मुन्न् पैदा हुआ तो उसकी बुआ न उसे दुलारते हुए अरुण को कहा कि, "अब तो तुम्हारी मम्मी छिन गई।"

बेचारा अरुण यह सुनकर बडी पशोपेश मे पड़ा, उसने उस दिन खाना भी नही खाया, जब मै शाम को आया तो अरुण को उदास देखकर मैने पूछा, "क्या बात है अरुण ? इधर आओ।"

वह आंखो मे आँसू भरकर मेरे पास आया और बोला, "पापा क्या मम्मी अब मुझे प्यार नही करेगी ? बुआ कहती है कि मम्मी को तो अब छोटे मुन्नू ने छीन लिया है. वे मेरी नही रही। अगर ऐसी बात हुई तो मै मुन्नू को मारूँगा।"

बच्चे के मन मे जो उथल-पुथल मच रही थी, उसकी कल्पना करके मुझे बड़ा दुःख हुआ। मैने उसे दुलारते हुए समझाया—"अरे अरुण, तू तो समझता नहीं, बात यह है कि अब तो तू बडा भैया बन गया। तू तो दौड़ सकता है, खुद खा-पी सकता है, छोटा मुन्नू तो अभी निरा बच्चा है, सो तेरी माँ उसे सँभालेगी, तू भी मदद करना। हाँ, तू अपना छोटा पालना भी उसे दे देना। तेरे छोटे-छोटे कपड़े भी उसके काम आ जायँगे। अब बड़ा होकर मुन्नू तुझे भाई साहब कहा करेगा। मुन्नू तो छोटा है न, इसलिए तू भी उसकी देख-भाल करना। जब मै पाँच वर्ष का था तो तेरी बुआ जरा सी थी, मै उसे अपनी पीठ पर चढ़ा कर घुमाने ले जाता था। सभी बड़े भाई अपने छोटे बहन-भाई को प्यार करते है। माँ तो पहले तेरी है, बाद मे मुन्नू की। इस मे छिन जाने की कोई बात ही नहीं है।"

उस दिन से मै शाम को रोज अरुण को अपने साथ क्लब ले जाता, सुबह अपने साथ उसे खाना खिलाता। रात को जब उसकी माँ छोटे मुन्नू को लेकर बैठती, अरुण मेरी रजाई मे घुसकर मुझे अपनी रंगदार तसवीरो की किताबें दिखाता, और बड़े चाव से यह बताता कि आज मुन्नू भैया को उसने किस प्रकार सहयोग दिया। अब तो वह स्वयं को बड़ा भैया समझ, समझदारो के सदृश व्यवहार करने लगा है।

तुलनात्मक वृत्ति—कोई-कोई माता-पिता बच्चों को सिखाने मे आलोचनात्मक वृत्ति रखते है। वे एक बच्चे की दूसरे के संग तुलना करके उनकी भूलों को सुधारने की चेष्टा करते है। "देख सुशीला पढ़ने मे कितनी तेज है, हमेशा अपनी कक्षा मे फर्स्ट रहती है, तू तो हमेशा घिसट-घिसटकर पास भर हो पाती है।" "देख सुभाष तेरा दोस्त श्याम क्रिकेट खेलने मे कितना होशियार है, और

तुझ से दो रन भी नहीं बनते।" इस प्रकार की आलोचना से बच्चा बहुत हतोत्साहित हो जाता है।



माता-पिता और शिक्षकों को यह नहीं भूल जाना चाहिए कि रंग-रूप-कद आदि के सदृश्य ही, बच्चों की रुचि, तरक्की करने की रफ़्तार, समझने की शक्ति आदि भी भिन्न-भिन्न होती है। कोई बच्चा साल भर में चलने लगता है कोई डेढ़-दो वर्ष में जाकर पाँव सँभालता है। किसी बच्चे को एक बार सुनी हुई कहानी याद हो जाती है, किसी को वही कहानी दो-तीन बार सुनाने पर याद होती है, कोई बच्चा खेल में अधिक तेज होता है, कोई पढ़ाई में, किसी को ड्रॉइंग और भाषा अधिक रुचिकर है, कोई विज्ञान और गणित की ओर अधिक आकर्षित है।

अपनी-अपनी योग्यता और सामर्थ्य के अनुसार बच्चा अपने मन-पसन्द विषय में उन्नति करता है। आवश्यकता इस बात की है कि बच्चे की रुचि तथा योग्यता को समझकर उसे उस ओर प्रोत्साहन दिया जाय, ताकि वह अपनी उन्नति कर के जीवन को उपयोगी बना सके। अपनी रुचि बच्चे पर लादना मूर्खता है। प्रायः माता-पिता बच्चे की रुझान का अध्ययन किये बिना अपनी पसंद उस पर लादने की चेष्टा करते हैं। प्रथम, तो माता-पिता के संस्कार बच्चे में कुछ-न-कुछ तो आ ही

जाते हैं, परन्तु यह कोई जरूरी नहीं है कि एक गायक का बच्चा अवश्य एक गायक ही बनेगा या इंजीनियर का बच्चा जरूर एक इंजीनियर ही बनेगा।

'मैं अपने बेटे को डॉक्टर बनाऊँगा'; 'मैं अपनी बेटी को टीचर बनाऊँगी'; 'मेरा बेटा चित्रकार ही बने या मेरी बेटी एक लेखिका अवश्य बने'—माता-पिता का इस प्रकार की आशा या चेष्टा करना भूल है। उन्हें तो यह देखना चाहिए कि बच्चा क्या बनना चाहता है ? उसकी रुझान किस ओर है ? तदनुसार उसे प्रोत्साहन देने के लिए घर में वैसा वातावरण पैदा करे। जिस प्रकार अनुकूल धरती पाकर बीज खूब फलता-फूलता है, उसी प्रकार अनुकूल वातावरण में बच्चे की गति, वृत्ति ,, शक्तियाँ सहज ही विकसित हो उठती है।

मनुष्य के व्यक्तित्व को बनाने में दो तरह के तत्त्व काम करते हैं—जन्मजात और अर्जित। उसकी सहज क्रियाएँ, सवेग, मूल प्रवृत्तियाँ तथा बुद्धि की विशेषताएँ जन्मजात तत्त्व है, जब कि अर्जित मे आदत, विचार तथा चरित्र आदि है। जैसे-जैसे बालक बड़ा होता है उसमें जन्मजात तत्त्व कम होते जाते हैं और अर्जित तत्त्व अपना प्रभाव बढ़ाते जाते है, यही कारण है कि उस पर अपने आस-पास के वातावरण का प्रभाव बहुत महत्त्व रखता है।

अनुकूल वातावरण का महत्त्व—बच्चे के चरित्र का सुन्दर विकास हो, उसकी सात्विक वृत्तियाँ जागें, वह होनहार बने, घर, समाज तथा देश के लिए उपयोगी बन सके, इसके लिए घर का वातावरण तदनुकूल बनाना बहुत आवश्यक है।

बच्चा केवल भय, दण्ड तथा प्रलोभन से किसी ओर स्थायी रूप से झुकाया नहीं जा सकता। उसको प्रेरणा देने के लिए माता-पिता का दृष्टान्त, सदाचारी जीवन, प्रेम, ममता, प्रोत्साहन उचित ढंग का नियंत्रण तथा बच्चे के सम्मान तथा अधिकारों की रक्षा आदि की आवश्यकता है। बच्चा उपदेशों को भी नहीं समझता। रोज-रोज उपदेश सुनते-सुनते वह थक भी जाता है। जिस प्रकार लहरें क्रीड़ा करती हुई चट्टान का भी रूप बदल देती है उसी प्रकार नित्य प्रति के अभ्यास और संस्कार से घर के शान्तिमय वातावरण में, माता-पिता तथा बड़े बहन-भाइयों की सोहबत और सिखावट में बच्चे का स्वस्थ और सुन्दर विकास संभव है। इसलिए मनोवैज्ञानिकों का कहना है कि बच्चों की समस्याओं को समझने और सुलझाने के लिए घर के वातावरण को समझने और सुधारने की आवश्यकता पड़ती है।

हम जब किसी सुशील तथा होनहार बच्चे को देखते है, तो हमारे मुँह से यह सहज निकल पड़ता है, "किसी अच्छे घर-बार का लड़का है, इसकी घरेलू शिक्षा बहुत सन्तोषजनक* दिखती है।" इसी प्रकार किसी स्कूल की व्यवस्था को भी हम

उसके विद्यार्थियों के व्यवहार से परखते है, क्योंकि बच्चे जिस वातावरण में रहते हैं, उसकी छाप उन पर सहज ही पड़ती रहती है। जब एक डाकू का बच्चा यह देखता है कि मेरे घर मे नित्य चोरी और डाकेजनी से पैसा आता है तो वह भी एक होशियार डाकू बनने की कल्पना करने लगता है। पहले वह अपने संगी-साथियों की जेब पर हाथ साफ करता है, बाद मे बड़े हो कर बढ़-बढ़कर हाथ मारने लगता है।

जिस बाप की आमदनी कुल चार सौ रुपये है, उसका बेटा जब यह देखता है कि हमारे घर का रहन-सहन बहुत ऊंचा है, और माता-पिता प्रायः गौरव के साथ कहते है कि 'हमारा खर्च हजार रुपया मासिक है तनख्वाह से क्या बनता है, ऊपरी आमदनी से गुजारा चलता है,' तब कुछ बड़े होकर बच्चे को भी ऊपरी आमदनी का भेद पता चल जाता है और वह भी फिजूलखर्च बन जाता है। पाकेट-मनी मे उसका पूरा नही पड़ता, वह भी ऊपरी आमदनी प्राप्त करने का ढंग निकाल लेता है और माता-पिता के तथा मौका लगने पर मेहमानों के बटुओं पर भी हाथ साफ करने से नहीं चूकता।

अगर पिता दुर्व्यसनी है तो बच्चे पर भी उसके संस्कार पड़ते जाते है। मुन्ना देखता है कि पिता जी मित्रो के सग बैठकर शराब पीते है, और जब वे रंगत में आ जाते है, तो खूब ठहाके लगाते है, दावते उड़ती है, और पिताजी अपने पीने-पिलाने की खूबी के कारण प्राप्त अपनी लोकप्रियता की प्रशंसा करते हुए बड़ी शान से कहते हैं कि "यदि किसी से काम करवाना हो तो उसे खूब खिला-पिलाकर रंगत में ले आओ।" यह देख-सुनकर मुन्ना सोचता है—"मै भी जब बड़ा होऊंगा, खूब पीऊंगा।" पिता जी की नकल करने के लिए वह सोड़े की बोतलो में पानी भरकर पीता है, और झूमता हुआ शराबियो की तरह चलने की नकल करता है, उसका दूसरा साथी कागज की एक भूकनी सी बना कर उसमें आग लगाकर सिगरेट पीने का अभिनय करता है।

इसी प्रकार बच्चे धीरे-धीरे कुसस्कारी बनते जाते है। मुन्नी अपनी माँ को पिता जी से चोरी-छुपे काम करते देखती है। पिता जी के दफ्तर चले जाने पर माँ बिसाती वाले से चोरी-चोरी कपड़ा खरीदती है, अपने पीहर जाती है, चाट-पकौड़ी खाती है और मुन्ना-मुन्नी को भी खर्चने के लिए पैसे दे देती है। बस मुन्ना-मुन्नी भी अपनी माँ की फिजूलखर्ची तथा छिपाकर काम करने की वृत्ति को अपना लेते है। अपनी माता का फूहड़पन, स्वार्थ-वृत्ति, लड़ने-झगड़ने तथा इधर की उधर लगाने की प्रवृत्ति भी कन्याओं में आ जाती है। बाल्यपन के यह संस्कार ऐसे स्थायी हो जाते है कि बड़े होकर वह आदत और स्वभाव बन जाते है।

जिन घरों में शान्ति तथा स्वस्थ वातावरण होता है, वहाँ बच्चे सुसंस्कारी बनते हैं। यही कारण है कि छोटी कक्षा मे भी कई बच्चे भाषा तथा जनरल नालिज में जल्द उन्नति कर जाते हैं। उनको अपनी वस्तुओं को सँभालने, सजाने तथा सफाई और व्यवस्था रखने में भी कठिनाई नहीं होती, कारण कि उनके घर का वातावरण तदनुकूल होता है। वे शुद्ध और शिष्ट भाषा मे बातचीत करते है। बहुत सी बातें वे अपने माता-पिता से सीखते रहते है। उनकी प्रारम्भिक शिक्षा घर मे ही हो जाती है। इसी प्रकार सदाचार का पाठ भी वे अपने घर मे ही पढ़ते हैं। अतएव अध्यापकों को यह परखते देर नहीं लगती कि अमुक बच्चा अनुकूल वातावरण मे पनप रहा है और अमुक बच्चा प्रतिकूल वातावरण मे मुरझा रहा है।

जिस प्रकार पौधा अपने थाले से ही बढ़ने और मजबूत होने के लिए जीवन-रस प्राप्त करता है, फिर चाहे उसकी टहनियाँ इधर-उधर मुड़कर ही क्यों न फैल जायँ, इसी प्रकार बच्चा भी घर से ही शारीरिक, मानसिक तथा आत्मिक उन्नति के लिए प्रेरणा और रक्षा प्राप्त करता है। इसलिए बच्चे के विकास के लिए घर का वातावरण स्वस्थ और अनुकूल होना बहुत आवश्यक है। घर के वातावरण को बच्चे के अनुकूल बनाने की जिम्मेदारी माता-पिता तथा अन्य परिजनो पर है।

तीसरा अध्याय

समस्या-पूर्ण बच्चे

मुन्ना बहुत बदमिज़ाज है; नन्हा रोंदू है; बच्चू बहुत ज़िद्दी है, टुन्नू पलंग अभी तक गीला करता है; चुन्नू डरपोक है; काकी झूठ बोलती है; मुन्नी को छिपाकर काम करने की आदत है; काका चोरी करना नहीं छोड़ता; अतएव ये सब बच्चे अपने माता-पिता के लिए एक समस्या बने हुए हैं। सभी बच्चे बहुत सी बातों में एक समान ही होते हैं। कोई भी अच्छा बच्चा घर और स्कूल की बेपरवाही से बुरा



और ढीठ बनकर, माँ-बाप के लिए एक समस्या बन जाता है, जब कि कोई भी बुरा बच्चा मनोवैज्ञानिक ढंग से सुधारा जा सकता है।

बच्चा खुद परेशान है—अगर बच्चे में बुरी टेव है, तो उसके सुधारने के लिए माता और शिक्षक में बहुत धीरता और सहानुभूति की आवश्यकता है। वह बेचारा स्वयं अपने आप से परेशान है। सबके सामने ज़लील होना उसे भी अच्छा नहीं लगता। वह भी चाहता है कि लोग उसकी प्रशंसा करें, उसे दुलारें, पुचकारें, पर उसे कोई उत्साहित करने वाला नहीं है। उसकी ओर कोई ध्यान ही नहीं देता। वह घर में महत्त्वहीन प्राणी समझा जाता है। बस अपनी कमी को ढकने के लिए, अपने अस्तित्व का भान कराने के लिए वह शैतानी करने लगता है।

मनोवैज्ञानिकों का कहना है कि बच्चा जैसा देखता है, वैसा ही करता है। अनुकरण की वृत्ति उसमें बहुत स्वाभाविक है। अगर नन्हे-मुन्ने को रोता देख, माँ मुँह पर थप्पड़ जड़ दे, या बाँह पकड़कर रोते हुए को घसीटकर नहलाने ले जाय अथवा छड़ी मार-मारकर पढ़ने के लिए बाध्य करे या जू जू, हौवा अथवा किसी और चीज़ का डर बताकर उससे कोई काम करवाय, तो मुन्ने मे अवश्य ही कोई अस्वाभाविकता पैदा हो जायगी। वह भी अपने साथियों को मारे-पीटेगा, या सफ़ाई और पढ़ाई से उसे नफरत हो जायगी अथवा वह डरपोक बन जायगा।

कुदरत ने बच्चों को स्वस्थ, सुन्दर और नेक बनाया है। उनकी बुराइयों की बहुत कुछ जिम्मेदारी माँ-बाप पर है। माताओं पर विशेष करके। कारण बच्चे माँ के साये में अधिक रहते हैं। जिस घर मे दोअमली राज्य है, जहाँ माँ अलग हुक्म दे, बाप अलग; माँ-बाप बच्चे के सामने ही मे-मे, तू-तू पर उतारू हो जायें; या एक पीड़क हो दूसरा पीड़ित और घर में शान्ति और सुव्यवस्था का अभाव हो, ऐसे वायु-मण्डल में रहकर बच्चा अनियन्त्रित तथा उच्छृङ्खल हो ही जाता है। उसके जीवन में असन्तोष छा जाता है। वह बदमिज़ाज बन जायगा। जिद्दी भी हो सकता है। कभी-कभी प्रतिक्रिया इतनी प्रबल होती है कि वह बचपन से ही उदास तथा डरपोक बन जाता है। बच्चों की-सी स्फूर्ति तथा स्वाभाविक चपलता का उसमे अभाव रहता है। फलस्वरूप आगे जाकर वह सुस्त और भोंदू दीखने लगेगा। जब अन्य बच्चे उसे चिढ़ाते हैं, खिसियाकर वह चिड़चिड़ा बन जाता है और उसमें हीनता की भावना आ जाती है।

ऐसी स्थिति में बच्चे को सुधारने से पहले, उस कारण को दूर करना होगा जो कि इस बुराई को पैदा करता है।

चोरी की आदत—अगर किसी बच्चे में चोरी की आदत पड़ गई है, वह झूठ बोलता है। सोचिए क्यों? खोजने से पता लगेगा कि उसे खाने की कमी है, उसकी माँगों को बुरी तरह से ठुकराया गया है। अन्य बच्चों को खाते-खेलते देख उसका भी मन तरसता है। घर मे पैसा शान-शौकत और व्यसनों पर खर्चा जाता है। इन सब बातों का अनुभव उसे विद्रोही बना देता है। सन्तोष का पाठ उसे ठीक रीति से नहीं सिखाया गया या अपनी तंगी में उसका सहयोग प्राप्त करने की चेष्टा सुचारू रूप से नहीं की गई, इसलिए अपने अभाव की पूर्ति, वह चोरी करके करता है।

नुकसान करने पर—अगर नन्हे-मुन्ने से कभी कोई चीज़ टूट जाय तो उसे ऐसा अनुभव न होने दें कि पता लगने पर उसकी जान की खैर नहीं। संभव है जो काम आप की दृष्टि में अपराध या हानिकारक हो, बच्चों ने उसे केवल मनोरंजन की दृष्टि से किया हो। छोटी मुन्नी को माँ की साड़ी पहनकर, ड्रेसिंग रूम में

टेबुल के आगे खड़े होकर, माँ की कंघी से अपने बाल सँवारने तथा लिपस्टिक, पाउडर और बिन्दी लगाने में बड़ा अच्छा लगता है। नाटक को पूरा करने के लिए मुन्ना भी डैडी की छड़ी और हैट लगाकर डैडी की तरह ही अकड़-अकड़कर चलता है। अब अगर घटनास्थल पर माता-पिता पहुँच जायँ और अपनी चीज़ों की बर्बादी देख, विनोदप्रियता की भावना भूल, बच्चों पर गरजने लगें और उनके कान उमेठ कर उनका मुँह लाल कर दे, तो बच्चों के लिए ऐसे माँ-बाप हिंसक जंतुमात्र रह जायँगे। वह अपराध करके छिपाने की चेष्टा करेंगे, इस प्रकार उनको झूठ बोलने की आदत पड़ जायगी।

जहाँ बच्चो के कार्यों द्वारा माता-पिता और अध्यापकों के कार्यक्रम या मन-चाही दिनचर्या मे बाधा हुई, बस, उनके लिए बच्चे एक समस्या बन जाते है। वे उन्हे डाँटते-डपटते है और सजा देते है। बड़ो को चाहिए कि वे इतनी सस्ती और तंगी से बच्चों से पेश न आयँ। वे नव-विकसित फूल है, बढ़ने के लिए उन्हें कुछ तो स्वाधीनता देनी ही होगी। आप उनका कमरा अलग रक्खें। २४ घंटे में कभी तो उन्हे अपने मनचाहे ढंग से हँसने-खेलने दें। स्वयं उनके खेल के साथी बनकर आप बहुत आसानी से उन्हें नियंत्रित कर सकते है।

पिछड़े हुए बच्चे—कई बच्चे अन्य बच्चों से पढ़ने में कुछ पीछे होते है। कभी-कभी तो शारीरिक दोष भी इसका कारण हो सकता है, आँख की कमज़ोरी, श्रवण-शक्ति में दोष अथवा जिव्हा-दोष के कारण बोलने में अड़चन। ऐसे बच्चों का इलाज करायँ, साथ ही उन्हे विशेष सहानुभूतिपूर्वक प्रोत्साहन दें। घर का इकलौता बच्चा भी बहुत सी बातों में पिछड़ जाता है। वह या तो लाड़ में बिगड़-कर बहुत जिद्दी और असहनशील बन जाता है या भोंपू बना रहता है।

स्वाभाविक विकास के लिए बच्चों को हमउम्र के साथियों की बड़ी ज़रूरत है। माँ-बाप को चाहिए कि अपने वात्सल्य-प्रेम को सीमित रखते हुए, बच्चे को संसार मे अपने पैरों पर स्वयं खड़े होने और अनुभव प्राप्त करने में सहयोग दें। स्वयं उसके हाथ-पाँव और मुँह न बन जायँ।

डरपोक बच्चा—अगर किसी बच्चे में कुछ न्यूनता हो, तो यह अनुभव कभी भी न होने दें कि वह घर में अनचाहा या भार-रूप है। यदि बच्चा किसी वस्तु या व्यक्ति-विशेष अथवा अधेरे से डरता है, तो चतुराई से उसके डर की भावना को दूर करने की चेष्टा करें। डर के मुख में उसे जबर्दस्ती धकेल देने से मानसिक आघात पहुँचने का डर है।

नखरीला बच्चा—कई बच्चे खाने-पीने में बड़ा नखरा करते है। बच्चों के इस प्रकार के नखरों को बहुत महत्त्व नहीं देना चाहिए। भूख लगना प्राणी-मात्र के लिए

स्वाभाविक है। अगर पेट या लिवर ठीक न हो तो उसका इलाज करवायें। जो बच्चे चार अन्य बच्चों के साथ बैठकर खाते हैं वे देखा-देखी सब चीज़ें खाना सीख जाते हैं। इस बात का अवश्य ध्यान रखें कि खाने से पहले बच्चे का मस्तिष्क खेल-तमाशे और कहानियों द्वारा उत्तेजित न हो।

विनाशात्मक प्रवृत्ति—कई बच्चे अपने साथियों को मार-पीटकर उनके खिलौने तोड़ मरोड़ देते हैं। सभव है घर मे उसे बड़े बहन-भाई मारते और दबाते हों, अपने बड़ो के आगे तो उसका बस नहीं चलता अतएव उसकी कसर वह अपने छोटे संगी-साथियों पर निकालता है। इस बात का ध्यान रखें कि घर में सबसे छोटा होने पर भी उसका मान-सम्मान बना रहे। साथ ही अपने संगी-साथियों के संग आदान-प्रदान की भावना उसमें हो। छुटपन से ही उसे अन्य साथियों के संग खेलना, और चीज़ बाँट कर खाना सिखाएँ।

प्रेम मे वंचित—बच्चे अपने सगी-साथियों की दुनियाँ से अपनी दुनियाँ की तुलना करते हैं। अगर किसी बच्चे को माँ-बाप या बहन-भाई के प्रेम का अभाव है और जब वह अपने साथी के घर जाता है, वहाँ उसकी पूर्ति पाता है तो उसका मन एक सूनापन अनुभव करने लगता है। वह अपने मन मे सोचता है, कितना अच्छा होता मेरी माँ भी ऐसी ही ममतामयी होती। मै भी अपने पिता से डरकर दुबकने के बदले, इसी प्रकार उनके साथ निःसंकोच खेल सकता। काश मेरी भी एक, छोटी मुन्नी बहन होती, जिसका मै दुलार करता, मेरा भी एक बड़ा भाई होता जो मेरा लाड़ करता, जिसके कंधे पर या साइकल पर चढ़कर मै भी घूमता।

निठल्ला बच्चा—कहते है, खाली मनुष्य का दिमाग शैतान का चर्खा होता है। बच्चो के विषय मे भी यह सत्य है। उनमें शक्ति है, विचार है, चाव है। आप उन्हें उपयोगी काम मे लगायँ, उनका ध्यान बटा छोड़े। रचनात्मक कार्य में उनकी दिलचस्पी पैदा करे। आप देखेंगे कि शैतानी भूलकर वे उपयोगी और स्वाभाविक बच्चे बन जायँगे। तसवीरे रंगना, मोती पिरोना, ब्लाक्स से खेल-खिलौने बनाना, गुड़िया खेलना, कहानी सुनना, तसवीरे काटकर चिपकाना, ये कार्य ऐसे है कि बच्चे खेल-खेल में बहुत सी बाते सीख जाते है। व्यस्त बच्चा बहुत कम ऊधम मचाता है।

माता-पिता की ग़लती—घर का दुःखद वातावरण, बड़ों का दुर्व्यवहार, बच्चों के प्रति असहानुभूतिपूर्ण दृष्टिकोण आदि भी बच्चों के मनोविकास मे बहुत बाधा पहुँचाते हैं। प्रायः देखा गया है कि वे बाप या माँ जिनमे सहन-शक्ति का अभाव होता है, या जिनका पारा शीघ्र ही चढ़ जाता है, बच्चे के मामूली अपराध पर अपना क्रोध उस पर निकाल बैठते है। बच्चा इसके लिए तैयार नहीं होता, अतएव उस बड़ी सजा का सुफल न होकर कुफल ही होता है। उसका मन विद्रोही हो जाता है

और वह अपनी भूल न समझकर, अपने माता-पिता को ही अपराधी समझने लगता है। उनके प्रति उद्दण्ड अथवा गुस्ताख़ हो जाता है। माँ-बाप भी अपने क्रोध का उबाल ठंडा होने पर पछताते हैं और बच्चा इसमें अपनी विजय का अनुभव करता है। फलस्वरूप शनैः-शनैः बच्चा जिद्दी तथा गुस्ताख़ बन जाता है। इस प्रकार से अनजाने में माँ-बाप की गलती बच्चे की विनयशीलता तथा सभ्यता पर कठोराघात करती रहती है।

बच्चों में बुराइयाँ देखकर, माँ-बाप झुंझलाकर कहने लगते हैं, "राम जाने यह ऐसा उद्दण्ड और मुँहफट क्यों निकला है ! जबान क्या चलती है मानों कतरनी, हमारा तो दिल ही जल गया इससे। हम क्या जानते थे कि अपनी ही औलाद इतनी जलाने वाली होगी।" परन्तु अगर वे जरा ठण्डे दिमाग से काम ले, तो उन्हें पता चलेगा कि उन्हीं के दोष बच्चे में प्रतिबिम्बित हो रहे हैं। 'दिया तले अँधेरा' वाली कहावत को वे चरितार्थ कर रहे हैं।

हमारे एक मित्र हैं। उनके दो बच्चे हैं, बड़ा लड़का १५ वर्ष का और छोटी लड़की १२ वर्ष की। लड़की तो बहुत ही सुशील और विनीता है, परन्तु बेटा महा गुस्ताख़ और ग़ैर-ज़िम्मेदार है। छोटी बहन को मारना, अड़ौस-पड़ौस से झगड़ना, नौकरों से डॉट-डपट करना, यही उसे सूझता है। जिस काम से रोकें ठीक वही करेगा। बेमतलब बहस करके अपनी गलती को भी ठीक साबित करने की चेष्टा करेगा। वह किसी भी काम की ज़िम्मेदारी नहीं सँभाल सकता। यहाँ तक कि गुसलखाने का नल खुला छोड़ आयगा, साबुन पानी में डाल आयगा, पंखा चलता छोड़ देगा। उसका कमरा, कपड़े, किताबें सभी चीजें अस्त-व्यस्त पड़ी रहती हैं। बाप को व्यापार में घाटा आ गया है, अतएव वह इन बातों के कारण बहुत झुंझलाते हैं। परन्तु बेटा चिकना घड़ा बना हुआ है। एक दिन उसकी माता जी ने मुझ से अपना सब दुःख कहा— "अकेला बेटा होने के कारण मैं उसकी उपेक्षा भी नहीं कर पाती, परन्तु इसने हमारा जीवन दूभर किया हुआ है। इसके कारण मुझे चारों ओर से उलाहने मिलते हैं।"

स्थिति का मनोवैज्ञानिक अध्ययन करने पर मैं इस निर्णय पर पहुँची कि बच्चे ने बहुत से दोष अपने पिता से लिए हैं। उसके पिता में हीनता की भावना बहुत है। अपनी कमियों को छिपाने तथा अपनी बात रखने के लिए वे भी बहुत बहस करते हैं। दूसरों की बात काटकर अपनी बात मनवाने की उनकी भी आदत है। साधारण बातचीत में भी वे जोर-जोर से बोलेंगे। दूसरों की अनावश्यक चर्चा और घर-भर पर रोब गाँठना उन्हें अच्छा लगता है। बस अनजाने में बच्चे में भी सहवास के कारण वे सब दोष, अधिक विकृत होकर आ गए हैं।

इसी प्रकार कई लड़कियाँ भी छुटपन में ही अपनी माँ की देखा-देखी छल-

प्रपंच-प्रिय तथा ईर्ष्यालु प्रकृति की बन जाती है। 'छोटे मुँह बड़ी बात' करनी सीख जाती है। बचपन के ये दोष उन्हें बड़े होकर कलह-प्रिय बना देते है।

अच्छे कामों के प्रति अरुचि—एक बच्चा जिसे मै भली प्रकार जानती हूँ, पढ़ने से बहुत चिढ़ता है। वैसे वह बुद्धिमान् है, चलतापुर्जा और हँसमुख है। परन्तु पढ़ने में उसका मन ही नहीं लगता। वह किताबे फाड़ देता है, उन्हें जला देता है। स्कूल जाते समय बहुत रोता-पीटता है। माँ-बाप उससे बड़े परेशान है। पढ़ाई से घृणा होने का कारण मेरी राय मे यह है कि उनके घर में बच्चे की बुआ, जो उससे चार साल बड़ी है, अपने भतीजे को पढ़ाई का डर बताकर हमेशा परेशान करती है। 'आने दे भैय्या को, बताऊँगी कि तूने आज पढ़ा नहीं है', 'किधर चला है खेलने, बैठ कर पढ़', 'चल यहाँ से, ऊधम मचा रखा है, ला किताब देखूँ सबक याद है कि नहीं' ? 'मै जो बात कहती हूँ, वह कर, नहीं तो भैय्या को तेरी पढ़ाई की जाँच करने को कहूँगी और तेरी खूब पिटाई होगी'।

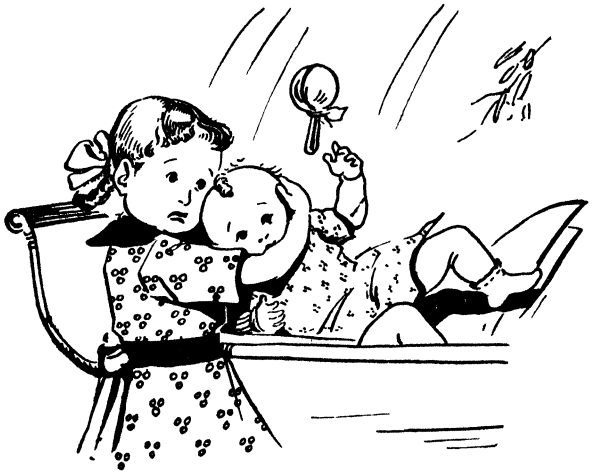
बस इस प्रकार की धमकियो से बच्चे के दिल मे पढ़ाई के प्रति घृणा-सी हो गई है। क्योकि उसी का डर बताकर उसका खेलना-हँसना बंद किया जाता है, उसकी पिटाई होती है। मार खा-खाकर अब वह बच्चा ढीठ हो गया है, पर पढ़ने का नाम नही लेता। बुराई बच्चे को न देकर उस वातावरण को देनी चाहिए जिसमे बच्चे के लिए पढ़ाई, एक हौवा-सदृश भयानक रूप में चित्रित कर दी गई है।

उपेक्षित बच्चा—बच्चा जिस स्थिति का अभ्यस्त होता है, उसमे जल्द ही परिवर्तन पसन्द नही करता। जिस घर मे मुन्ना इकलौता बच्चा रहा है, घर में उसकी प्रधानता रही है, सभी उसका लाड़-दुलार करते रहे है, पर अचानक एक दिन जब यह सुनता है कि उसके एक छोटा भैया हुआ है और सब परिजन मजाक-मजाक मे उसे चिढ़ाते है कि 'छोटा मुन्ना ज्यादा सुन्दर है, अब उसी को सब खिलौने मिलेगे, अब वही माँ का लाड़ला है, बाप का दुलारा है, मुन्ना तो खराब है, घटिया है, छोटा मुन्ना लाट साहब बनेगा' आदि बातें सुनकर मुन्ना ईर्ष्यालू हो उठता है और वह छोटे भाई को अपना सहज शत्रु समझ, उसे हानि पहुँचाने की चेष्टा में रहता है। बाद में उसकी पिटाई और डाँट-डपट होती है। उपेक्षित होकर वह और भी कटु हो जाता है। एक पद-च्युत विद्रोही राजा के सदृश्य वह अपनी सारी शक्तियों को अजमाता है, रोता है, मचलता है, बीमारी का बहाना करता है तथा आसामाजिक रूप से व्यवहार भी करने लगता है।

बुद्धिमान् माँ-बाप नये भाई-बहन के जन्म से पहले ही मुन्ना-मुन्नी की उत्सुकता और स्नेह को जाग्रत कर देते है। फलस्वरूप छोटे भैया के स्वागत तथा उस पर अपना स्नेह उंडेलने के लिए उसकी मानसिक तैयारी हो जाती है और वह

ईर्ष्यालु न होकर उसके प्रति स्नेही हो उठता है ।

बच्चा जब कोई भूल करे आप उसकी चर्चा उसकी उपस्थिति में न करें । अगर आप उसकी आलोचना करेंगे, तो वह आप के प्रति अविश्वासी और कटु हो जायगा । अगर हँस के बात उड़ा देंगे, तो वह उन भूलों को दोहराने का प्रोत्साहन पायगा ।



बच्चे को छुटपन से ही ससार की वास्तविकता समझानी होगी । संसार की हार-जीत, सफलता-असफलता को उसे सहज भाव मे लेना सिखाना होगा । दूसरे बच्चों को मारना, उनकी चीज़ छीन लेनी अथवा किसी वस्तु को देखकर लेने के लिए रोना या हठ करना, प्रत्येक बात मे अपनी ही मनचाही करनी आदि बुराइयाँ बचपन मे ही सुधारी जायँ । इसके लिए धीरता तथा दृढ़ता से बच्चे के साथ व्यवहार करना चाहिए । अन्यथा बच्चे का चरित्र-विकास ठीक से नही होगा और बड़े होकर आप के लिए वह एक समस्या बन जायगा ।

बच्चों के नन्हे-से दिल मे जरा सी बात से ठेस लग जाती है । बड़े-बड़े लेक्चर या कड़ी सजाएँ इन्हे सुधार नहीं सकतीं । कार्य-कारण-सम्बन्ध जोड़ना उनकी बुद्धि से परे है । मनोवैज्ञानिक ढंग से उनकी भूलों को सुधारे । हमदर्दी के साथ उन्हे सजा दें । धीरता के साथ अपने प्रयत्न के सुफल की आशा करें । अबोध शिशु को सुधारने में ही आपके अनुभव, उदाहरण और आदर्शों की परख है ।*

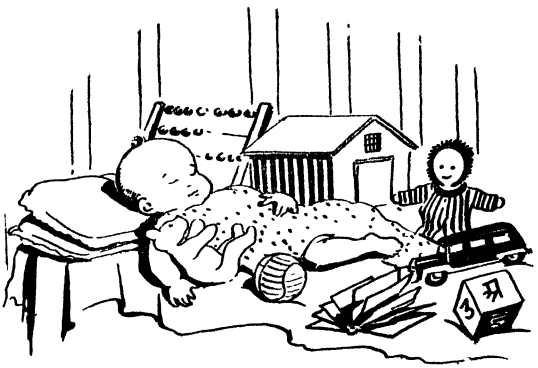
* बच्चों की चरित्र-सम्बन्धी समस्याओ का वर्णन आगे जाकर विस्तारपूर्वक किया जायगा ।

चौथा अध्याय

कुछ अन्य परेशानियाँ

जो माता-पिता शहर में रहते हैं, उनके बच्चों की समस्याएँ, गाँव में रहने वाले माता-पिता के बच्चो से अधिक उलझी हुई तथा विचित्र हैं। अपने बच्चों के विषय में जो आम शिकायतें माताएँ करती हैं, उनका उल्लेख नीचे किया जाता है।

रात्रि में पलंग भिगोना—कई बच्चे काफी बड़ी आयु तक रात को नींद मे पलग पर ही पेशाब कर देते हैं। बचपन से ही यथास्थान मल-मूत्र त्यागने,



तथा इन वेगों को रोकने की ट्रेनिंग न मिलने से, शारीरिक दुर्बलता, किसी बीमारी के बाद अथवा अन्य छोटे बच्चे की देखा-देखी भी बड़े बच्चों मे पलंग भिगोने की आदत पड़ जाती है। ऐसे बच्चे को रात का भोजन आठ बजे से पहले ही खिला देना चाहिए, क्योंकि भारी पेट सोने से भी रात्रि मे पेशाब की हाजत हो जाती है। रात्रि को भोजन के समय अधिक पानी न दिया जाय, और बच्चे को सोने से पहले तथा प्रातःकाल भी पेशाब करवाना चाहिए। बच्चे को उल्टा होकर न सोने दें। कब्जियत से भी अधिक पेशाब आता है। उसे दिन मे काफी पानी पीने को दें, ताकि पेशाब में एसिडिटी न होने पाय। दिन मे बच्चे को पानी और रेत से खेलने का अवसर दें। बच्चे को अपना पलंग सूखा रखने पर शाबासी दें, परन्तु गीला करने पर मज़ाक न करें। गीले कपड़े धुलवाने मे उसका सहयोग लें। रात्रि को सोते समय उसे डरावनी कहानियाँ भी न सुनायें। सपने मे डरकर भी बच्चे पेशाब कर देते हैं। उसकी दिनचर्या नियमित रखें और शाम को खुली हवा में खूब खेलने से रात्रि को

उसे गहरी नींद आयगी। सोने से एक घंटा पूर्व दूध में दो छुहारे उबालकर देने से भी रात्रि को पेशाब की हाजत नहीं होगी।

सेक्स भावना—सेक्स की भावना बच्चे मे छुटपन से ही होती है। कोई-कोई बच्चा जंघा से जंघा को रगड़कर, अथवा उल्टे लेटकर कुचेष्टा-सी करता है। जब कभी मुन्ना अपनी मूत्रेन्द्रिय को अनावश्यक छूता है, तो माता धमकाकर कहती है कि, 'इसे मत छू, बीमार हो जायगा।' बच्चे की यह चेष्टाएँ कुछ बुरी भावना से नहीं की गई है। उसे स्पर्श से सुख होता है, इसलिए वह ऐसा करता है। कभी-कभी तंग निकर, अथवा जाँघिये के कारण अथवा इन्द्री मे गंदगी से खुजली होने से भी बच्चा उसे बार-बार मसलता है, ऐसी दशा मे उसे धोकर तेल लगा देना चाहिए। तथा उसे सुविधाजनक कपड़े पहिनाने चाहिएँ। बच्चों को नंगा न फिरने दें, और उनके हाथों को व्यस्त रखें।

बच्चों का अपनी माता के स्तनो से विशेष प्रेम होता है। माँ की गोद मे लेटकर स्तन-पान करते समय कई बच्चे माँ के दूसरे स्तन से खेलने रहते है, उस पर हाथ फेरना, छाती से लगकर सोना, उस पर गाल सटाना आदि उन्हे बहुत प्रिय है। पाँच-छः वर्ष का मुन्ना भी माँ की छाती से लगकर अपना रोना भूल जाता है।

एक साल भर के बच्चे की माता मर गई, वह रो-रोकर बीमार तक हो गया। उसने दूध पीना छोड़ दिया तथा किसी के बहलाये में नहीं आता था। एक दिन उसकी मौसी उसे देखने आई, मौसी की गोद मे छः महीने की मुन्नी थी। मौसी इस बात की बहुत चेष्टा करती रही कि मन्ना उसके हाथ से दूध पी ले, परन्तु मुन्ना दूध की बोतल से अपना मुँह बार-बार दूर हटा लेता था। इतने में मुन्नी रोने लगी। मौसी उसे उठाकर स्तन-पान कराने के लिए मुन्ना के पलंग पर ही बैठ गई। थोड़ी देर तक मुन्ना उस छोटी बच्ची का दूध पीना देखता रहा। बड़े गौर से वह मौसी के स्तनों को ताकता रहा, फिर कुछ समय बाद 'माँ दुद्दू ! माँ दुद्दू !' कहकर वह मौसी के वक्षस्थल से लिपट गया—मौसी के स्तनों मे उसे अपनी माँ की सादृश्यता दीखी। ममतामयी मौसी ने मुन्ने को गोदी में लेकर दुलारते हुए पूछा, 'दूध पियेगा ?' मुन्ना के बार-बार दुद्दू, दुद्दू कहने पर उन्होंने दूध की बोतल उसके मुँह से लगा दी, मौसी के स्तनों पर हाथ रखकर, आँखें मींचकर, उसने कुछ देर में ही सारी बोतल खाली कर दी।

एक बार एक कुतिया अपने छोटे-छोटे बच्चो को लेकर बाग में चली आई और एक ठंडी जगह में बैठ गई। उसके पिल्ले होड़ लगाकर दूध पीने लगे। बगीचे के सब बच्चे खेलना छोड़कर, यह दृश्य देखने के लिए कुतिया को घेरकर बैठ गए। सभी बड़े प्रसन्न थे। वे आपस में पिल्लों की चेष्टा पर आलोचना भी करने जा

रहे थे।

"अरे देखो, होठों में जीभ लगाकर, पंजों से दबा-दबाकर ये कैसे दूध पी रहे हैं!"

"यह मोटा पिल्ला सब से तेज है, और यह छोटा बेचारा तो पिछड़ ही गया।"

"इसे बड़े थन से लगा दो, नहीं तो यह भूखा रह जायगा।"

कुतिया बेचारी भूखी थी, इस कारण वह पिल्लों को झटककर उठना चाहती थी। जब बच्चों को यह पता लगा, उनमे से कुछ अपने घरों से रोटी ले आये और कुतिया को उन्होंने भरपेट रोटी खिलाई। जानवर भी ममता और प्यार को समझता है, वह कुतिया भी नित्य शाम को अपने पिल्लो को लेकर बगीचे मे पहुँचती। बच्चे उसे रोज रोटी देते और पिल्लों को भरपेट दूध पीते देख-कर उन्हें बड़ा आनन्द आता।

स्तनों के प्रति बच्चो का सहज आकर्षण बहुत ही स्वाभाविक है और यह एक स्वस्थ सेक्स-भावना है। इसके अतिरिक्त अगर बच्चों की स्त्री-पुरुष विषयक कोई उत्सुकता जागे, तो माँ-बाप को चाहिए कि उनकी जिज्ञासा को बहुत ही चतुराई से शान्त करें। इस विषय मे बच्चों को शर्मिन्दा करना, या उनकी हँसी उड़ाना उचित नहीं है। प्रायः छोटे बच्चे मम्मी, डैडी और बेबी बनकर गृहस्थी चलाने का अभिनय करते हैं। जिस प्रकार वे घरो मे अपने डैडी-मम्मी को व्यवहार करते देखते हैं, वह भी उसी प्रकार गृह-स्वामी और गृहिणी का पार्ट करते हैं। इसमें कुछ अश्लीलता नहीं है। अगर उन्होंने अपने माता-पिता के व्यवहार मे कुछ अशिष्टता नहीं देखी है, तो वे भी सीमा का उल्लंघन करने की चेष्टा नहीं करेंगे।

जरा-जरा सी बात पर रोना—कई बच्चे हर एक काम रोकर करवाते हैं। किसी ने उनकी किसी चीज़ को हाथ लगाया, या उन्हें कुछ करने से रोका कि बस 'भें-भें' करके रोने लगेंगे। एक तो, इस प्रकार के बच्चों से घर मे शान्ति भंग होती है, दूसरी बात, उनकी आँखे खराब हो जाती है, साथ ही उनका स्वभाव भी रोंदू बन जाता है। वे दूसरों का ही सहारा ढूँढ़ते रहते हैं और हमदर्दी प्राप्त करने के लिए वे रोना शुरू कर देते हैं। ऐसे बच्चों में मुकाबिला करने का माद्दा नहीं होता। कुछ दिन बाद सब से दुत्कारे जाने पर वे चिड़चिड़े और जिद्दी भी बन जाते हैं। माँ-बाप, दादा-दादी या नाना-नानी जिन पर भी इनके रोने-मचलने का जादू चल जाता है, बस उसकी ओट मे वे मनचाही करवाने की चेष्टा करते हैं। खुद को सच्चा और सही प्रमाणित करने के लिए दूसरों के विरुद्ध मनगढ़ंत बातें भी गढ़कर, एक की चार-चार लगाते हैं। इस प्रकार वे झूठ बोलना और चुगली खाना भी सीख जाते हैं। एक बुराई दूसरी बुराई को जन्म देती है। अतएव जो बच्चा अधिक रोये, मचले, उसे

सुधारा जाय। अगर उसकी शिकायत या तकलीफ का कारण सच्चा है, तो उसे कहें कि 'पहले तुम चुप हो जाओ अगर तुम बिना रोये ठीक तरह से अपनी तकलीफ़ बताओगे, तो उसको दूर करना अधिक सरल होगा।' दो-चार बार इस प्रकार करने से जब बच्चे को यह विश्वास हो जायगा, कि मेरी सच्ची बात की सुनवाई होती है और मैं चाहे कितना भी रोऊँ, झूठी बात की उपेक्षा ही की जाती है, तो वह रोना-मचलना छोड़ देगा, साथ ही उसका धाँधली मचाना भी छूट जायगा।

असन्तोषी प्रकृति—कई बच्चे अपनी आयु, स्वास्थ्य, बल, बुद्धि और भूख की बड़ों से तुलना किये बिना ही, हर एक बात में बड़ों की रीस (नकल) करने की जिद पकड़ते हैं। उनको चाहे भरपेट खाना मिला हो, पर वे सन्तुष्ट ही नहीं होते। बड़े भाई-बहनों का हिस्सा अपने से अधिक देख, उन्हें इसी बात का रोना रहता है, 'बस हमें इतना ही मिलेगा? हम थोड़ा क्यों ले?' यह बात केवल खाने-पीने के मामले में ही नहीं होती, पाकेट-मनी या कपड़े मिलने पर, खेल-तमाशे अथवा कहीं निमंत्रण में जाने पर भी असन्तोषी बच्चे अपने बड़ों की बराबरी करने का ही दुराग्रह करते हैं। अपनी नासमझी के कारण वे यह भूल जाते हैं कि उनकी आयु और बुद्धि की दृष्टि से यह असंभव है। इसमें बड़ों और छोटों दोनों को असुविधा और घाटा होता है। ऐसे असन्तोषी बच्चों को सुधारने के लिए निम्नलिखित उपाय करने चाहिएँ—



इनको हमउम्र के बच्चों के साथ खिलाया जाय। इनके मनोरंजन के लिए, तथा बाहर घूमने-फिरने, खेलने का प्रबन्ध अवश्य करें, अन्यथा बच्चे मुंहफट होकर कह देते हैं, 'आप तो घूमते-फिरते और सिनेमा जाते हैं, पर हमें कहीं नहीं ले जाते।' बच्चों की समझ, आयु और रुचि के अनुसार जब खाने-पीने, खेलने-कूदने और

पहनने-ओढ़ने की सुविधाएँ हो जायेंगी, तब बड़ो के मामले मे वे दखल नहीं देंगे, अगर दे तो आप उन्हें दृढ़ता के साथ समझा दे कि बच्चे हर एक बात मे बड़ों की नकल और बराबरी नहीं कर सकते। कभी झूठ बोलकर, या चकमा देकर आप उसे न बहलायँ। उसके पूछने पर आप कह सकते है कि "हम कहीं बाहर काम से जा रहे है, जल्दी वापिस आ जायँगे।" क्यो जा रहे हो ? कहाँ जा रहे हो ? किसके संग जा रहे हो ? कब आओगे ? इस प्रकार की उत्सुकता को मामूली सूचना देकर शान्त किया जा सकता है। अगर कोई बताने लायक बात न हो तो उसे समझा दें कि बड़ों की हर बात बच्चों को नही पूछनी चाहिए। अच्छे मुन्ना-मुन्नी ऐसे प्रश्न नहीं करते।

अशिष्ट बच्चे—घर मे अच्छे उदाहरणों की तथा ठीक ढंग की ट्रेनिंग के अभाव में भी बच्चे अशिष्ट बन जाते है। उनमे मुंहजोरी की आदत पड़ जाती है। अपने अपराध पर लज्जित होने के बदले वे उलटकर जवाब देने लगते है कि 'हाँ जाओ करेंगे, तुम्हे क्या ? बडा आया शान बघारने।' अगर चिढ़कर बड़े भाई ने एक चाँटा जड़ दिया तब, उल्लू, गधा, मर जा, सूअर, कुत्ता आदि गालियों की बौछार शुरू हो जाती है। या फिर बड़े भाई की असफलता अथवा अपराध की कोई बात उन्हें पता होगी तो उसी को सबके सामने दोहराने और पोल खोलने की धमकी देने लगते है। छोटे मुँह बड़ी बात कहने की उनकी आदत-सी पड़ जाती है। ऐसे बच्चे को चिढ़ाना नहीं चाहिए। जिस पर उसकी ममता हो, जिसके प्रति सम्मान हो, उसी व्यक्ति द्वारा उसको समझा-बुझा कर उसे सुधारने की चेष्टा करनी चाहिए। तले ऊपर के बच्चे अगर परस्पर स्वार्थ-सिद्धि में संघर्ष होने के कारण लड़ते-झगड़ते है, तो ऐसी स्थिति मे छोटा भाई बड़े भाई की बात कभी नहीं सुनेगा, बड़े भाई के डाँटने पर वह उद्दण्ड होकर जवाब भी देगा। इधर बड़ा भाई अपना बड़प्पन दिखाने के लिए और भी चिढ़ायगा। इस प्रकार की स्थिति पैदा न होने दी जाय।

कभी-कभी माता-पिता किसी आगन्तुक के सामने बच्चे को नमस्ते या टाटा करने के लिए बाध्य-सा करते है। बच्चा अपने इस व्यवहार को अधिक महत्त्व मिलते देख, न करने की जिद पकड़ लेता है। इसके कारण उसे डॉट-डपट भी सहनी पड़ती है, बस उसे शिष्टाचार के इस व्यवहार से चिढ़-सी हो जाती है। परस्पर अभिवादन करना, बड़ों की उपस्थिति मे शिष्टाचारपूर्वक व्यवहार करना, प्रश्न करने पर विनम्रता-पूर्वक उत्तर देना आदि बाते बच्चे उदाहरण से ही सीख जाते है। आप घर में प्रातः-काल और रात्रि मे परस्पर नमस्कार करेंगे, तो मुन्ना भी सीख जायगा। मुन्ना आप का काम करे और आप उसे धन्यवाद दे, तो वह भी कृतज्ञता प्रगट करने से नहीं चूकेगा। बच्चे शिष्टाचार घर और स्कूलों मे अपने पालकों और गुरुओं से ही सीखते है। मुन्ना

छोटा है, इस कारण उसके प्रति शिष्टाचार के नियम उल्लघंन करने में कोई हानि नहीं, ऐसा विचार करना भूल है।

अधीर बच्चे—कई बच्चों का स्वभाव बड़ा अधीर होता है। आप उनसे कोई प्रतिज्ञा करें और वे उसकी पूर्ति के लिए उतावले हो जायँगे, उन्हें भूख लगी है, या कहीं जाने के लिए वह तैयार बैठे है, इच्छा-पूर्ति मे देरी होते देख वह 'चिड़-चिड़' करने लगते है। उतावले होकर दूसरों का मूड भी बिगाड़ देते है। अगर उनका कोई काम समय पर नही हुआ, या उसमे कोई कमी रह गई, या कोई उनकी चीज़ ले गया तो क्रोध से भुनभुना उठेगे। संगी-साथी या नौकर पर हाथ भी उठा देंगे। कई बच्चे क्रोध मे आकर सामने पड़ी चीज़ ही उठाकर पटक देते है, या हाथ-पाँव पटककर बिखर-बिखरकर रोने लगते है, खड़े-खड़े गिर पड़ते है या दूसरे को ही धक्का दे देते है। ऐसे अधीर या क्रोधी बच्चे घर और समाज मे प्रिय नहीं बन पाते। माँ-बाप के मिज़ाज की अधीरता और तेज़ी भी बच्चों पर अपनी छाप अवश्य डालती है। रोगी या उपेक्षित बच्चा भी बदमिज़ाज और अधीर बन जाता है। अतएव कारण का पता लगा कर उसे दूर करें। शारीरिक विकास के लिए मानसिक संतुलन का होना परम आवश्यक है। मनोवेगों में अगर अकसर उफान आने लगे तो बच्चे का स्वास्थ्य बिगड़ जाता है। खुशमिज़ाज बच्चे ही स्वस्थ और शान्त होते है।

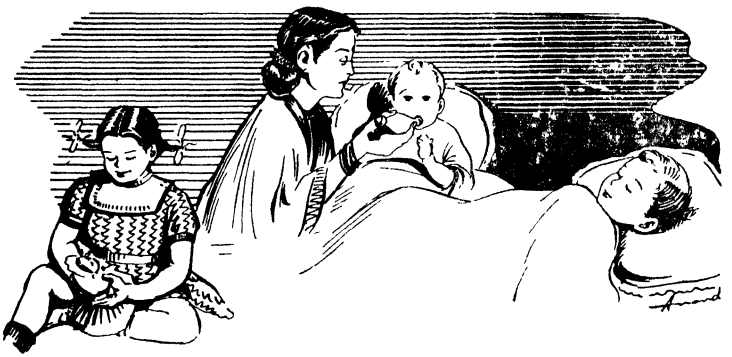
अधिकांश घरों में पिता बच्चों के लिए केवल सजा देने वाला दरोगा ही बना होता है। माँ भी बच्चों की शैतानियो से ऊबकर उन पर बिगड़ती रहती है। ऐसी स्थिति मे बच्चे माँ-बाप से कतराते है। बहुत कम माता-पिता बच्चे के प्रति संगी-भाव रखते है। वे जब भी बच्चे से बात करेंगे या तो किसी अपराध पर उसे डाँटेंगे अथवा 'अच्छे बनो' इस पर उपदेश देंगे। उनके खेल, हॉबीज़, मित्र तथा अन्य रुचिकर विषयों पर चर्चा करके अपने बच्चों का विश्वास तथा प्रेम प्राप्त करने की चेष्टा बहुत कम माँ-बाप करते है। यही कारण है कि बड़े होकर बच्चे उनसे दूर-दूर ही रहते है।

अगर इसी प्रकार की आपके बच्चों की भी कोई समस्या हो, तो पहले उसका अध्ययन करें, उसके कारण का पता लगायँ। बच्चे के आस-पास के वातावरण, संगी-साथी तथा बड़ों के उदाहरण आदि को समझने के बाद बहुत सहानुभूतिपूर्वक बच्चे को सुधारने की चेष्टा करें। जिस प्रकार बीमार या दुखी बच्चे की सेवा आप ममता से करती है, उसी प्रकार मानसिक रूप से रोगी बच्चा भी आप की सहानुभूति का पात्र है। बच्चे के प्रति अपना स्नेह बनाये रखकर, उसकी बुराई के हेतु को दूर करना आपका ध्येय होना चाहिए। आपकी कटु आलोचना, डाँट-डपट, और कठोरता से बच्चे का मानसिक रोग अधिक बढ़ जाने की संभावना है। धीरता और समझदारी से व्यवहार करने पर आपको अवश्य सफलता मिलेगी।

पांचवां अध्याय

हर काम का सही ढंग

जन्म से ही बच्चे का सोना, खाना, पीना, नहाना आदि सब कार्य नियमित तथा सही ढंग से होने चाहिएँ ताकि बच्चा सरलता से अभ्यास द्वारा उनका आदी हो जाय। अगर आरम्भ से ही बच्चे को प्रत्येक काम का सही तरीका सिखाया जाय, तो आगे जाकर गलत ढंग का प्रतिरोध बच्चा स्वयं करता है। कई माता-पिताओ का यह ख्याल



है कि 'बचपन की भूलें आगे जाकर अपने आप ही ठीक हो जायेंगी, अगर बच्चा रोदू, जिद्दी, समय-बेसमय खाने-पीने, सोने-खेलने का आदी हो तो इससे कुछ बनता-बिगड़ता नहीं, बड़े होकर ठीक ढग से काम करना वह खुद ही सीख जायगा।' परन्तु यह उनका भ्रम है। बचपन की आदतें स्वभाव बनकर, इतनी मज़बूत हो जाती है कि मनुष्य को उन्हें छोड़ने के लिए बहुत ही कठिन प्रयत्न करना पड़ता है। गलत ढंग से पाले हुए बच्चों को दोहरी मेहनत करनी पड़ती है—बुरी आदत को छोड़ने की चेष्टा और सही ढंग को सीखने का प्रयत्न।

आरम्भ में बच्चा दो मुख्य कार्य करता है—सोना और खाना।

बच्चे की नींद—ठीक ढंग से सोने की आदत बच्चे के लिए बहुत आवश्यक है। बच्चे को मानसिक और शारीरिक बढ़त के लिए पूरी नींद सोना बहुत जरूरी है। प्रत्येक बच्चे के स्वास्थ्य और क्रियाशीलता पर नींद की अवधि निर्भर है। चार महीने की आयु तक बच्चा लगभग १६ घंटे सोता है। जैसे-जैसे वह बड़ा होता है, वह अपनी आसपास की दुनिया में दिलचस्पी लेने लगता है। अतएव

उसके लिए रात्रि में दस घंटे, सुबह की हवाखोरी के बाद एक घंटा, तत्पश्चात् दोपहर को दो-तीन घंटे की नींद पर्याप्त है।

जिस काम का समय हो, तदनुसार वातावरण बनाना चाहिए। मान लीजिये बच्चे के सोने का समय है—उसका पलंग ठीक करके उसे ढीले कपड़े पहना दें, जूते, मोज़े और टोपी उतार दें। खिलौने उठाकर रख दें, कमरे में अंधेरा कर के पलंग पर बच्चे को लिटाकर, मछहरी गिरा दें। बच्चे के कमरे में बहुत से लोगों का चलना-फिरना या बातचीत करना उचित नहीं है। अपने आसपास के वातावरण से ही बच्चे को सोने के समय का ज्ञान हो जायगा। और वह उसके लिए मानसिक तैयारी कर लेगा। जब तक बच्चा छोटा हो, उसे करवट बदल कर लिटायें, एक ही ओर अथवा सीधे सुलाने से बच्चे के सिर का आकार बिगड़ जाता है। बच्चे को थपककर, गाकर या झुलाकर अथवा गोदी में लेकर सुलाने की आदत न डालें। हाँ, यदि बीमारी की हालत में बच्चे को बहलाने के लिए कभी-कभी ऐसा करना पड़े, वह दूसरी बात है।

जब बच्चे की नींद का समय हो, उसकी तैयारी के लिए आप भी सहयोग दें, सुलाने से पहले सुसकार लें, और प्यास लगी हो तो पानी पिला दें। सुलाने से पूर्व उसके संग खेलना या उत्तेजनाप्रद कहानी सुनाना, उचित नहीं है, क्योंकि इससे बच्चे का मस्तिष्क उत्तेजित हो जाता है। अगर आप जाने की जल्दी में हों, या उत्तेजित हो, तो बच्चे पर प्रगट न होने दें, अन्यथा वह बेफिक्र होकर सोयगा नहीं, उसे दुविधा बनी रहेगी कि माँ कहीं जा रही है।

बच्चे कभी-कभी नये स्थान या दूसरे के बिछौने पर भी बेफिक्र होकर नहीं सो पाते। अतएव आप जहाँ तक हो सके उसके अभ्यस्त तथा परिचित वातावरण में परिवर्तन न करें। उसका हल्का बिस्तरा, छोटा तकिया, नन्हा पलंग, सभी उसे नींद का संदेशा देते हैं। उनके अभाव में उसे सूनेपन का अनुभव होता है।

कभी-कभी ऐसा भी होता है कि मेहमानों के आ जाने से, अनावश्यक उत्तेजना पाकर, बच्चा थक जाता है, उसके अंग रिलैक्स नहीं हो पाते और वह थकावट तथा तनाव के मारे झुंझला-झुंझलाकर रोता है। अगर बच्चा सोने के समय, इन कारणों से रो रहा हो, तो छोटे मुन्ने के हाथ-पाँवों को इस प्रकार धीरे-धीरे झटकें कि वह ढीले पड़ जायँ, इस प्रकार उसका ध्यान भी बट जायगा। फिर धीरे से लिटाकर, बदन पर थपकी दें। अगर बच्चा बड़ा है तो उसे आँखें मींचकर हाथ-पाँव ढीले डालकर लेटना सिखायें। बच्चों को अपने शरीर को ढीला छोड़कर, आँख मींचकर लेटने का खेल खिलायें, इस प्रकार उन्हें अपनी

थकावट दूर करने का तरीका ज्ञात हो जायगा। जो बच्चा दिन भर बाहर रहा हो या मित्रों के संग दिन भर खेलकर शाम को थक गया हो, उसकी थकावट दूर करने का सब से सुन्दर और सहज उपाय है कि उसे गुनगुने पानी से नहलाकर, सुलाने से पूर्व दूध पिला दे। वह तुरन्त आराम से सो जायगा।

जिन बच्चों का स्वास्थ्य अच्छा नहीं होता, जिन्हें खुली हवा मे घूमने-फिरने, दौड़-धूप करने की सुविधा नही होती या जो अपनी नियमित दिनचर्या के आदी नहीं होते, उन्हें सुख-निद्रा नहीं आती। कभी-कभी भूख, अपच, दर्द, खुजली तथा हवा की कमी, गर्मी और तंग कपड़ो के कारण भी नींद नहीं आती। घर में असाधारण चहल-पहल के कारण भी बच्चे की शान्ति भंग हो जाती है और उसका ध्यान बटा रहता है।

कई बच्चे अंधेरे मे डरते है। झीगुर की आवाज, हिलती हुई परछाईं, आदि उनके हृदय मे डर पैदा करती है, या अकेले मे भी उन्हे नीद नहीं आती। ऐसी स्थिति मे डॉट-डपट न करे। उसे धीरे-धीरे अंधेरे मे अकेले रहने की आदत डाले। कभी-कभी ऐसा भी होता है कि बच्चे की नर्स या आया अपनी सुविधा के लिए बच्चे को हौवा, भूत, जू-जू आदि का डर बताकर सुलाने की चेष्टा करती है, या बड़े बच्चे अजीब-अजीब स्वर बनाकर मुन्ना को डराकर एक तमाशा बनाते है, ऐसी स्थिति मे बच्चा डरकर या सहमकर सो जाता है, परन्तु नींद मे वह बेचैन रहता है और अगर उसकी आँख खुल जाय, तो रात को भी वह घबड़ाकर रोना शुरू कर देता है।

इस प्रकार के अनेक कारण है, जिनके कारण बच्चे की नींद खराब हो जाती है। जिन बच्चो को गहरी नींद नही आती या जो बेवक्त सो जाते है, उनके कारण घर के अन्य प्राणियो की नींद मे बहुत खलल पड़ता है। तंग आकर सभी बच्चे पर झुंझलाने लगते है। क्योकि जब बच्चे के सोने का समय होता है, वह सो नहीं पाता। और सब के झुंझलाने से वह विद्रोही होकर, रोने लगता है। इसलिए घर-भर की सुख-सुविधा के लिए यह बहुत आवश्यक है कि मुन्ने को समय पर सोने की आदत डाली जाय। नियमित दिनचर्या होने पर बच्चा दिन मे सुबह और दोपहर मे सोने के पश्चात्, अन्य समय खेलता रहेगा, शाम को हवाखोरी से लौटने पर वह ताजगी का अनुभव करेगा, और रात्रि का दूध पीने या भोजन करने के पश्चात् वह सारी रात गहरी नींद सोयगा। रात को चैन से सोना तन्दुरुस्ती की पहली निशानी है। अन्य आदतो के सदृश्य इसकी भी आदत डालनी पड़ती है। अगर बच्चा अंधेरे के कारण या अकेले सोने मे डरता है तो उसके कमरे मे थोड़ा सा प्रकाश रहने दे और उसको अपनी गुड़िया या भालू को साथ मे सुलाने की इजाज़त दे दे, तब

वह निश्चित होकर सोयगा।

बच्चे का खान-पान—बच्चा क्या खाता-पीता है तथा किस प्रकार और किस समय खाता है ? तथा खाना-पीना उसके अंग मे सन्तोषजनक ढंग से लगता भी है ? ये सभी बाते विचारणीय है। शरीर की रक्षा और बढ़त के लिए भूख लगनी आवश्यक है। आपका कर्तव्य है कि बच्चे को इस स्वाभाविक क्रिया को ठीक ढग से यथासमय करना सिखायें। आरम्भ मे बहुत से बच्चो को स्तन-पान करना नहीं आता। स्तन-पान या बोतल से दूध पीने की क्रिया तभी सफल हो सकती है, जब कि बच्चा निपल को मुँह मे ठीक से दबाता हुआ, दूध निगलने तथा साँस लेने, इन दोनों क्रियाओं को इस प्रकार करे कि परस्पर रुकावट पैदा न हो। गलत ढंग से दूध पीने के कारण, बच्चे को साँस लेने मे अड़चन होती है, या वह दूध के साथ-ही-साथ वायु भी खींचता जाता है, जिससे या तो पेट में अफारा हो जाता है, अथवा ठसका लग जाता है। बच्चा भुँझला-झुँझलाकर दूध दबाता और अड़चन होने पर अचानक रोने लगता है। इससे बच्चे और माँ दोनों को तकलीफ़ होती है। दूध पिलाते समय बच्चे के सिर के नीचे हाथ रखकर, उसे ऊँचा रखें, साथ ही स्तन को दो उँगलियो के बीच मे दबाकर इस प्रकार पकड़ें कि उसका अग्रभाग बच्चे के मुँह मे भली प्रकार दबा रहे पर श्वास लेने में रुकावट न आय।

पाँच-सात महीने के बाद आप इस बात की चेष्टा करें कि बच्चा दूध के अतिरिक्त कुछ और वस्तु भी खाने लगे। ऐसा करने से साल भर के अन्दर-ही-अन्दर स्तन-पान की आदत छुड़ाने मे आसानी होगी। पतला सागूदाना या दलिया पका कर, उसे छानकर, दूध के संग मिलाकर दे। स्वाद के लिए ग्लूकोज़ या चीनी भी मिलायें। सन्तरे या टमाटर का रस, अथवा केले को कुचलकर थोड़ा सा दूध मिलाकर भी दिया जा सकता है। कई बच्चे दही खूब चाव से खाते है। विशेष करके गर्मियों मे ताज़ा और मीठा दही बहुत गुणकारी होता है। हाफ़ वायल्ड अंडे का पीला भाग नमक मिलाकर दें। इस प्रकार का भोजन देते समय बच्चे के हाजमे का अवश्य ध्यान रखें। आयु, रुचि तथा पाचन-शक्ति के अनुकूल ही भोजन में परिवर्तन करना चाहिए। जिस समय बच्चे के सामने के दो दाँत निकल आयें उसे रस्क (Rusk) या डबल रोटी अथवा बिस्कुट आदि कोई कड़ी वस्तु कुतरने को दें। आरम्भ में बच्चा केवल कुतरना जानता है। वह खरगोश के सदृश्य अपने सामने के दाँतों को ही अधिक उपयोग में लाता है, आप धीरे-धीरे उसे चबाना सिखायें। खाने की वस्तु को दाढ़ों की ओर धकेल दें। धीरे-धीरे वह दाढ़ों का उपयोग करना तथा भोजन निगलना भी सीख जायगा।

बच्चे को बोतल या गिलास स्वयं पकड़कर दूध पीने का अभ्यास चार-पाँच मास की आयु से ही कराया जाय। इससे बच्चा आत्म-निर्भर हो जाता है, तथा खाने की क्रिया में उसके दिलचस्पी लेने से, वह बेध्यान होकर खाना नहीं खायगा। दूध पिलाने या खाना खिलाने से पहले आप उसके बिब बाँध दें, ताकि उसके कपड़े खराब न हों।

देखने में आया है कि अमीरों के बच्चों को ३-४ वर्ष की आयु तक उनकी माँ या नर्स ही खाना खिलाती है। ऐसे बच्चों को खाना खिलाना एक मुसीबत हो जाती है, वे हजार नखरे करते है, बड़ी खुशामद करवाकर कुछ खाते है, कुछ बिगाड़ते है। बड़ों को अपने नखरों से प्रभावित होते देख, बच्चे अपना महत्त्व बनाये रखने के लिए, ऐसे-ऐसे स्वाँग रचते है कि माँ-बाप को यह ख्याल होता है कि बच्चा बीमार है, अपनी पूरी खुराक नहीं खाता, फलस्वरूप उसका वजन कम हो रहा है। बड़ों द्वारा की गई खुशामद में बच्चे को इतना आनन्द आने लगता है कि वह सचमुच में भूखा रहने लगता है, फलस्वरूप उसका स्वास्थ्य गिरता जाता है और वह चिड़चिड़ा, रोंदू तथा असहनशील बन जाता है। अतएव आप आरम्भ से ही बच्चे के खान-पान के विषय में निम्नलिखित बातों का ध्यान रखें—

(१) बच्चे के भोजन का समय बाँध दें। एक समय की 'फीड' अगर उसने पूरी नहीं ली है तो जल्द ही दूसरी फीड न दोहरायें। अभ्यास से बच्चा शीघ्र ही समय का पाबन्द हो जायगा।

(२) बचे हुए जूठे दूध या भोजन को दूसरे समय के लिए न रख छोड़ें। बच्चे को थोड़ा भोजन ही परोसा जाय, समाप्त कर लेने पर और दिया जा सकता है। खाद्य-पदार्थ की अधिकता देखकर भी, भोजन की ओर से बच्चे की रुचि हट जाती है।

(३) खाने से पूर्व अनुकूल वातावरण पैदा करें, मुन्ना की छोटी टेबल या पटरा, छोटे-छोटे बर्तन, पानी पीने की छोटी गिलासी, छोटा सा तौलिया आदि चीजे भली प्रकार सजायें। भोजन भी सफाई से परोसे। बासी या ठंडा अथवा मिर्च-मसालों वाला, तला हुआ या भारी भोजन मुन्ने को कभी न दें।

(४) भोजन के पहले मुन्ना के हाथ धुलवा दें, कपड़े बदल दें अथवा सामने तौलिया लगा दें, उसके कमरे में कोई हल्ला-गुल्ला या खेल-तमाशा न करें, नहीं तो उसका ध्यान उस ओर लगा रहेगा और खाने से मन उचट जायगा।

(५) भोजन के समय से १०–१५ मिनिट पहले ही मुन्ना को भोजन के लिए तैयार होने की सूचना दे दें, ताकि वह अपने खेल आदि से निबट ले, अन्यथा जिस खेल में वह डूबा हुआ है, उसे अचानक छोड़कर आने पर उसका ध्यान खाने में

नहीं लगेगा।

(६) चाहे मुन्ना खाते समय भोजन बिखेरकर हाथ-मुँह और थाली सान दे, परन्तु आप उसे स्वयं खाना खाने से वंचित न करें, आरम्भ में आधा भोजन खुद खिला दें, बाकी आधा उसे खुद खाने का अवसर दें। इस प्रकार, खाने की क्रिया में वह अन्त तक दिलचस्पी लेगा।

(७) खिलाते समय डाँट-डपट न करें, ना ही इधर-उधर की गप्प-सप्प सुनायें, बल्कि इस प्रकार की बातचीत करें कि उसका ध्यान भोजन की ओर रहे। यथा—'मुन्ना देखो यह टमाटर कितना अच्छा लगता है, इसके खाने से मुन्ना की गाले भी ऐसी ही लाल-लाल हो जायँगी, और हाँ, यह दही कैसी स्वाद है ! गोपाल कृष्ण भी दही खा-खा कर ही इतने तगड़े हो गये थे कि बडे-बड़े वीरो को पछाड़ देते थे।' 'हमारे मुन्ने को यह पता है कि हरी सब्जी खाने से पेट साफ रहता है। मुन्ना बड़ा समझदार है उसे भोजन के गुण ज्ञात है। अच्छा बताओ मुन्ना, इन चीज़ों के खाने से क्या-क्या फायदे होते है ?' बस इस प्रकार पूछे जाने पर भोजन के प्रति अपनी रुचि और जानकारी प्रगट करता हुआ, मुन्ना रोज चाव से भोजन करेगा।

(८) भोजन के विषय मे मुन्ने की पसन्द का भी ध्यान रखना चाहिए। पर साथ ही उसे सभी वस्तुएँ खाने की आदत डाले, कई बच्चे हरी भाजी पकी हुई नहीं खाते, परन्तु गाजर, टमाटर, मूली, शलगम सलाद के रूप मे खा लेते है। आप उन चीज़ों को कच्चा ही खाने दें। खाने के विषय मे डाँट-डपट नहीं करनी चाहिए। कोई वस्तु डरा-धमकाकर खिलाने से बच्चे की उसके प्रति हमेशा के लिए अरुचि हो जाती है। मुझे याद है कि मेरे छोटे भाई को शलगम बिल्कुल नहीं भाते थे। परन्तु जब तक वह शलगम खाकर समाप्त नहीं करता था उसे पुडिंग नही दी जाती थी। वह आँख बचाकर अपनी कटोरी के शलगम दूसरो की थाली मे डाल देता था। पकड़े जाने पर उसे वह पानी के साथ निगलने पड़ते थे, उस समय अन्य बच्चे उसकी लाचारी पर हँसते थे, नतीजा यह हुआ कि आज तक उसे शलगमों से बड़ी चिढ़ है।

(९) जहाँ तक हो सके बच्चे को अन्य बच्चों के संग खाना खाने का अवसर दें। इस प्रकार बच्चे देखा-देखी खाना सीख जाते है। देखने मे आया है कि जिस घर में तीन-चार बच्चे होते है, वह बाँटकर, माँगकर, चाव से खाना खाते है।

(१०) अगर बच्चे की भूख अचानक कम हो जाय, तो उसका कारण जानने की चेष्टा करें, पेट की सफाई का अवश्य ध्यान रखे, तबियत ठीक न होने पर हल्का भोजन दे। इस प्रकार एक-दो दिन पाचन-शक्ति को आराम मिलने से बच्चे की भूख फिर जाग उठेगी।

(११) कई बच्चे ऐसे होते हैं कि वे खेल की धुन में ज्यों-त्यों करके जल्दी-जल्दी खाना निगल लेते हैं, कई इसके विपरीत खाने से खिलवाड़ करते रहते हैं, और घंटों खाना लेकर बैठे रहते हैं। दोनों ही ढंग सुधारे जाने चाहिएँ। जल्दी-जल्दी खाने से भोजन भली प्रकार पचता नहीं, धीरे-धीरे खाने से भोजन पड़ा-पड़ा ठंडा और नीरस हो जाता है।

(१२) जब बच्चा सुघड़ाई से खाना सीख जाय, तब उसे प्रोत्साहन देने के लिए कभी-कभी अपने साथ भी खाने का अवसर दें, तथा सफाई से खाने पर उसकी प्रशंसा करें।

जैसे-जैसे बच्चा बड़ा होता जाय उसे 'टेबल मैनर्ज़' सिखाये जा सकते हैं कि खाते समय किस प्रकार बैठना, दूसरों के संग बाँटकर खाना, सफाई और सुघड़ाई से भोजन करना, बायें हाथ से गिलास पकड़कर धीरे-धीरे पानी पीना, खाते समय हल्ला या छीना-झपटी नहीं करनी, कौनसी वस्तु पहले खानी, कौनसी बाद में इत्यादि! जिन बच्चों को ठीक ढंग से भोजन करना सिखाया जाता है, वे आगे जाकर अनेक सामाजिक कर्त्तव्यों को बहुत सफलतापूर्वक निभा सकते हैं। परन्तु ये सब बातें परोक्ष रूप से ही सिखानी उचित हैं।

देखा-देखी बच्चा अन्य कार्यों के सदृश्य अपने हाथ से खाना खाने की भी चेष्टा करता है। ऐसा करता हुआ वह खाद्य-पदार्थ को छूकर, दबाकर, बिखेरकर तथा उसे मुट्ठियों में भींचकर उसके विषय में जानकारी प्राप्त करने की चेष्टा करता है। माता बच्चे के इस खिलवाड़ से ऊब जाती है। अगर बच्चा कोई काम बिगाड़कर या अटपटे ढंग से करता है तो इसके लिए डाँट-डपट करनी या उस पर झुँझलाना व्यर्थ है। बच्चा स्वयं काम करता हुआ जब बड़प्पन का अनुभव करता है तो उसे काम को ठीक ढंग से करना सिखायें। चेष्टा करने पर प्रोत्साहन दें और आप से प्रेरणा पाकर वह काम में आत्म-निर्भर होकर, काम को बड़ों के ढंग से, ठीक तरीके से करने की यथा-शक्ति चेष्टा करेगा। उसकी यही चेष्टा उसे हर एक काम को सही ढंग से करने का अभ्यासी बना देगी।

ठीक से उठना, बैठना, चलना, बात-चीत करनी, छींकना, खाँसना आदि बातों की शिक्षा भी बच्चों को सही ढंग से दी जाय। अगर वे आरम्भ में ही गलत ढंग से इन कामों को करने के आदी हो जायेंगे, तो फिर वह उनकी आदत बन जायगी। सही ढंग से काम सिखाने के लिए बच्चों को नियमों से न जकड़ा जाय। परोक्ष रूप से सुझाव, सहयोग तथा उदाहरण द्वारा ही उन्हें शिक्षा दी जाय। बच्चे अनुकरणप्रिय होते हैं, अतएव अपने बड़ों के ढंग का वे जल्द अनुकरण करने लगते हैं।

दूसरों की देखा-देखी अगर बच्चा कोई काम गलत ढंग से करता है या वह

अपने किसी बड़े की किसी बुराई को दोहराता है तो आप ऐसा कहकर उसकी आलोचना कभी न करें कि 'अरे मुन्ना तो अपने भाई के सदृश्य ही खाते समय थाली सान लेता है,' 'अपने पिता के सदृश्य ही अपना क्रोध प्रगट करता है' अथवा 'बहन के सदृश्य ही जल्दी-जल्दी बोलता है।' इस प्रकार की तुलना से बच्चा अपने बड़ों को अपना प्रतिद्वन्दी समझ उनसे भी अधिक गलत या बुरे ढंग से काम करता हुआ, उनसे आगे बढ़ जाने की प्रेरणा पाता है।

कहते हैं कि पूत के पाँव पालने में ही पता चल जाते हैं। बचपन में बच्चे के जैसे लक्षण होंगे, उनसे ही आगे जाकर उसका व्यक्तित्व बनेगा। कहावत है—'होनहार बिरवान के होत चीकने पात'।

छठा अध्याय

स्वास्थ्य की रक्षा

मैंने आम माताओं को यह कहते सुना है कि 'हम तो बच्चों की बीमारी से तंग आ गए। उनके खाने-पीने और पालन-पोषण पर इतना पैसा खर्च किया जाता है तिस पर भी आये दिन घर में कुछ-न-कुछ आफत आई ही रहती है। आज मुन्नू का लिवर खराब हो गया है, कल उसके हाथ में चोट लग गई है—परसों चुन्नू ने



अपनी टाँग की हड्डी तोड़ ली है, मुन्नी ने अपना हाथ काट लिया है, इसके अतिरिक्त किसी को जुकाम हुआ है तो किसी को खाँसी है। किसी के पेट में गड़बड़ है तो किसी का सिर दुखता है। खास करके बच्चों के टान्सलों का खराब होना तो मानो एक फैशन ही चल पड़ा है। भला बताओ क्या करें? बच्चों की दुःख-तकलीफ़ों की समस्याएँ ही ऐसी विकट हैं कि घड़ी भर का आराम नहीं है। भगवान् ने सब कुछ दिया है पर इन दुखड़ों के मारे जान को चैन नहीं है।'

दुर्बल स्वास्थ्य का कारण—मैं अपनी बहनों को यह सलाह दूँगी कि वह इस मुसीबत की जड़ तक पहुँचने की चेष्टा करें। प्रत्येक समस्या का कोई कारण होता है। देखिये कोई नीचे लिखी भूल कहीं आप ने तो नहीं की है—

(१) अगर मुन्ना-मुन्नी के माता-पिता का स्वास्थ्य अच्छा नहीं है तो उसका फल बच्चों को भी भोगना पड़ेगा। अपना जीवन-साथी चुनने से पहले प्रत्येक स्वस्थ व्यक्ति का यह कर्तव्य है कि वह इस बात को भी परखे कि अमुक व्यक्ति मेरे होने वाले बच्चों का बाप या माँ बनने योग्य है कि नहीं? इससे उत्पन्न हुए बच्चे मान-

सिक और शारीरिक रूप से स्वस्थ होंगे कि नहीं ? इसके खानदान में कोई ऐसी बीमारी तो नहीं है, जिसका असर मेरे बच्चे मे भी आने की संभावना हो ? याद रखे सृजन का कार्य बहुत महत्त्व का कार्य है। पारिवारिक जीवन की सफलता इसी पर स्थिर है। अगर किसी व्यक्ति के बच्चे रोगी है तो उसके परिवार की सुख-शान्ति बनी नहीं रह सकती। दम्पत्ति की सारी शक्ति और सम्पत्ति बच्चों की बीमारी ही शोषण कर लेती है। अव्वल तो दुर्बल स्वास्थ्य वाले व्यक्तियों को विवाह ही नहीं करना चाहिए, अगर वे विवाह करते भी है, तो सन्तान पैदा करने की भूल कभी न करें। हमारे देश मे आबादी की समस्या वैसे ही एक भयंकर रूप धारण कर रही है। अगर नसल का सुधार करना है तो केवल स्वस्थ दम्पत्ति ही सन्तान पैदा करे, इस बात को समझने की बड़ी आवश्यकता है।

(२) बच्चा जब गर्भ में हो उस समय माता का स्वास्थ्य दुर्बल हो जाने से या दिनचर्या तथा भोजन के असन्तोषजनक अथवा माँ के आकस्मिक बीमार होने से भी बच्चे का स्वास्थ्य चोट खा जाता है। इसके अतिरिक्त प्रसव-क्रिया के अस्वाभाविक और कष्टकर होने तथा औजार की चोट लगने या ऑपरेशन के समय बच्चे के अंगों या सिर में चोट लगने से भी बच्चे के शारीरिक या मानसिक विकास मे बाधा पड़ती है।

(३) जन्म के समय अंगों मे अगर कोई अस्वाभाविकता है, यथा—मूत्रेन्द्रिय का घूंघट ठीक से न खुलता हो अथवा नाक-कान का छिद्र बराबर न हो तो बच्चे के स्वास्थ्य पर उसका भी असर पड़ता है और उसकी शारीरिक क्रियाएँ स्वाभाविक रूप से न हो सकने के कारण शारीरिक विकास ठीक से नहीं हो पाता।

(४) जन्म के पश्चात् माँ के दूध का अभाव। आजकल पढ़ी-लिखी फैशन-परस्त माताएँ अपने बच्चे को दूध पिलाने से कतराती है। वे यह समझती है कि इससे उनका शारीरिक सौन्दर्य बिगड़ जायगा या उनकी सोसायटी-लाइफ़ में बाधा पड़ेगी। ऐसी स्त्रियों ने मातृत्त्व की महानता को नहीं समझा है। बड़े दुःख की बात है कि पढ़ी-लिखी सुसम्पन्न घराने की स्त्रियाँ अगर इस प्रकार विचार रखती है। उन्हें अपने स्वास्थ्य-रक्षा तथा बच्चे के पालन-पोषण की सभी सुविधाएँ है। अगर वे मातृ-विज्ञान के अनुसार अपने बच्चों को पालें, उन्हें अपना दूध पिलायें, तो वे सब तरह से आदर्श बच्चे बन सकते है। माँ के दूध पर बच्चे का जन्मसिद्ध अधिकार है। वही उसका प्राकृतिक भोजन है। माँ के दूध से जो जीवन-शक्ति बच्चे को प्राप्त होती है, वह पशु या डिब्बों के दूध से प्राप्त नहीं हो सकती। इसके अतिरिक्त उस दूध से बच्चों के शरीर मे एक अम्युनिटी—रोगों को परास्त करने की शक्ति—पैदा हो जाती है। अस्पतालों के आँकड़ों से पता चलता है कि जो बच्चे माँ के दूध

पर पले होते हैं, उनकी सहन-शक्ति ऊपर के दूध पर पले बच्चों की अपेक्षा बहुत अधिक होती है। वे दाँत आसानी से निकाल लेते हैं, उन्हें डायरिया, जुकाम, खाँसी आदि रोग प्रायः नहीं सताते। मौसमी बीमारियों का अगर आक्रमण हो भी जाय तो वे उसे आसानी से सहार लेते हैं। जब कि ऊपर के दूध पर पले बच्चों का हाजमा प्रायः खराब रहता है, वे जुकाम, खाँसी तथा छूत की बीमारियों के जल्द शिकार हो जाते हैं। उनके चेहरे पर वह लाली तथा अंगों मे वह पुष्टता नहीं होती, जो कि माँ के दूध पर पले किसी बच्चे मे पाई जाती है। वे दाँत भी कष्ट से निकालते हैं। माता के अनेक गुणों को वे पूरी तौर से ग्रहण नहीं कर पाते।

अतएव अपने बच्चे मे बीमारियों से लड़ने के लिए स्वाभाविक शक्ति—अम्यूनिटी—पैदा करने के लिए यह जरूरी है कि आप उसे अपना दूध पिलायँ। बच्चे को दूध पिलाने से माँ का शारीरिक सौन्दर्य निखर आता है। वक्षस्थल उभरता है और कमर तथा पेट पतले रहते हैं। इसके अतिरिक्त ऊपर का दूध पिलाने मे खर्चा भी अधिक होता है, बोतल और बर्तन की सफाई का भी खटराग रहता है। अगर वही पैसा माँ के भोजन पर खर्चा जाय, तो माँ और बच्चे दोनों को लाभ हो।

(५) यदि जन्म के पश्चात् बच्चे की देख-भाल का कार्य ऐसे व्यक्ति ने किया हो, जो कि शिशु-विज्ञान से अपरिचित है, तो भी बच्चे का स्वास्थ्य सन्तोषजनक नहीं रहता। माताएँ अपनी मूर्खता से स्वस्थ बच्चे को भी रोगी बना देती हैं। देखने में आया है कि पालन-पोषण-सम्बन्धी भूल करने से स्वस्थ बच्चा भी शारीरिक और मानसिक रूप से रोगी हो जाता है। हमारे देश में अधिकांश बच्चे माता की भूल के कारण शारीरिक और मानसिक रूप से समस्यापूर्ण बन जाते हैं। उनकी दिनचर्या, खान-पान, तथा अन्य क्रियाएँ ठीक ढंग से, ठीक समय पर और नियमपूर्वक न होने के कारण वे अस्वस्थ ही रहते हैं।

(६) जो माताएँ सम्पन्न घराने की हैं वे अपने 'डार्लिंग बेबी' की देख-भाल का काम खुद न करके आया या नर्स को सौंप देती हैं। आया और नर्स के द्वारा अपने बच्चे का पाला जाना वह एक फैशन और अमीरी समझती हैं। बस, दिन में खास मौको पर ही इन बच्चों को अपनी मेम साहब माँ के दर्शन हो पाते हैं। यथा—सुबह-शाम हवाखोरी पर जाते समय, सोने से पहले 'किस्सी' (चुम्बन) लेते समय या फिर किसी आगन्तुक के आने पर, जब कि बच्चे का नुमायशी ढंग से प्रदर्शन करना हो, 'बेबी टाटा करो'; 'ताली बजाओ'; 'आंटी को थैंक यू कहो'; 'अंकल को वाह ! वाह ! कर दो'। उसके इस प्रकार सर्कस के बन्दर के सदृश्य अभिनय कर देने पर उसे फिर आया को सौंप दिया जाता है। बेबी बेचारा तो आया को ही अपनी माँ समझता है और उसी की देख-रेख में बड़ा होता है। हमारे भारतवर्ष में आम तौर पर जिस

प्रकार की अशिक्षित आया मिलती है, उनको देखते हुए इन बच्चों का पालन-पोषण अच्छा हो सकता है, ऐसी आशा करना ही भूल है।

आया के चले जाने पर मैंने इन तितली-माताओं को ऐसा परेशान देखा है कि बस पूछो मत। मैंने उन्हें प्रायः कुछ इसी प्रकार के उद्‌गार प्रगट करते पाया है—'हाय क्या करूं ? बड़ी मुसीबत आ पड़ी, हमारी तो आया ही चली गई। बेबी ने तो मुझे परेशान कर दिया। मेरी तो समझ में नहीं आता कि इसे कैसे सँभालूं ? जब से यह हुआ है, मैंने तो इसे उठाया तक नहीं, आया ही इसको सँभालती थी।' 'मुझे तो दूध पिलाना ही नहीं आता था, इसलिए मैंने इसे ऊपर के दूध की आदत शुरू से ही लगा दी।' 'यह तो जन्म से ही बड़ा डेलीकेट (नाजुक) रहा है। मम्मी कहती हैं कि मैं भी बचपन में बड़ी डेलीकेट थी।' 'देखो ! देखो ! यह रोये जा रहा है। जरूर इसका पेट दुखता है। लाओ थोड़ा सा ग्राइप वाटर दे दूं। अरे इसने तो टट्टी कर दी। ओ माई गॉड ! अब कौन सँभाले। ए बैरा इधर आओ, ले जाओ इस गंदे बेबी को साफ करके लाओ।'

बैरा बच्चे को ले जाता है। उसे भला बच्चे से क्या ममता ? वह ठंडे पानी के नल के नीचे बच्चे को कर देता है। बच्चा चिल्लाता है, रोता है पर उसे क्या, जब उसकी माँ को ही बच्चे की परवाह नहीं है। और सचमुच में ठंड खाकर या वक्त-बेवक्त दूध पीकर बच्चा बीमार हो जाता है। फिर डॉक्टरों की दौड़-धूप शुरू होती है। बेचारा अभागा बच्चा इसी प्रकार भार रूप बनकर दुर्बल स्वास्थ्य लिए हुए बड़ा होता है। जरा बड़ा होने पर किताब थमाकर स्कूल भेज दिया जाता है। पढ़ाई उस पर लाद दी जाती है। घर पर भी मास्टर लगा दिया जाता है, परन्तु उसका शारीरिक और मानसिक विकास असन्तोषजनक ही रहता है।

तंग आकर माँ कहती है, 'हाय ये बच्चे होना भी क्या मुसीबत है।' बाप सोचता है 'जब माँ के लिए बच्चे पालने कठिन हो रहे हैं, तब तो सचमुच में ये जी का जंजाल ही है। शायद यह विवाह भी जी का जंजाल ही है !'

हाई-सोसाइटी के सम्पत्ति के बच्चों की कुछ इसी प्रकार की दुर्दशा होती है।

धनाभाव के कारण बच्चों की इतनी दुर्दशा नहीं होती, जितनी कि माता की अज्ञानता या उपेक्षा से होती है। वे अपने बच्चों की जरूरतों को नहीं समझतीं और न ही उन नियमों का पालन ही करती हैं जो कि बच्चे के स्वास्थ्य-विकास के लिए आवश्यक हैं। दूध के अतिरिक्त बच्चे के लिए कुछ और भी चाहिए। वह है—

(१) अपनी आयु के अनुकूल भोजन।

(२) नियमित दिनचर्या।

(३) सूरज, हवा और पानी।

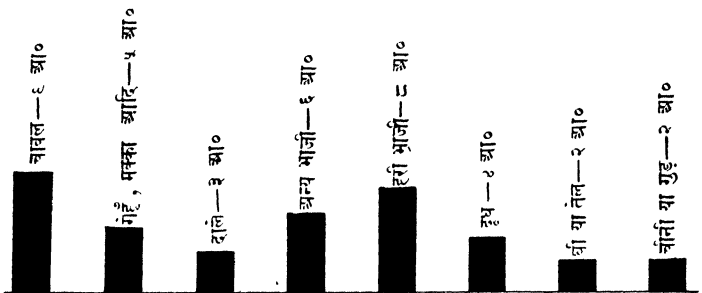
(४) आराम और नींद।

(५) सफाई।

(६) मनोरंजन और व्यायाम।

(७) अनुकूल वातावरण।

भोजन—भोजन के विषय में मैंने प्रथम खंड मे विस्तारपूर्वक लिखा है। प्रत्येक माँ को भोजन की किस्म उसके पौष्टिक तत्त्व तथा उसको पकाने का सही ढंग मालूम होना चाहिए। भोजन इस ढंग से परोसा जाय कि बच्चे की रुचि जाग्रत रहे। वह चाव से खाय और खाकर उसे तृप्ति हो। बेमन से निगला हुआ या ठूँसकर खिलाया हुआ खाना शरीर को लगता नहीं है, क्योंकि उसमें चबाते समय पर्याप्त मात्रा में लार नहीं मिलती। एक ही समय बहुत सा या बेमेल भोजन न परोसा जाय। भोजन की गंध और रूप ऐसा हो कि बच्चों को उसे खाने का सहज ही आकर्षण हो। भोजन को अधिक पकाकर या मिर्च-मसाले मिलाकर भूनकर उनका पौष्टिक तत्त्व नष्ट न किया जाय। चतुर माताएँ बच्चो की खाने-पीने विषयक रुचि को सुसंस्कृत बनाती हैं। भोजन शरीर-रक्षा के लिए किया जाता है। अपने चटोरेपन को सन्तुष्ट करने के लिए नहीं। यह बात बच्चो को अभ्यास से सिखाई जा सकती है। जो भोजन बच्चों को दिया जाय वह ताजा, स्वाभाविक, पौष्टिक, भिन्नता लिए हुए तथा रुचिकर हो। उसमें प्रोटीन, स्नेह (तेल या घी), लवण आदि सभी होने चाहिएँ। चावल, दाल, हरी भाजी, दूध, फल गेहूँ, जो मॉस खाते हैं वे मछली, अंडा आदि का भी प्रयोग कर सकते हैं।

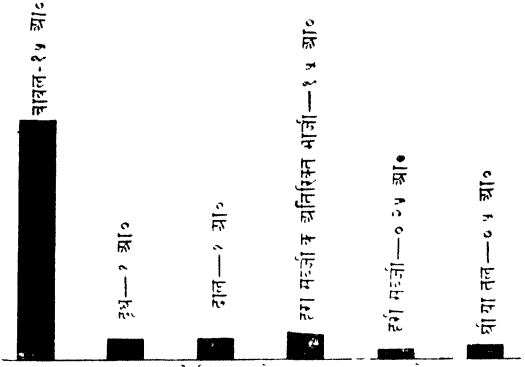


स्वास्थ्य के लिए अनुकूल तथा उपयुक्त भोजन

अर्थात् २८०० केलोरीज (Calories), जिसकी एक स्वस्थ व्यक्ति को प्रतिदिन जरूरत पड़ती है। मैडिकल रिसर्च की उपसमिति की रिपोर्ट के अनुसार एक बच्चे को १२ वर्ष की आयु तक २०० से लेकर २००० केलोरी तक की आवश्यकता होती है।

इस लेख में दो चार्ट दिए गये हैं जिनसे यह स्पष्ट होता है कि एक मनुष्य को

स्वस्थ रहने के लिए कितना भोजन पर्याप्त है और कितना अपर्याप्त है।



स्वास्थ्य के लिए अपर्याप्त तथा अनुपयुक्त भोजन

१७५० केलोरीज—एक मनुष्य की आवश्यकता से न्यून इस प्रकार के भोजन से स्वास्थ्य अच्छा नहीं रह सकता।

नियमित दिनचर्या—इस विषय मे भी प्रथम खण्ड मे मै काफी लिख चुकी हूँ। बच्चे को समय पर काम करने की आदत डालने से बच्चे और माँ दोनों को सुविधा रहती है और बच्चे की शरीर की मशीन भी अपने सोने, खाने-पीने, मल-मूत्र-त्यागने की क्रिया को यथासमय करने लगती है। बच्चा अपना खाना- पीना और सोना आदि काम ठीक वक्त पर ठीक ढंग से करे इस विषय मे मैने पिछले अध्याय मे लिखा है।

सूरज और हवा—सूरज न मिलने से जिस प्रकार पौधे पीले पड़ जाते है। उसी प्रकार बच्चे भी पीले और निस्तेज पड़ जाते है। सूर्य की किरणे हमारे शरीर मे प्राणदायिनी शक्ति और गर्मी पैदा करती है। जो बच्चे तंग घरों में, जहाँ शुद्ध हवा और सूरज की किरणें नहीं पहुँच पातीं, रहते है, वे कई बीमारियों का शिकार हो जाते है। उनके फेफड़े कमज़ोर रहते है। आँखे कमज़ोर हो जाती है। हड्डियाँ नर्म होकर मुड़ जाती है। जो बच्चे तंग गलियों मे रहते है जिनके शरीर पर कभी धूप नहीं पड़ती, उन्हें प्रायः 'रिक्टस' (हड्डियों का रोग) हो जाता है। विज्ञान के इस युग में सूरज की रोशनी का महत्त्व लोग दिन-पर-दिन अधिक-से-अधिक महसूस कर रहे है। गाँवों में यह रिवाज अब भी है कि छोटे बच्चे को तेल की लोई मलकर माँ उसे धूप में सुला देती है। इससे बच्चा चाहे थोड़ा सांवला पड़ जाता है, परन्तु स्वास्थ्य के लिए सूर्य-सेवन बहुत लाभप्रद है। बच्चों को जाड़ों में दोपहर को तथा अन्य ऋतुओ में सुबह के समय धूप का सेवन करना चाहिए। कुत्ता खाँसी, सर्दी, जुकाम, आँखों की

कमज़ोरी आदि में तो प्रातःकाल के समय धूप का सेवन विशेष लाभदायक बताया गया है।

साफ हवा भी बच्चों के लिए उतनी ही ज़रूरी है जितनी की धूप। ठंड से बचने के लिए बहुत से लोग रजाई से मुँह ढककर सोते हैं, बरसात में मच्छड़ों से बचने के लिए भी वे चादर से मुँह लपेट लेते हैं। दूषित हवा में साँस लेने से सोकर उठने पर वे ताज़गी का अनुभव नहीं करते। जो बच्चे गंदी गलियों तथा तंग घरों में रहते हैं, वे साफ हवा के अभाव मे अनेक बीमारियो के शिकार हो जाते हैं, साफ हवा मे आक्सीजन अधिक मात्रा मे होती है, आक्सीजन से ही हम जीवित रहते हैं। जिन लोगों का घर गलियो मे है उन्हें चाहिए कि अपने बच्चों को घर के पास खुले मैदान में खेलने भेजें। जाड़ो मे दोपहर का समय वे खुली छत पर बितायँ तथा अवकाश निकालकर माताएँ दोपहर को पास के पार्क, गार्डन या किसी खेत में बच्चों को लेकर घूमने-फिरने चली जायँ। शहरों मे रहने वाले व्यक्ति अगर अपनी छुट्टियां गाँवों मे बितायँ तो उनके बच्चों का स्वास्थ्य निखर आयगा। गाँवों मे खाने-पीने की सुविधा होती है, साथ ही अमूल्य धूप और साफ हवा सहज ही प्राप्त हो सकती है।

आराम और नींद—स्वस्थ बच्चे हरदम कुछ करते ही रहते हैं। उन्हे समाज में स्थान बनाना है, अपनी जानकारी बढ़ानी है, और ज़ीने के लिए खाना, पीना, सोना तथा अन्य कार्य सीखने हैं। वे अपनी खोई हुई शक्ति आराम और नीद से ही पूरी करते है। जो बच्चे चैन से नहीं सोते वे पनप नहीं पाते। बच्चे के बीमार होने के प्रथम लक्षण ही ये है कि उसकी भूख और नींद गड़बड़ा जाती है। जब कोई बीमार बच्चा आराम से सो जाय तो उसका यह मतलब है कि उसकी तबीयत सुधर रही है और वह जल्द ही अपनी खोई हुई शक्ति को पुनः प्राप्त कर लेगा। बच्चे की नीद के विषय मे मैंने पिछले अध्याय मे विस्तारपूर्वक लिखा है।

सफाई—वैसे तो कहने को हमारे घरो मे छूतछात इतनी है, पर सफाई की दृष्टि से हम लोगो का रहन-सहन बहुत ही गिरा हुआ है। यह बात नहीं कि केवल गरीबी के कारण ही लोग गंदे रहते है। पर कई व्यक्ति सफाई और पवित्रता को सही अर्थ मे नहीं समझते।

मेरठ मे हमारे पड़ौस मे एक महाजन परिवार रहता था। उनका लड़का मुंसिफ था। कहने को तो उनके घर इतनी छूत है कि स्त्रियाँ सूती कपड़ा पहनकर चौके में नही जायँगी—भोजन पकाते समय नमक-मिर्च या आटा डिब्बों मे से नहीं लेगी, जब मेहतरानी कूड़े का डिब्बा उठाने आयगी तो बाद मे सारी सीढ़ियों पर पानी छिड़का जायगा, पर उनका घर इतना गंदा रहता था कि वे हर कोने मे सुबह दातुन करते समय या पान खाकर थूकते रहते थे। बच्चे धरती पर

रोटी रखकर खा लेते थे। बर्तन उनके कभी कलई ही नहीं होते थे। लोहे की कढ़ाही और पीतल की पतीलियों में ही वे खाना पका लेती थीं। वैसे उन्हें कांच के बर्तनों में खाने से परहेज था, पर छाबड़ी वाले से चाट-पकौड़ी पत्तों पर लेकर चाट जाती थीं। बिस्कुट या डबल रोटी को तो वे अपवित्र समझती थीं, पर कीड़े पड़ी हुई बड़ियाँ, फफूंद लगा हुआ अचार और धंधोरे पड़े हुए बेसन से उन्हें कोई परहेज नहीं था। केवल कच्चे-पक्के की छूत थी। तवे पर कड़छी फेरकर बनाई हुई रोटियाँ जिन्हें वे परामठे कहती थीं, डिब्बे में रखकर जालों से पटी अलमारी मे रख देती थीं—और बच्चे स्कूल से आकर तथा सुबह के समय भी उन्हीं बासी परामठों का नाश्ता करते थे।

अपने माता-पिता के सदृश्य ही बच्चों की आदतें भी थीं—कभी सुबह उठकर मैंने उन्हें दाँत माँजते नहीं देखा। सिर मे उनके जुएँ पड़ी हुई थीं। बदन गीले करने को वे नहाना समझते थे। तौलिये या रूमाल का उपयोग तो वे जानते ही न थे। गुसलखाना और टट्टी तो उनकी ऐसी गंदी रहती थी कि बस पूछो मत। वैसे वे मेहतरानी से छूत करती थी पर अपने बच्चों को जहाँ-तहाँ हँगा-मुता देती थीं और उनकी छोटी मुन्नी एक गुदड़ी में लिपटी हुई उसी मे हँग-मूत कर पड़ी रहती थी। मक्खियाँ उसे परेशान करती रहतीं। घर तो घर सीढ़ियाँ तक उन्होने थूक-खखार से गंदी की हुई थीं। घर की स्त्रियाँ चौबारे में बैठकर नहातीं और कपड़े धोतीं और सारा पानी सड़क पर आते-जातों के सिर पर गिरता। घर झाड़ा और कूड़ा सड़क पर फेंक दिया, केले खाए और छिलके सड़क पर दे मारे, यह तो उनका रोज का काम था।

कहने को थे महाजन पर उनके ओढ़ने-बिछाने के कपड़े इतने गंदे कि क्या बताऊँ। सबसे अधिक दुर्दशा उनके घर में बीमार की होती थी। आखिर इस गंदगी का फल तो उन्हें भोगना ही पड़ता था। पहली बहू उनकी जचकी में मर गई थी। दूसरी के तीन बच्चे सूकनी बीमारी से मर चुके थे, पर उन्होंने उनकी बीमारी का इलाज तो किया नहीं पर सौत-का प्रकोप समझकर झाड़-फूंक, जप-तप करवाती रहीं। एक बड़ी लड़की माता से काली हो गई थी। छोटी लड़की की हाथ की हड्डी टूट गई थी, पर उसका इलाज ठीक से न होने के कारण वह लूली ही रह गई थी। एक लड़का था, उसके नाक-कान छिदाकर पाँव में लोहे की कड़ी डालकर तथा काजल के टीके लगाकर उसका हुलिया बिगाड़ा हुआ था। लाड़ में वह इतना बिगड़ गया था कि दिन भर रें-रें करता रहता—हर दम पैसे खर्चता, जिद पूरी न होने पर मचलता और रोता। बस, अधिक क्या कहूँ उनके घर का वातावरण सब तरह से गंदा था। कहने को इतना पैसा परन्तु रहन-सहन इतना गंदा कि उनके कारण पड़ौसियों को शर्म उठानी पड़ती थी।

हमारे अधिकांश अशिक्षित घरों में इसी प्रकार का रहन-सहन है। कुछ लोग तो अज्ञानता तथा आलस्यवश गंदे रहते हैं और कुछ आधुनिक ढंग की सफाई को फैशन-परस्ती में गिनते हैं और अपने को लकीर का फकीर बनाए रखने में ही गौरव अनुभव करते हैं। घर के रहन-सहन का प्रभाव बच्चों पर भी पड़ता है। साफ-सुथरे घर के बच्चे सँवारी हुई क्यारी के सदृश्य आकर्षक तथा स्वस्थ होते हैं जब कि गंदे घर के बच्चे अंधेरी और सूकी-सड़ी जगह में उगे हुए पौधों के सदृश्य पीले और मुरझाये हुए प्रतीत होते हैं।

अब सभ्यता का यह तकाजा है कि हम सफाई और पवित्रता का महत्त्व सही अर्थ में समझें। धार्मिक ढकोसलो और छूतछात को सफाई समझना गलत है। हमारे देश के समाज और गली-मौहल्ले तभी साफ रह सकते हैं जब कि हम अपने बच्चों को सफाई से पालें, उन्हें सफाई की आदत डालें ताकि वे गंदगी से घृणा करें। अपने शरीर, वस्त्र, निवास-स्थान तथा आस-पास की सफाई के महत्त्व को समझें। उनकी आदतें साफ हों, विचार पवित्र हों और उनके कार्य उजले हों। गंदगी सब बीमारियो की जड़ है। आदतें ही बच्चे का स्वभाव बनाती हैं। जो बच्चा नियम से नित्य शौच जाता है, रोज नहाता है, जिसके ओढ़ने-बिछाने तथा पहनने के कपड़े साफ हैं, जो साफ बर्तनों में सफाई से पका हुआ खाना खाता है, सफाई से अपना काम करता है, और गंदगी से दूर रहता है, उससे बीमारी अपने आप ही दूर रहेगी।

बच्चों को निम्नलिखित सफाई की आदत बचपन से ही डालनी चाहिए—

(१) शरीर व वस्त्रों की सफाई का ध्यान रखना।

(२) खाने से पहले और बाद में हाथ और मुँह साफ करना।

(३) पेट, दाँतो, बालों तथा हाथों को साफ रखना।

(४) निश्चित स्थान पर मल-मूत्र त्यागना।

(५) आस-पास की जगह को गंदा न करना।

(६) बाजार की कोई चीज न खानी।

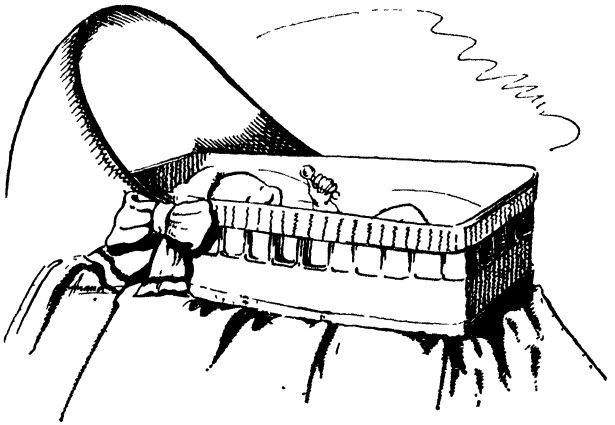
(७) मुँह, नाक-कान में उँगली नहीं डालनी।

(८) रूमाल का इस्तेमाल करना तथा गंदी जगह में नहीं उठना-बैठना।

बच्चों की पालन-पोषण विषयक अन्य सफाई की हिदायतों का उल्लेख मैंने यथास्थान किया है।

व्यायाम व मनोरंजन—बच्चों के लिए कोई खास तरह के व्यायाम की जरूरत नहीं है। खेल-कूद में ही उनकी काफी कसरत हो जाती है। आवश्यकता इस बात की है कि ऐसी खुली जगह में जहाँ साफ हवा और धूप आती हो, बच्चों को खेलने-कूदने की सुविधा हो। स्कूलों में भी बच्चो के लिए मनोरंजक खेल, ड्रिल तथा ऋतु-अनु-

सार इनडोर या आउटडोर खेलों आदि की व्यवस्था की जाय। हमारे देशी खेल यथा-कबड्डी, आँख-मिचौनी, कुत्ता-बिल्ली, खो-खो तथा अन्य खेल भी व्यायाम की दृष्टि से बहुत उपयोगी तथा मनोरंजक हैं। जिन बच्चों के जीवन मे खेल-कूद और मनोरंजन का अभाव होता है वे सुस्त पड़ जाते हैं, उनका मानसिक स्वास्थ्य अच्छा नहीं रहता। बाद में इसका प्रभाव उनके शारीरिक स्वास्थ्य पर भी पड़ता है। छोटा बच्चा पालने में पड़ा हुआ अपने मे मस्त, गर्र-गर्र शब्द करता हुआ, हाथ-पाँव मारता है, नहाते समय पानी मे छपक-छपक करके प्रसन्न होता है। यही उसका व्यायाम है। जब वह कुछ और बड़ा हो जाता है तो पलंग पर लोट-पोट होकर खेलता है, किसी वस्तु को पकड़कर खड़ा हो जाता है। कुछ दिन बाद जब उसे चलना आ जाता है तो घुटने-घुटने खिसककर और ठुमक-ठुमक चलकर वह काफी व्यायाम कर लेता है। चाल मे बढ़ता आ जाने पर



दौड़ना, चढ़ना, उतरना आदि क्रियाओं को करता हुआ वह काफी कसरत कर लेता है। बच्चे को नहलाने से पहले उसे तेल मलने से भी उसकी त्वचा और अंग पुष्ट होते हैं। बच्चे की खेल के प्रति रुचि और स्वाभाविक प्रफुल्लता उसे क्रियाशील बनने की प्रेरणा देती है।

अनुकूल वातावरण—बच्चे के मानसिक और शारीरिक स्वास्थ्य के लिए अनुकूल वातावरण की आवश्यकता के विषय में मैं दूसरे अध्याय में ही विस्तार-पूर्वक बता चुकी हूँ, बच्चों की स्वाभाविक चपलता और प्रसन्नता पर प्रतिकूल वातावरण में मानों पाला ही पड़ जाता है। मनोवैज्ञानिकों का कहना है कि जिन बच्चों को अपने भाव-प्रकाशन और क्रियाओं को करने की पर्याप्त सुविधा नहीं होती, जो हर-दम रोक-टोक और डर के कारण घुटे हुए रहते है, उनकी विकास सम्बन्धी शक्तियाँ

या तो कुंठित हो जाती है या अन्दर-ही-अन्दर उनका मानसिक स्वास्थ्य इतना बिगड़ जाता है कि बड़े होकर वे असामाजिक ढंग से व्यवहार करने लगते हैं। वे क्रूर, ईर्ष्यालु, आलसी, बहानेबाज, कामचोर या गुस्ताख बन जाते हैं। अपने सहयोगियों से उनकी पटती नहीं है। लोग उन्हें सनकी कहते हैं। उनके मिजाज में असहनशीलता, झुँझलाहट, परेशानी और जल्दबाजी पाई जाती है। मुसीबत के समय वे जल्द घबरा जाते हैं। जरा सी बात से चिढ़ जाते हैं। अपनी दुर्बलता छिपाने के लिए सहयोगियों से उलझ पड़ते हैं। ऐसे व्यक्तियों का जीवन एक समस्या बन जाता है। प्रत्यक्ष रूप में चाहे वे स्वस्थ दीखते हैं, पर उनका मानसिक स्वास्थ्य बचपन से घुन खाया हुआ होता है।

अगर आप अपने बच्चे के पालन-पोषण में उपरोक्त बातों का ध्यान रखती हैं उसकी तकलीफ़, चोट-चपेट और बीमारी का प्राथमिक उपचार करना जानती हैं,* तो उसका शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य सचमुच मे अच्छा रहेगा। फिर आपको यह कहने का मौका प्रायः नहीं आयगा कि मैं तो अपने बच्चों के मारे परेशान हो गई हूँ।

---

*नर्सिंग और प्राथमिक उपचार के विषय मे मैंने 'आपका मुन्ना' क प्रथम भाग में लिखा है।

सातवाँ अध्याय

मुन्ना रोता है

मुन्ना रोता है। भला क्यों ? दूध पिला दिया, कपड़े बदल दिये, ढक कर गुदगुदे पालने मे लिटा दिया, अब क्या तकलीफ़ है जो रो-रोकर घर सिर पर उठाया हुआ है ? कोई सुने तो यही कहे, कि बेचारे मुन्ने को कोई मार रहा है। भई कोई बात भी हो ! लो, गोदी मे उठा लिया छाती से चिपटा लिया, पुचकारा, दुलारा--अब मुन्ना भैया चुप है।

यह अच्छी आदत है ! माँ क्या चौबीस घंटे तुम्हारे पास ही बैठी रहे ? उसे घर का काम भी तो करना है, कपड़ों की मरम्मत करनी है। शाम का नाश्ता तैयार करना है। तुम अब दो घंटे सो जाओ तो माँ इन कामों से जल्दी ही निबट लेगी। लो झूले मे लेटो। रंगदार चिड़ियो के झब्बे को देखो।

पर माँ ने ज्यो ही पीठ मोड़ी और मुन्ने ने फिर माँ ! माँ ! की दुहाई मचाई। क्या तकलीफ़ है ? कुछ समझ मे नही आता। डॉक्टर साहब शाम को आये। उनसे पूछा—"मुन्ने को गोदी मे रहना क्यों अच्छा लगता है ?"

वह भी हँसकर बोले—"क्यों नहीं अच्छा लगे, आखिरकार नौ महीने पलंग में रह कर तो वह बड़ा नही हुआ है ? वह माता के स्पर्श का आदी है। पलंग-बिछौने उसे अखरते है। माँ के शरीर की स्वाभाविक गर्मी और नर्माई का वह वहाँ अभाव पाता है। आप ताज्जुब करती होंगी कि इतना छोटा बच्चा ये परिवर्तन कैसे परख लेता है ? उसमे बड़ी बुद्धि है। आखिरकार इन्सान का बच्चा है।"

रोना मुन्ने के लिए स्वाभाविक है, इस से उसके फेफड़ों का व्यायाम होता है। रोने से फेफड़ों मे हवा भरती है और वे फैलते है। बच्चा रोकर अपनी शिकायत करता है, अपनी ओर ध्यान आकृष्ट करता है, रोकर उसे प्यार-दुलार मिलता है, प्यार और आदर किसे नहीं भाता ? कुछ ही दिनों में उसे यह भी पता चल जाता है कि असहाय होते हुए भी उसके पास एक अमोघ अस्त्र है—रुदन। उसका वह जब-तब उपयोग करता है। क्रोध प्रगट करना होगा तो चिल्लाकर जोर से चीखते हुए रोयेगा। अगर कुछ चुभ गया है या उसे तकलीफ़ है, तो रोते-रोते आँखों से आँसू भी झरने लगेंगे, और तभी माँ विकल होकर उसे उठा लेगी और पुचकारती हुई कहेगी, 'हाय, बेचारे के आँसू तक निकल आए। ज़रूर कुछ तकलीफ़ है।' और सचमुच में बहुत जल्द ही वह बच्चे की तकलीफ़ का पता लगा लेती है।

रोने का कारण—पेट में या कान में दर्द होने पर बच्चा विकल होकर रोता है। कान या सिर में दर्द होगा तो अपना हाथ बार-बार उस ओर ले जायगा। पेट में दर्द होने पर वह घुटनों को पेट की ओर इकट्ठा करेगा। कंधे से लगाने या उल्टा लिटाने से उसे आराम मिलेगा। बहुधा मुन्ना जब थककर सोने के लिए रोता है, तो अपनी मुट्ठियों से आँखें मलने लगता है। अगर उस समय माँ साथ में लेटकर, एकान्त मे ऐसे स्थान पर जहाँ प्रकाश कम हो, उसे सुला दे तो वह झट सो जायगा।



जब मुन्ना भूखा हो तो अपनी दोनों मुट्ठियाँ मुँह मे ठूँस-ठूँसकर रोता है। अनुभव से माँ को यह पता चल जाता है कि बच्चा क्यों रो रहा है? जिन बच्चों के नहाने, खाने-पीने तथा सोने का समय बंधा होता है, उनके रोने के कारण का पता लगाना कठिन नहीं होता। अगर नहाने का समय है, तो तेल मलकर गुनगुने पानी से उसे नहला दे, नहाने के बाद दूध पीते-पीते ही वह सो जायगा और अगर उसे मक्खी-मच्छर तंग नहीं करते और आस-पास शोरगुल नहीं है, तो वह आराम से तीन घंटे सोयगा। पूरी नींद सोकर, वह हँसता हुआ उठेगा। अब कुछ स्वस्थ होकर, वह दूध के समय फिर ठुनकेगा। अगर उसके पीने का समय हो गया है, तो दूध पहले से तैयार रखा जाय। अगर दूध का समय नहीं हुआ है, तो थोड़ा सा पानी मुन्ने को दें। पानी पीकर उसकी बेचैनी बहुत कुछ दूर हो जायगी।

मुन्ने के कपड़े या नैपकिन तग या उसकी हरकतों में अड़चन डालने वाले

न हों, बिस्तरा अधिक सख्त या तकिया अधिक ऊँचा न हो। इसका भी विशेष ध्यान रखें कि जहाँ उसका पालना हो वहाँ हवा और रोशनी का रुख ठीक हो, मुन्ने को गीला रहना बिल्कुल पसन्द नहीं है। इसलिए भी वह रोता है। अगर उसके मुँह में दूध लगा है और मक्खियाँ नाक-मुँह पर बैठकर उसे परेशान कर रही है तब भला अपनी माँ का ध्यान आकृष्ट करने के लिए, वह क्यों न रो-रोकर घर सिर पर उठाय ? बेचारा नन्हा-मुन्ना बोल तो सकता नहीं, अपनी तकलीफ़ और कैसे बताय ?

माँ-बाप का मिज़ाज—बच्चे अधिकतर अपने माँ-बाप का मिज़ाज भी लेते हैं। अगर माँ बादलों की गड़गड़ाहट और बिजली की कड़क से डरकर तकिये में अपना मुँह छिपा लेती है, अथवा चूहे को कमरे में इधर-उधर भागता देख चीखकर पलंग पर चढ़ जाती है, तो अचानक डर जाने का दोष मुन्ने में भी आ सकता है। कोई भी जोर का शब्द या धमाके को सुनकर अथवा अपरिचित शक्ल को देखकर वह भी डरकर रोने लगेगा।

स्वस्थ बच्चे आरम्भ के कुछ दिनों तक ही रोते हैं, बाद में अपनी दिनचर्या के आदी हो जाने पर, पेट भरे रहने पर वे पालने में अपनी मौज में खेलते रहते हैं। दुर्बल बच्चे अधिक चिड़चिड़े होते हैं। इसका कारण उनका स्वास्थ्य है। ऐसे बच्चों को चुप कराने के लिए हरदम गोद में नहीं रखना चाहिए। इससे तो उनके स्वास्थ्य पर और भी बुरा प्रभाव पड़ेगा। रो-रोकर वे जो चाहे करवा लेंगे। हर समय दूध ही मांगेंगे। परेशान होकर, थककर, माँ उनके आगे हार मान लेगी। इससे माँ का जीवन तो दुःखी होता ही है, साथ ही ऐसे बच्चों का स्वास्थ्य भी दिन-पर-दिन गिरता जाता है, और परिजनों की परेशानी भी बढ़ जाती है।

ऐसे रोंदू बच्चे की किसी योग्य डाक्टर द्वारा परीक्षा करवानी चाहिए। अगर कोई बीमारी हो, तो उसका इलाज करवाया जाय, अगर रोने का कारण केवल दुर्बलता ही है तो उसकी दिनचर्या नियमित रखी जाय। खाना-पीना, नहाना-धोना, खेलना और सोना सब काम के लिए समय बंधा हो। इस पर भी अगर बच्चा रोए तो घबरायें नहीं। कुछ दिन बाद वह स्वयं ही चुप हो जायगा और दिनचर्या का आदी होकर, वह शीघ्र ही स्वस्थ तथा प्रफुल्ल दीखने लगेग।

बच्चे के पेट की सफाई का विशेष ध्यान रखा जाय। क्योंकि कब्जियत तथा पेट में वायु भर जाने से बच्चे बुरी तरह रोते हैं। अगर अचानक ऐसी तकलीफ़ हो जाय तो बच्चे को सौंफ का पानी, या ग्राइप वाटर देकर, पेट पर आटे और तेल की गोली फेर दें अथवा पेट पर हलका सा तेल लगा कर अपना हाथ गर्म करके सेक दें। अगर कब्जियत के कारण बहुत ही तकलीफ़ हो तो ग्लीसरीन या

साबुन की बत्ती चढ़ाकर फौरन टट्टी करवा दें। तभी बच्चे की बेचैनी दूर होगी। इसके बाद दूसरे दिन घुट्टी या मिल्क ऑफ़ मैग्नीशिया देना ठीक है।

गर्मी और बरसात में मरोरी से बच्चे बहुत परेशान होते हैं। उन्हें खुली हवा में रखा जाय, हल्के और ढीले कपड़े पहिनाए जायँ तथा नियमपूर्वक दोनों समय स्नान कराकर, प्रिक्ली हीट पाऊडर छिड़क दिया जाय।

छोटे मुन्ने के रोने से माँ को अधिक घबड़ाना नहीं चाहिए। उसकी तो यह भाषा ही है। अपनी माँग पूरी करवाने के लिए भी वह रोता है। तभी तो कहावत बनी है—'बिना रोये तो माँ भी दूध नहीं पिलाती।'

रोगी बच्चा—कई बच्चों का स्वभाव बात-बात पर रोने का हो जाता है। अधिकतर वे ही बच्चे प्रायः रोते हैं, जिन का स्वास्थ्य अच्छा नहीं होता, या फिर खाना हजम न होता हो अथवा लिवर बढ़ा हुआ हो। अन्य स्वस्थ बच्चों को खेलते-कूदते और खाते-पीते देख, उन्हें अपने खाने-पीने पर लगी पाबन्दियों तथा अपने संगी-साथियों के खेल-कूद मे शामिल होने में अपनी असमर्थता पर झुंझलाहट आती है। ऐसे बच्चों में सहन-शक्ति की तो वैसे-ही कमी होती है, अतएव वे किसी के जरा सा भी कुछ कह देने अथवा चिढ़ा देने पर बिखर-बिखर कर रोने लगते हैं।

घर का अधिक दुलारा बच्चा भी रो-रोकर अपनी जिद पूरी करवाने की चेष्टा करता है और जब दो-चार बार के अपने अनुभव से उसे यह पता चल जाता है कि मेरे रोने के आगे सब को झुकना पड़ता है, तब तो वह इस अमोघ अस्त्र का बार-बार प्रयोग करता है। कभी-कभी माता या बहन भी रोंदू स्वभाव मुन्ने की उपस्थिति मे ही यह कह बैठती है, 'अरे भाई इसे मत छेड़ो, यह रो देगा, तब बड़े नखरों से चुप होगा।' बस, ऐसे कथन से मुन्ने को रोने का और भी प्रोत्साहन मिलता है। वह रो-रोकर घर भर को डराता है, और फिर उसे दुर्बल, तथा असहाय जानकर घर भर उसकी खुशामद करता है। इस प्रकार अपने रोने को महत्त्व मिलते देख, मुन्ना सचमुच मे रोंदू बन जाता है।

सहानुभूति प्राप्त करने के लिए—कभी-कभी बच्चा अपने अधिकार और सम्मान की रक्षा करने में स्वयं को असमर्थ पाकर भी रोने लगता है। रमेश को जन्म-दिन पर एक नया इंजिन मिला, उसकी मौसी की लड़की प्रीता ने आकर इंजिन हथिया लिया। रमेश जानता था कि प्रीता उसके खिलौने प्रायः तोड़ जाती है। उसने लपककर प्रीता के बाल पकड़ लिए, पर वह प्रीता से अपना इंजिन नहीं छीन सका। इसलिए बिखर-बिखरकर रोने लगा। ऐसे समय में माँ को चाहिए था कि बच्चे के अधिकारों की रक्षा करतीं। बच्चा रोकर अपनी असमर्थता प्रगट करता है और

न्याय की दुहाई देता है। ऐसी स्थिति में बच्चे को बड़े का सहयोग मिलना चाहिए। पर अगर बच्चा बेकार और बेमतलब रोता है तो उसे उठाकर एक कमरे से बिठा



दिया जाय। ऐसी स्थिति में मारना व्यर्थ है। बच्चा अपने मिज़ाज को काबू करने में असमर्थ है, रोने से उसे भी कष्ट होता है, यह क्या उसके लिए कम सज़ा है? आप जरा डपटकर उसे कहें, 'चुप! चुप! चुप हो जाओ!' और हाथ पकड़कर दूसरे कमरे में बिठा आयें। जब वह देखेगा कि मेरी ओर कोई ध्यान नहीं दे रहा

है तो कुछ देर बाद सिसकता हुआ वह स्वयं ही चुप हो जायगा। प्रायः इसके बाद बच्चे थककर सो जाते हैं। उठने पर उन्हें समझाया जाय कि 'इस प्रकार रोना बुरी बात है, समझदार और अच्छे बच्चे ऐसा नहीं करते। रोने वाले बच्चों को कोई पसन्द नहीं करता।'

जैसे-जैसे बच्चा बड़ा होता है उसको अपने मिज़ाज पर काबू पाना आ जाता है। तीसरे और चौथे वर्ष में पदार्पण करते-करते उसका यह दोष छूट जाता है। कभी-कभी बच्चे को अपने रोने का कारण समझ में नहीं आता और वह कुछ बताने में असमर्थ होता है। ऐसा तभी होता है जब कि बच्चे का स्वास्थ्य दुर्बल हो और वह अपनी शक्ति से अधिक खेल-कूदकर थक गया हो, अथवा अपनी सामर्थ्य से अधिक उसे पढ़ना पड़ता हो, उसके जीवन में स्नेह और प्रोत्साहन का अभाव हो, उसे हर समय कटु आलोचना और डॉट-डपट सुननी पड़ती हो, उसकी दिनचर्या बड़ी नीरस और मनोरंजन से शून्य हो, अपने किसी प्रियजन की उसे याद आ रही हो या उसके अधिकार और सम्मान को किसी ने चोट पहुँचाई हो। ये बाते ऐसी हैं जो बच्चे के मन और शरीर को मथकर रख देती हैं और वह दुःखी होकर रोने लगता है।

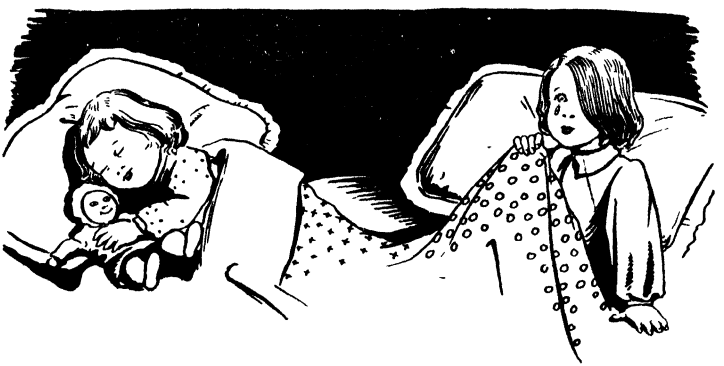
बच्चो का हृदय बहुत कोमल होता है, अतएव वह चोट भी जल्द खा जाता है। अपनी बात मनवाने के लिए करुणा और सहानुभूति उत्पन्न करने के लिए बड़े-बड़े तक रोते हैं। असहाय बच्चों का तो सहारा ही रुदन है, मानो उनकी एक आँख में हँसी दूसरे में पानी रहता है। वे अभी रो रहे हैं, तो अभी हँस देंगे। मनोविज्ञान के ज्ञाता रोते हुए बच्चे को एक-दो बात कहकर ही हँसा देते हैं, प्यार-भरी एक थपकी और सहानुभूतिपूर्ण मुसकान से वे बच्चे के घायल मन पर ठंडक डाल देते हैं।

ऐसे ही व्यक्ति बच्चे की समस्याओ को झट सुलझा भी देते हैं। भगवान् ने माता को अपने बच्चे के दुःख को समझने की सहजबुद्धि दी है। वह बच्चे के शरीर पर हाथ फेरकर उसकी अस्वस्थता को प्रायः समझ जाती है उसकी आँखो में झाँककर उसके हृदय की कचोटन को पढ़ लेती है। तभी कहावत है कि अपनी माँ तो सूखा हाथ भी फेर दे तो बच्चा हरा-भरा हो जाता है।

आठवाँ अध्याय

भयभीत बच्चा

बच्चे अंधेरे मे डरते है—मुन्ने को अंधेरे मे जाते डर लगता है। अंधकार में वह भयानक शक्लों और आवाजों की कल्पना करता है। अंधेरे कमरे मे उसे लेटना अच्छा नहीं लगता। चेष्टा करने पर भी वह सो नहीं सकता। उसने दिन में जो



भयानक कहानियाँ या तसवीरे सुनी या देखी है वे रात्रि के अंधकार मे सजीव हो जाती है और भय के मारे उसे नीद नहीं आती। यहाँ तक कि अगर वह थक कर सो भी जाता है तो उसे सपने भी इसी प्रकार के आते है, मानो वह भाग रहा है, पीछे से उसे कोई पकड़ने के लिए दौड़ा आ रहा है, और अचानक वह अपने को भागने में असमर्थ पाता है और गिर जाता है। उसका सपने मे दम घुटने लगता है और वह चीखकर उठ जाता है। वह चादर से अपना मुँह ढक लेता है, उसकी साँस घुटती है, पर मुँह खोलकर सोने मे वह अपने को अरक्षित अनुभव करता है। उसकी दशा उस अबोध कबूतर की-सी है, जो बिल्ली को देख आँखें बन्द कर लेने पर अपने को सुरक्षित समझता है।

रात को झींगुर की आवाज या उल्लू का बोलना उसके दिल मे भूतों का भय पैदा कर देता है, किसी छाया को हिलती देख वह चुड़ैल की कल्पना करने लगता है। इसी प्रकार चूहों की खट खट से उसे डाकुओं के आक्रमण का अंदेशा होने लगता है। एक-दो बार उसने अपने डरने की बात माँ से कही भी, पर माँ ने मजाक में उसकी बात उड़ा दी। किसी ने यह सोचने का कष्ट भी नहीं किया कि मुन्ने के लिए अंधेरा एक

समस्या बना हुआ है। रात को कमरे में अकेला सोना उसे अच्छा नहीं लगता। वह आँखें फाड़-फाड़कर जागते रहने की चेष्टा करता है। डरा हुआ-सा वह हर एक छाया को देखता है, सहमा हुआ-सा हर एक आवाज को सुनता है। जब सब जने पास में खर्राटे भर कर चैन से सो रहे हैं, वह सहमा हुआ-सा माँ के पलंग की ओर ताकता है, पर वहाँ जाने की उसकी हिम्मत नहीं होती। माँ के पास छोटी मुन्नी सो रही है। उसके वहाँ जाने पर पिताजी डाटेंगे। बिचारा मुन्ना अपना दुःख किसे कहे? अपनी उलझन कैसे सुलझाय?

मनोवैज्ञानिक ढंग से बच्चे का डर छुड़ायँ—बड़ों को मुन्ने की ये बातें मूर्खतापूर्ण प्रतीत होती हैं। पर वास्तव में उसके लिए वह एक समस्या है, जो कि स्नेह और सहानुभूति से ही सुलझ सकती है। अगर आपका बच्चा डरता है, तो उसकी बात बहुत सहानुभूतिपूर्वक सुनें। रात को उसके पलंग के साथ अपना पलंग जोड़ कर उसे सुरक्षा का अनुभव करने दें। सोते समय उसे कोई वीर बालक की कहानी सुनायँ। जानवर के बच्चे अंधेरे मे कैसे सुरक्षित रहते हैं, इस प्रकार के उदाहरण तथा कहानियाँ सुनाकर, उसके मन से अंधेरे के प्रति डर दूर करें। आत्म-विश्वास और सुरक्षा की भावना जाग्रत करने के लिए उसे दो-चार वीर और आदर्श बालकों के नाम रटा दें और कहें कि जब कभी उसे डर लगे उन बच्चों के नाम रटने आरम्भ कर दे।

इस प्रकार करने से उसका ध्यान बट जायगा तथा वीर बालकों की बहादुरी की कहानी याद आने पर वह भी साहसी बनने की प्रेरणा पायगा। बच्चे के कमरे में थोड़ा-सा प्रकाश जरूर रखें। शनैः-शनैः उसे अंधेरे मे सोने की आदत पड़ जायगी। इस बात का ध्यान रखे कि सोने से पूर्व बच्चा पेशाब जरूर कर ले। पेट भारी होने से या पेशाब की हाजत होने पर भी बच्चे सोते समय बेचैनी अनुभव करने लगते हैं।

(१) सोने से पूर्व बच्चे को उत्तेजनाप्रद कहानियाँ सुनानीं या भयानक चित्र दिखाने उचित नहीं। उससे उनकी कल्पना विचित्र-विचित्र उड़ान लेने लगती है और मस्तिष्क निश्चेष्ट न होने के कारण, नींद नहीं आती। अगर थककर नींद आ भी गई, तो वही कहानियाँ और चित्र किसी-न-किसी रूप मे सजीव बनकर सपने में आ जाते हैं।

मनोवैज्ञानिकों का कहना है कि बच्चों को भयानक कहानियाँ, चलचित्र और तसवीरों से दूर ही रखना चाहिए। उन्हें भूत-प्रेतों के किस्से तथा देव-दानवों की कथाएँ भी न सुनायँ। डर की भावना या किसी भयानक व्यक्ति की कल्पना, वे इन्हीं कहानियों और चित्रों के आधार पर करते हैं।

(२) अपने आराम के लिए माँ और बहनें बच्चे को हौआ, जू जू, भूत, चुड़ैल, पकड़ने वाला बाबा आदि के नाम ले-लेकर डराती रहती हैं। अगर इस पर भी वह डरकर चुप नहीं बैठता तो मुँह छिपाकर भयानक आवाजे करके अपने कथन की पुष्टि करती हैं। फलस्वरूप बचपन से ही बच्चा डरपोक बन जाता है। बचपन के इन कुसंस्कारों का ऐसा बुरा प्रभाव पड़ता है कि बड़े होकर बच्चे में आत्म-निर्भरता, आत्म-विश्वास, साहस और वीरता की कमी बनी रहती है। बहुत बार तो बच्चे का शारीरिक विकास तक रुक जाता है। नींद मे पलंग पर पेशाब करने की आदत पड़ जाती है। उसके संग सहानुभूति न करके उल्टा बच्चे को मार-पीटकर उसका यह दोष छुड़ाना नासमझी है। ऐसे बच्चे को रात मे एक बार उठा कर पेशाब करा देना ठीक होगा। उसे करवट देकर सुलायें, रात मे जागने पर प्यार से उसके बदन पर हाथ फेरें। अगर वह कुछ घबराया हुआ दीखे, तो एक घूँट पानी पिला दें, इससे वह अपने को स्वस्थ अनुभव करेगा।

(३) अंधेरे से डर छुड़ाने के लिए स्वयं अंधेरे मे उसके साथ जाकर उसके काल्पनिक डर को निर्मूल प्रमाणित करने में सहयोग दें। स्वयं भिन्न-भिन्न प्रकार की जानवरो की बोलियाँ बोलकर अथवा सुनवाकर उसे उनसे परिचित करवायें। हाथ की परछाईं द्वारा भिन्न-भिन्न जानवरो और मनुष्यों की आकृति बनाकर उसे परछाइयो की विचित्रता बतायें, इस प्रकार उसका मनोरजन भी होगा, और साथ ही अंधकार, विचित्र स्वर तथा परछाइयों का डर बच्चे के मन से सहज ही निकल जायगा।

(४) अंधेरे के अतिरिक्त बच्चे और भी कई बातों से डरते हैं। मामूली कीड़े-मकोड़े, चूहे, कुत्ते, शेर, बाघ आदि के जीवन की जानकारी चित्रों द्वारा और कहानी सुनाकर बच्चों को करायें। विषाक्त कीड़ो तथा साँपो से इसलिए दूर रहना बतायें कि अगर तुम इन्हें सताओगे या अचानक दबा दोगे तभी अपनी रक्षा के लिए यह काटेंगे।

(५) बच्चे चोर से भी डरते हैं। उन्हें समझा दें कि चोर कोई भयानक जीव नहीं है। प्रत्येक मनुष्य चाहे वह बच्चा हो या बूढ़ा अगर छिपाकर कोई बुरा काम करे या बिना पूछे किसी की चीज़ ले ले, तो वह चोर कहलाता है। छोटे अपराधों पर जैसे माँ-बाप घर में ही सजा देकर आदत सुधारते हैं, उसी प्रकार सरकार थाने में ले जाकर, उन्हें सजा देकर सुधारती है।

(६) कुरूप अथवा भयानक आकृति वाले मनुष्यों को देखकर भी बच्चे डर जाते हैं। जहाँ तक हो सके बच्चों को उनसे दूर रखना चाहिए। अगर अचानक किसी अंधे, लंगड़े या लूले को देखकर वह प्रश्न करें, तो उन्हें संक्षेप में यह समझा दें कि

कोई रोग या चोट लगने से वह ऐसा असहाय हो गया है, हमे ऐसे मनुष्यों की हमेशा सहायता करनी चाहिए।

(७) अगर बच्चा एकांत और अंधकार से डरता है, उसे किसी अकेली कोठरी मे सजा के रूप मे कभी बन्द न करें। अगर उसे अन्य बच्चो से अलग करके दंड देने का मौका आ भी जाय तो उसी के कमरे के एक कोने मे मुंह पर उँगली रखा कर खड़ा कर दे।

सजा देने का ढंग प्रत्येक बच्चे की मानसिक सहन-शक्ति के अनुकूल होना चाहिए। सहमे और डरे हुए बच्चे को कभी सजा न दे। कभी-कभी इसका बुरा परिणाम होता है। पुचकार कर घटना की यथार्थता जानकर तब बच्चे को उसकी भूल समझानी चाहिए। बच्चो को कठोर शारीरिक दंड देना भारी भूल है।

(८) बहुत बार माताएँ बच्चो को पुलिसमैन अथवा झोली लेकर फिरते हुए किसी बूढ़े को दिखाकर डराती है कि वह तुझे पकड़कर ले जायगा। ये सब बहुत ही नासमझी की बाते है। इसी प्रकार दवाई पिलाने के लिए डॉक्टर का भी डर बताना मूर्खता है। फलस्वरूप आवश्यकता पड़ने पर बच्चा डॉक्टर को देखते ही रोएगा। इंजेक्शन देने और दवाई पिलाने पर, वह डॉक्टर को अपना दुश्मन समझेगा। अगर ऐसे बच्चे कभी लम्बी बीमारी के कारण पड़ गए तो डॉक्टर के लिए उनका इलाज करना असंभव हो जायगा। हमारे पड़ौस मे एक ऐसा ही केस था—एक ढाई वर्ष के बच्चे को टाइफाइड हो गया था। जब भी डॉक्टर साहब आकर उसे इंजेक्शन या दवाई देते, वह बच्चा इतना रोता कि रो-रोकर बेदम हो जाता। ज्योंही उसे पता चलता कि डॉक्टर को बुलाने भेजा है या इंजेक्शन के लिए पानी उबाला जा रहा है, वह रोना शुरू करता और डॉक्टर साहब को दूर से ही देखकर खटिया पर बिखर-बिखरकर रोने लगता। इंजेक्शन देते समय अपने पुट्ठों को ऐसा तान लेता कि आखिरकार सूई टूट जाने के डर से इंजेक्शन देना तक बंद करना पड़ा। यह तो खुशकिस्मती थी कि बच्चा बच गया। परन्तु उसने अपनी ओर से तो इलाज चालू रखना असंभव कर दिया था। रोने के बाद उसे बुखार और भी तेज़ हो जाया करता। अपने बच्चे की यह दुर्दशा देख उसकी माँ बड़ी पछताती थी कि मैंने नाहक ही इसके दिल मे डाक्टर का डर बिठाया।

(९) अगर बच्चे को इंजेक्शन या दवाई लगवाते समय दर्द होने की संभावना हो तो झूठ बोलकर उसे बहकायें नहीं, अपितु 'तुम बहादुर हो, अरे जरा सा बर्द हुआ भी तो सहना चाहिए, इलाज नहीं करवाने से और भी कष्ट होगा'—इस प्रकार का ढ़ाढस देकर कष्ट सहने के लिए, उसकी मानसिक तैयारी करनी उचित है। इसी प्रकार अगर कोई आपत्ति आ पड़े या अचानक दुर्घटना हो जाय तो बड़ों को

भी धीरज नहीं खो बैठना चाहिए। बड़ों की कायरता और घबराहट का बच्चों पर बहुत बुरा प्रभाव पड़ता है। मुसीबत का सामना दृढ़ता और धीरता के साथ ही हो सकता है। कई माता-पिता अड़ौस-पड़ौस और मित्रों की सहानुभूति प्राप्त करने के लिए कभी-कभी अपने मामूली कष्ट का भी ऐसा वर्णन करते हैं मानों आने वाली विपत्ति ने उन्हें बेहाल कर दिया है, और वे विपत्ति का ध्यान-मात्र करके डर रहे हैं। कई लोग आगे जाकर क्या होगा—इसकी कल्पना करके ही डरने लगते हैं। ऐसे माँ-बाप के बच्चे डरपोक और भीरू बन जाते हैं, क्योंकि घर के वातावरण का प्रभाव उन पर पड़ता रहता है।

(१०) कई बच्चों को उनके मास्टर डाँट-डपट और मार से इतना डरा देते हैं कि उनकी पढ़ने से भी रुचि हट जाती है। बच्चों को पढ़ाते समय बहुत धीरता और सहानुभूति की आवश्यकता है। उनकी असफलताओं पर उन्हें धमकाना या सजा देना भूल है अगर कोई विषय उन्हें कठिन लगे अथवा उनकी समझ में न आने के कारण वे अपना होमवर्क करके न ला सकें, तो अध्यापक उनकी अड़चनों को दूर करें, उन्हें सबक सिखाने मे उत्साहित करे, विषय को मनोरंजक बनाकर उस ओर उसकी रुचि जाग्रत करे।

कई बच्चों को स्पेलिंग शीघ्र याद नहीं होते। जब कि कई बच्चों को गणित बहुत कठिन लगता है। टीचर की बेत की चोट याद करके वे रोते-रोते डरते-डरते



स्कूल जाते हैं। नन्हे बच्चों के लिए अगर पढ़ाई एक हौवा बन जाय, तो इसमें अध्यापकों को अपनी असफलता समझनी चाहिए।

(११) बच्चों को डराना एक महान् अपराध है। उनके असफल होने पर,

'तू तो मूर्ख और निकम्मा बना रहेगा, बड़े होकर तुझे दूसरो का आसरा ताकना पड़ेगा, हमारे बाद देखना तेरी क्या दुर्दशा होगी', माता-पिता के ऐसे कथनों का बच्चे पर बड़ा बुरा प्रभाव पड़ता है, वह विपत्ति की कल्पना करके एक उलझन में पड़ जाता है। उसकी रही-सही शक्ति भी मारी जाती है। 'क्या करूँ, क्या न करूँ ? आगे जाकर क्या होगा ? क्या मै सबसे अपमानित होऊँगा ? मुझे सब सतायँगे ? क्या माता-पिता के बिना मेरा जीवन कष्टमय हो जायगा ? हाय ! फिर मेरा क्या होगा ?' ऐसे-ऐसे विचार बच्चे के हृदय में आते है, वह डरकर और भी निकम्मा बन जाता है।

(१२) बच्चो के लिए मृत्यु का भय भी एक पहेली है। उन्हे सरलता से यह बतायँ कि प्रत्येक बच्चा अगर ठीक से खाये-पीये, सफाई का ध्यान रक्खे तो वह नौजवान होता है, दुनियाँ मे बड़े-बड़े काम करता है बाद मे जब बूढ़ा हो जाता है तब भगवान उसे अपने पास आराम करने को बुला लेते है। हम सब अभी बहुत दिन जियेगे और बहुत काम करेगे।

कभी-कभी माताएँ तग आकर कह बैठती है, कि जब मै मर जाऊँगी या चली जाऊँगी तब तुम्हे पता चलेगा। अबोध बच्चे के लिए ऐसी धमकियाँ एक पहेली हो जाती है। माँ उसके लिए संसार मे एक अमूल्य निधि है। माँ को खोने या उससे दूर होने की आशंका उसके मस्तिष्क को भयानक कल्पनाओ से भर देती है। ऐसी बातो से डरकर बच्चा अपनी स्वाभाविक प्रफुल्लता और चंचलता तक खो बैठता है।

खतरे से बचाव—प्रत्येक प्राणी मे आत्म-रक्षा की भावना होती है। आपत्ति से अपना बचाव करना, खतरे से परे हटना तथा हानिकारक वस्तुओं से बच कर रहना, इस बात को प्रत्येक बच्चा थोड़ा बहुत समझता है। आप छोटे बच्चे को छोड़ दे, तो गिरने के डर से वह पास की वस्तु को कसकर पकड़ लेगा, भयानक आकृति को देखकर या जोर का स्वर सुनकर वह चौककर, रोकर अपना भय प्रकट करेगा। आत्म-रक्षा के लिए भय की भावना स्वाभाविक है। बच्चे को उसकी समझ के अनुसार खतरे से बचने की शिक्षा दी जाय, यथा—सड़क पार करते समय मोटर के डर से भागना नहीं, अपितु दोनों ओर भली प्रकार देखकर आसानी से सड़क पार करना चाहिए। अन्धाधुन्ध भागने से किसी व्यक्ति से टकराकर अथवा पाँव फिसल कर गिर जाने का डर है। उससे अधिक खतरा पैदा हो जायगा। इसी प्रकार आग लगने पर, पानी मे गोता खा जाने पर डरकर इधर-उधर हाथ-पाँव मारने से और भी हानि है। जो व्यक्ति खतरा उत्पन्न होने पर डरकर व्यवहार करता है वह खतरे की अपेक्षा अपनी हरकतों से अधिक हानि उत्पन्न कर लेता है। भय के हावी हो जान

पर मनुष्य की शक्तियाँ दुर्बल पड़ जाती है। डॉक्टरों का कहना है कि सर्प के काटने या हैजे से मृत्यु होने की उतनी संभावना नहीं होती जितनी कि उस समय मनुष्य के डर जाने से हृदय के दुर्बल हो जाने से होती है। ऐसी दशा मे कई व्यक्ति तो डर से हार्टफेल हो जाने के कारण मर तक जाते है।

डराना अपराध है—किसी बच्चे को डराना भारी नृशंसता है। माता का यह कहना कि 'ठहर जा, आज तेरे पिता जी से तुझे ठीक करवाऊँगी, या तेरे मास्टर के पास तेरी शिकायत करूँगी कि तुझे क्लास मे सबके सामने बेत मारें, जब तेरी खाल उधेड़ी जायगी तभी तू ठीक होगा', सर्वथा अनुचित है। यह सुनकर बच्चे को पिता और मास्टर दोनों जालिम दीखने लगते है तथा वह अपनी माता को अपना हितैषी न समझ अनिष्ट चाहने वाली समझने लगता है। उसको स्कूल जाना, पढ़ना तथा पिता का घर मे आना ये सभी बाते बुरी लगती है। बच्चे को भयभीत करके कोई काम कराना महा भूल है। डरे हुए बच्चे की स्वाभाविक प्रफुल्लता नष्ट हो जाती है। जिस व्यक्ति के कठोर व्यवहार से वह डर जाता है, उसके प्रति प्रेम या श्रद्धा रखना उसके लिए असंभव होता है।

जिन बच्चों ने युद्ध अथवा हिन्दू-मुस्लिम फ़िसाद के समय अपनी आँखो के आगे मार-काट मचती देखी है वे जब भी किसी सिपाही या फ़ौजी को अथवा किसी दाढ़ी वाले व्यक्ति को अपनी ओर आते देखते है तो डरकर भाग जाते है, क्योकि उनके दिल मे यह भावना जमी हुई है कि इसी प्रकार के आदमियों ने हमारे माता-पिता, रिश्तेदारो तथा मौहल्ले के लोगों को मारा था। उनके हृदय में एक विशेष जाति के व्यक्तियों से डरने की भावना इतना जोर पकड़ जाती है कि क्रूर व्यवहार का सम्बन्ध वे उनसे हमेशा के लिए जोड़ लेते है। ऐसे डरे हुए बच्चे अपने को सुरक्षित अनुभव नहीं करते। उनमे साहस और आत्म-निर्भरता का अभाव रहता है। बीती हुई दुर्घटनाएँ उनके मस्तिष्क में भय उत्पन्न करती रहती है। जब कहीं गली मे जरा हो-हल्ला हुआ या तूफान आया वे डरकर चिल्लाने लगते है। अगर बच्चे के हृदय मे किसी बीती हुई दुर्घटना के कारण डर बैठा हो तो उस डर को यथाशक्ति दूर करने की चेष्टा करनी चाहिए। वीरतापूर्ण सुखद कहानियाँ सुनाकर तथा उस विपत्ति से सफलतापूर्वक बच आने और लड़ाई तथा दगे में भाग लेने वाले लुटेरों के दुखद अन्त की चर्चा करके बच्चे के मन से डर निकालने की चेष्टा की जाय। साथ ही उसे इस बात का विश्वास दिलाया जाय कि अब हम उस प्रकार के ख़तरे से बाहर है, और पूर्ण रूप से सुरक्षित है। किसी जाति के सभी व्यक्ति दुष्ट या बुरे नहीं होते। इसलिए जाति-मात्र से डरना भूल है।

डर बच्चे को भीरू बना देता है—कई माता-पिता और गुरू बच्चों को

डराकर रखना उचित समझते हैं। डाँट-डपट, सजा तथा आलोचना के डर से वे बच्चे को जितना ही अधिक डराते है, उतना ही उन्हें सन्तोष होता है कि हमारा बच्चा निडर और ढीठ नहीं है, हमारे काबू मे है। धीरे-धीरे ऐसे बच्चे भीरू बन जाते है; उनमें अपने अफसर तथा बड़ों के अन्याय का भी प्रतिरोध करने का साहस नहीं रहता। वे पिछलग्गू ही बने रहते है, लीडरशिप का उनमें अभाव होता है। सो बड़ो को चाहिए कि अपने बच्चों को आश्रित और छोटा समझकर इतना न दबाएँ कि वे उनके प्रभुत्व के आगे डरे रहे। कई मास्टर मार की डर से बच्चो को सीधा कर देने का दावा करते है। उनका कहना है कि 'डंडा तो बड़ों-बड़ो का पीर है'।

ऐसे मास्टरों के पल्ले पड़कर कोमल बच्चा मार की डर से चुप हो जायगा या फिर स्कूल से भाग जायगा परन्तु वह उसे कर्म-निष्ठ तो नहीं बना सकते। डरा-कर बच्चे को काबू करना महान् अपराध है। मनोवैज्ञानिकों की दृष्टि मे ऐसे अपराधी बाल-समाज का बहुत अहित करते है।

डर को निर्मूल प्रमाणित करने के लिए बच्चो को बड़ों का सहयोग अपेक्षित है। जो बच्चे अंधेरे मे भयानक आकृति तथा चोर और भूत की कल्पना करने लगते है उनके कमरे मे रात को हलका प्रकाश अवश्य रहना चाहिए ताकि जब उनकी आँख खुले तो वे अपनी परिचित वस्तुओं को आस-पास देख सके। कभी-कभी बड़ो की बातचीत मे चोर-डाकुओ की चर्चा अथवा सिनेमा और किसी चित्र मे भयंकर आकृति देखकर बच्चे अपने सपने में उन्हीं आकृतियों को देखते है फिर डरकर तथा चिल्लाकर जाग जाते है। अतएव बड़ों को डर या खतरे की कोई बात बच्चे के सामने नही करनी चाहिए। जिस वस्तु के छूने या काम को करने में बच्चा डरे उसे करवाने मे बच्चे से जबर्दस्ती करना उचित नहीं।

मोहन के पिता एक बार सब बच्चों को लेकर बम्बई गए। जू पर कई बच्चे नहा रहे थे, मोहन के पिता ने चाहा कि मोहन भी नहाए। इसलिए वे उसके दोनों हाथ पकड़कर घसीटकर पानी मे ले आए और उसे एक-दो गोते भी वे दिए। इससे मोहन बड़ा घबड़ा गया। पानी विषयक बचपन का यह कटु अनुभव उसके हृदय मे कई सालों तक समाया रहा। बाद में वह घर पर भी पानी के भरे टब में नहाते डरता था। बड़े होकर उसके सब बहन-भाइयों ने तैरना सीख लिया, पर वह अब भी कंधो तक पानी मे जाते डरता है।

इसी तरह की भूले अध्यापक भी कर बैठते है। वे बच्चे को अपने विषय मे कमज़ोर पाकर इतना धमकाते और डाँटते है कि बच्चे की उनके विषय मे रुचि ही नहीं रहती। बचपन की यह अरुचि और मास्टर की मार के डर से बच्चा बड़ा होकर भी उस विषय के प्रति आकर्षित नहीं हो पाता।

बच्चा स्वभाव से निडर होता है। उसके लिए सांप और रस्सी बराबर है, बड़ो के व्यवहार और चेतावनी से बच्चों के मन में डर और अविश्वास समा जाता है। बच्चा काम ठीक से कर रहा है पर माँ चेतावनी देती हुई कहती है 'जरा सँभलकर पेड़ पर चढ़ना, गिर न पड़ना;' 'जरा ठीक से बोतल पकड़ना कहीं हाथ से गिरा न देना,' बस माता-पिता के इस प्रकार बार-बार कहने पर बच्चा प्रत्येक कार्य डरता-डरता करता है और कभी-कभी घबड़ाकर सचमुच में बिगाड़ भी देता है। अगर छोटा बच्चा ख़तरे के पास है तो उसे आप दूर से चिल्लाकर चौंका न दें उलटा धीरता के साथ जल्दी से पास आकर उसे ख़तरे—पंखा, स्टोव या आग से परे हटा ले जायँ।

नवाँ अध्याय

मुन्ना गुस्से में है

कुछ बच्चे स्वभाव से ही शान्त मिज़ाज के होते हैं, जब कि कुछ बच्चों के मनोवेग बहुत तीव्र होते हैं। वे अभी हँस रहे हैं, अभी रोने लगेंगे। जरा सी बात पर बिखर जायँगे, हाथ-पाँव मारकर मचल जायँगे, रो-रोकर नीले पड़ जायँगे। आप



लाख मनायें, लाख फुसलायें पर उनके आँसू ही नहीं रुकते, थककर आप भी हार मान लेते हैं और बाल-हठ पर आप को हँसी आये बिना नहीं रहती।

बदमिज़ाजी का कारण—बच्चे का स्वास्थ्य, आसपास का वातावरण तथा अन्य पालन-पोषण सम्बन्धी बातों पर बच्चे के मिज़ाज का बनना-बिगड़ना निर्भर है। छः महीने तक की आयु तक तो आप केवल इतना परख सकते हैं कि स्वस्थ बच्चे, जिनकी दिनचर्या नियमित है और जिन्हें भरपेट दूध पीने को मिलता है, प्रायः खुश-मिज़ाज ही दीखते हैं। सातवें-आठवें महीने में जब बच्चे के दाँत निकलने लगते हैं, उसके स्वास्थ्य में कुछ गड़बड़ होने पर वह चिड़चिड़ा बन जाता है, पर हल्का जुलाब देने से और पूरा विश्राम मिलने पर कुछ दिनों बाद बच्चे की यह बदमिज़ाजी शीघ्र दूर

भी हो जाती है। बीमारी मे तो बड़ो-बड़ो का मिज़ाज चिड़चिड़ा हो जाता है, फिर मुन्ना-मुन्नी तो नन्हे-मुन्ने फूल ही ठहरे। ज्यो-ज्यो बच्चा बड़ा हो, इस बात का ध्यान रखने की आवश्यकता है कि वह बदमिज़ाज न बने। अन्यथा वह अपने संगी-साथियो मे बहुत अप्रिय बन जायगा। 'सोशल बायकाट' होने पर वह अपनी जिद्द तथा चिड़चिड़ेपन से घरवालो के नाको दम कर देगा। यह बदमिज़ाजी उसकी तन्दुरुस्ती पर भी असर दिखाये बिना नही रहेगी। शनैः-शनैः वह असन्तोषी और सड़े मिज़ाज वाला बन जायगा। उसके माथे पर हर समय त्योरियाँ पड़ी रहेगी, जब भी कोई दूसरा उससे बात करेगा वह तुनककर उत्तर देगा। उसकी असहनशील प्रकृति और रोदू शक्ल की सभी हँसी उड़ायँगे, इसलिए इस बदमिज़ाजी का इलाज बचपन मे ही करना उचित है।

क्रोध प्रकट करने का ढंग—बचपन मे बच्चे अपना क्रोध दो प्रकार से प्रकट करते है। एक तो रोकर, चिल्लाकर तथा मचलकर, दूसरा रूठकर और उदास हो कर। जब बच्चा अपनी दिनचर्या मे या अपने खेल अथवा खाने में कुछ हेर-फेर या दखल होते देखता है, तो वह खीजकर क्रोध प्रगट करता है। शिवराम नाम का एक बच्चा था। वह खूब स्वस्थ था, उसकी खुराक भी खूब थी, वह एक समय मे १६ आऊँस दूध पीता था। बोतल मे एक बार मे इतना दूध नही आता था, अतएव दूध खतम होने पर, दोबारा दूध भरने के लिए जब बोतल उसके मुंह से निकाली जाती, वह चीख-चीखकर लाल हो जाता, लाचार होकर दूध खतम होने से पहले पिछले छेद से और दूध भरना पड़ता। अपनी खुराक पूरी पीकर, वह बोतल खुद ही मुँह से निकालकर हँस देता।

गुस्सा होने का कारण—कभी-कभी ऐसा भी होता है कि बच्चा बहुत थक कर भी रोने लगता है। विशेषकर दो वर्ष की आयु मे जब बच्चा चलना सीख जाता है, उसे चलने, भागने और दौड़ने का एक शौक-सा होता है। अपनी शक्ति से परे, दिनभर दौड़-धूप करते-करते वह शाम को थक जाता है, मेरा छोटा लड़का ढाई वर्ष की आयु मे ट्राइसिकल चलाना सीख गया था। शुरू-शुरू मे उसे ट्राइसिकल चलाने का इतना शौक हुआ कि वह अधिकांश समय ट्राइसिकल से ही खेलता। उन दिनों वह रात को बहुत रोया करता, पाँवो में दर्द की शिकायत करता, हमने बहुतेरा रोका कि वह इतनी देर ट्राइसिकल न चलाए, पर वह ट्राइसिकल के बिना खाना भी न खाता था। हारकर शाम को जब वह थक जाता तो हम उसके पाँव गर्म पानी में डालकर कुछ देर सेकते। बाद में हलका सा तेल लगाकर धीरे-धीरे मालिश कर देने के पश्चात् रात का खाना खिलाकर उसे पलंग पर लिटा देते, वह रात भर ऐसा सोता कि सुबह तक करवट नहीं लेता।

कभी-कभी ऐसा भी होता है कि मान लो छोटा मुन्ना नहाने अथवा खाने बैठा है, कोई अन्य बच्चा आकर उसका खिलौना ले जाता है। बस, पता लगते ही मुन्ना चिल्लाकर बुरा-भला कहता हुआ, मचलकर रोने लगता है। अनधिकार चेष्टा उसे पसन्द नहीं। अपने प्रति दूसरों का अन्याय वह सहन नहीं कर सकता, उसी का प्रतिरोध करने के लिए वह क्रोध प्रगट करता है। ऐसी दशा में आप को चाहिए कि मुन्ने के अधिकार की रक्षा करें, आपका सहयोग पाकर वह शान्त हो जायगा। मुन्ने को डाँट-डपट द्वारा चुप कराकर आप दब्बू न बनायँ। अपने अधिकार की रक्षा के लिए क्रोध प्रगट करना बुरा नहीं है। क्योंकि मुन्ना निर्बल है, इसीलिए आपका सहयोग प्राप्त करने के लिए वह रोला मचाता है। जब उसे यह विश्वास हो जायगा कि अन्याय को रोकने मे आपका सहयोग सहज ही मिल जायगा, तब वह चिल्लाना छोड़कर आप से शान्तिपूर्वक सब शिकायत करेगा। अतएव न्याय की दुहाई देकर, मुन्ना जब भी आप के पास आय, आप इस बात की चेष्टा करे कि उसके साथ अन्याय न हो।

छोटे बच्चों पर कभी-कभी तो क्रोध का भूत-सा चढ़ जाता है। गला फाड़कर चिल्लाते हुए, वे अपने प्रतिरोधी के बाल नोच लेगे, या काट खायँगे। मचलकर वे उस को पाँवों से धुनना शुरू करेगे, यहाँ तक कि सूअर, उल्लू, मर जा आदि गालियाँ भी देनी शुरू कर देगे। जब बच्चे का मूड इस हद तक बिगड़ जाय, उसकी ओर ध्यान न दें, उसे अकेला छोड़ दें, अगर वह कोई वस्तु नष्ट कर रहा हो, तो उसे उठाकर अलग कमरे मे अथवा उसके पलंग पर छोड़कर दरवाजा बंद कर दें और समझा दे कि जब वह शान्त हो जायगा दरवाजा खोल दिया जायगा। जब बच्चा शान्त हो जाय, आप उसे प्यार से उसकी भूल समझायँ। कोई दूसरा बच्चा जब कभी गुस्से में मचले आप उसे दिखा कर कहें—'देखो, मुन्ने ! रोंदू बच्चों की शक्ल कैसी खराब हो जाती है ? हँसता हुआ चेहरा शीशे मे देखने पर कितना प्यारा लगता है ? रोना या ज़िद करना बुरी बात है। संगी-साथी अगर चिढ़ाते है, तो तुम भी उन्हें चिढ़ाओ, पर चिढ़कर रोना नहीं चाहिए। रोने से तुम्हारी शक्ल भी बुरी दीखने लगेगी। याद रखो कि चिड़चिड़े और बदमिज़ाज बच्चे को कोई पसंद नहीं करता। अपने बराबर के बच्चों से खेलो, बड़ो के साथ खेलने अथवा छेड़खानी करने से तुम हारकर खिसिया जाओगे, अतएव या तो उनका मुकाबिला करने को तैयार रहो अथवा उनसे बचे रहो। संगी-साथियों की हँसी-मजाक का बुरा नहीं मानना चाहिए।'

इस प्रकार बच्चे को विनोदप्रिय बनायँ तथा क्रोध को काबू मे करना सिखायँ।

कई छोटे बच्चे नहलाते या कपड़े पहनाते समय बहुत रोते है। इसके दो कारण

हो सकते हैं, जो व्यक्ति उनकी देख-भाल करता है, वह खुद बहुत बदमिज़ाज और अधीर है, या नहलाने की क्रिया को इस बुरी प्रकार से करता है कि बच्चे के लिए वह मनोरंजक न रहकर, कष्टदाई बन जाती है। घर में सब से छोटे बच्चे के मचलने का एक कारण यह भी हो सकता है कि बड़े बच्चे उसकी उपेक्षा करते हैं, उसे



साथ नहीं खिलाते, वे यह समझते हैं कि इसके कारण हमारे खेल का मजा किरकिरा होता है—अतएव वे उसे बार-बार कहते हैं—'हम सब जायँगे, तुझे साथ नहीं ले जायँगे; हम तुझे अपने साथ नहीं खिलायँगे।' वह चिढ़कर चिल्लाता और तूफ़ान मचा देता है। ऐसी स्थिति में या तो बड़े बच्चों का सहयोग प्राप्त किया जाय, अथवा छोटे मुन्ने को उसकी उम्र के बच्चों के संग खेलने की सुविधा दी जाय।

दबाये हुए क्रोध की प्रतिक्रिया—जिस घर में बच्चे बहुत डरा-धमकाकर रखे जाते हैं, वे प्रगट रूप मे अपना क्रोध रो-धोकर या चिल्लाकर तो प्रगट करने का साहस नहीं करते, परन्तु मन-ही-मन वे उबलते रहते हैं। मन में मलाल रखने के कारण वे घुटे-घुटे और उदास से रहते हैं। शासक के प्रति उनका मन विद्रोही हो जाता है। आगे जाकर भी वे अपने अधिकारों के लिए लड़ने का साहस नहीं रखते, परन्तु दूसरों की ओट में गड़बड़ मचाने की उनकी वृत्ति-सी हो जाती है। अन्दर-ही-अन्दर कुढ़ने का, उनके स्वास्थ्य पर भी बहुत बुरा असर पड़ता है। वे पीठ-पीछे निन्दा करके अपना उबाल निकालते हैं। ऐसे बच्चों का व्यक्तित्व बहुत घटिया ढंग का होता है।

देखा गया है कि छोटे बच्चों का मिज़ाज तभी बिगड़ता है, जब कि या तो

वे भूखे हों, अथवा उनकी नींद का समय हो । कभी-कभी अधिक गर्मी या सर्दी से बेचैन होकर भी वे रोने लगते हैं । शारीरिक पीड़ा, स्थान का नयापन अथवा परिचित वातावरण का अभाव भी बच्चे के रोने का कारण हो सकता है । ऐसी दशा में उनकी असुविधा का कारण पता लगाकर शिकायत को दूर करें । अगर बच्चा सहमकर या डरकर रो रहा है, तो उसे ढाढस देकर पुचकार लें ।

स्नेह के अभाव में भी बच्चा उदास होकर, चिड़चिड़ा बन जाता है । कटु आलोचना और अधिक डाँट-डपट बच्चे के विकास को कुंठित कर देती है । बच्चे को खुशमिज़ाज रखने के लिए प्रोत्साहन, दिनचर्या मे कुछ नवीनता तथा खेल-कूद में दिलचस्पी पैदा करें । कई बच्चे जब उनकी बढ़त तेज़ी पर हो उस समय भी चिड़चिड़े हो जाते हैं । क्योंकि कमज़ोर होने के कारण वे जल्द थक जाते हैं । ऐसी दशा में उन्हें पौष्टिक भोजन दे । साथ ही 'इनडोर गेम्स' या कहानी पढ़ने अथवा सुनने में उनकी रुचि जाग्रत करें ।

अगर माँ या बड़े भाई-बहन हर समय बच्चे पर बिगड़ते हैं, तो आसपास के वातावरण से प्रभावित होकर बच्चा भी बदमिज़ाज और मुंहफट हो जायगा । बच्चे की हर एक ज़िद पूरी करने से भी वह बहुत हठी हो जाता है, और घर के बाहर जब वह अपनी ज़िद पूरी होते नहीं देखेगा, तो रो-पीटकर क्रोध प्रगट करेगा । अतएव बच्चे का दुराग्रह बहुत धीरता और शान्ति से रोका जाय । उसको इस ढंग से उसकी भूल समझायँ कि वह अपनी गलती पर लज्जित होकर उसे स्वयं छोड़ दे । अभ्यास से यह सहज है । कठोर शासन से जो सफलता प्राप्त होती है, वह स्थायी नहीं होती ।

माता-पिता का परस्पर व्यवहार, दूसरों से बातचीत करने का ढंग और घर का प्रसन्न वातावरण भी बच्चे को खुशमिज़ाज बनाने मे सहयोग देते हैं । अगर घर मे बच्चा क्रोधालु व्यक्ति की प्रधानता देखता है तो वह भी क्रोध प्रगट करके अपना महत्त्व प्रगट करना चाहता है, उसकी उपस्थिति मे ही उस समय कोई-कोई माँ यह कह बैठती है कि—"भाई, मुन्नू को मत छेड़ो, इस समय उसका पारा चढ़ा हुआ है, वह बिगड़ जायगा, बिल्कुल अपने बाप का स्वभाव पाया है ।" यह सुनकर मुन्नू अपने में बड़प्पन का अनुभव करने लगता है और दुर्बल बच्चे अथवा नौकर पर यदाकदा अपना क्रोध प्रगट करने की उसकी आदत-सी पड़ जाती है ।

बच्चे इस बात को खूब परखते हैं कि घर मे किस की प्रधानता है, किसके क्रोध के आगे सब झुकते हैं । अन्याय के प्रतिरोध-स्वरूप क्रोध प्रगट करना उचित है, परन्तु वह क्रोध विनाशकारी न होकर अपराधी को चौकन्ना करने वाला होना चाहिए । ऐसे क्रोध का सम्मान करना बच्चे को अवश्य सिखायँ ।

एक बार चार वर्ष की आशा को उसके बड़े भाई ने स्कूल से आकर कहा, "जा जरा मौसी जी से पाँच रुपये माँग ला, मैंने सिनेमा जाना है।" आशा ने मुँह पर उँगली रखकर चुप रहने का संकेत करते हुए कहा, "इस समय चुप रहो, आज मम्मी के चेतावनी देने पर भी रसोइये ने घी की भरी मटकी उठाकर पटक दी है, सो मम्मी का पारा चढ़ा हुआ है। मैं तो इस समय रुपये माँग कर परेशान नहीं करूंगी।"

बाद में लड़की के इस व्यवहार-कुशलता की उसके पापा ने बड़ी प्रशंसा की।

समझदार बच्चे इस बात को भली प्रकार समझते हैं कि हमारे निरर्थक गुस्से का माता-पिता पर कोई प्रभाव नहीं पड़ेगा उल्टा हम बदमिज़ाज कहलायेंगे, और हमारी सुनवाई भी नहीं होगी।

दसवाँ अध्याय

कुछ अन्य मनोवेग

प्रसन्नता—आनन्दी मुन्ना जीवन की मौज मे बह रहा है। उसकी आँखों मे चमक है, शरीर मे फुर्ती है, अपनी आसपास की दुनियाँ को वह चकित होकर देखता है। छोटी-छोटी चीजे, जरा-जरा सी बात, जो हमे आकर्षणहीन लगती है, उनसे भी उसका खूब मनोरंजन होता है। एक-दो महीने की आयु से ही मुन्ना झूले मे पड़ा अपने पाँवों के अँगूठों को पकड़कर, गर्र-गर्र शब्द करता हुआ, थूक के बुलबुले उड़ाता है, किलकारियाँ भरता हुआ, खुशी प्रगट करता है। चार-पाँच महीने की आयु मे वह गुदगुदाने से खिल-खिलाकर हँसता है। आपको अपनी लुभावनी मुद्रा और अदा से



अपनी ओर आकृष्ट करता हुआ, वह मानो आपको गुदगुदाने या छेड़खानी करने का निमंत्रण देता है। हँसते-हँसते वह दोहरा हो जाता है, उसकी आँखों में आनन्द के आँसू छलक आते है, और तब घर की बड़ी-बूढ़ी कहती है—"बस करो अब और मत हँसाओ। यह जितना हँसा है, उतना ही रोयगा।" पर मुन्ना कहाँ मानने वाला ? थपोड़ियाँ मार-मारकर वह अपने खिलाड़ी या खिलौने की ओर लपकता है, उसे दबोचने और मुँह में ठूँसने की चेष्टा करता है। और आप कहती है, मुन्ना की प्रसन्नता फूटी पड़ रही है। अन्य बच्चों को खेलते, हँसते और शैतानी करते देख, वह भी उचकता है, लड़खड़ाकर चलता हुआ वह भी चहकता, कूकता उनके खेल मे शामिल हो जाता है। भूखा होने पर अपने सामने दूध या भोजन देखकर भी वह प्रसन्न हो उठता है।

अपनी प्यारी माँ और दुलारी बहन को अपनी ओर आते देख हाथ उठाकर मुस्कराकर अपनी प्रसन्ता प्रगट करने से नहीं चूकता। अपने खेल में आपको भाग लेते देख, उसे बड़ी प्रसन्नता होती है। अगर आप नित्य ही थोड़ा समय निकालकर उसके खेल और हँसी में भाग लेती है, तो मुन्ना सचमुच मे हमेशा प्रसन्न रहने का आदी हो जायगा। कोई भी उसे देखकर यह कहे बिना नही रहेगा कि अहा हा ! मुन्ना कितना खुशमिज़ाज और खिला हुआ दीखता है।

स्नेह और ममता—बच्चे अपने हित या अहित करने वाले को झट पहचान लेते है। माँ जन्म से उनकी सेवा करती है। अपनी भूख, प्यास, सुख, आराम सभी बातों के लिए, वे माँ पर ही निर्भर होते है। भगवान् ने माँ के दिल मे ऐसी ममता भर दी है कि छोटे बच्चे की देख-भाल सम्बन्धी सभी जिम्मेदारियाँ वह सहर्ष स्वीकार कर लेती है। यही कारण है कि बच्चे का स्नेह उसके व्यवहार के अनुरूप होता है। जो बच्चे के प्रति स्नेहशील है, उन्हे वह भी स्नेह करेगा। जो उसकी उपेक्षा या डाँट-डपट करते है, उनके प्रति वह विरक्त और विद्रोही हो जाता है।

प्रेम का प्रदर्शन बच्चे को भी प्रिय है। दुलारा और पुचकारा जाना उसे भाता है। प्रेम के मामले मे बच्चा एकतरफा व्यवहार करता है। प्यार पाकर उसी ढंग से प्यार प्रगट करने में वह चतुर नहीं है। अपना सिर आपके वक्षस्थल में छिपा कर या अपनी गाल आपकी गाल से सटाकर अथवा अपना खुला मुँह आप की गाल पर रखकर वह अपना स्नेह प्रगट करता है। माँ के पश्चात् बच्चा बाप के प्रति आकर्षित होता है। अगर बाप खिलाड़ी प्रकृति का है और बच्चे के साथ चोचले करता है तो वह भी बाप को घोड़ा बनाकर खेलेगा। अथवा उसका नाक पकड़, चश्मा खींचकर बालों को नोचता हुआ उसकी गोद मे उछल-कूद मचाता हुआ सीढ़ी सदृश्य उसके कंधों पर चढ़ जायगा। साल भर का मुन्ना अपने भाई-बहनों, हम-उम्र के संगी-साथियों के प्रति भी आकृष्ट हो जाता है। जब वह कुछ और बड़ा होता है और स्कूल जाने लगता है, अपनी अध्यापिका तथा संगी-साथी उसे प्यारे लगते है। बच्चे अपने पालतू कुत्ते, बिल्ली आदि पर भी बड़ी ममता रखते है।

बच्चा जैसे-जैसे बड़ा होता है उसका स्नेह अपने संगी-साथियों में बँट जाता है। जब वह छोटा था, माँ ही उसके स्नेह की केन्द्र थी, परन्तु जैसे-जैसे वह समाज में अपना स्थान बनाता है उसका स्नेह-क्षेत्र विस्तृत होता जाता है। कई माताएँ बच्चे के प्रेम पर एकछत्र अधिकार की इच्छा से उसे बड़ी आयु तक नन्हे-मुन्ने के सदृश्य ही दुलारती रहती है। इस प्रकार का प्रेम प्रदर्शन उचित नहीं है। क्योंकि ऐसा दुलार और प्यार मुन्ने को आत्म-निर्भर नहीं बनने देता। वे उसका सभी काम

खुद करती है। उसके चोट लगने अथवा बीमार पड़ने पर खुद घबड़ाती है और उसे भी घबड़ा देती है। माता-पिता को अपना स्नेह, प्रोत्साहन, सहानुभूति, उचित सेवा आदि के रूप में प्रगट करना चाहिए। बच्चे के हृदय में यह भावना नहीं होनी चाहिए कि मैं माँ-बाप का सबसे अधिक दुलारा हूँ, अतएव सभी सुविधाएँ मेरे लिए हैं। घर की सुविधाएँ तथा माँ-बाप के दुलार में अन्य भाई-बहनों का भी हिस्सा है, इस सत्य को मुन्ने को सहज रूप में स्वीकार करना सिखायें।

ईर्ष्या—दूसरों का ध्यान अपनी ओर खींचने के लिए अथवा प्रशंसा या प्रेम प्राप्त करने के लिए बच्चों में परस्पर ईर्ष्या जाग्रत हो जाती है। मुन्ना या मुन्नी जो छोटे होने के कारण अभी तक घर में एक विशेष महत्त्व प्राप्त किए हुए थे, छोटे भाई या बहन के पैदा होने पर उसके प्रति सहज ईर्ष्यालु हो जाते हैं। कभी-कभी किसी बच्चे के प्रति पक्षपातपूर्ण व्यवहार करने से भी अन्य बच्चे उससे ईर्ष्या करने लगते हैं। इसी प्रकार अधिक सुन्दर या गुणवान बच्चे के प्रति हीन व्यक्तित्व वाले बच्चे एक द्वेषपूर्ण दृष्टिकोण रखते हैं। जब बच्चे के हृदय में ईर्ष्या जाग्रत हो जाती है वह अपने प्रतिद्वन्दी को मार-पीटकर, बुरा-भला कहकर, चुगली खाकर अथवा उसकी चीज बिगाड़कर हानि पहुँचाने की ताक में रहता है। बच्चे को ईर्ष्यालू बनाने में बड़ों का भी बड़ा हाथ होता है। वे छोटे भाई-बहनों को अधिक महत्त्व देने लगते हैं। उसके लिए अच्छे-अच्छे खिलौने लाते हैं।

तुलनात्मक प्रशंसा द्वारा छोटे को अच्छा और बड़े मुन्ने को निकम्मा प्रमाणित करके चिढ़ाते हैं। इससे भी बड़ा मुन्ना अपने छोटे भाई-बहन के प्रति ईर्ष्यालू हो उठता है।

अच्छा हो कि, छोटे बच्चे के जन्म से पहले उसका स्वागत करने के लिए बड़े बच्चे की मानसिक तैयारी कर ली जाय। ताकि अपना पालना, अपने खिलौने तथा अपनी माँ का प्यार वह सहर्ष उसके संग बाँट सके। यह मुन्ने का भैया या बहन है, मुन्ना इसे प्यार करता है, इसको सँभालता है—आपके इस प्रकार कहने से मुन्ने को यह अनुभव होने लगेगा कि छोटा बच्चा उसकी अपनी चीज़ है, उसके घर में आने से अब उसकी कद्र और पदवी बढ़ गई है, अब वह बड़ा भैया बन गया है। इस प्रकार उसके मन में अपने नये भाई-बहन के प्रति ईर्ष्या के बदले प्रेम जागृत हो जायगा और वह उसे सँभालने में आपको सहयोग देगा।

जब आप छोटे बच्चे को नहलायँ तो मुन्ने को कहें, 'मुन्ना राजा! चलो तुम्हारे भैया को नहलाते हैं, जरा तुम तौलिया लेकर खड़े रहना। हाँ, अब तुम उसकी पीठ पर पाऊडर छिड़क दो, देखो! देखो! छोटा भैया कैसा खुश होकर तुम्हारी ओर देख रहा है। अच्छा अब नहाकर यह तो सो जायगा, तब मैं घर का

काम सँभाल लूँगी, तुम जरा ध्यान रखना कि यह रोये नहीं और कोई इसको नींद मे खलल नहीं डाले।



इस प्रकार कहकर आप मुन्ने का सहयोग भी प्राप्त कर सकती है और साथ ही वह अपने छोटे भाई के प्रति अधिक दयालू और स्नेहशील भी हो जायगा।

आप बच्चे को इस प्रकार सोचने की प्रेरणा दें, कि आने वाला बहन-भाई मेरे खेल का साथी होगा। उस पर मेरा भी अधिकार है। मै अपने खिलौने, छोटा पालना, अपने छोटे कपड़े आदि उसे देकर बड़प्पन का अनुभव करूंगा। उसकी देख-भाल में मै भी हाथ बटाऊँगा। अब मै बड़ा भैया बन जाऊँगा। अपनी पुरानी और छोटी चीजे अपने भाई-बहन को देने पर मुझे तो नई चीजे मिल जायँगी। छोटे भाई-बहन के आने से मेरा मान-सम्मान तथा कद्र बढ़ जायगी, तो मुन्ना-मुन्नी के हृदय मे अपने बहन-भाई के प्रति कभी भी ईर्ष्या नहीं जागृत होगी। उल्टा वे उत्सुकता से उसके आने की बाट जोहेंगे।

अगर पहले बच्चे और दूसरे बच्चे म काफी उम्र का अंतर है, और बड़ा स्कूल जाने लग गया है, उसका ध्यान अपने संगी-साथियों और खेल में रहता है तब तो अपनी माँ पर वह छोटे भाई-बहन के अधिकार को उतना बुरा नहीं मानता है। पर अगर बड़े और छोटे बच्चे मे केवल साल-दो साल का ही अंतर है तब तो वह बहुत ईर्ष्यालू हो उठता है। परिजनों की दृष्टि मे वह अब बड़ा बच्चा बन गया है। अतएव वे उससे अधिक समझदारी के व्यवहार की आशा करते है। परन्तु जब बड़ा बच्चा यह देखता है कि मेरे छोटे भाई-बहन की—पलंग भिगोने, रोने-मचलने, तथा अन्य बाल-क्रीड़ाएँ सब पसन्द करते है तो वह भी सहानुभूति प्राप्त करने के लिए

फिर से नन्हे-मुन्ने के सदृश्य व्यवहार करने लगता है। यथा—वह पलंग भिगो देगा, बोतल से दूध पीने का दुराग्रह करेगा, नंगा फिरेगा, गोदी लेने को मचलेगा आदि। आप के बार-बार शर्मिन्दा करने और हटाने पर वह चाहे ऊपर से कह दे कि मैं अपने छोटे भाई-बहन को प्यार करता हूँ परन्तु मन-ही-मन वह उससे चिढ़ेगा। अगर ईर्ष्या की भावना प्रबल हुई और बच्चा उसे मन-ही-मन मे दबाता रहा तो धीरे-धीरे उसका मानसिक स्वास्थ्य बिगड़ जायगा। वह दिखावे के लिए तो एक अच्छे बच्चे की तरह व्यवहार करने की चेष्टा करेगा, वह बड़ा भाई है अतएव उसे अच्छा उदाहरण पेश करने की चेष्टा करनी पडेगी। परन्तु ज्यों-ज्यो वह बड़ा होता जायगा अपने ऊपर इस लादे हुए उत्तरदायित्व के प्रति वह प्रतिक्रिया दिखायगा। आगे जाकर वह अपने कर्तव्य को भार रूप समझेगा और उसे भली प्रकार करने मे असमर्थ रहेगा। वह न तो अच्छा सहकारी बन सकेगा न ही अच्छा पति और पिता ही। अपनी पत्नी और बच्चो से वह यही उम्मीद करेगा कि वे उसकी रुचि और सुविधानुसार कार्य करें।

ईर्ष्यालु बच्चा का मानसिक दृष्टिकोण समाज के लिए हानिकारक होता है। इसका उनके स्वास्थ्य पर भी बुरा प्रभाव पड़ता है, अतएव ऐसे मनोवेगों को रोकने के निम्नलिखत तरीके हे—

(१) घर के सब बच्चो के साथ एक-सा व्यवहार किया जाय। अपराध करने पर बुराई की आलोचना की जाय पर बच्चे की नहीं।

(२) किसी बच्चे के खिलौने या उसकी अन्य वस्तुएँ उसकी इच्छा के विरुद्ध किसी दूसरे बच्चे को देना उचित नही, अन्यथा उस बच्चे के प्रति उसके हृदय मे ईर्ष्या जाग्रत हो जायगी।

(३) बच्चे को अधिक उत्तेजित न करें। उसके क्रोधित होने या रोने-पीटने पर कुछ देर उसकी ओर आप ध्यान न दे। प्रथम उबाल निकल जाने पर ही कुछ सलाह देना या समझाना उचित होगा।

(४) बच्चे की दिनचर्या नियमित रखे, उसके स्वास्थ्य का विशेष ध्यान रखें। दुर्बल बच्चे ही तीव्र मनोवेगो के शिकार होते है।

(५) इस बात का भी ध्यान रखे कि आप के मुन्ना को कोई बेमतलब चिढ़ाये या क्रोधित न करे। कभी-कभी अन्य बच्चे छोटे मुन्ने को डराकर, धमका-कर नाहक परेशान करके एक तमाशा-सा बनाते है। इस प्रकार के व्यवहार से बच्चा बड़ा चिड़चिड़ा हो जाता है। अगर बच्चे की आया चिड़चिड़ी है या माता बदमिज़ाज है तो उनकी संगति का भी उस पर बड़ा बुरा प्रभाव पड़ेगा।

(६) जहाँ तक हो सके ऐसी स्थिति पैदा न करें कि मुन्ना मचलकर ज़िद

उन्हें अपने पास बुला लेते हैं। जब थककर कोई आँखे बंद कर के हमेशा के लिए सो जाता है, तभी लोग कहते है कि वह मर गया है। तुमने देखा है न कि जब नई मोटर बहुत मील चलकर पुरानी हो जाती है, तब हम उसे बेकाम समझ छुट्टी दे देते हैं। इसी प्रकार मनुष्य का शरीर भी बेकाम होकर छुट्टी पा लेता है।"

मुन्ना—"मरे हुए को जलाते क्यो है, उसे तकलीफ नही होती ?"

माँ—"जब वह हमेशा के लिए सो जाता है, उसे तकलीफ मालूम नहीं होती। आग की लपटो मे छिपकर वह भगवान् के पास चला जाता है।"

घर मे जब छोटे भाई-बहन का जन्म होता है, अधिकांश माता बच्चे को कुछ इसी प्रकार कहकर बहका देती है कि उसे मैने पड़ा पाया था। सूप मे लेटा, नदी मे बहता आ रहा था; मंदिर मे गई थी भगवान् जी ने दिया है; कमल के फूल मे लेटा था; इत्यादि। इन बातो पर वह कुछ दिन तो विश्वास कर लेता है। बाद मे सुनकर, देख-कर और समझकर कि गाय-भैंस आदि पशुओ के तो पेट मे बच्चा रहता है, हमारे भाई-बहन इधर-उधर क्यों पड़े मिलते है ? मुन्ना एक दिन माँ से कह ही देता है, "माँ तुम झूठ बोलती हो, बच्चा तो पेट मे होता है।" माँ बच्चे की बात सुनकर दुविधा मे पड़ जाती है। उसे यह पता लगने पर कि मुन्ना ऐसा भोला नही है जैसा मै समझती हूँ, भगवान् ने उसे भी बुद्धि दी है, वह हैरान रह जाती है। प्रत्येक माता अपने बच्चे की दृष्टि मे इसी प्रकार झूठी प्रमाणित होती है। बच्चों मे अश्लीलता की भावना या झूठी लज्जा नही होती। एक मनोवैज्ञानिक माता ने अपने बच्चे के प्रश्नों का देखिये कैसा सुन्दर उत्तर दिया।

बच्चा—"माँ जब तुम्हारा विवाह हुआ था, हम सब भाई-बहन कहाँ थे ?"

माँ—"भगवान् के यहाँ।"

बच्चा—"फिर तुम मुझे कैसे लाईं, मै कैसे पैदा हुआ ?"

माँ—"बेटा, मै और तुम्हारे पिता दोनों ने मिलकर अपना घर जमाया। हम आपस में बड़े प्यार से रहते थे। भगवान् ने प्रसन्न होकर हमे तुम्हारा माँ और पिता बना दिया।"

बच्चा—"माँ, पेट मे बच्चा कहाँ रहता है और वहाँ से कैसे बाहर आता है ?"

माँ—"जैसे हमारे सब के पेट मे भोजन की थैली है, उसी प्रकार माँ के पेट में बच्चे की थैली भी होती है। उसी में एक बीज के रूप मे बच्चा होता है। धीरे-धीरे वह वहाँ बढ़ता है, जब तक बच्चे के हाथ-पाँव पूरे नहीं बनते वह माँ के पेट में पलता है, फिर भगवान् उसे एक विशेष रास्ते से बाहर निकाल देते है।"

बच्चा—"माँ के पेट मे ही बच्चा क्यों रहता है बाप के पेट में क्यों नहीं

रहता ?"

माँ—"बाप के पास बच्चे को पिलाने के लिए दूध नहीं है।"

मुन्ने ने यह सुना और एक प्यार-भरी दृष्टि से माँ की ओर देख दुलार से माँ के वक्षस्थल पर हाथ फेरा और हँसता हुआ तुरन्त बाहर खेलने दौड़ गया। बुद्धिमती माँ के इन उत्तरों से मुन्ने का भली प्रकार समाधान हो गया। उसने फिर कभी किसी से इन बातों को पूछने की चेष्टा नहीं की। अपनी आयु के साथ जब उसकी जानकारी बढ़ती गई, तब भी उसे अपनी माँ की बात झूठी प्रतीत नहीं हुई।

छोटे बच्चों के लिए लिंग-भेद भी एक समस्या है। अतएव उन्हें समझा दें कि लड़के और लड़कियो की शारीरिक बनावट मे फर्क होता है। लड़के अपने पिता, चाचा, मामू तथा भाई के सदृश्य होते है। बड़े होकर उनके भी दाढ़ी-मूँछ निकल आती है, वह ऊंचे-लम्बे, मजबूत होते है। जब कि कन्याएँ अपनी माँ, मौसी, चाची तथा बहनों के सदृश्य होती है। बड़े होकर वह भी लड़की से स्त्री बन जाती है।

बच्चे के प्रश्न को समझकर, संक्षेप मे उतना ही उत्तर देना चाहिए जिसे वह समझ सके। उदाहरण द्वारा बच्चा शीघ्र बात समझ जाता है। बच्चे जब परस्पर मिलते और खेलते है, उनके विचार बहुत स्वस्थ रहते है। अनावश्यक कौतूहल उनमे नहीं होता। अगर उनको जताकर कोई बात विशेष रूप से न छिपाई गई हो तो वह उस विषय को शीघ्र भूल भी जाते है। इसलिए जब बच्चा किसी बात के विषय मे कुछ पूछे, तो उसे डॉटकर चुप न करायँ। बेहतर यह है कि आप स्वयं ही उसका समाधान कर दे। फिर वह मौका पाकर नौकर अथवा अपने बड़े साथियों से खोद-खोदकर प्रश्न नहीं करेगा।

कभी-कभी छोटे लड़के अपनी मूत्रेन्द्रिय को बार-बार पकड़ते या खुजाते है। 'तू बीमार हो जायगा या यह गिर जायगी,' इस प्रकार डराकर उसे छूने से वर्जित न करें। जिस प्रकार मुँह में उँगली डालने पर आप उसे, 'यह हानिकारक गंदी आदत है' कहकर उसका हाथ हटा देती है, अथवा कोई काम देकर उसका ध्यान बटा देती है उसी ढंग से मूत्रेन्द्रिय को छूने से रोकें।

शनैः-शनैः जब बच्चे बड़े होते है और शरीर-विज्ञान के विषय मे पढ़ते है तब उन्हे भिन्न-भिन्न इन्द्रियों के कार्यों का पता चल जाता है।

मनोवैज्ञानिक ढंग से पाले हुए बच्चे अपने बड़प्पन के इस ज्ञान को बचपन मे प्राप्त ज्ञान की प्रथम कड़ी के साथ जोड़ लेते है। उनको यह कहने का कभी अवसर ही नहीं आता कि हमारे माँ-बाप झूठ बोलते थे। इसके विपरीत अपने बचपन की जानकारी मे सुन्दर सत्य का अस्तित्व पाकर वे अपने माता-पिता की बुद्धि की सराहना किये बिना नहीं रहते।

बच्चो के सामने बड़ो को कोई ऐसा व्यवहार या चर्चा नहीं करनी चाहिए कि अगर उसका मतलब पूछे तो बताने मे हिचक हो। स्त्रियाँ अपनी सखी-सहेलियों से अनेक ऐसी गोपनीय बाते तथा निर्लज्ज मज़ाक करने लगती है, कि पास बैठे मुन्ना-मुन्नी इतना तो समझ ही जाते है कि कोई गदी बात की चर्चा हो रही है। बाद में अपने संगी-साथियो मे जाकर जब अपनी उत्सुकता निवारण के लिए वह उस बात का जिक्र करते है, तो वहाँ उन्हें जो जानकारी प्राप्त होती है उससे वह बड़ों को निर्लज्ज समझने लगते है। उसका उनके चरित्र पर बड़ा बुरा प्रभाव पड़ता है। वे बड़ो के उपदेश और व्यवहार मे समता नही पाते। उनकी बाल-बुद्धि मे यह बात समझ मे नहीं आती कि कोई कार्य या स्वतंत्रता बड़ो के लिए तो ठीक है, बच्चो के लिए ठीक क्यो नहीं है ? उन्हे तो बस एक ही बात सरल लगती है, जैसा माता-पिता करे वैसा हम भी करे।

जिज्ञासा-वृति स्वाभाविक है—बच्चा जैसे-जैसे बड़ा होता है उसको आस-पास की वस्तुएँ आकृष्ट करती है। उनके विषय मे जानकारी प्राप्त करने के लिए उसकी इच्छा बलवती हो उठती है। 'यह सुन्दर इन्द्रधनुष कहाँ से निकला है ? 'यह नीला आकाश किसने बनाया है ?' 'सूरज गर्म क्यो है ?' 'चांद शीतल क्यों है ?' 'दिन रात कैसे होते है ?' 'इन तारो मे कौन रहता है ?' इत्यादि प्रश्नो के रूप मे उनकी उत्सुकता जागृत होती है।

प्रकृति के रहस्य को समझाते समय उन्हे उसको रचनेवाले परमात्मा की महत्ता भी समझाई जा सकती है। इन वस्तुओ को रचनेवाला ईश्वर है। जब उनकी समझ मे यह बात आ जाती है, तब वे पूछते है,—'ईश्वर कहाँ है ?' 'ध्रुव और प्रह्लाद को वह दिखाई दे गया था, हमे क्यो नही दिखाई देता ?' माता-पिता उन्हे समझाते है कि 'जब तुम पढ़-लिखकर ज्ञानवान् बन जाओगे, अच्छे कर्म करोगे तब भगवान् तुम्हें भी दिखाई देगा।' यह सुनकर उनका दूसरा प्रश्न होता है—'तो क्या आप को दिखाई देता है ?' हँसकर माँ कहती है, 'बेटा ईश्वर शरीर धरकर सामने नही आता, उसके दर्शन तो मन मे होते है, जो कोई भी सच्चे मन से उनकी भक्ति करता है, उसे अन्दर से एक प्रकाश दिखाई देता है।'

प्रेम से बच्चे की आँखों मे आँसू आ जाते है और उसे एक प्रकार की शान्ति मिलती है, वह अच्छे काम करने का निश्चय करता है, उसका मन अच्छी बातों मे लगता है।

भूखे को भोजन कराने पर, किसी निर्बल की सहायता करने पर, किसी घायल पक्षी या जानवर की रक्षा करने पर, मुन्ना का हृदय आनन्द से गद्‌गद् हो जाता है, उसके मुख पर सन्तोष झलकने लगता है। यह देखकर माँ दुलार से मुन्ने की पीठ

पर हाथ फेरती हुई पूछती है, "क्यों मुन्ने अच्छे काम करके खुशी होती है ?"।

मुन्नू मुस्कराकर कुछ लजाकर कहता है, "हाँ माँ, ऐसा क्यों होता है ?"

"बेटा, जब हम कोई काम करते है अगर वह अच्छा काम होता है तो हमारी आत्मा को प्रसन्नता होती है, अगर कोई बुरा काम करते है तो हमारी आत्मा चेतावनी देती है, ऐसा मत करो यह बुरा काम है, इससे दूसरों को तथा तुमको नुकसान होगा। जो समझदार बच्चे है वह इस आवाज को सुनकर बुरे काम से परे हट जाते है। जो बुरे होते है वह इसे अनसुनी कर देते है।"

माँ का यह उत्तर सुनकर मुन्ना अपने अनुभवों पर इसको तोलता है और उसे याद आता है कि जब मै अन्य लड़को के साथ चिड़ियों का घोंसला उजाड़ने या बगीचे मे आम चुराने जाने लगा था, तो अन्दर से ऐसी ही आवाज मुझे भी सुनाई पड़ी थी कि यह बुरा काम है और मै आधे रास्ते से ही लौट आया था। माँ ठीक कहती है कि अन्दर से ऐसी आवाज आती है।

मुन्नू का ध्यान झट दूसरी ओर जाता है और वह पूछता है, "माँ, यह आत्मा क्या चीज़ है ?" "बेटे, हमे बनाने वाला ईश्वर है, ईश्वर हम सब का पिता है, उसी का अंश हम सब मे है। परमात्मा का अंश ही आत्मा है। ईश्वर ने हमे इस संसार मे अच्छे काम करने को भेजा है, जो नही करते उन्हें दुःख उठाने पड़ते है।"

यह सुनकर मुन्ना निश्चय करता है कि मै हमेशा अच्छे काम करूँगा। इस प्रकार धीरे-धीरे उसकी समझदारी और निर्णयात्मक बुद्धि का विकास होता है।

समझदार माता-पिता अपनी सन्तान की जिज्ञासा-वृत्ति को प्रोत्साहन देते हुए उनकी बुद्धि और चरित्र का विकास करते है। जो माता-पिता बच्चों की कौतूहलता का दमन करना चाहते है, वह उनके बुद्धि-विकास मे बाधा डालते है।

बच्चा अधिक काल्पनिक होता है, वह अपनी कल्पना की दुनियाँ मे मस्त रहता है। शीतल-मंद पवन, आंधी, वर्षा, गर्मी, सर्दी सभी मे बच्चे मस्त रहते है। ऋतुओं का परिवर्तन, चिड़ियों का चहकना, फूलों का खिलना, इन्द्र-धनुष, चाँद-सूरज, आकाश मे शरद ऋतु के हलके-फुलके सफेद बादल आदि वस्तुएँ उन्हे आकृष्ट करती है। वे उमंग से नाचने लगते है। तभी एक अँग्रेज़ी कवि ने कहा है कि 'काश, मुझे इन्द्र-धनुष अब भी उतना आनन्द दे सकता जैसा कि बचपन मे देता था, मेरा वह आनन्द बचपन की पवित्रता पर निर्भर था।'

बच्चों के प्रश्नों का उत्तर देते समय उनकी इस सुन्दर कल्पना को तोड़ने की चेष्टा नहीं करनी चाहिए। हमारे उत्तर ऐसे हों जो उन्हें आगे विचारने, कुछ करने तथा अपने अनुभव परखने का प्रोत्साहन दे, ऐसे उत्तर न हों जो उनकी कल्पना को झकझोर दे।

विचित्र-विचित्र बातों की कल्पना करके बच्चों को बड़ा आनन्द आता है। जैसे 'अगर हमारे पंख हों, तो हम क्या करेंगे ! 'अगर मेरे पास भी एक जादू का डंडा हो तो मै क्या कर दिखाऊँगा !' 'मै जब बडा होऊँगा और कमाऊँगा तब कैसी शान से रहूँगा' इत्यादि बाते सोचने मे बच्चों को एक प्रकार का सुख होता है।

जब वे अपने माता-पिता से उनके बचपन की घटनाएँ सुनते है तो उनके हृदय मे यह जानकर कि वे भी हमारे ही सदृश्य व्यवहार करते थे, बहुत सन्तोष होता है। वे खोद-खोदकर पूछते है, 'अच्छा माँ, तुम्हारी माँ कैसी थीं ? क्या तुम्हें प्यार करती थीं, पिताजी भी क्या बचपन मे शैतान थे, क्या वे भी अपने पिता से कभी पिटे थे ?' बच्चों को उत्सुक देखकर जब माता-पिता अपने बचपन की कहानियाँ विस्तार-पूर्वक बताने लगते है, तो बच्चे बड़ी उत्सुकता से उनकी बातो को सुनते है। उनके साहस, परिश्रम, प्रतियोगिता और अभावो से संघर्ष आदि की कहानियों को सुनकर उनके प्रति बच्चों की श्रद्धा और भी बढ़ जाती है।

अतएव बच्चे जब प्रश्न करें, उन्हे उचित उत्तर दे। 'क्या मेरा सिर चाट गया, हरदम कुछ न कुछ उल्टी-सीधी बाते करता रहता है, तेरी बकवास ही नहीं बन्द होती है'—ऐसा कहकर उन्हें चुप कराना उचित नहीं। आप उनकी बातचीत में दिलचस्पी अवश्य ले। उनके दृष्टिकोण को समझने की चेष्टा करे। वे बच्चे है, अबोध है, इसलिए उनकी बात मे कुछ सार नहीं, आप का ऐसा सोचना ठीक नहीं है। बच्चो की बातचीत बड़ी मनोरंजक और कल्पना से भरपूर होती है। वह तर्क-संगत चाहे न हो, पर सजीव और स्वाभाविक अधिक होती है।

बारहवाँ अध्याय

सहयोगी मुन्ना

गृहस्थ-जीवन का सुख बच्चों के सहयोग पर ही निर्भर है। पर बच्चों का सहयोग भी तभी प्राप्त हो सकता है, जब कि माता-पिता भी परस्पर सहयोग देकर गृहस्थी चलायँ। जहाँ पति-पत्नी मे अधिकार और सुविधाओं के लिए परस्पर तनातनी होगी, वहाँ बच्चे अवश्य ही स्वार्थी बनेगे। वे कम परिश्रम करके अधिक लाभ उठाने की चेष्टा करेंगे, दूसरों को हानि पहुँचाकर, अथवा दूसरे के परिश्रम से प्राप्त सुफल और सफलता को भोगने की ताक में रहेंगे।

पर-निर्भरता का कारण—प्रायः देखने में आता है कि प्रेम मे अन्धे माता-पिता अपने बच्चों के लिए सभी कुछ दाव पर लगा देते है, स्वयं कष्ट सहकर उन्हें सभी सुविधाएँ देने की यथा-शक्ति चेष्टा करते है, परन्तु बाद मे अपने मुन्ना-मुन्नी को अकृतज्ञ और स्वार्थी देख उनका दिल टूट जाता है। असल मे भूल तो पहले उन्होंने ही की है। बाल्य-काल मे उन्होंने मुन्ना-मुन्नी को खुद चेष्टा ही नहीं करने दी—सभी चीज़ उनके आगे खुद ही हाज़िर करते रहे। जब मुन्ना घुटने-घुटने चलने लगा, किसी आकर्षक चीज़ को देख, जब उसे प्राप्त करने की उसकी इच्छा हुई, इससे पहले कि वह चेष्टा करके वस्तु तक पहुँचता, माँ ने उस वस्तु को खुद ही उठाकर उसके आगे ला धरा। वह यह बात भूल गई कि मुन्ना कुछ करने, आत्म-निर्भर बनकर जीने की भावना लेकर पैदा हुआ है, और उसकी प्राकृतिक शक्तियाँ उसे कुछ करने की प्रेरणा दे रही है। स्नेहवश माता खुद ही उसके लिए सभी कुछ करती रही। मुन्ना के काम की मंद रफ़्तार से भी वह अधीर हो जाती थी, इसी लिए जब कभी वह खुद नहाने, खाने अथवा मार्ग तय करने की चेष्टा करता, माता खुद ही उसका काम झटपट निबटा देती थी। इसके अतिरिक्त मुन्ने के काम में माँ के काम की-सी सफाई और पूर्णता भी नहीं थी। अतएव मुन्ना जब भी अपने बालों मे कंघी काढ़ता, कपड़े पहनता या अपने कमरे की सफाई करता तो माँ स्वयं ही आगे बढ़कर उसका काम समेट लेती। इसी प्रकार मुन्नी भी जब कभी अपने कपड़े धोती या सिलाई-बुनाई करती तो माँ उसे वहीं रोक देती।

धीरे-धीरे मुन्ना-मुन्नी को यह अनुभव हुआ कि जब तक माता-पिता है, हमारे आराम और सुविधाओं या असफल कामों को सुधारने की जिम्मेदारी उन्हीं पर है, हमें मुसीबत करने की क्या पड़ी है? जैसे-जैसे वे बड़े होते गए, इस उपेक्षा और

स्वार्थ में उन्हें लाभ और सहूलियत दीखी, और अभ्यासवश वे बड़े होकर भी माँ-बाप पर बोझा ही बने रहे।



धीरे-धीरे स्वार्थ की यह भावना बच्चों को अपने नियंत्रकों के प्रति असहयोगी भी बना देती है। वे आज्ञा उल्लंघन करने लगते है, ढिठाई के साथ नियमों को तोड़ते है और स्वाधीनता तथा अधिकारों और आत्म-सम्मान् की रक्षा की ओट में वे कुछ ऐसी उद्दण्डता भी प्रदर्शित करने लगते है, जो किसी भी संस्था और समाज के लिए असहनीय हो सकती है।

खाली दिमाग में शैतान अपना काम करता है। अगर बच्चों के दिमाग में यह ख्याल बैठ जाय कि हम स्कूल क्या जाते हैं, मानो माँ-बाप को निहाल कर देते हैं, और पढ़ाई के अलावा कुछ अन्य जिम्मेदारी सँभालनी हमारे बूते के बाहर है, तो वे कभी भी घर के उपयोगी प्राणी नहीं प्रमाणित होंगे। आप बचपन से ही प्रत्येक बच्चे को गृह-व्यवस्था मे सहयोग देना सिखायें। कई घरों मे माँ के जिम्मे ही घर का सारा धंधा तथा भोजन पकाना, छोटे भाई-बहनों की देख-भाल, घर की झाड़-पोंछ और सफाई का काम रहता है। वह थककर चूर हो जाती है। इसी तरह पिता भी दिनभर दफ़्तर से थका हुआ लौटता है, परन्तु घर आकर छोटे बच्चे की पढ़ाई देखनी, बाजार तथा हाट करनी उसी के जिम्मे रहती है। सिखाने पर घर का प्रत्येक बच्चा छुटपन से ही उपयोगी बनकर माँ-बाप को गृह-व्यवस्था मे सहयोग दे सकता है।

घर के कामों में बच्चों का सहयोग—मैं आपको एक परिवार का दृष्टान्त देती हूँ—श्रीमती धीर के तीन बच्चे हैं। बड़ी लड़की की आयु नौ वर्ष की, उससे छोटा लड़का पाँच वर्ष का और सब से छोटा मुन्ना तीन वर्ष का है। उनके पिता जी की मासिक आमदनी कुल ३०० रुपया है। घर मे केवल एक छोकरा ऊपर का काम, बर्तन आदि माँजने के लिए रखा हुआ है। शेष काम श्रीमती धीर अपने बच्चो के सहयोग से सभालती हैं। उन्होंने अपने बच्चो की दिनचर्या ऐसी नियमित रखी हुई है कि घड़ी को देखकर प्रत्येक को अपने नहाने-धोने, खाने-पीने, पढ़ने-खेलने और विश्राम के समय की याद हो आती है। सुबह बड़ी बहन दोनों छोटे भाइयों को उठाकर हाथ-मुँह धुलाकर पास के बगीचे मे घुमाने ले जाती है। वहीं पर पहाड़े और मौखिक गणित तथा कविता का पाठ भी हो जाता है। एक घंटे बाद घर आकर दूध पीकर प्रत्येक बच्चा अपनी-अपनी सामर्थ्य के अनुसार, घर की झाड़-पोंछ तथा इधर-उधर पड़ी हुई चीज़ों को यथास्थान रखने में अपनी माता को सहयोग देता है। तीन वर्ष का मुन्ना भी आँगन मे पड़े गिलास को माँजने की जगह तथा जूते या चप्पल के जोड़े को यथास्थान रख आता है।

अपने बड़े भाई-बहन को काम मे लगा देख और माँ के मुख से यह प्रशंसा सुनकर कि देखो हमारा नन्हा-मुन्ना तक चीज़ों का इधर-उधर बिखरा रहना पसन्द नहीं करता, वह इस बात का विशेष ध्यान रखता है कि उसके खिलौने या कपड़े इधर-उधर बिखरे न रहें। अभ्यास से वह इतना व्यवस्थाप्रिय बन गया है कि एक बार मैंने उसकी ड्रॉइंग की किताब और रंगदार पेंसिलों का बक्स उसकी छोटी मेज पर रखने के बदले पलंग पर ही रख दिया। उसने लपककर उसे उठाया और हँसकर बोला, "ओहो ! आंटी आप को इतना भी पता नहीं है कि ड्रॉइंग-बुक मेज पर रखी

जायगी, पलंग तो सोने के लिए है।"

जब कभी उसकी माँ घर के काम में व्यस्त होती है, तीनों भाई-बहन अपनी बातचीत से आगन्तुकों का कुछ काल तक मनोरंजन करते हैं। शाम को जल-पान के पश्चात् सब बच्चे पिता को घेरकर बैठ जाते हैं, कोई पंखा करता है, कोई उनके जूते उतारता है।

आज दिनभर में किस बच्चे ने कौन से काम मे हाथ बटाया, अपने दैनिक कार्य की जिम्मेदारी कैसी निभाई, इसकी चर्चा जब उनकी माँ करती है, तब प्रत्येक बच्चा माता के मुख से अपने सहयोग की प्रशंसा सुनकर गद्‌गद् हो जाता है। दूसरे दिन गृह-कार्य में सहयोग देने के लिए उसमें नवीन स्फूर्ति दीखती है। इसी प्रकार किस से क्या भूल हो गई, कौनसा काम बिगड़ गया आदि बातों का उल्लेख प्रत्येक बच्चा खुद करता है।

श्रीमती धीर को मैंने कभी भी ऐसी शिकायतें करते नहीं सुना कि मैं बच्चों के कारण परेशान हूँ; इनका काम करते-करते थक जाती हूँ; इधर मैं सफाई करती हूँ; उधर घर फिर गंदा हो जाता है; आज तेल की बोतल खुली पड़ी रही; बच्चे पंखा या नल चालू छोड़ कर चले गये; दोपहर को लेटो तो इनकी खटपट चलती रहती है, मुझे तो घड़ी भर को चैन नहीं है इत्यादि। उल्टा वे तो ये कहा करती हैं कि 'और दो-चार वर्ष में हमें छोकरा भी रखने की आवश्यकता नहीं रहेगी, मेरी बड़ी बेटी तो कहती है कि 'माँ मैं खाना-पकाना और कपड़े धोने का अभ्यास घर पर ही करूँगी, तभी डोमेस्टिक साइंस (गृह-विज्ञान) मे मैं फर्स्ट रह सकूँगी।'

उस समय छोटा मुन्नू प्रतिस्पर्द्धा की भावना लेकर बोल उठता है, 'वाह दीदी! क्या सारा काम तुम्हीं करोगी और हम क्या निकम्मे बने रहेंगे? दोपहर को माँ के तलवे सहलाकर सुलाने का काम तो मैं किसी को नहीं करने दूँगा।'

जिस परिवार में ऐसे बच्चे होंगे, वहाँ माँ-बाप को भला किस बात का अभाव रहेगा? कई माताएँ अपने बड़े-बड़े मुन्ना-मुन्नी का भी नहलाना, खिलाना, कपड़े पहनाना, कंघी काढ़ना आदि काम स्वयं ही करती हैं। समझदार सुशीला ने अपनी ७ वर्ष की मुन्नी और ४ वर्ष के मुन्ने को इतना होशियार बना दिया है कि वे केवल अपना नहाना-धोना ही नहीं, परन्तु जूते पालिश करना, बिस्तरा बिछाना, अपनी तख्ती पोतनी, कमरे की झाड़-पोंछ आदि काम खुद ही कर लेते हैं। वे इतवार के दिन माता के साथ मिलकर गेहूँ भी बीनते हैं। मुन्नी तो इतनी समझदार है कि उसने अपने छोटे भाई को ५० तक गिनती और पूरी वर्णमाला सिखा दी है। वह अपने स्कूल की 'ब्लू बर्ड' संस्था की भी मेम्बर है। उससे जहाँ तक हो सकता है, हमेशा

दूसरों की मदद करने का अवसर ढूँढ़ती रहती है। अपने साथ के दो-चार बच्चों को इकट्ठा करके अध्यापिका या नर्स बनकर खेलना उसे बहुत भाता है। इतवार के दिन जब उसकी माता जी धोबी के यहाँ से आये फटे कपड़ों की मरम्मत करती है तो मुन्नी सब बटन टाँकती जाती है। उसने एक छोटी-सी पिटारी में अपनी सुई, कैंची और बटन की डिबिया रखी हुई है। घर में अगर किसी का बटन टूट जाय वह मुन्नी के पास जाता है और मुन्नी भी एक नन्हीं-सी गृहिणी के सदृश्य इस काम को करके बड़ी खुश होती है।

एक बार मुन्नी आठ रोज के लिए अपनी मौसी के यहाँ चली गई, तो सभी ने उसकी अनुपस्थिति को महसूस किया। पिता जी सोचते—'मुन्नी नहीं है तो बटन किस से लगवायँ ? मुन्नी की माँ तो खाना बनाने में व्यस्त है, मेरा रुमाल कौन धोए ? दफ्तर से लौटकर आने पर मुन्नी ही नाश्ता लेकर आती थी।'

माँ भी सोचती—"मुन्नी थी तो गेहूँ झट से बिनवा लेती थी, आवश्यकता पड़ने पर भाजी वाले या बर्फ बेचने वाले को आवाज देकर झट रोक लेती थी। मुन्नी के बिना तो बड़ी असुविधा है।" घर आकर जब मुन्नी ने यह सब सुना तो उसे एक प्रकार का आनन्द ही हुआ और बोली, "लो भई, कल ही सब बटन टाँक दूँगी, और हाँ माँ, परसो अपन मिलकर गेहूँ भी बीन लेंगे।"

बच्चों को काम सिखाने का तरीका—बच्चों को काम करने का बड़ा चाव होता है, उनमें काम करने की स्फूर्ति की भी कमी नहीं है, एक ही काम को वह बार-बार करते नहीं थकते। अगर आप बच्चों से काम लेना चाहें तो निम्नलिखित बातों का अवश्य ध्यान रखें —

(१) बच्चों की आयु, सामर्थ्य तथा समझदारी के अनुसार काम बाँटें, छोटे मुन्ने-मुन्नी को छोटा और सरल काम दें। मान लें मुन्नी गेहूँ बीन रही है, उसके लिए छोटी सी थाली में पाव भर गेहूँ काफी है, चार वर्ष के मुन्ना को ढेरी में से मोटे-मोटे कंकड़ या मिट्टी उठाकर इकटठे करने का काम सौंपें। थोड़ी ही देर में उसके पास कंकड़ों का संग्रह हो जायगा। अपने परिश्रम को सार्थक होते देख उसे बड़ा आनन्द होगा।

(२) बच्चे के काम में अगर न्यूनता रह जाय, आप इस प्रकार आलोचना भूलकर भी न करें कि—"हट परे, तेरे से भला क्या काम होगा ? उल्टा काम बढ़ा कर रख दिया है, मैं क्या तेरे भरोसे बैठी रहूँगी ? बड़ी आई काम करने।" आप की इस प्रकार की आलोचना से बच्चे की काम में दिलचस्पी तथा आत्म-विश्वास दोनों नष्ट हो जायँगे। काम में अगर कमी रह गई है, तो उसकी आलोचना किये बिना भी वह सुधरवाया जा सकता है। यथा—"मुन्नी रानी ! कमरा साफ तो हो गया है,

आओ, जरा ये मेज-कुर्सी भी पोछ ले, और हाँ जरा तसवीरों की धूल भी झाड़ लें। बस अब तो कमरा चमक गया।"

(३) बच्चों के काम करने की रफ्तार धीमी होती है, और काम करते-करते वे उतावले हो उठते है, इस कारण काम मे पूर्णता नहीं आती। इस के लिए आप



प्रतियोगिता रखें। यथा एक के बीने हुए गेहूँ में अगर दूसरा बच्चा कंकड़ी निकाल दे, तो जितनी कंकड़ी निकली, उतने पाईंट वह हार जायगा। इस प्रकार काम के साथ खेल का आनन्द भी आ जायगा। रफ्तार लाने के लिए घर में चार बच्चों की दो पार्टी बनायँ, दोनों को अलग-अलग काम सौंपे। जो पार्टी अपना काम ठीक से करके जल्द निपटा दे वह जीत गई। पर इस बात की शर्त पहले ही लगा दें कि कोई बच्चा हारने पर चिढ़े नहीं। इसी प्रकार यथासमय काम करने की आदत डाली जा सकती है। इस प्रकार से बच्चे धीरे-धीरे काम में निपुणता प्राप्त कर लेंगे।

(४) लड़कियों को गृहस्थी का काम करने का विशेष चाव होता है। यथा—छोटे भाई-बहन को सजाना, उसे घुमाने ले जाना, उसके कपड़े धो देने, उसे खाना खिलाना, इस प्रकार के कामों को करने में उनकी मातृ-भावना की तृप्ति होती है। घर का हिसाब रखना, भंडार-गृह से रसद निकलवा देनी तथा भोजन के समय चटनी, फुलका और पानी परोसने का भी उन्हें बड़ा चाव होता है। इसी प्रकार मुन्ना भी पिताजी के जूते या साईकिल साफ करने, या माँ के तलवे सहलाकर बड़ा प्रसन्न

होता है। समझदार माता-पिता अपने मुन्ना-मुन्नी को छुटपन से ही उपयोगी और आत्म-निर्भर बनने की शिक्षा देते है। ऐसे मुन्ना-मुन्नी आगे जाकर नौकरों के मोहताज नहीं रहेंगे और कम खर्च मे भी वे अपना गुजारा कर सकेंगे। साथ मिलकर काम करने तथा अपने बड़ो का हाथ बटाने मे उन्हें विशेष आनन्द आयगा। न केवल काम ही, परन्तु अपने माता-पिता की अन्य जिम्मेदारियों तथा परेशानियों को भी वे सहर्ष बटाने को तत्पर रहेंगे।

सहयोगी बच्चे घर के भूषण हैं—एक बुद्धिमान् का कहना है कि होनहार बच्चे घर के पर्दे है। अगर वे समझदार, शिष्ट और सुघड़ है, तो माता-पिता की बहुत सी कमियाँ और घर की गरीबी ढक जाती है। अगर वे अशिष्ट, फूहड़ और मूर्ख तथा बेपरवाह है, तो अच्छे-अच्छे घरो की भद्द उड़ जाती है, सुनाम बिगड़ जाता है और लोग नेक माँ-बाप मे भी दोष देखने लगते है। आप को आरम्भ मे बच्चो की आदत बनाने मे चाहे परिश्रम करना पड़े, परन्तु अगर बाल्यकाल के पाँच वर्षों मे बच्चे के चरित्र की आधारशिला ठीक रूप से पड़ गई, तो आगे जाकर आप को अधिक परिश्रम नही करना पड़ेगा। बड़े भाई-बहनो की देखा-देखी छोटे बच्चे स्वयं सही रास्ते से चल पड़ते है, उदाहरण का प्रत्यक्ष प्रभाव पड़ता है।

घर का रहन-सहन का मापदण्ड ऊँचा उठाने, किफायत से गृहस्थी चलाने, घर का सुनाम और शान रखने, इन सभी कामो मे बच्चो का सहयोग वांछनीय है। अपने कर्तव्यो के प्रति आप स्वय सचेत रहे और बच्चो को भी यही शिक्षा दे। छल, प्रपंच, खुशामद या सिफारिश से जो सुविधाएँ सहज मे प्राप्त हो सके, उनकी लालसा न करने दे। अगर वे प्रशंसा या सफलता चाहते है, तो परिश्रम करे, इस बात का अभ्यास बचपन से ही करवायँ। अगर किसी भाई ने कोई इनाम अपनी योग्यता से प्राप्त किया है, तो छोटे भाई को वह वस्तु रोकर या ज़िद करके प्राप्त न करने दे। इसी प्रकार खेल के मैदान मे गेम जीतने के लिए चेष्टा अवश्य करनी चाहिए, पर हार से अप्रसन्न या हतोत्साह होना उचित नही।

मास्टर या अध्यापिका पर दबाव डालकर या खुशामद करके अच्छा रिमार्क प्राप्त करने की चेष्टा को कभी प्रोत्साहन न दे। साथ ही अपने गुण और सफलता का मुन्ने-मुन्नी को घमंड भी नहीं होना चाहिए। घर और बाहर दोनों जगह अपने संगी-साथियों की मदद करने, परोपकार करके सुखी होने तथा टीम स्प्रिट रखकर काम करने की वृत्ति जिन बच्चों मे होती है, वे सब के प्रिय और प्रशंसा-पात्र बन जाते है। जब अभ्यास से शनैः-शनैः बच्चों को यह पता लग जायगा कि संसार मे काम प्यारा है चाम नहीं, तो वे अपने को उपयोगी बनाकर परिजनों को प्रसन्न करने की चेष्टा करेंगे। परन्तु परिजनों का भी यह फर्ज है कि उनकी सेवा और सहयोग का कद्र

करें। बच्चा अपनी आयु और योग्यता के अनुसार अगर सहयोग देने की चेष्टा कर रहा है तो उसे प्रोत्साहन देना चाहिए।

सहयोग की कद्र करें—प्रेम और प्रशंसा सभी को प्रिय है, बच्चे को यह समझते देर नहीं लगती कि मेरे सहयोग की परिजनों को चाहना है, वे मेरी सहायता तथा सफलतापूर्वक काम निभाने की योग्यता की सराहना करते हैं। इस भावना से उसे विशेष आनन्द आता है। मोहन और सोहन दोनों भाई दशहरा, दीवाली और होली पर अपने घर की सफाई और सजावट मे विशेष रूप से उत्साह दिखाते थे। माता-पिता को उनके सहयोग पर इतना भरोसा था कि घर की सजावट और सफाई का बजट मंजूर कर देने के पश्चात् शेष काम का भार उन दोनों भाइयो पर ही होता था। एक साल उनके पिता जी की बदली हो गई और पढ़ाई के कारण दोनो भाइयों को अपने चाचा के पास रुक जाना पड़ा। दशहरा और दीवाली पर उन दोनों ने अपनी माता को पत्र लिखा, "माताजी हमने दशहरा और दीवाली यहाँ धूमधाम से मनाई, पर हमें एक बात बड़ी खटकती रही कि हम आप सब से दूर थे और इस बार घर की सफाई और सजावट मे आप का हाथ नहीं बटा सके। हम लोगों के न होने से आप को उत्सव की तैयारी करने में विशेष उत्साह नहीं रहा, यह जानकर हमारे मन आप के दर्शनों और सेवा के लिए और भी व्याकुल हो उठा है। खैर, अगले साल जब हम अपने निजी घर में जायेंगे, दशहरा और दीवाली खूब धूमधाम से मनायेंगे और इस साल की कसर पूरी कर लेंगे।"

दण्ड के रूप में काम न करवायँ—बच्चो को सहयोग देने में आनन्द आय, वे खुशी-खुशी आप के काम में हाथ बटायँ, इसके लिए यह आवश्यक है कि बच्चों से डाँट-डपटकर या दण्ड-स्वरूप काम न कराया जाय। प्रायः माताएँ ऐसा कह देती है—"क्यों मुन्नी घर का काम जरूरी है कि तेरी पढ़ाई? देखती हूँ, जब से तू स्कूल जाने लगी है, अपने कमरे में तुझ से झाड़ू तक नहीं लगता। ठहर जा, मैं तुझे ठीक करती हूँ, नौकर को हटाकर तुझ से ही चौका-बर्तन करवाऊँगी, तब तुझे अक्ल आयगी।" इसी तरह पिता जी भी मुन्ने को शर्मिन्दा करते हुए कहते है—"तू पढ़ता नहीं, गँवार बना रहेगा? फिर जिस तरह सड़क के मजदूर या हमारा नौकर मेहनत-मजदूरी करता है तुझे भी करनी पड़ेगी, तू भी जूठे बर्तन मांजना, झाड़ू देना और कपड़े धोना।" इस प्रकार के कथनों का बच्चों पर बहुत बुरा प्रभाव पड़ता है, वे समझने लगते है कि काम करने में छोटापन झलकता है, इससे पढ़े-लिखे और बड़े कहलाने वाले लोगों की शान फीकी पड़ती है।

जिस बच्चे को बाध्य होकर काम करना पड़ता है, वह उसमें गौरव और आनन्द अनुभव नहीं करता। मानो उसके लिए काम एक प्रकार की सजा है।

प्रताप एक साधारण गृहस्थ का लड़का था। वह एक अंग्रेज़ी स्कूल में पढ़ता था। बच्चे की शिक्षा ठीक से हो इस दृष्टि से माता-पिता अपनी औकात से अधिक उसकी पढ़ाई पर खर्च कर रहे थे। एक दिन की बात है कि उसकी माता जी भोजन बना रही थीं, पिता जी आफिस जाने के लिए तैयार हो रहे थे। अतएव दरवाजे पर जब भाजी वाले ने आकर आवाज दी तो पिता जी ने प्रताप को भाजी खरीद लेने के लिए कहा। प्रताप भाजी ले रहा था, इतने मे उसका एक सहपाठी वहाँ आ गया। भाजी लेना अपनी शान के विरुद्ध समझ प्रताप ने थैली तो दरवाजे के पीछे डाल दी और भाजी वाले को चले जाने का संकेत किया। माता जी भाजी के लिए इंतज़ार कर रही थीं। जब प्रताप के पिता जी को पता चला कि प्रताप अपने सहपाठियों की उपस्थिति मे भाजी खरीदना अपनी शान के खिलाफ़ समझता है, उन्हें उसकी इस नासमझी पर बड़ा खेद हुआ और क्रोध आया। उन्होंने उसे डाँटा-डपटा और बड़ा सा लेक्चर भी दिया, परन्तु उसका बच्चे पर कुछ विशेष प्रभाव नहीं हुआ। दूसरे दिन उन्होने प्रताप के उस सहपाठी के पिता जी से भी शाम को क्लब मे इस बात की चर्चा की। उनका भी यही विचार था कि अँग्रेज़ी स्कूलो मे पढ़े-लिखे लड़के अपनी वेश-भूषा तथा बोल-चाल मे चाहे चतुर दीखते है, परन्तु उनमे फिज़ूलखर्ची और दिखावटीपन अधिक आ जाता है। काम करना तो वे अपनी शान के खिलाफ समझते हैं।

दूसरे मास जब मौहल्ले के पालकों की मीटिंग हुई, तो उसमे हेडमास्टरों का ध्यान इस बात की ओर विशेष रूप से आकृष्ट किया गया कि बच्चों मे यह भावना पैदा की जाय कि वे प्रत्येक काम मे आत्म-निर्भर होने की चेष्टा करे। अपना काम खुद करने में गौरव का अनुभव करें। घर, स्कूल तथा समाज की उन्नति मे सहयोग दें। यह बात तभी संभव हो सकती है जब कि स्कूल मे स्काउटिंग, सेवा-दल, आदि संस्थाएँ बनें। जो बच्चा अपनी क्लास मे तथा घर में सब से अधिक उपयोगी, व्यवहारिक तथा सहयोगी प्रमाणित हो उसे इनाम दिया जाय। इस बात का निर्णय करने मे घर और मौहल्ले की रिपोर्ट को भी महत्त्व दिया जाय।

परिश्रम के प्रति सम्मान भावना—काम के प्रति सम्मानजनक भावना और रुचि रखने की शिक्षा बचपन मे ही दी जाय। बच्चा काम मे दिलचस्पी तभी लेगा जब कि काम भी खेल के सदृश्य मनोरंजक बना दिया जाय यथा—देखे कौन अपना कमरा साफ करके, जल्दी तैयार होता है, । अच्छा, आओ शर्त लगायँ कौन सबसे अधिक गेहूँ बीनता है। माता-पिता को चाहिए कि बच्चों के जन्म दिवस पर स्वास्थ्य, सफाई, पढ़ाई, काम करने में होशियार, शील और विनम्रतापूर्ण व्यवहार आदि बातों में जो बच्चा सब से अधिक श्रेष्ठ हो, उसे इनाम दें। इनाम मे ऐसी उपयोगी चीज़ें दें जो उनके काम की हों। इस प्रकार उनके लिए दोबारा पैसे खर्चने की

आवश्यकता भी नही पड़ेगी।

जब तक बच्चो को सद्गुणों की कदर करना नहीं सिखाया जायगा, वे बुराई और निकम्मेपन से नफ़रत नही करेंगे। जब बच्चे की कर्तव्य-भावना विकसित हो जायगी तभी वह यह अनुभव करेगा—"अरे! सब काम कर रहे हैं, केवल मैं ही खाली बैठा हूँ, यह तो बड़े शर्म की बात है कि मेरा काम कोई दूसरा करे।" आत्म-निर्भरता का पाठ बच्चे बड़ो के उदाहरण से भी सीखते हैं। जब मुन्ना-मुन्नी यह देखते हैं कि सुबह उठकर माता और पिता अपने-अपने बिछौने खुद उठाते हैं; माताजी सब कमरे साफ करती हैं, तो पिता जी झाड़-पोछ कर देते हैं; माता जी चौके मे चाय तैयार करती हैं, तो पिताजी मेज पर बर्तन लगा देते हैं; अपने जूते तथा साइकिल पिता जी खुद ही साफ करते हैं; माँ अपने कपड़े खुद धोती हैं, तो यह देखकर मुन्ना-मुन्नी भी छुटपन से अपना काम सँभालना शुरू करेंगे। पर अगर वे यह देखते हैं कि पिता जी को यदि पानी का गिलास भी चाहिए तो नौकर को आवाज देते हैं। घर को साफ रखने के बदले वे इधर-उधर अपने कपड़े और जूते खोलकर डाल देते हैं तथा सिगरेट के टुकड़े दरवाजो के पीछे फेंकते रहते हैं। बाद मे माता जी या नौकर को ही सब काम सँभालना पड़ता है, तो बच्चे भी आरामतलब और बेपरवाह बन जायँगे।

किताबी शिक्षा के सदृश्य कर्तव्य-परायणता का पाठ भी बच्चो को सिखाना पड़ता है और यह पाठ वे उदाहरण, अभ्यास तथा सहयोग और प्रोत्साहन पाकर ही सीख सकते हैं। बच्चे से काम करवाते समय स्वार्थबुद्धि नहीं रखनी चाहिए, नही तो उसे आपका सहयोगी बनने मे आनन्द नहीं आयगा। उसका सहयोग पाकर आप प्रसन्नता और कृतज्ञता प्रकट करेंगे तभी वह चाव से काम करेगा। बहुत कम माता-पिता या अन्य गुरुजन बच्चे के प्रति अपनी कृतज्ञता प्रकट करना उचित समझते हैं। क्योकि उनकी यह धारणा होती है कि बच्चा बड़ो के अहसान से दबा हुआ है और उसकी सेवा और सहयोग बड़ो के लिए विशेष महत्त्व नही रखता। प्रशसा करना तो दूर रहा वे उसकी सहयोगपूर्ण चेष्टाओ की खिल्ली उड़ाते हैं—'अरे बस, बस, बहुत हो गया, छोड़ अब मुझे देर हो रही है, तू ने तो उल्टा काम बढ़ा कर रख दिया।' बड़ों के ऐसे बचनो से बच्चे के मन मे यह विचार घर कर जाते हैं कि काम करना तो बड़ो का कर्तव्य है भला कहीं बच्चे भी काम कर सकते हैं? बच्चों का काम तो माँ-बाप करते हैं और बाद में नौकर करते हैं।

इस प्रकार वे अपनी दिनचर्या में पर-निर्भरता का पाठ पढ़ते हैं।

घरों मे नौकरों के प्रति तिरस्कारपूर्ण व्यवहार भी बच्चों की कार्य के प्रति सम्मान-भावना नष्ट करता है। जिनके घरो मे नौकर हैं उनके बच्चे सोचते हैं कि

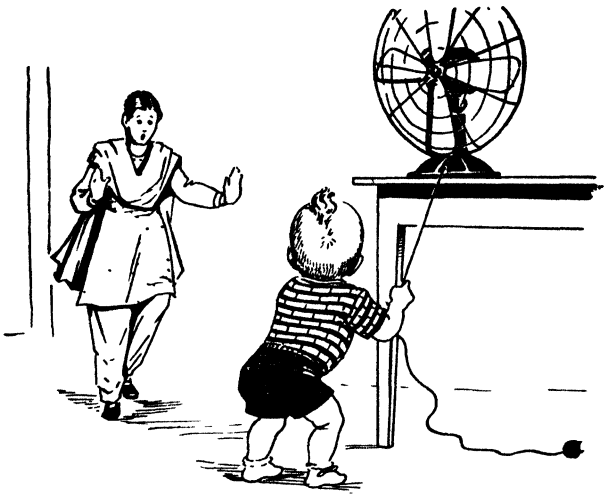
छोटे-मोटे सेवा के कार्य करना तो नौकरों का काम है, हम तो पढ़-लिखकर बड़ी-बड़ी नौकरियां करेंगे। अपना कमरा साफ करना, कपड़े धोना, बर्तन मांजना, रोटी पकाना आदि कार्य जो खुद करते हैं, वे गरीब हैं, इसी लिए वे नौकर नहीं रख सकते। बच्चों को छुटपन से ही कार्य-पूजा (work is worship) का पाठ पढ़ायें, तभी वे आत्म-निर्भर हो सकेंगे। हमारे देश में बी. ए., एम. ए. पास नवयुवक किसी भी आफिस में क्लर्क बनना पसंद करेंगे, परन्तु वे गाय-भैंस अथवा डेरी का काम या टेलर अथवा मोची का काम सीखना पसंद नहीं करते, चाहे उसके द्वारा वह एक क्लर्क के वेतन से दुगुनी आमदनी ही क्यों न पैदा कर ले।

बड़ों की हतोत्साहित करने वाली आलोचना से डरकर भी बच्चों की सहयोग-भावना विकसित नहीं हो पाती, यही कारण है कि बच्चे अपने पिता या बड़े भाई की निगरानी और साझे में काम करना पसंद नहीं करते, उसके बदले वे किसी दूसरे के अधीन रहकर नौकरी करना अधिक पसंद करते हैं। अपने अधीन बच्चों या कर्मचारियों से काम लेना भी एक खूबी है। जो व्यक्ति उदार गुण-ग्राही तथा निस्वार्थी और पक्षपात-रहित होता है वही लोगों में सहकारिता की भावना पैदा करने में सफल हो सकता है।

तेरहवाँ अध्याय

आज्ञाकारी मुन्ना

जमाने के साथ बच्चों की दुनिया भी बदल रही है। यों कहना अधिक उचित होगा कि शिक्षा, सभ्यता तथा अपने संगी-साथियों का बच्चे के ऊपर इतना असर पड़ने लगा है कि माता-पिता ने जो कहा बच्चे बिना हील-हुज्जत किये उसी के अनुसार करने लगे ऐसे उदाहरण बहुत कम देखने को मिलेंगे। माँ-बाप भी बच्चों



को कड़े नियत्रण में रखने में अब विश्वास नहीं करते। क्योंकि मनोवैज्ञानिकों ने यह साबित कर दिया है कि बच्चों के ऊपर बहुत दवाब डालने से उनके मानसिक तथा शारीरिक शक्तियों का पूर्णतया विकास नहीं हो पाता। फलस्वरूप बच्चे जीवन के संघर्ष में पूरी तौर से अपना पार्ट अदा नहीं कर पाते।

आखिरकार बच्चे की कुछ अपनी भी अक्ल है। गिर-गिरकर ही सबने चलना सीखा है। परन्तु गिरने के डर से किसी बच्चे को चलने से रोकना कौनसी बुद्धिमानी है ? जब बच्चे की बुद्धि का विकास माँ-बाप की देख-भाल में होता है, तब बुराई और भलाई समझने का उसे स्वयं ज्ञान आ जाता है। हाथ एक बार जल जाने पर, कोई भी बच्चा आग में दुबारा हाथ नहीं डालता। वैसे तो अग्नि आदि से दुर्घटना होने को बड़े-बड़े लोगों से हो जाती है।

नियमों से जकड़बंद न करें—बच्चा आखिरकार बच्चा ही है। वह बड़ों के सदृश्य सभा-समाज के नियमों से अपरिचित है। इसलिए यह माँ-बाप का कर्तव्य है कि वे उसे प्यार और सहानुभूतिपूर्वक सही तरीकों का आदी बनायें। कोई काम केवल सज़ा के डर से करवाने से बच्चा ठीक तरीका नहीं सीखता और वह छिपकर बुरे तरीके को अपनाने का आदी हो जाता है। बचपन में जब बच्चा माँ-बाप को ही सब कुछ समझता है, उसको आज्ञाकारी आसानी से बनाया जा सकता है। बच्चे को बचपन में ही यह समझा देना चाहिए कि सभी काम उसकी इच्छानुसार नहीं हो सकते। यथा—जिस-तिस के खिलौने या खाने और मिठाई का हिस्सा उसी को मिल जाय या जब दूसरों की पारी है, उसे बाहर जाना मिल जाय, ऐसा होना असम्भव है। सब सुविधाएँ बाँट कर मिलेंगी। खाने-पीने, खेल-खिलौने तथा माँ-बाप के प्यार आदि में सब बच्चों का हिस्सा है और अपने-अपने हिस्से तथा अपनी-अपनी पारी की सुविधाओं से ही प्रत्येक को सन्तोष करना चाहिए। इस बात को बच्चे अभ्यास और उदाहरण से शनैः-शनैः समझ जाते हैं। जब भी बच्चे की माँग या मचलना अन्यायपूर्ण हो, माता-पिता को दृढ़ता और सहानुभूति के साथ उसका मुकाबला करना होगा। उसके रोने और मचलने से डरना या हारना नहीं चाहिए। बच्चे ने जहाँ एक-दो बार अपनी ज़िद से आपकी 'ना' को 'हाँ' में बदलवाया, बस हमेशा ही वह इस ढिलाई का लाभ उठाने की चेष्टा करेगा और अति भयंकरता से ज़िद करके आप को झुकाने की उसकी टेव-सी पड़ जायगी।

आज्ञा-पालन के विषय में बच्चे के दो रुख़ होते हैं, एक तो प्रसन्नतापूर्वक बिना किसी दबाव के कहना मानना, क्योंकि जो मनुष्य उसे हुक्म दे रहा है उसके प्रति उसका विश्वास और प्रेम है। दूसरा रुख़ है जब बच्चा जानता हो कि जो मनुष्य मुझे हुक्म दे रहा है वह मुझे से जलता है, या उसका रूख़ पक्षपातपूर्ण है या वह हुक्म देने के अयोग्य है, ऐसी स्थिति में बच्चा केवल लाचारी में ही कहना मानेगा।

कई बच्चे ऐसी ज़िद पकड़ लेते हैं कि सिवाय माँ-बाप के और किसी के हुक्म की परवाह ही नहीं करते। ऐसी आदत बुरी है। बच्चे में सहयोग की आदत और मिलकर काम करने का स्वभाव खेल-खेल में ही डालना चाहिए। इसलिए बच्चा केवल इस भावना से कोई अच्छा काम नहीं करे कि इससे माँ खुश होगी या न करने से पिता जी नाराज होंगे। परन्तु इस ख्याल से करे कि यही करना ठीक है, और ठीक काम करने से माँ-बाप खुश होते हैं। इस से यह लाभ होगा कि अच्छे काम को वह किसी व्यक्ति विशेष तक ही सीमित नहीं रखेगा।

आदेशों में सामंजस्यता रखें—बच्चे को उसके बुरे काम के लिए डाँटते या

सज़ा देते समय इस बात का ध्यान रखे कि जब वह कसूर करे, उसी समय उसे डाँटना या समझाना चाहिए। एक-दो दिन बाद डाँटने अथवा कभी उसी गलती पर सजा देने, कभी छोड़ देने से बच्चे के मन मे उस डाँट या सजा का असर नहीं होता उल्टा वह चिढ़-सा जाता है। अगर किसी बच्चे ने कोई कसूर किया है, तो उससे बहुत परेशानी न दिखायँ, नहीं तो बच्चा अपने मे ऐसी ख़ासियत समझने लगेगा कि वह जब चाहे आप को परेशान करके महत्त्व प्राप्त कर सकता है। बच्चों के सुधार के मामले मे धीरता से काम लेना चाहिए। सजा देते समय इस बात का ध्यान रखना जरूरी है कि उससे बच्चे का आत्म-सम्मान नष्ट न हो। अतएव उसे एकान्त मे बुलाकर डाँटना उचित है। सजा मिलने के बाद बच्चे मे ग्लानि नहीं पैदा होनी चाहिए, नहीं तो उसमे हीनता की भावना पैदा हो जायगी। माँ-बाप का रुख बच्चे के प्रति एक ममतापूर्ण शिक्षक का होना चाहिए न कि दंड देने वाले पुलिसमैन का।

कोई बच्चा भी जन्म से बुरा नहीं होता। बच्चे बहुत से कसूर इसलिए कर बैठते हैं कि उन्हे सही और गलत बात का पता नहीं होता। इसलिए उनकी जिस हरकत को आप शरारत समझते है, हो सकता है कि वह उनकी अनजाने मे की गई भूल हो। इसलिए बच्चे की भूल सुधारकर उसे ठीक बात समझा दे। अपने गुस्से के उबाल को बच्चे पर कभी न निकाले। ऐसी हालत मे आप बच्चे के संग बहुत ज्यादती कर बैठेंगे।

माता-पिता इस बात का भी ध्यान रखे कि जिन बुराइयो के लिए वे बच्चे को रोकते-टोकते है कहीं वे ही बुराइयाँ खुद उनमें तो नही हैं। क्योंकि उपदेश देने से उदाहरण पेश करना अधिक महत्त्व रखता है। बच्चे भलाई की बनिस्बत बुराई की झट नकल करते हैं। इसलिए यह जरूरी है कि बच्चे को सुधारने से पहले स्वयं पूर्ण होना चाहिए। अन्य कामों की तरह बच्चे आज्ञा-पालन करना भी सीख जाते हैं। अच्छे काम का नतीजा सुख और प्रशंसा, बुरे कामों का नतीजा दुःख और सजा है, इन दो नतीजों का उनके कारणों से सम्बन्ध है, यह बात उनके मन मे भली प्रकार जमा दे।

जिस घर में दो अमली राज होगा अर्थात् माँ भी हुक्म दे तथा बाप माँ की बात को काटकर दूसरा हुक्म दे दे, तो इससे बच्चे में अपनी सुविधा के अनुसार काम करने की प्रवृत्ति हो जायगी। माता-पिता के परस्पर झगड़े का भी बच्चे पर बड़ा बुरा असर पड़ेगा और वह उच्छृङ्खल बन जायगा। बच्चों की उम्र का भी आपको ध्यान रखना चाहिए। शब्द-प्रति-शब्द तो आप के हुक्म का वह पालन नहीं कर सकते। अगर वह यथाशक्ति आज्ञा-पालन करने की चेष्टा करते पाये जायँ तो

आपको उन्हें उत्साहित करना चाहिए। पर कुछ हुक्म ऐसे हैं, जो उन्हे तुरन्त पालन करने चाहिएँ। जैसे 'वह रख दो', 'इधर आओ', 'फौरन भागो', इन हुक्मो को आप खेल-खेल में ही पालन करवायँ तो बच्चे सुनने-मात्र से पालन करने के अभ्यासी हो जायँगे।

हुक्म देते समय नीची लिखी बातों का विशेष ध्यान रखें—

(१) बच्चे की सामर्थ्य, योग्यता तथा आयु का ध्यान रखकर जो हुक्म सोच-विचारकर दिया गया है उसका पालन बच्चे से अवश्य करवायें।

(२) हुक्म देने के ढंग तथा कार्य-प्रणाली मे आप हमेशा रद्दोबदल न करते रहें। अन्यथा बच्चा आप के तरीको तथा स्वभाव से वाकिफ नही रहेगा।

(३) आपका व्यवहार बच्चे के प्रति धाँधली मचाने वाला या अत्याचारी डिक्टेटर का नही होना चाहिए। अगर बच्चा अपने खेल मे लगा है और सोने अथवा खाने या कही जाने का वक्त हो गया है, तो उसे दस मिनट पहले से सूचित कर दिया जाय ताकि वह अपना ध्यान खेल से हटा सके। आपकी आज्ञा-पालन के लिए उसे काफी समय मिल जाने से फिर वह आपके प्रति विद्रोही नहीं होगा।

(४) किसी काम के करने का हुक्म देने से यह अधिक उपयुक्त होगा कि आप उसे स्वयं करते हुए उसमे उससे सहयोग देने को कहें। यथा—"आओ मुन्ना जरा अपने खिलौने तो उठवाकर रखवा लो।" हुक्म जहाँ तक हो सके नकारात्मक न हो। टोकने से तो अच्छा यह है कि उसका ध्यान किसी बेहतर अच्छे काम की ओर आकृष्ट किया जाय।

(५) हुक्म देते समय आपकी आवाज अधिकारपूर्ण ढंग की न होकर एक सप्रेम-निवेदन के रूप में होनी चाहिए। अपने माँ-बाप से ही बच्चा विनयशीलता सीखता है। अन्यथा वह भी लट्ठमार ढंग से बातचीत करना सीख जाता है।

(६) जब आप बच्चे को काम करने के लिए कहें, उस समय आप यह ध्यान रखे कि वह आप की बात को ध्यान से सुनकर समझ रहा है कि नहीं। कभी-कभी सुनने में बेपरवाही से भी हुक्म-उदूली हो जाती है।

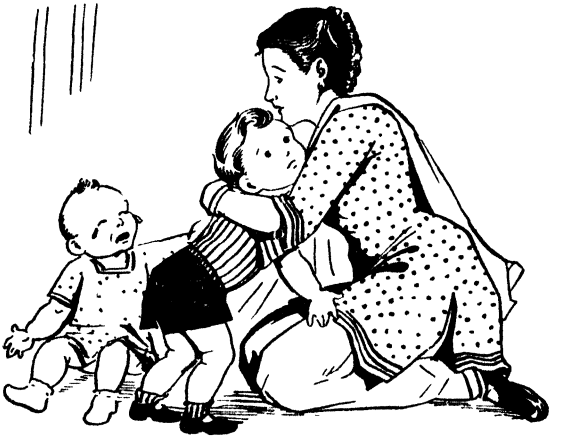
(७) एक समय जिस काम के लिए आपने उसे सजा दी थी, वही काम करने की इजाजत कभी न दे। अन्यथा आप की हिदायतों का उस पर कुछ प्रभाव नहीं पड़ेगा। कोई काम कराने से पूर्व उसके उत्साह को जागृत करे न कि यह कहें कि तुम्हें यह करना ही पड़ेगा। इससे बच्चे के स्वाभिमान को ठेस लगती है।

(८) अगर आपने बच्चे को सजा देने की धमकी या इनाम देने का वचन दिया है तो दोनों बातों का पालन अवश्य करें। अन्यथा आप की धमकी का डर और बात की साख दोनों ही मिट जायँगी।

(९) बच्चे मे आप अविश्वास न रखे। न ही उसे बदनाम करें। इसमें बच्चा हतोत्साह हो जाता है। क्योंकि बद से बदनाम बुरा। हो सकता है कि जो बच्चा ज्यादा शैतान या बदनाम हो वही हर वक्त बुरा काम न करता हो, पर घर में उसकी ओट में असली अपराधी छिपने की कोशिश करता हो।

(१०) यदि किसी बच्चे में कोई दोष या कमी हो तो उसके हृदय में यह न जमने दें कि आप उससे नफ़रत करते हैं। परन्तु यह बतायें कि आप उस बुराई को नापसंद करती हैं और उस बुराई को छोड़ देने से वह बहुत ही अच्छा बच्चा बन जायगा।

अच्छा काम करने पर या आप के कहे अनुसार करने पर आप 'शाबाश' कह कर उसका उत्साह बढ़ायें। अगर वह कोई बुरा काम करने जा रहा हो तो यह कह



कर कि 'मुन्ना ऐसा बुरा बच्चा नहीं है जो ऐसा खराब काम करेगा,' उसके मन में यह विचार जागृत कर दे कि क्योंकि मुन्ना अच्छा लड़का है इसलिए बुरा काम करना उसकी आदत और शान के खिलाफ़ है। इस तरह से बच्चों का झुकाव अच्छी बातों की तरफ खुद हो जायगा।

समझदार माँ-बाप इसी प्रकार के तरीकों से बच्चे को आज्ञाकारी तथा कर्त्तव्य-परायण बना लेते हैं। एक बुद्धिमती माता ने मुझे बताया कि जब उसे अपने मुन्नू (मोहन) से ऐसा कार्य करवाना होता था जिसमें बच्चे की ओर से प्रतिरोध की संभावना होती थी तो वह पहले अपने मुन्नू को पास बुलाकर दुलार से उसकी पीठ पर हाथ फेरती हुई तद्विषयक कोई प्रोत्साहन उत्पन्न करने वाली बात सुनाकर, उस कार्य को करने के लिए बच्चे की मानसिक तैयारी कर लेती और फिर उसे आदेश देती।

एक बार मोहन की वार्षिक परीक्षा पास थी, वह गणित में बहुत कमज़ोर था, अतएव गणित का अभ्यास करने मे उसका मन ही नहीं लगता था। मोहन की माँ ने उसे दुलारते हुए कहा, "बेटा, तू सब विषयों मे इतना होशियार है, अब की तो तू अपनी कक्षा में जरूर अव्वल आयगा। मुझे कितनी ख़ुशी होगी जब तू इनाम जीत कर लायगा, आखिरकार मेरा बेटा जो ठहरा। मै भी बचपन में अपनी कक्षा में अव्वल रहती थी।"

यह सुनकर मुन्नू मुंह लटकाकर बोला, "पर माँ, हमारा गणित बड़ा कमज़ोर है, उसके मारे हमारी पोज़ीशन गिर जाती है।"

माँ ने पुचकारते हुए कहा, "अरे बेटा, यह कौन बड़ी बात है, कल से हम दोनों गणित किया करेंगे, मै दस दिन में तुझे सारे सवाल सिखा दूँगी।"

मुन्नू ने उत्साहित होकर पूछा, "सच माँ ! कल से तुम मुझे पढ़ाओगी ? अच्छा, तब तो मै जरूर गणित का अभ्यास करूँगा।"

बस दूसरे दिन से मोहन की माँ ने गणित के दो-चार गुर बच्चे को सिखा दिए। माँ से प्रोत्साहन पाकर मोहन ने अपनी कमी पूरी कर ली। जब कि मास्टर दस बार कह-कहकर हार गया था, पर मोहन गणित करके ही नहीं लाता था।

जो व्यक्ति बच्चे की योग्यता तथा मूड को समझकर आदेश देता है उसे बच्चों का सहयोग प्राप्त करने में कठिनाई नहीं होती। उसके आदेशो का पालन करने में बच्चे अपना मानसिक और शारीरिक सहयोग सहर्ष देते है। दबाव या डरा-कर कराया हुआ काम बच्चों को कामचोर और फरेबी बना देता है। जब तक उन पर निगरानी रहती है, तभी तक उस काम को करते है, बड़ों की पीठ मुड़ते ही फिर वह उस कार्य को महत्त्व ही नहीं देते। डाँट या मार खाते-खाते ऐसे बच्चे ढीठ हो जाते है और फिर उनका रुख़ ऐसा हो जाता है—दो पईयाँ किद्दर गईयाँ, सदके मेरी ढुंई नूँ—अर्थात् पीठ पर अगर दो धप्प पड़ भी गए, तो क्या हुआ, वह तो मेरी पीठ की न्योछावर थी।

बड़े एक भूल और कर बैठते है कि वे अपना कोई काम करवाने के लिए बच्चे के पिछले अपराधों की याद दिलाकर उसे दबाने की चेष्टा करते है। यथा एक बड़ी बहन अपने छोटे भाई राहुल से बोली—"मुन्नू जरा मेरी चिट्ठी तो डाल आ। अच्छा तू नहीं सुनता, ठहर जा पिता जी को आ जाने दे, आज मै उन्हें बताऊँगी कि पिछले इतवार को तू सिनेमा गया था।"

ऐसे मौके पर बच्चा दब तो जायगा परन्तु इस प्रकार से कहना मनवाना बच्चे के लिए हितकर नहीं है।

बच्चे से काम कैसे करवायँ—आप जब बच्चे से कुछ काम करवाना

चाहते हैं, उस समय आदेश देते हुए इस बात का विशेष ध्यान रखें कि बच्चा 'हाँ' और 'न' कि दुविधा मे न पड़े। 'मुन्ना, तुम खाओगे कि नहीं ?' 'नहाने चलोगे कि नहीं ?' 'क्या तुम सोने के लिए चल रहे हो ?' आपके इस प्रकार पूछने पर संभव है कि वह अपनी प्रधानता जताने के लिए अथवा सुविधा के लिए नकारात्मक उत्तर दे। तब आप उसे समझाना शुरू करती हैं, 'नहीं मुन्ना भैया, देखो परेशान मत करो, चलो, समय पर काम कर लो।'

पर मुन्ना जी अपने खेल में डूबे हुए माँ की बात ही नहीं सुनते। अगर मुन्ने के नहाने का समय है और मुन्ना अपनी नई मोटर से खेल रहा हो तो कहें—'मुन्ना चाबी भरकर मोटर को गुसलखाने की ओर ले चलो।' बस, अब मुन्ना भी वहाँ पहुंच जायगा और आप मोटर उठाकर गुसलखाने की मुंडेर पर रख दें और मुन्ना को बातों मे उलझाये रख कर नहला दें। इसी तरह अगर मुन्नी गुड़िया खेलने में उलझी हुई है, तो उसे कहें—'चलो मुन्नी रानी ! गुड़िया को भी भूख लगी है, इसको भी हाथ धुलवाकर खाने के कमरे मे ले चलो।' बस मुन्नी खुशी से आपके साथ चल देगी और गुड़िया को सामने बिठाकर खाना खाने में उसे भी आनन्द आयगा। इसी प्रकार बाहर घूमने के समय अथवा सोने के समय भी मुन्ना-मुन्नी अपने-अपने गुड्डे-गुड़ियों को साथ लेकर काम करने में एक बड़प्पन का अनुभव करेंगे। गुड्डे-गुड़ियों की तुलना में वे स्वयं को बड़ा समझकर इस बात की चेष्टा में रहते हैं कि काम ठीक से यथासमय किया जाय।

बच्चे के संग बहस करनी व्यर्थ है—कई माताएँ बच्चे से काम करवाते समय उन्हें क्यों और किस लिए आदि कैफ़ियत देती हैं। बच्चा उनके दृष्टिकोण को तो समझ नहीं सकता, उलटा वह बाल की खाल खींचने लगता है यथा—इस से क्या होगा ? ऐसा क्यों करना चाहिए ? न करने से क्या होगा ? आदि प्रश्नों की झड़ी लगाकर सिर खाने लगता है। इसलिए बच्चों को लम्बी-चौड़ी कैफ़ियत देने की आवश्यकता ही नहीं है। कई माताओं को अपने बच्चों को बार-बार याद दिलाना पड़ता है तब भी वे काम में देरी करते हैं। जूं की तरह रेंग-रेंगकर काम करने की उनकी आदत-सी पड़ जाती है, वे कभी भी समय पर तैयार नहीं हो पाते। पहले तो इधर-उधर खिलवाड़ में अधिकांश समय बरबाद कर देते हैं, फिर अन्तिम कुछ क्षणों में जल्दी-जल्दी में झुंझलाकर काम खत्म करने की चेष्टा करते हैं। ऐसे बच्चों को कुछ समय रहते ही काम के लिए तैयार हो जाने का तकाजा करना चाहिए।

उद्दण्ड और बदमिज़ाज बच्चे—ऐसे बच्चे नियमों के लागू होने पर बहुत छटपटाते हैं। रो-धोकर, ज़िद करके वे मनचाही करने की चेष्टा में रहते हैं। तीन वर्ष की आयु में बच्चा अपने अधिकारों और सुविधाओं के लिए लड़ने लगता है। पर

अच्छाई और बुराई, न्याय और धाँधली में भेदभाव करना उसे नहीं आता। वह अपनी अबोधता के कारण ज़िद्दी और धाँधली-पसन्द बन जाता है। अगर बच्चा बात-बात पर रोता और मनचाही करने की चेष्टा करता है, तो इसका अभिप्राय यह है कि माँ उसे ठीक से समझ नहीं पा रही है, उसे बच्चे को सँभालने का ठीक ढंग नहीं आता है। ऐसी स्थिति मे इस बात का पता लगाना चाहिए कि क्या बच्चे को काफी समय तक अपने संगी-साथियों के संग बाहर खेलने का अवसर मिलता है? क्या वह ऊपर चढ़ने-उतरने, गाड़ी आदि को धकेलने-खींचने के खेल खेलता है? क्या उसकी दिनचर्या और कमरे की व्यवस्था ऐसी है कि जब वह घर के अन्दर रहता है तो उसे खेलने और घूमने-फिरने, चीज़ों को छूने की आज़ादी है? कहीं नकारात्मक आदेशों से वह जकड़ा हुआ तो नहीं है? घर के बड़े बच्चे उसे दबाते और चिढ़ाते तो नहीं है? उसका स्वास्थ्य तो ठीक है?

जब बच्चे का मिज़ाज बिगड़ा हो, वह जमीन पर रो-धोकर बिखर रहा हो, तो उसके प्रति अधिक ध्यान देने की आवश्यकता नही है। आप के नाराज होने या मारने-पीटने से उस पर बुरा प्रभाव पड़ेगा। ऐसे समय मे बच्चे के प्रति दृढ़ पर स्नेह-पूर्ण रुख़ अपनाना चाहिए। अनुभव से उसे यह समझते देर नहीं लगेगी कि रो-धोकर मैं अपने माँ-बाप से गलत बात नहीं मनवा सकता। जो गलत काम वह कर रहा है, उससे बच्चे को अलग करके घड़ी भर के लिए उसे अकेला छोड़ देना उचित है। रो-धोकर जब वह शान्त हो जाय तब प्यार से उसके आँसू पोंछकर उसे उसकी भूल समझायँ। दो-चार बार ऐसा करने से बच्चा अपनी भूल और आपके मिज़ाज को समझकर यह जान जायगा कि रोने-धोने और ज़िद करने से यहाँ गुज़ारा नहीं है। ऐसे समय मे सजा देना व्यर्थ है।

जिस प्रकार बच्चे अच्छे मैनर्ज, अपने संगी-साथियों के साथ हेल-मेल से रहना तथा अपने माता-पिता को प्यार करना, अनुकरण और अनुभव से सीख जाते है, उसी प्रकार अपने मनोवेगों पर काबू रखना, दूसरों के अधिकारों की रक्षा करना, सहयोग से काम करना भी वे अभ्यास और दूसरों के उदाहरणों से ही सीखते है। छोटे बच्चे को जैसे धीरे-धीरे अपने शरीर का संतुलन रखना आ जाता है, उसी प्रकार उसके मनोवेगों में भी संतुलन आ जाने पर वह सामाजिक ढंग से व्यवहार करना सीख जाता है।

अगर कोई नुकसान हो जाने पर बच्चा उसके लिए दुःखी और लज्जित है, तो यही पर्याप्त है। अनजाने में प्लेट टूट जाने अथवा खेल-कूद में कमीज फट जाने पर, उसे मारना मूर्खता है। हर अपराध पर बच्चे को धमकाते रहना उचित नहीं—'मोहन, अगर तू साइकिल साफ नहीं रखेगा तो मैं तुझ से साइकिल छीन कर रमेश को दे

दूँगा; अगर तू परीक्षा में पास नहीं होगा, तो तेरा जेब-खर्च बंद कर दिया जायगा।' हमेशा इस प्रकार धमकी देने से बच्चा ठीक काम करने का आदी नहीं होता, वह सफाई या पढ़ाई केवल इसलिए करेगा, क्योंकि इनके न करने से उसे वस्तु विशेष के लाभ से वंचित होना पड़ेगा। सफाई या पढ़ाई स्वतंत्र रूप से उसके लिए कुछ महत्त्व नहीं रखेगी।

अगर आपके बार-बार हुक्म देने पर तथा धमकाने पर भी बच्चा कहना नहीं मानता तो उसका भी कुछ कारण हो सकता है। बच्चे को जब सब दबाते हों, या माँ नये बच्चे की ओर अधिक ध्यान देती हो और तुलना में मुन्ने को हमेशा आलोचना सुननी पड़ती हो तो मुन्ना बड़ों को परेशान करने के लिए बुरा-भला सुन कर और सजा पाकर भी कहना नहीं सुनता। वह अपनी ज़िद से बड़ों को परेशान करके अपनी प्रधानता जताना चाहता है।

असल में माता-पिता के पक्षपातपूर्ण व्यवहार ने ही बड़े मुन्ने को ऐसा ज़िद्दी और ढीठ बना दिया है। जब तक वह घर में अकेला बच्चा था, माँ ने उसे एक खिलौना-मात्र समझा हुआ था—उसका सभी काम वह खुद करती थी। घर में सब से पहले उसकी सुविधा और आराम का ख्याल किया जाता था, फलस्वरूप वह स्वार्थी और पर-निर्भर हो गया। अब अचानक एक नये भाई-बहन के जन्म पर वह स्वयं को सिंहासन से ढकेला हुआ राजा-सा अपमानित समझता है। उसके मनोवेगों में तूफान उठ खड़ा होता है। वह चिल्लाकर, बिगड़कर, रोकर, वस्तुओं को तोड़-फोड़ कर, अपनी प्रधानता जताना चाहता है।

कई बच्चे अपनी स्वार्थ-सिद्धि के लिए स्वार्थी बन जाते हैं। माँ पहले मेरा काम करे, मेरी बात सुने, मेरी इच्छा पूरी करे—ऐसा वह चाहते हैं। सभी उनकी बात मानें, वे किसी की न सुनें। यह रुख़ बहुत असामाजिक है। कई बच्चे शर्मीलेपन का अभिनय करके कहना नहीं मानते। माता-पिता भी उन्हें—यह शरमाता है नहीं तो अभी कहना मान लेता—ऐसा कहकर उसे आज्ञा-उल्लघन करने की प्रेरणा देते हैं, यह उचित नहीं है।

बच्चे को कोई काम करने का हुक्म देते समय इस बात का ध्यान रखें कि उस कार्य को करने में उसके सम्मान और अधिकार की हानि न हो। बड़े भाई-बहन मुन्ना को प्रायः ऐसी धमकी देते हैं कि—ठहर जा, पिता जी को आने दे, तुझ से ऐसा न करवाया तो कहना, तब जानेंगे कि उनके सामने तू चूँ भी कर जाय—ऐसी धमकियों से बच्चा ढीठ बन जाता है। वह जान-बूझकर हुक्म-उदूली में अपनी शान समझता है।

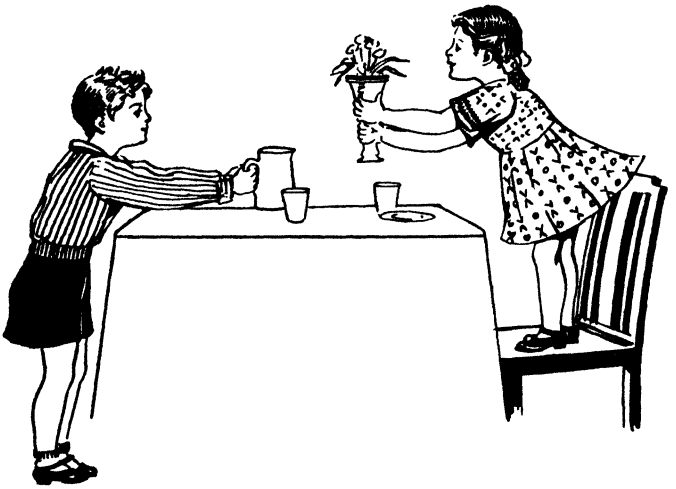
आपकी आज्ञा का पालन बच्चा सहर्ष करे, वह इस बात को समझे कि माता-पिता उसकी भलाई के लिए कहते हैं, वे उसे प्यार करते हैं, और अपने प्यारे

माँ-बाप का कहना मानना, उन्हें अपने अच्छे कामों से खुश करने में उसे भी सुख और आनन्द मिलता है। यह तभी संभव है जब कि आप भी अपने बच्चे के प्रति एक नियामक दरोगा न होकर, स्नेहशील पथ-प्रदर्शक होने की चेष्टा करें।

चौदहवाँ अध्याय

अनुकरण-प्रवृत्ति

अनुकरण की प्रवृत्ति मनुष्य में बचपन से ही छिपी होती है। अनुकरण द्वारा ही बच्चा बोलना, पाँव जमा-जमाकर सँभलकर चलना, खाना, पीना, खेलना तथा वस्तुओं का उपयोग आदि ये सभी कार्य वह देखा-देखी ही सीख जाता है।



मनोवैज्ञानिकों के मतानुसार बच्चों की प्रत्येक क्रिया का आधार अनुकरण है। संगी-साथी अड़ौस तथा अपने गुरुजनों को वे जैसा करते देखते है वैसा ही खुद करने लगते है यहाँ तक कि उनके बैठने, बातचीत करने तथा अन्य क्रियाओं पर भी बड़ों की ही छाप पड़ती है। इन आसपास के लोगों में सब से अधिक प्रभाव डालने वाले उनके माता-पिता ही होते है। क्योंकि जन्म से लेकर बच्चे के समझदार होने तक उनका ही संसर्ग बना रहता है। बच्चे न केवल आचरण की सभ्यता ही माता-पिता से सीखते है परन्तु देखने में आया है कि उनकी प्रवृत्ति और स्वभाव पर भी माता-पिता के चरित्र की छाप स्पष्ट रहती है।

बच्चा बड़ों का अनुकरण करता है—जब बच्चा लगभग तीन वर्ष का होता है, माँ-बाप उसके आदर्श बन जाते है। उनके पद-चिन्हों पर चलने में ही, वह जीवन की सफलता समझता है। छोटे बच्चे के प्रेम और आदर्श का केन्द्र उसके माँ-

बाप ही होते है। लड़का अपने पिता का और कन्या अपनी माता का अनुकरण करने में गौरव का अनुभव करती है। मुन्ना अपने पिता के सदृश्य ही कमर पर पीछे हाथ रखकर चलेगा। पाँव-पर-पाँव रखकर अखबार पढ़ने का अभिनय करेगा, अपने काठ के घोड़े या साइकल पर वह उसी शान से चढेगा जैसा कि अपने पिता को करते देखता है। एक पहिये को घुमा-फिराकर वह मोटर चलाने का खेल खेलेगा।

इसके विपरीत छोटी मुन्नी एक फटी ओढ़नी सिर पर डालकर गुड़ियो को इस प्रकार सँभालती है, जैसा कि वह माँ को बहन-भाइयों को सँभालते देखती है। एक व्यस्त गृहिणी के सदृश्य अपनी गुड़िया को सुलाने, खिलाने तथा पढ़ाने मे वह वैसी ही सचेत दीखती है, जैसे उसकी माँ। यहाँ तक कि अपनी गुड़िया के काल्पनिक अपराध पर वह माँ के जैसा ही लहजा बनाकर, उसी प्रकार डाँटती और सजा भी देती है।

देखने मे बच्चो के ये खेल एक बाल-लीला मात्र ही प्रतीत होते है, परन्तु वास्तव मे बच्चे बड़े हो रहे है। उन पर माता-पिता की छाप पड़ रही है और अपने बड़ों का आदर्श सामने रखकर वे अपनी आदतें, स्वभाव, रुचि-अरुचि, कार्य-प्रणाली आदि को एक विशेष नमूने पर सही उतारने की चेष्टा कर रहे है।

मुन्ना ज्यो-ज्यो बड़ा होता है, इस बात की चेष्टा करता है कि मै पिता जी की तरह बनूं। पिता जी इस काम को जिस प्रकार करते है, मै भी उसी तरह करूँगा। पिता जी रोज सुबह मुग्दर फेरते है, मुन्ना भी दो छोटे डंडे घुमाकर उनकी नकल करता है। पिता जी काँटे-छुरी से सुबह का नाश्ता करते है, मुन्ना भी उसी प्रकार खाने की चेष्टा करता है। पिता जी बंदूक लेकर शिकार खेलने जाते है, मुन्ने को भी खाकी पेंट पहन साथ मे अपना कुत्ता लेकर, अपनी छोटी पफ-गन कधे पर रख, बगीचे में शिकार खेलने का अभिनय करने का बड़ा चाव है। न केवल पिता जी परन्तु बड़े भाई, चाचा, मामा, अध्यापक अथवा पिता के अन्य मित्र तक मुन्ना-मुन्नी के आदर्श बन जाते है। उनकी प्रशंसा सुन, उनके व्यक्तित्व से प्रभावित हो, मुन्ना सोचने लगता है, बड़ा होकर मै भी ऐसा ही बनूँगा।

अगर किसी बच्चे का पिता हर समय उसे डाँट-डपट ही करता रहता है, तो बच्चा न केवल पिता ही से, पर अन्य पुरुषों से भी दूर रहने की चेष्टा करेगा। अपनी माँ को अधिक ममतामयी पाकर वह उसी के आँचल से बँधा-सा रहेगा। उसमे पुरुषों का-सा साहस, आत्म-निर्भरता, संघर्ष से जूझने की प्रवृत्ति का आगे जाकर अभाव रहेगा। बड़ा होकर वह अपने लिए पत्नी भी ऐसी ढूँढेगा जो अधिक सेवा-परायणा हो और जिसकी सेवा पर वह निर्भर रह सके।

देखने में आया है कि कई पिता जिनका बचपन बड़ी बहन की निगरानी में

बीता हो या उन्हें बात-बात मे दबना पड़ा हो वे अपने लड़के को आरम्भ से ही अधिक कठोर और मजबूत बनाना चाहते हैं। मुन्ने को माँ और बहनो के सम्पर्क से दूर रखकर अपने ही नियंत्रण मे रखना ठीक समझते है । पर यह गलत तरीका है। बचपन में सभी बच्चे कोमल भावनाओं के प्रति अधिक आकृष्ट होते हैं। प्रतिद्वन्द्विता और कठोरता उन्हें पसन्द नहीं है।

बच्चे माता-पिता को आदर्श मानकर व्यवहार करते है—माता-पिता का अनुकरण करना बच्चों को इतना रुचिकर होता है कि उनके लिए संसार में वे ही सर्वोत्तम आदर्श बन जाते है। विवाह का अर्थ उनकी समझ मे न आते हुए भी, मुन्ना यह कल्पना करता है कि जब में बड़ा होऊँगा माँ के सदृश्य ही पत्नी लाऊँगा। अपने पिता को माँ का लाड-दुलार करते देख, उसे बड़ा सुख होता है। अपनी माँ से लाड करना उसे भी बड़ा अच्छा लगता है। माँ का चुम्बन उसे आल्हादित कर देता है। अपनी माँ का शृँगार, सजावट, वेश-भूषा वह प्रशंसा की दृष्टि से देखता है। माँ को अच्छी साड़ी पहनकर सजी हुई देख वह खिल उठता है और यह कहने में उसे गौरव लगता है कि मेरी माँ कितनी सुन्दर है !

इसी प्रकार कन्या भी पिता के प्रति अनुरक्त होती है । अपने पति में वह अपने पिता के रूप-गुण और स्वभाव की प्रतिछाया देखने की कल्पना करती है। पिता का काम करने का उसे बड़ा चाव होता है। उनकी प्रशंसा के दो शब्द कन्या को गद्‌गद् कर देते है। दुलार की एक थपकी उसे खिला देती है । अपने पिता के आस-पास वह घूमती है । उनके बाहर से आने पर वह उनकी छड़ी और टोपी उठाकर रख देगी। जूते उठाकर रख आयगी । और फिर कुर्सी पर चढ़कर उनके बालों में प्यार से हाथ फेरेगी, या कोई किताब लेकर पंखा करेगी। अपनी माँ को भी उसने ऐसा करते देखा है और उसे भी पिता को दुलारने में आनन्द आता है। वह अपने पिता को सामर्थ्यवान् और सब प्रकार से योग्य समझती है, उनके विचार में वे प्रत्येक अभाव को पूरा कर सकते है।

पिता मुन्ने को चाहे कभी धमका दे, पर मुन्नी को घुड़कने में उनको दुःख होता है। इसी प्रकार माँ मुन्नी को चाहे एक बार चीज़ न भी दे, पर मुन्ने को अवश्य देगी। बच्चे यह अनुरक्ति समझते है । इसी लिए जब पिता जी से किसी बात की हाँ करवानी होती है, तो मुन्नी को आगे किया जाता है और यदि माँ से किसी बात की आज्ञा लेनी हो, तो मुन्ना माँ के गले में बाँह डालकर, मुँह चूमकर अपनी बात मनवा लेता है।

बच्चों पर बड़ों के चरित्र की छाप पड़ती है—अनुकरण-प्रवृत्ति के वशीभूत होकर ही कलाकार का बेटा कलाकार निकलता है और चतुर माता की बेटी

गृह-कार्य में निपुण बन जाती है। बच्चों में देख-देखकर कार्य करने की प्रवृत्ति हो जाती है। उनमें सुसंस्कार बनाए रखने के लिए माता-पिता को अपने व्यवहार और आदर्श का विशेष ध्यान रखना चाहिए। अगर आप मे कोई दुर्व्यसन है, लाख चेष्टा करके छिपायें, बच्चों पर उसका प्रभाव अवश्य पड़ेगा।

बड़ों के चरित्र-सम्बन्धी दोषों का अनुकरण—जुआरी और शराबी बाप का बेटा चोर और फरेबी निकलता है। जब यह देखता है कि पिता दुर्व्यसनों में पैसा खर्चता है, रिश्वत से और जुआ खेलकर धनोपार्जन करता है तो वह भी उस धन को लेने मे दोष नहीं समझता। इसी प्रकार माता के छल-प्रपंच तथा कलहप्रिय होने से बच्चों पर उसका बुरा प्रभाव पड़ता है। नीति मे कहा है कि व्यभिचारिणी माता और ऋण-कर्ता पिता यह दोनों सन्तान के परम शत्रु होते है। उनके दोषों के कारण बच्चे ऐसी परिस्थिति मे पड़ जाते है, बुरे उदाहरण के कारण इतने पथ-भ्रष्ट हो जाते है कि वे भी प्रलोभनो के सहज ही शिकार हो जाते है।

बच्चो के जितने दोष या बुराई अथवा कमी है, बहुत अशों में माँ-बाप उसके जिम्मेदार है। अगर माँ-बाप परस्पर लड़ते है, स्वार्थी और अविवेकी है, तब बच्चों का शारीरिक और मानसिक विकास, घर में स्वस्थ वातावरण के अभाव के कारण अवश्य ही अपूर्ण रह जायगा। वह कभी भी आगे जाकर अच्छे नागरिक न बन सकेंगे। उनका गृहस्थ-जीवन भी असन्तोषी रहेगा।

बच्चो मे न केवल अपने बड़ों के चरित्र-सम्बन्धी दोष ही आते है, परन्तु वे उनकी भाव-भंगिमा और बातचीत के दोष भी ग्रहण कर लेते है। अगर पिता लिखते समय मुँह टेढ़ा करता है और चलते समय कंधों मे गर्दन दबा लेता है तो लड़के मे भी यह दोष आ जायँगे। इसी प्रकार अगर माता कर्कश ढंग से ऊँचे स्वर मे बोलती है, चलते समय कूल्हे मटकाती है, तो कन्या मे भी ये दोष आ जायँगे।

बच्चे अपने माता-पिता की रुचि तक की नकल कर लेते है। यथा—पिता जी अगर व्यवस्थाप्रिय है, वे समय पर काम करना पसन्द करते है, तो देखा-देखी, मुन्ना भी अपनी वस्तुओं की व्यवस्था बनाए रखने की चेष्टा करता है। समय पर काम न होने पर वह भी अपने पिता के सदृश्य झुंझलाता है। यहाँ तक कि अपने पिता के कथनों का अनुमोदन करते हुए वह मुस्कराकर कहता है—पिता जी ठीक कहते है तुम सब बहुत सुस्त हो। समय का मूल्य तो समझते ही नहीं। मुझे स्कूल जाने को देर हो रही है। रोज-रोज देर से पहुँचने में मुझे बड़ी शर्म लगती है—यह सुनकर माँ मन-ही-मन कहती है—ओ हो ! पिता जी का पाकिट-एडीशन बोल रहा है।

बच्चे जब कुछ बड़े होते है, और स्कूल जाने लगते है तो अपने सगी-साथी तथा टीचरों के कार्यों और विचारों की छाया भी उन पर पड़ने लगती है। उनके

व्यवहार, विचार तथा आदर्शों की नकल करने में उन्हें विशेष आनन्द आता है। दस वर्ष की सुशीला जब प्राइमरी स्कूल से पास होकर हाई स्कूल में गई, तो एक साल के बाद ही उसके स्वभाव में माता को विशेष अन्तर दीखने लगा। वह अधिक शृङ्गार-प्रिय तथा सजावट-पसन्द हो गई। पिकनिक और सिनेमा जाने का उसे विशेष चाव हो गया। जहाँ पहले स्कूल से आकर वह घर के काम में माँ का हाथ बटाती था, अब उसका ध्यान खेल-कूद में अधिक लगने लगा, जब कि उसी स्कूल में पढ़ी सुशीला की बड़ी बहन शान्ति बहुत समझदार और विचारों से उच्च तथा रहन-सहन में सीधी-सादी थी। अतएव माता स्कूल को तो दोष दे नहीं सकती थी। खोज करने पर पता चला कि सुशीला की क्लास-टीचर बहुत अधिक फैशन-परस्त है तथा उसकी सहेलियाँ भी अमीर घरों की लड़कियाँ ही हैं। जिनके घर खुद काम करना बुरा समझा जाता है। उन्हीं के प्रभाव में रहकर सुशीला में यह परिवर्तन हुए हैं।



संगति का प्रभाव—आठ वर्ष का मोहन पहले एक मौहल्ले के स्कूल में

पढ़ता था। उसकी आदतें बहुत गंदी थीं। स्याही-भरे हाथों से वह स्कूल में भोजन कर लेता था। उसकी किताबें और कपड़े भी स्याही से लिपे-पुते रहते थे। उसने अपने साथ के लड़कों से गालियाँ भी सीख ली थीं। उसकी इस उद्दण्डता से तंग आकर माता-पिता ने सोचा कि चाहे हमें और जगह खर्च में कटौती करनी पड़े, पर मोहन को इस अस्वस्थ वातावरण से निकालना ही होगा। सो उन्होंने मोहन को एक अच्छे स्कूल में दाखिल कर दिया। वहाँ अपने साथ के लड़कों की सोहबत में कुछ ही दिनों में न केवल मोहन की चाल-ढाल और बातचीत ही सुधर गई अपितु वह सफाई-पसन्द भी हो गया और उसने अपनी लिखाई भी सुधार ली। अब उसे उन गंदे दोस्तों से बात करने में भी शर्म लगती थी और अपनी पिछली आदतों की चर्चा छिड़ने पर वह खुद ही अपने पर हँसता था।

बच्चों की नकल करने की प्रवृत्ति यहाँ तक होती है कि वे राह चलते व्यक्ति की, गली के भिखमंगे और फेरी वाले की तथा सिनेमा के पात्रों की भी नकल करने लगते हैं।

दस वर्ष का महेश पिता जी के बड़े जूते पहनकर, छड़ी हाथ में लेकर, सिर पर टोप ओढ़कर, टेढ़े-मेढ़े पाँव धरकर चल रहा था। उसकी माता ने पूछा, "मुन्नू अपनी चाल क्यों बिगाड़ रहा है?"

"माँ चार्ली चैपलिन ऐसे ही चलता है"—मटककर मुन्नू ने कहा।

मास्टर छोटे बच्चों के कान कैसे मरोड़ता है, न पढ़ने पर पिता जी कैसे घुड़कते हैं, इस बात की नकल बड़ा भाई छोटे भाई को पढ़ाते समय प्रायः करेगा। माँ छोटे भैया को सुलाने, खाना खिलाने आदि बातों के लिए कैसे फुसलाती है, इस बात की नकल मुन्नी अपनी गुड़िया को सुलाते और खिलाते समय हू-ब-हू करके दिखाती है—'सो जा डौली, अगर तू नहीं सोयगी तो शाम को घूमने नहीं ले जाऊँगी'; 'अच्छा, रानी बेटी खाना खा ले, पेट भर खायगी तो जल्दी बड़ी हो जायगी, देख मानती नहीं? जा तुझे टाफी खाने को नहीं दूँगी'—इस प्रकार कहती हुई मुन्नी सचमुच में स्वयं को माँ और गुड़िया को नन्हीं बच्ची समझती है।

बड़ों की नकल करने में बच्चों को इस बात से भी सुख मिलता है कि वे अपने दबे हुए उद्‌गारों को निकाल सकते हैं। बड़ों के डाँटने-डपटने तथा बच्चों की इच्छाओं के दमन करने से बच्चों पर क्या बीतती है या बड़ों के प्रति उनके हृदय में क्या विचार उठते हैं, यह प्रकट करने का अवसर भी उन्हें बड़ों की नकल करते समय ही मिलता है।

एक बार की बात है—तीन-चार बच्चे गुड़िया खेल रहे थे, उनकी बातचीत सुनने लायक थी। मुन्ना-मुन्नी माता-पिता का अभिनय करते हुए अपने गुड्डे-गुड़ियों

से बोले—"देखो तुम घर पर हो-हल्ला मत करना, हम सिनेमा देखने जा रहे हैं।"

गुड़िया की ओर से दूसरी मुन्नी बोली—"माता जी, गुड़िया कहती है कि हम क्यों घर पर रहें ? क्या हमारा मन सिनेमा जाने को नहीं करता ? हाँ, आप लोग तो रोज घूमने-फिरने, मेले-तमाशे मे जाते है, हमे घर में बन्द कर जाते है। आप बड़े खराब है।"

इस पर पिता का अभिनय करने वाले मुन्ने ने झुंझलाकर कहा—"क्या बकवास लगाई हुई है, तुम अभी बच्चे हो, चुपचाप घर में बैठो, हम जो कहें सो सुनो नहीं तो मार पड़ेगी, सब ठीक हो जाओगे।"

यह सुनकर गुड़िया की ओर से दूसरी मुन्नी बोली—"अभी हम छोटे है इसी लिए आप हमे दबाते है, जब आप छोटे बन जायँगे तब हम भी आप को ठीक कर देंगे।"

यह सुनकर सब बच्चे हँसने लगे।

घर मे दबाए हुए बच्चे बाहर जाकर बहुत ऊधम मचाते है। माता-पिता के स्वभाव, व्यवहार तथा आदतों की छाप परोक्ष और प्रत्यक्ष रूप से बच्चो पर पड़ती रहती है। कभी-कभी ऐसा भी होता है कि कोई दोष बचपन मे दबा रहा, परन्तु बड़े होकर वह प्रकट हो जाता है। जो कन्या अपनी माता को पिता द्वारा पीड़ित देखती है, बड़े होकर वह अपने पति के प्रति प्रतिक्रिया-स्वरूप व्यवहार करती है। अतएव अपने बच्चों की भलाई का ध्यान रखते हुए माता-पिता अपने आचरण को सब तरह से आदर्श बनाने की चेष्टा करें। अगर उनके दोषों की प्रतिछाया बच्चों मे दिखाई पड़े, तो इसके लिए वे ही दोषी है। उपदेश से दृष्टान्त उपस्थित करना अधिक सफल और श्रेष्ठ है।

पन्द्रहवाँ अध्याय

व्यक्तित्व का आधार

प्रायः माताएँ कहती हैं—मेरा मुन्ना है तो बड़ा होशियार पर जरा शर्मीला है, घर में तो खूब धड़ाके के साथ बातचीत करता है, अपनी विद्वत्ता से चकित कर देता है, परन्तु राम जाने चार लोगों के बीच में इसे क्या हो जाता है कि मानो मुँह ही सिल गया हो ! पर इसके छोटे भाई टुन्नू को देखो, उससे आधी अक्ल भी इसमें नहीं है, परन्तु बाहर जाकर ऐसा व्यवहार करता है, मानों सारी अक्ल उसी के हिस्से पड़ी हो। बड़ा चलता-पुर्जा है, साहस और आत्म-निर्भरता तो ऐसी है कि बस पूछो मत !



ज़रा नहीं हिचकता। मुन्नू बेचारा करे भी क्या, आँख बिचकाने की उसे ऐसी बुरी आदत पड़ गई है कि सब लोग उस पर हँस देते हैं, और वह झेप जाता है। उसका सहपाठी चुन्नू भी तो ऐसा ही दब्बू है, नाखून चबाता रहता है।

आदत ही स्वभाव बन जाती है—सभी बच्चों में कुछ-न-कुछ ऐसी अच्छी या बुरी आदतें होती हैं जो कि उनका स्वभाव बन जाती हैं और आगे जाकर इन्हीं आदतों की छाप उनके व्यक्तित्व पर पड़ती है। अगर ये विशेष आदतें अच्छी और प्यारी हुईं तो उनका व्यक्तित्व प्रभावशाली तथा आकर्षक होगा और उन्हें अपने

जीवन-संघर्ष मे आगे बढ़कर बाजी मारने तथा आत्म-विश्वास के साथ सिर उठाकर चलने का बल मिलेगा। अन्यथा वे हीनता से भरकर हमेशा पिछड़े रहेंगे। संगी-साथी उन्हे पिचकू, दब्बू तथा झेपू कहकर चिढ़ायँगे। और वे खिसियाकर घर-घुस्सू बन जायँगे। अपनी अयोग्यता छिपाने के लिए उच्चाकाँक्षा को लोभ और असन्तोष कह-कहकर बुरा कहेगे। ठीक है, अंगूर खट्टे वाली कहावत ऐसे हीन व्यक्तियो के जीवन मे चरितार्थ होकर रहती है।

व्यक्तित्व के विकास की आधारशिला—बचपन के बहुत से दोष मनुष्य के व्यक्तित्व को दबा देते है। अतएव इस बात का ध्यान रखना बहुत आवश्यक है कि बच्चे के व्यक्तित्व का विकास बचपन से ही सही ढंग से हो। रूप-रंग, बातचीत, चाल-ढाल, वेश-भूषा, हाव-भाव, आचार-विचार, काम करने-कराने का ढंग सभी मिल-कर मनुष्य का व्यक्तित्व बनाते है। व्यक्तित्व के विकास मे निम्नलिखित बातों का बड़ा हाथ है—

(१) बच्चे के वंश और जाति की विशेषता।
(२) खानदानी गुण-दोष।
(३) संस्कार, अनुभव और शिक्षा।
(४) शारीरिक विकास, आयु और बल।
(५) सामाजिक तथा पारिवारिक परिस्थिति।
(६) आसपास का वातावरण तथा संगी-साथी।

बच्चे का रूप-रंग, डील-डौल आदि प्रायः उसके माता-पिता या वंश की नस्ल के अनुरूप ही होता है। कभी-कभी बच्चे माँ-बाप पर न पड़कर दादा-दादी, चाचा, बुआ, नाना-नानी, मामा, मौसी, भाई-बहन आदि पर भी पड़ जाते है। नस्ल का प्रभाव यहाँ तक होता है कि स्वास्थ्य या रोग, गुण-दोष तथा चरित्र की विशेषता तक बच्चो मे आ जाती है। जिस प्रकार टैगोर के घराने के अधिकांश बच्चे काव्य-प्रेमी, चित्रकार या ललित-कलाओं की ओर रुचि रखने वाले तथा प्रोत्साहन देने वाले निकले है, उसी प्रकार डॉक्टर या इंजीनियर बाप का बेटा वैज्ञानिक रुचि रखता है। दूकानदार तथा सेठ-साहूकारों के बच्चे व्यवसाय की ओर रुचि रखने वाले पाए जाते है। देखने और सुनने से भी संस्कार बन जाते है। शिक्षित माँ-बाप के बच्चे सुसंस्कारी होते है। माँ-बाप की छाप उनके बच्चों पर पड़े बिना नहीं रहती। इसी प्रकार संगति का असर भी रंग दिखाए बिना नहीं रहता।

अपने आसपास के लोगों से सीखते हैं—बच्चे अपने संगी-साथियों की न केवल आदत ही लेते है, परन्तु उनके मुहाविरे, तथा भाव-भंगी तक की नकल करने लगते है। पांच-छः वर्ष की आयु के बाद बच्चे अपने संगी-साथी तथा गुरू को अपना

आदर्श बना लेते हैं। मुन्ने का दोस्त अगर चटोरा है, अपनी किताबें गंदी रखता है, क्लास मे पाठ सीखकर नहीं आता, सगी-साथियों के संग लड़ता-झगड़ता है, दब्बू और डरपोक है, मुन्ने में भी वे दोष देखा-देखी आ ही जायँगे। अगर इसके विपरीत मुन्ना साफ-सुथरा है, क्लास में अच्छे नम्बर पाने की सर्वदा चेष्टा करता है, बुरी बातों से कतराता है, तो इसमे जरा भी सन्देह नहीं कि मुन्ने के अधिकांश दोस्त भी होनहार हैं।

बच्चे अनुकरण-प्रिय होते हैं, वे अपने माता-पिता, चाचा, मामा तथा अन्य ऐसे व्यक्तियो द्वारा जो कि उनमे दिलचस्पी लेते हैं, अवश्य प्रभावित होते हैं। जाने-अनजाने मे उनकी आदतें, उनके विचार तथा आदर्श बच्चे अपना लेते हैं। अतएव बच्चों के सम्पर्क मे आने वाले व्यक्तियों को बहुत जिम्मेदारी से व्यवहार करना चाहिए। जिस प्रकार रेतीले किनारे पर समुद्र की प्रत्येक लहर अपनी छाप छोड़ती जाती है, उसी प्रकार आसपास के वातावरण की छाप भी बच्चे पर पड़ती रहती है। और समय पाकर, वही संस्कार इतने प्रबल हो जाते हैं, कि बच्चे के व्यक्तित्व पर उनके चिह्न अमिट रह जाते हैं।

कभी-कभी ऐसा होता है कि माता-पिता के विपरीत स्वभाव के होने के कारण बच्चे के चरित्र का विकास सही ढंग से नहीं हो पाता। दो अमली राज्य की प्रजा के सदृश्य उस में दृढ़ता नहीं आती। जिस घर मे सम-गुण-स्वभाव तथा कल्पना और व्यवहार-कुशलता का सुन्दर सम्मिश्रण वाले माता-पिता होते हैं, वहाँ बच्चों का व्यक्तित्त्व सरलता से विकसित हो जाता है। उन्हें प्रोत्साहन भी मिलता है। परन्तु अति हर एक चीज़ की बुरी है। अगर कहीं माता-पिता दोनो ही बुराई-भलाई मे सीमा को पार कर जायँ तब तो बच्चे की बहुत हानि होती है। दुष्ट-वृत्ति माँ-बाप का बच्चा ढाल पर से लुढ़कते हुए मनुष्य के सदृश्य बुराई की ओर बढ़ता चला जायगा। इसी प्रकार अधिक काल्पनिक माता-पिता का बच्चा व्यवहार-कुशलता के ज्ञान से शून्य होगा। इस प्रकार के बच्चे बुद्धिमान् होते हुए भी समस्या बन जाते हैं। कारण, वे संगी-साथियो के संग निभा नहीं सकते। अतएव सुखी और सफल जीवन-यापन के लिए व्यक्तित्व मे संतुलन होना आवश्यक है। बहुत अधिक लम्बा-चौड़ा अथवा छोटे कद वाला, दुबला-पतला, नाजुक या मोटा और बेडौल दोनों प्रकार के बच्चे अपने साथियों में विचित्रता तथा हीनता अनुभव करते हैं। एक को बच्चे भीम-भयंकर, देव-दानव, आदि कहकर चिढ़ाते हैं तथा दूसरे को, बौना, दो फुटिया, पिदक्की आदि कहकर मज़ाक बनाते हैं।

शारीरिक कुरूपता या असमर्थता भी व्यक्तित्व को हीन बनाती है। काला, कुरूप या अंग-हीन बच्चा हमेशा यही सोचता है कि कहीं लोग मेरी कुरूपता पर तो

नहीं हँस रहे ? मैं नये कपड़े पहनकर अच्छा भी लगता हूँ या नहीं ? ऐसे बच्चों को उनके दुष्ट संगी-साथी अपमानित करने के लिए कह भी देते हैं—'अबे कलूटे अपनी सूरत शीशे में देख, तब इतराना।' 'काना, साला मनहूस कहीं का।'

अपने व्यक्तित्व की कमी ऐसे व्यक्तियों को हमेशा कचोटती रहती है, फल-स्वरूप वे प्रतिक्रियावादी बन जाते हैं। इसीलिए काने, लंगड़े, लूले तथा कुरूप व्यक्ति अधिकतर हिंसक और क्रूर पाये गए हैं। अगर बचपन से ही इनको अपनी कुरूपता को भुलाकर, उन्नति करने की प्रेरणा दी जाय तो यह संभव है कि वे प्रतिक्रियावादी नहीं बनेंगे तथा समाज में अपना स्थान आसानी से बना लेंगे।

इसी प्रकार आर्थिक कठिनाइयों में भी मनुष्य के विकास में बाधा पहुँचती है। गरीब का बच्चा कितनी भी जानकारी क्यों न रखता होगा तो भी धनी संगी-साथी कह ही देते हैं, 'बड़ा आया है, मोटर का माडल परखने, कभी ख्वाब में भी मोटर में चढ़ा है ?' 'तुम्हारे तप्पड़-खसिए स्कूलों में भला क्या गेम खिलाएँगे ? झोंपड़ियों में रहते हो और महल बनाने के सपने देखते हो, बड़े आए उच्चाकाँक्षी।' गरीब बच्चे को इस बात की चेष्टा करनी चाहिए कि वह अपने गुणों से समाज में सम्मान पा सके।

अगर बच्चे की बोल-चाल तथा हाव-भाव में कोई दोष आ जाय तब भी वह बात करते हुए दबता है। कई बच्चे अपने मनोभावों पर काबू नहीं रख पाते, अतएव वे शीघ्र क्रोधित हो जाते हैं, या ज़िद करने लगते हैं। अपना दुराग्रह व्यर्थ होते देख वे रो भी देते हैं। ऐसे बच्चे रोंदू तथा ज़िद्दी होने के कारण अपने संगी-साथियों में जल्द ही अप्रिय बन जाते हैं।

असहनशील, दंभी, क्रोधी, ज़िद्दी तथा अन्यायी होने के कारण मित्र-मंडली से उनका शीघ्र ही बहिष्कार हो जाता है। प्रतिक्रिया-स्वरूप ये प्रपंची, चुगलखोर, द्वेषी, ईर्ष्यालू तथा आलोचक बन जाते हैं। दूसरों की उन्नति में रोड़े अटकाने में ही उनकी बुद्धि खर्च होती है। न उन्हें आप चैन से बैठना सुहाता है, न दूसरों को बैठने देते हैं। जैसे-जैसे वे बड़े होते हैं, उनके जीवन में निराशा तथा असन्तोष बढ़ता जाता है। जीवन की मौज में उन्हें बहना ही नहीं आता। दूसरों को प्रसन्न देखकर उन्हें आनन्द नहीं होता। अपनी असफलता को ढकने के लिए वे बहाने ढूंढ़ते हैं। अपनी कमी तथा भूल को मानकर पुनः चेष्टा करने का उत्साह ही उनमें नहीं होता। साथी द्वारा प्राप्त यश या उन्नति का श्रेय उसे न देकर, उसकी सुविधा या सिफ़ारिश या 'अपरोक्ष' को देने की चेष्टा करते हैं। 'जीवन को सुखी बनाना एक कला है', इस तथ्य को बिसारकर वे भाग्यवादी बन जाते हैं।

सोलहवाँ अध्याय

व्यक्तित्व का विकास किस प्रकार किया जाय ?

अगर बचपन में ही मुन्ने के व्यक्तित्व का सही ढंग से विकास किया जाय तो बड़े होकर अभाव तथा असफलता के बीच भी वह अपने जीवन को सुखी बना सकेगा। जीवन की हार-जीत को वह सहज ढंग से स्वीकार करेगा। इसलिए माता-पिता तथा अध्यापकों का प्रथम कर्तव्य है कि वे बच्चे के व्यक्तित्व को विकसित करने में ऐसा सहयोग दें कि वह सहनशील, आत्म-निर्भर, सहयोगी तथा व्यवहार-कुशल बन सके। इसके लिए इन नीची लिखी बातो का ध्यान रखने से अवश्य सफलता मिलेगी—



(१) अगर जन्म से ही बच्चे के शारीरिक और मानसिक विकास मे कुछ न्यूनता है, तो उसे समान योग्यता और समर्थ वाले बच्चों के साथ ही पढ़ने तथा खेलने का अवसर दें। अगर उसमें कुछ कुरूपता है, तो उसमें आत्म-विश्वास पैदा करके अन्य किसी बात में विशेष उन्नति करने का प्रोत्साहन दें।

(२) बहुत कम बच्चे सर्वगुण-सम्पन्न होते है। कोई विज्ञान में तेज़ है तो कोई कला की ओर विशेष आकृष्ट है। बच्चे की रुचि और योग्यता के अनुसार उसे काम सौपा जाय। ताकि वह अपनी एक कमी को दूसरी ओर पूरी करके संतुलन बनाये रखे।

(३) स्कूल में अध्यापकगण इस बात का विशेष ध्यान रखें कि शारीरिक हीनता के कारण संगी-साथी बच्चे की मज़ाक न उड़ायें। सभ्यता व सद्व्यवहार का पाठ उन्हें बचपन में ही पढ़ाना चाहिए।

(४) बच्चे को कोई विषय समझ न आने पर उसे बुद्धू, कूढ़मगज़, भोंदू आदि उपाधियों से विभूषित करना महा मूर्खता है। इससे उनका आत्म-विश्वास हिल जाता है और वे तरक्की करना छोड़ देते है।

(५) जब अच्छे बच्चों की प्रशंसा की जाय तब पिछड़े हुए बच्चों के साथ उनकी तुलना नहीं करनी चाहिए। इससे तेज़ बच्चा दंभी बन जायगा और पिछड़े हुए बच्चे हीनता की भावना से भरकर, उसके प्रति द्वेषी हो जायेंगे।

(६) हर समय डाँट-डपट, आलोचना करने तथा धिक्कारने से बच्चा ढीठ हो जाता है। वह आपकी बात को एक कान से सुनकर दूसरे से निकाल देगा। 'उहूँ, ये तो हमेशा ऐसा ही कहते रहते हैं। करो तो भी बुरे, न करो तो भी बुरे, बकने दो इन्हें। इस प्रकार बुड़-बुड़ करके वह आपकी उपेक्षा करेगा। शनैः-शनैः यह उपेक्षा प्रबल हो जाती है और बच्चा अपने गुरुजनों के प्रति सचमुच मे अशिष्ट तथा उद्दण्ड हो उठता है। माँ-बाप भी तग आकर बच्चे के प्रति विरक्त हो जाते हैं। उसे कपूत समझकर उसकी उन्नति की ओर उदासीन बन जाते हैं। इस प्रकार तिरस्कृत होकर बच्चा घरेलू सुविधाओ से भी वंचित हो जाता है। ऐसे दृष्टान्त घर-घर मे मिल जायेंगे जहाँ बचपन मे ठीक तरह से न समझे जाने के कारण मेधावी बच्चे भी पिछड़ गये हैं। और उनके कारण घर की बदनामी होती है। माँ-बाप दुःखी हो जाते हैं, और बच्चे का तो जीवन ही निष्फल हो जाता है।

(७) असफलता, सफलता की प्रथम सीढ़ी है। गिर-गिरकर ही सब चलना सीखते हैं। असफल होने पर आप बच्चे की हँसी न उड़ायें। उसकी कठिनाइयों को समझने की चेष्टा करें। आपकी चेष्टा उसे निकम्मा प्रमाणित करने की नहीं, अपितु उसको सफलता प्राप्त करने मे सहयोग देने की होनी चाहिए। हो सकता है वह जरा जल्दबाज हो, घबड़ाता हो, तो भी काम करने का सही ढंग बता कर उसे स्वयं काम करने दें। तभी उसमे आत्म-निर्भरता आयगी, खुद उसका काम करके, पराये पंखों पर उड़ना न सिखायें। वह दूसरो से काम कराकर बड़ाई पाने का आदी होकर, काम-चोर बन जायगा।

(८) घर के सब बच्चो के साथ एक-सा व्यवहार करना चाहिए। प्राय. ऐसा होता है कि रूपवान या तेज़ बच्चे पर माँ-बाप का अधिक अनुग्रह होता है, उसी को सुन्दर कपड़े तथा साथ जाने की सुविधा मिलती है, जब कि बदसूरत बच्चे को कलूटा, बुद्धू, आदि कहकर घर में मज़ाक उड़ाया जाता है। इस प्रकार का पक्षपात बहुत महँगा पड़ता है। उससे सुन्दर बच्चा दंभी होकर चेष्टा करना छोड़ देता है और आगे जाकर निकम्मा बन जाता है, उसका यह रूप या बुद्धि माँ-बाप की भूल के कारण अभिशाप प्रमाणित होती है। बदसूरत या मंद बुद्धि बच्चा भी हीनता से भरकर आत्म-विश्वास खो बैठता है और वह अपनी तरफ़ से दिलचस्पी लेना छोड़ देता है।

(९) कभी-कभी अच्छा-भला चेहरा, बेपरवाही से खराब भी हो जाता है। यथा—किसी-किसी बच्चे को नाखून कुतरने अथवा कपड़ा चबाने या अँगूठा चूसने की

बुरी आदत पड़ जाती है। कभी-कभी माताएँ भी छोटे बच्चे को चुप कराने के लिए रबड़ की चूसनी या अँगूठा मुँह मे दे देती है। इससे बच्चे के दाँत आगे को बढ़ जाते है। जिससे बच्चा कुरूप दीखने लगता है। आँख बिचकाना; ओठ छीलना; मोड़ना या चबाना; नाक में हमेशा उँगली डालना; गले से विशेष प्रकार की ध्वनि करना आदि आदते ऐसी है कि बच्चे को बदसूरत बना देती है। इसके अतिरिक्त पेट निकाल कर, कुबड़े होकर या टेढ़े पाँव करके चलने, कर्कश आवाज मे चिल्लाकर या गुनगुना कर, तथा चीखकर बोलने से भी व्यक्तित्व का प्रभाव हीन हो जाता है। इन सब दोषों को बचपन में छुड़ा देना चाहिए। इसी प्रकार 'गुडमैनर्ज' के अभाव मे भी मनुष्य असभ्य तथा अशिक्षित-सा प्रतीत होता है। ठीक ढंग से खाँसना, छींकना, जँभाई लेना, गला साफ करना आदि बाते बचपन से ही सिखाई जायँ। इस विषय मे बच्चे बड़ों के उदाहरण से बहुत कुछ सीखते है। सलीके से खाना-पीना, बातचीत करना, अपनी चीजों की सँभाल, वेष-भूषा मे सुथरापन आदि बाते बच्चे अपने माँ-बाप तथा संगी-साथियो से ही सीखते है।

(१०) बच्चो को अपने मनोभावो को प्रकट करने का भी सही ढंग आना चाहिए। दाँत पीसते हुए, आँखे निकालकर, मुट्ठियाँ भीचकर अगर कोई क्रोध प्रकट करता है, या मुँह फाड़-फाड़कर, घिघिया-घिघियाकर रोता है तो उसकी आकृति हास्यास्पद-सी बन जाती है। इसी प्रकार अपनी रुष्टता प्रकट करते समय माथे पर त्योरियाँ डालकर, झुंझलाते हुए बोलना भी दोष है। जिन व्यक्तियों का बातचीत करने का ढंग सभ्य और स्वाभाविक होता है, उनकी संगति सबको प्रिय होती है। और वे अपने आकर्षक व्यक्तित्व से सबको सहज ही प्रभावित कर सकते है।

(११) कभी-कभी पारिवारिक हीनता अथवा माता-पिता या बहन-भाई के दोष भी बच्चे के व्यक्तित्व को हीन बनाते है। जिन बच्चों को इस प्रकार की असुविधा नहीं होती, उनके जीवन का आरम्भ बहुत अनुकूल वातावरण में होता है।

(१२) जहाँ तक हो सके समान मान-मर्यादा वाले बच्चो मे ही अपने बच्चे के मिलने-जुलने या शिक्षा प्राप्त करने का प्रबन्ध करे। अन्यथा अपनी वेष-भूषा, खान-पान तथा अन्य बातों की श्रेष्ठता या निकृष्टता के कारण भी उसका व्यक्तित्व ठीक से विकसित न हो सकेगा।

(१३) माँ की व्यस्तता, पिता की जल्दबाजी, घर मे एकान्त की कमी, संगी-साथी या अनुकूल मनोरंजन का अभाव, परिजनों के लड़ाई-झगड़े तथा दलबंदी, बड़ों के छल-कपट, धोखा-धड़ी की छाप, घरेलू असन्तोष, असहयोग और जीवन की

श्रावश्यकताओं का अभाव आदि बातें भी ऐसी हैं कि बच्चे पर उनका प्रभाव पड़ना अनिवार्य है।

(१४) जो बच्चे हमेशा डाँट-डपट तथा घुटे हुए वातावरण में रहते हैं, स्वाभाविक मनोभावों को प्रगट करने की भी जिन्हें स्वाधीनता नहीं, जो बचपन में ही माता के प्रेम से वंचित हो जाते हैं, जो अपने बाल-समाज में स्थान नहीं बना पाते, सगे-सम्बन्धियों द्वारा जो दुत्कारे जाते हैं, उनका व्यक्तित्व भी बहुत हीन हो जाता है, वह दब्बू और मुँह छिपाते फिरते हैं, और या वे बहुत उच्छृंखल तथा उद्दण्ड निकलते हैं। तथा अपने बाल्यकाल के कटु अनुभव के कारण वे समाज में विद्रोही सदृश्य व्यवहार करते हैं। इस श्रेणी में षड्यन्त्रकारी, चोर, डाकू, पापी, दुराचारी आते हैं। अगर उनके बचपन को उघाड़ा जाय तो एक भारी अभाव की कहानी का पता चलगा।

बच्चे के विकास के लिए माता-पिता का स्नेह, सुरक्षा की भावना, संगी-साथियों का सहयोग, शिक्षको का प्रोत्साहन आदि बाते उतनी ही आवश्यक हैं जितना कि पौष्टिक भोजन और स्वच्छ वस्त्र। बचपन में ही जो बच्चा उखड़ा-उखड़ा-सा अनुभव करता है, वह बड़े होकर भी अपने जीवन का सदुपयोग नहीं कर सकता।

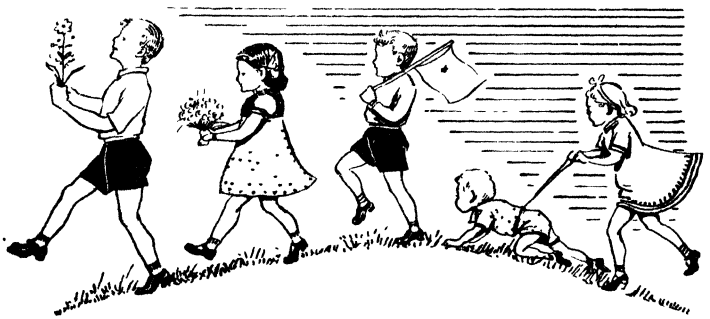
कुछ करने और जानने की रुचि, प्रतिस्पर्द्धा की भावना, प्रशसा और यश प्राप्ति की चेष्टा, दिनचर्या में दिलचस्पी, बाल-सुलभ-सरलता आदि गुण बच्चे के स्वाभाविक होने के लक्षण हैं। इसके अभाव मे बच्चा सनकी, चिड़चिड़ा, विनाशकारी, कामचोर तथा उदास हो जाता है। अगर कोई बच्चा अधिक काल तक अस्वाभाविक ढंग से व्यवहार करे तो उसका वातावरण बदलना बहुत आवश्यक है। कभी-कभी ऐसा होता है कि कटु आलोचक माँ-बाप से ऊबकर बच्चा आवारा तथा निडर हो जाता है। वह उनकी डाँट-डपट और मार-पीट का बदला आज्ञा-उल्लंघन करके लेता है। ऐसे बच्चे बोर्डिंग हाउस में जाकर अन्य बच्चों की देखा-देखी प्रायः सुधर जाते हैं। जीवन में अनुकूल परिवर्तन हमेशा चरित्र की छिपी हुई शक्तियों को प्रेरणा देता है।

यह बच्चों का युग है। उनके शारीरिक और मानसिक विकास के लिए हमें सुविधाएँ देनी होंगी। उनकी कठिनाइयों को सहानुभूतिपूर्वक सुलझाना होगा। दमन द्वारा हम न केवल उनका मुँह बन्द करते हैं परन्तु उनके व्यक्तित्व को भी मूक और पगु बना देते हैं। उसका आकर्षण नष्ट कर देते हैं। यही कारण है कि उच्च शिक्षा पाकर भी वे केवल अपनी रोटी किसी प्रकार कमा पाते हैं। उनकी हृदय की कोमल भावनाएँ, कर्तव्य-परायणता, मानवता के नाते पर सुख-दुःख समझने की शक्ति तथा कठिनाइयों से सफलतापूर्वक जूझने की सामर्थ्य नष्ट हो जाती है।

सत्रहवाँ अध्याय

संगी-साथी

मनुष्य समाजबद्ध प्राणी है। अपने समाज में ख्याति तथा लोकप्रियता प्राप्त करने के लिए न केवल बड़े हो, परन्तु बच्चे भी उत्सुक रहते हैं। अगर यह कहा जाय कि बड़ों से बच्चे अधिक स्वाभाविक रूप से सामाजिक जीव हैं, तो अत्युक्ति न होगी। मनुष्य जब जीवन से ऊब जाता है, उसमे जब असहनशीलता तथा स्वार्थता



जागृत हो जाती है, जीवन-संघर्ष से घबड़ा कर वह थकान अनुभव करने लगता है, तब उसे एकाकीपन अधिक भाता है। वह समाज से, दोस्त-मित्रों से, अपने सगे-सम्बन्धियों से, मुँह चुराता है। जिससे उसका स्वार्थ नहीं सधता, उससे मिलने में उसे कुछ आनन्द नहीं। ऐसे मित्रों से वह कुछ बहानेबाजी करके छुटकारा पाने की चेष्टा करता है। 'कह दो कि घर पर नहीं है,' या 'ओह ! ओह ! बड़े भाग्य से दर्शन हुए। माफ करें, समय ही नहीं मिला नहीं तो मै खुद ही हाजिर होता' आदि उद्‌गार प्रगट कर वह मुँह-देखे की प्रीति निभाने की चेष्टा करता है।

बड़ों की मित्रता में शिष्टाचार को ही अधिक महत्त्व दिया जाता है, परन्तु बच्चों की मित्रता में सहज प्रेम और स्वाभाविकता अधिक होती है। वे अपने अड़ौस-पड़ौस, सहपाठी, तथा हमउम्र के संगी-साथियों में सहज ही हिल-मिल जाते है। उनकी मित्रता भी सोद्देश्य ही होती है। एक साथ खेलने और एक ही स्कूल में पढ़ने वाले तथा एक ही पड़ौस में रहने वाले बच्चों में परस्पर घनिष्ठता जल्द हो जाती है। एक-सी रुचि रखने वाले बच्चे उस रुचिकर काम को करते समय एक गुट बना लेते है। यथा—क्रिकेट के खिलाड़ी, फुटबाल के प्रेमी, बागबानी या ललित-कलाओं

में दिलचस्पी रखने वाले बच्चे, उद्देश्य की सादृश्यता देखकर ही, एक-दूसरे की संगति को पसन्द करते है। परिवारों की परस्पर घनिष्ठता भी बच्चो को एक दूसरों के परिवारों मे मित्रता स्थापित करने मे सहयोग देती है।

गरीब और अमीर बच्चों की मित्रता बच्चों मे ऊँच-नीच आदि का भेद नही होता है। मैंने देखा है कि अफसरों के बच्चे अपने चपरासी के बच्चों के संग मिल कर खेलने मे कोई संकोच अनुभव नहीं करते। इस प्रकार की मित्रता से दोनों बच्चों को लाभ होता है। गरीब का बच्चा साफ-सुथरा तथा शिष्ट बनने की चेष्टा करता है, अमीर का बच्चा गरीब मित्रो के संग रहकर जीवन के अभावों से परिचित होता है और तुलनात्मक रूप मे अपने जीवन की सुविधाओं का मूल्य समझने लगता है। स्नेह तथा दयावश वह गरीब मित्रों की सहायता करना सीख जाता है। वह अपने पुराने कपड़े, खिलौने, पुस्तके यहाँ तक कि पाकेट मनी में से भी कुछ देकर उनके अभावो को दूर करने की चेष्टा करता है। बचपन के इन दोस्तों के प्रति इतनी ममता होती है कि बड़े होकर जब धनिको के बच्चे अच्छी पोज़ीशन पर भी होते है, उन्हें अपने बाल्यकाल के ये संगी-साथी भूल नहीं जाते। वे उनको मदद पहुँचाते है, उनमे दिलचस्पी लेते है। अपने जीवन का सिंहावलोकन करते समय, वे इस बात का अवश्य अनुभव करते है कि इन्ही सुदामा-मित्रो के साथ रह कर उन्होंने मानवता का पाठ पढ़ा है, जीवन के अभावो की कचोटन से परिचित हुए है। इस प्रकार उनके सामाजिक जीवन का स्वस्थ विकास बाल्यकाल मे ही हो जाता है।

इसी प्रकार जिस स्कूल में गरीब-अमीर सभी बच्चे पढ़ते है, जहाँ पर स्कूल की वेशभूषा तथा संस्कृति मे रंग कर सभी बच्चे एक-से प्रतीत होने लगते है, गरीब-अमीर का जहाँ भेद नहीं रहता, वहाँ के स्वस्थ वातावरण में एक वर्ग के बच्चे दूसरे वर्ग के बच्चों की संगति से अवश्य लाभ उठाते है।

अमीर बच्चो को बाल्यकाल से ही सभी सुविधाएँ प्राप्त होती है, प्रशंसा सुनने के भी वे आदी हो जाते है, अतएव अपनी अध्यापिका को अपने परिश्रम से प्रसन्न कर सुनाम कमाने की लालसा का उनमे अभाव होता है। खेल-खिलौने में भी उनकी दिलचस्पी नहीं होती। कारण उनके घर पर बढ़िया तथा विचित्र-से-विचित्र खिलौने होते है। फलस्वरूप वे चीज़ों को संभालकर नहीं रखते, उनमें उत्सुकता कम होती है, उनकी कल्पना उड़ान नहीं भर सकती, क्योंकि उन्हें प्रत्येक वस्तु तथा सफलता को सजीव देखने की आदत-सी पड़ी होती है। वे दृढ़चित्त, एकाग्र तथा परिश्रमी भी नहीं होते। नियम-पालन की ओर भी वे उदासीन रहते हैं। अवसर का लाभ उठाने की चेष्टा न करके, वे अवसर को अपने सुविधानुसार प्राप्त

करना चाहते है। यह स्कूल नहीं तो दूसरे मे चले जायेंगे, क्लास के साथ नहीं चल सके तो घर पर ट्यूशन लगा लेगे, हमे किस बात का अभाव है ? क्या मर-मर कर पढ़ना जरूरी ही है ? खेलो-खाओ और मौज उड़ाओ—यही उनके जीवन का ध्येय है। आलस्य तथा निठल्लेपन को वह आराम कहते है। वे स्वार्थी और अभिमानी अधिक होते है। उनका पढ़ाई में मन नहीं लगता, वे रचनात्मक कार्य न कर के विनाशात्मक वृत्ति अपना लेते है। वस्तु को तोड़ने, फोड़ने, बिगाड़ने मे ही उन्हें अधिक आनन्द आता है। उनकी हर एक बात मे लापरवाही होती है।

परन्तु मध्य-वर्ग के बच्चे ठीक इसके विपरीत होते है, थोड़ी सी सुविधा मिलने पर ही, वे स्वय को सौभाग्यशाली समझने लगते है, प्रत्येक वस्तु उनके लिए नवीनता लिए होती है, अवसर का वह ज्यादा लाभ उठाना चाहते है। उनमे मौलिकता होती है, अनुकूल वातावरण मे उसका शीघ्र ही सुन्दर विकास हो जाता है। अमीरों के बच्चे जो कि अधिकतर नकलची होते है, मध्य-वर्ग के बच्चो के साथ रहकर बहुत कुछ सीख जाते है। उनकी वृत्ति भी रचनात्मक हो जाती है। अपनी उद्दण्डता और अभिमान को छोड़कर वे साधारण बच्चो के सदृश्य व्यवहार करने लगते है।

अतः मित्रों के चुनाव मे अमीर माता-पिताओं को इस बात की चेष्टा करनी चाहिए कि मध्य-वर्ग के बच्चो की सगति का उनके बच्चे लाभ उठा सकें। इस प्रकार मध्य-वर्ग के बच्चों को भी मैनर्ज तथा रहन-सहन का स्तर उन्नत करने का बढ़ावा मिलेगा।

संगति का प्रभाव—जब बच्चा बहुत छोटा होता है, उसके लिए माँ-बाप तथा बहन-भाई ही सब कुछ होते है, परन्तु पाँच वर्ष की आयु का बच्चा अपने संगी-साथियों से बहुत प्रभावित होता है। मेरे मित्र इस प्रकार के कपड़े पहनते है, अमुक स्कूल मे पढ़ते है, अमुक खेल-खेलते है, अकड़-अकड़कर चलते है, आदि बातों का वह विशेष अध्ययन करता है। जैसा उसके मित्र करते है, वैसा करने की उसकी भी प्रबल कामना होती है। यहां तक कि उनकी भाव-भंगी, मुहावरे तथा रुचि की भी वह नकल करने लगते है। अतएव बच्चो की संगति के विषय मे पालकों तथा अध्यापकों को विशेष जागरूक रहना चाहिए। चोरी करना, झूठ बोलना, बहानेबाजी, काम से जी चुराना, चटोरापन आदि बुरी आदतें बच्चे संगी-साथियों से जल्द ही सीख लेते है। बचपन की आदते आगे जाकर स्वभाव बन जाती है। कहावत है—'पड़ौस की शक्ल तो नहीं, पर अक्ल जरूर आ जाती है।' मनुष्य अपनी संगति से पहचाना जाता है। अतएव मुन्ना-मुन्नी को बचपन से ही अच्छे मित्रों तथा सहेलियों का चुनाव करना सिखायें।

(१) अगर माता-पिता के मित्र शिष्ट हैं, तो बच्चों को उसी मंडली में से मित्र चुनने में बहुत सुविधा होगी। जब आप अपने मित्रों के घर जायें तब इस बात का भी ध्यान रखें कि मुन्ना-मुन्नी को भी उनके बच्चों के साथ खेलने-कूदने तथा मिलने-जुलने की सुविधा हो।

(२) अपने बच्चों के मित्रो मे दिलचस्पी दिखायँ, उनकी न्यूनता या भूल की मजाक न बनायँ। अगर उनमें से कोई पढ़ाई मे पिछडा हो तो अपने मुन्ना के जरिये उसे उन्नति करने का प्रोत्साहन दे। मित्रों के समझाने-बुझाने का बच्चों पर बहुत प्रभाव पड़ता है। बच्चे अपने सखा-सहेलियो का साथ यहाँ तक देते है कि आगे पढ़ने की इच्छा या संगति-सुख के लिए आगे बढ़ते रहने की यथाशक्ति चेष्टा करते है।

(३) हमारे साथी को सजा न मिले, वह पिछड़ न जाय, उसे असुविधा न हो—इस प्रयत्न मे पूरा गुट सहयोग देता है। इसी प्रकार वे प्रतियोगिता मे भी मिलकर बाजी मारने की चेष्टा करते है। बच्चों की इस टीम-भावना को प्रोत्साहन देना चाहिए। उन्हें इसके लिए उपयुक्त मित्रो का चुनाव करना सिखायें।

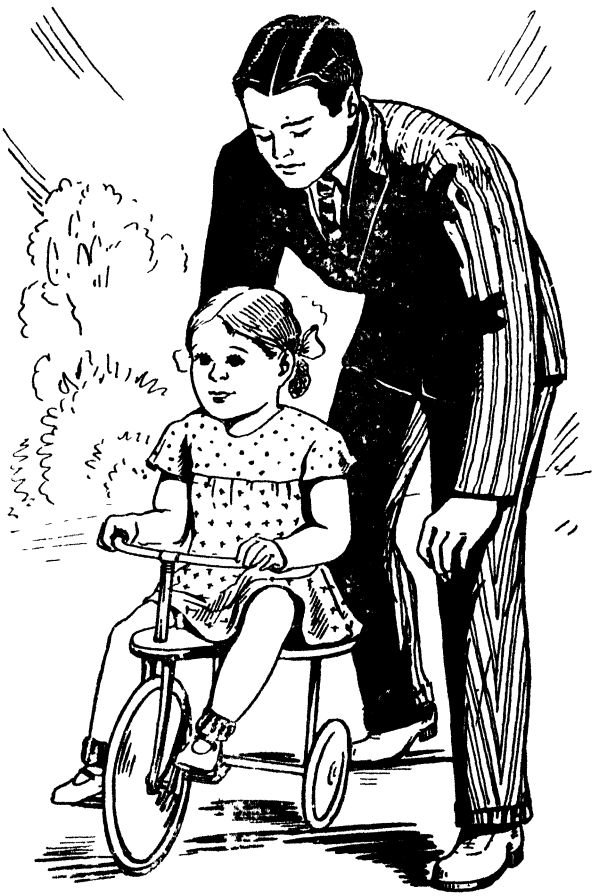
(४) कभी-कभी ऐसा होता है कि बच्चों को परिजनों मे प्रोत्साहनवर्द्धक दृष्टान्त का अभाव रहता है पर अपने संगी-साथियों का आदर्श उन्हें उन्नति करने के लिए प्रेरणा देता रहता है। अतएव अगर आप का बच्चा दृढ़ निश्चयी नहीं है, तो ऐसे मित्र की संगति जो अधिक प्रतिभाशाली, स्थिर बुद्धि तथा सज्जन है, उसके लिए अधिक उपयोगी होगी। मनुष्य का आकर्षण भी उसी व्यक्ति की ओर होता है जिसे वह अपना पूरक समझता है। एक खिलाड़ी बच्चे की मेधावी मित्र के संग अच्छी पटती है। एक गभीर प्रकृति का मित्र हँसोड़ दोस्त की संगति अधिक पसन्द करता है।

(५) मुन्ने के मान-सम्मान की उनके मित्रों के सामने पूर्ण रक्षा करें, अपराध होने पर भी कभी उसकी खिल्ली न उड़ायँ, अन्यथा पीठ-पीछे मुन्ना आपके विरुद्ध अपने दिल का मलाल, मित्रों के बीच निकालेगा और इस प्रकार अपने घायल आत्म-सम्मान पर मरहम लगाने की चेष्टा करेगा।

(६) अगर मुन्ना के किसी मित्र का व्यवहार आप को रुचिकर नहीं है, या वह पढ़ाई के समय आकर मुन्ना को खेल मे लगाने की चेष्टा करता है, तो उसको रोकने का सब से सुन्दर उपाय यही है कि आप मुन्ना को मीठी झिड़की देकर कहें—"भई मुन्ना! तुम्हें चाहिए कि अपने मित्र को भी पढ़ाई में लगाओ। अगर तुम्हारा दोस्त चुन्नू फेल हो जायगा तो तुम्हारी मित्र-मंडली की शोभा बिगड़ जायगी। इसमें तुम्हारी भी बदनामी है। सो चुन्नू भैया! तुम भी इस समय पढ़ो, शाम को खेलना।" मुन्नू और

चुन्नू के लिए इतना संकेत ही काफी है। अगर आप चुन्नू को झिड़क देंगे तो चुन्नू मन-ही-मन आपको बुरा-भला भी कहेगा और शाम को मुन्नू को भी उलाहने सुनने पड़ेंगे।

(७) बच्चे अपने माता-पिता, बहन-भाई तथा घराने के दोष या बुराई के कारण मित्र-मंडली में दबे रहते हैं। अतएव अपने मुन्ने के आत्म-सम्मान की रक्षा के लिए आप पारिवारिक बुराइयों को दूर करने की चेष्टा करें।



(८) एक दूसरे के जन्म-दिवस, तीज-त्यौहार, सुख-दुःख में हाथ बटाना

सिखायें। उन्हें अपने हाथ से बनाए हुए उपहारों का आदान-प्रदान करना सिखायें। बच्चे एक-दूसरे से व्यक्तिगत बातो की चर्चा बहुत विस्तारपूर्वक करते है, यथा—माता-पिता ने मुझे कौन-सा उपहार दिया ? कहाँ घुमाने ले गए ? क्या-क्या नए कपड़े तथा खिलौने दिये ? त्यौहार पर क्या इनाम दिया, हमारे घर का रहन-सहन और खान-पान का क्या तरीका है ? मेरी बहन ऐसी गुणवती है; भाई पढ़ने में ऐसा होशियार है; पिता जी का मै लाडला हूँ; माँ का प्यारा हूँ; मेरे माता-पिता दोनों में बड़ा मेल है; दोनो ही सुन्दर, स्वस्थ तथा शिक्षित है। इस प्रकार की चर्चा द्वारा वे अपनी श्रेष्ठता जताना चाहते है। अतएव आप अपन मुन्ना के मित्रों के विचारों की उपेक्षा न करें। कभी-कभी उनके खेल-कूद तथा मनोरंजन में भी भाग ले। उनकी अड़चनो के प्रति सहानुभूति दिखायें, उनकी समस्याओं को सुलझाने की चेष्टा करें। प्राय: ऐसा होता है कि बच्चे अपने माँ-बाप की न सुनकर मित्र के माँ-बाप की सलाह सुन लेते है। अतएव आप इस बात को न भूलिए कि आप न केवल अपने मुन्ने के, परन्तु मुन्ना के मित्रो के भी पथ-प्रदर्शक है। अगर मुन्ना के संगी-साथी नेक है, तो आपका मुन्ना भी नेक ही बनेगा। इस विषय मे मै आपको एक दिलचस्प घटना सुनाती हूँ।

सुशीला और किरण दोनो कन्याये एक ही स्कूल मे पढ़ती थीं। एक साल सुशीला की दसवी वर्ष-गाँठ पर उनकी माता जी ने सुशीला की कुछ सखियो को बुलाया। अन्य कन्याये तो गप्प और खेल-कूद मे मग्न रही परन्तु किरण ने सुशीला की माता जी को मेज सजाने और ट्रे आदि लगाने मे सहयोग दिया। दूसरे दिन पार्टी की चर्चा चलने पर सुशीला की उन सहेलियो की भी चर्चा चल पड़ी। सुशीला की माता जी ने कहा—"मुझे, सब कन्याओं मे किरण न केवल रूप-रंग और स्वभाव मे ही, परन्तु समझदारी मे भी सबसे अच्छी प्रतीत हुई।"

यह सुनकर सुशीला चट बोली—"मम्मी ! अगर आप किरण की माता जी से मिले तो तबियत खुश हो जाय। बी० ए० तक पढ़ी-लिखी है, परन्तु घर का सब काम खुद करती है। किरण को भी वही पढ़ाती है। पिछले साल आप को मालूम ही है कि मै परीक्षा मे फेल हो गई थी, परन्तु किरण की माता ने मुझे इतने प्यार से समझाया कि मेरी पढ़ाई की ओर रुचि हो गई और इस साल मैंने प्रारम्भ से ही परिश्रम करना शुरू किया, तो क्लास मे मेरी पोज़ीशन भी सैकिंड आ गई। किरण हमेशा फर्स्ट रहती है।"

सुशीला की माता जी ने कहा—"बेटी, तुम किरण के ही साथ रहा करो, मै उसकी माता जी को तुम्हें प्रोत्साहन देने के लिए, धन्यवाद देने अवश्य जाऊँगी।"

दूसरे दिन जब किरण को सुशीला ने यह सब बातचीत सुनाई तो किरण

बोली—"सच सुशीला ! मुझे अपनी माता जी पर बड़ा गौरव है। वे मुझे कभी भी नहीं डाँटती। परन्तु यह सच है कि मुझ में किसी बात की कमी या बुराई देख कर उन्हे बड़ा दुःख होता है।"

सुशीला—"किरण, अब हम दोनों की माताएँ भी परस्पर सहेली बन जायँगी, तो कितना अच्छा होगा ! परीक्षा के दिनो मे फिर मुझे तुम्हारे यहाँ आकर तैयारी करने की आज्ञा जल्द मिल जायगी।"

इस प्रकार किरण और उसकी समझदार माता के प्रभाव मे रहकर सुशीला एक समझदार और होशियार लड़की बन गई।

बच्चो के सामाजिक जीवन का विकास बचपन में ही होना चाहिए। मित्रो के चुनाव मे माता-पिता का सहयोग वांछनीय है। अपने अड़ौस-पड़ौस, स्कूल तथा मौहल्ले मे ही बच्चों को मित्र चुनने की सुविधा होती है। ऐसी स्थिति मे अगर आप इस बात का ध्यान रखे कि आप के आदेश और विचारों से मेल खाते हुए व्यक्तियों से आप की घनिष्ठता बढ़े और मुन्ना-मुन्नी को भी उनके बच्चों के साथ मेल-मिलाप करने का अवसर मिले, तो मुन्ना के मित्रों के विषय मे आपको कभी भी शिकायत नही होगी। आप भी उनके सखा-सहेलियों से परिचय बढ़ायें, इससे उनकी खूबियों को प्रोत्साहन देने तथा कमियों को दूर करने का भी आपको अवसर मिलेगा। यदाकदा अपने बच्चों के खेल-कूद तथा मित्रों में शामिल होने से, आपको उनका विश्वास प्राप्त करने मे भी सरलता होगी। फलस्वरूप जब सभी भी कोई संशय या कठिनाई आ पडेगी तो मुन्ना-मुन्नी आपका सहयोग अवश्य प्राप्त करेंगे। वे आप से छिपाकर कोई कार्य नहीं करेंगे। जब उन्हें इस बात का भरोसा हो जायगा कि भूल करने पर हमे अमुक व्यक्ति धिक्कारेगा नहीं अपितु ऊँच-नीच समझाकर भूल सुधारने का तरीका भी बता देगा, तो वह आप पर भरोसा रखने लगेंगे, आप के सहयोग का वह मूल्य समझने लगेंगे।

हमारे मौहल्ले के बगीचे में एक व्यक्ति आते है, उनको हम सभी मालू काका कहते है। बगीचे में जितने बच्चे खेलने आते है, वे लगभग सभी से परिचित है। क्योंकि वे उन्हें खेल खिलाते तथा कहानी सुनाते है। एक बार एक बंगाली और पंजाबी बच्चे मे कुछ मार-पीट हो गई। बाद मे बगाली बच्चों ने मिलकर अपनी अलग पार्टी बना ली। देखा-देखी पंजाबी बच्चो ने भी अपनी टोली अलग बना ली। अब उन दोनों पार्टियों के बच्चों मे परस्पर बड़ा द्वेष फैल गया। मालू काका को यह बात बहुत बुरी लगी। उन्होंने 'बालमेला' नाम से एक नई पार्टी स्थापित की, जिसमे खेल-कूद, रेस तथा कहानी के लोभ से दोनों पार्टी के अनेक बच्चे शामिल हो गए। बाद में मालू काका को पता चला कि किस प्रकार दोनों पार्टियों के कुछ बड़े लड़कों

ने अपनी-अपनी पार्टी के बच्चों के हृदय में द्वेष और ईर्ष्या भरी थी। यहाँ तक कि लड़कों को विरोधी पार्टी के बच्चो की बहनों पर आवाजे कसनी भी सिखा दी थीं। मालू काका की पार्टी का इतना स्वस्थ प्रभाव पड़ा कि धीरे-धीरे दोनों दलों के बच्चे इसी मे शामिल हो गए और ईर्ष्या-द्वेष भूलकर वे मेल-मिलाप से खेलने लगे।

देखा गया है कि नेक बच्चा भी कभी-कभी सोहबत के कारण बुरी बातों की ओर आकर्षित हो जाता है। स्कूल या खेल के मैदान से लौटते समय बच्चे किसी भिखारी या कुत्ते के पीछे पड़ जाते हैं और कंकड़-पत्थर तथा लाठियों से उसको खदेड़कर परेशान करते हैं। इसी प्रकार किसी खोमचे वाले या माली को भी परेशान कर देते हैं। इस शैतानी मे कुछ दुष्ट बच्चे अगुआ होते हैं। शेष बच्चे तमाशबीन बनकर शामिल हो जाते हैं। पता लगने पर हेडमास्टर या टीम के लीडर को चाहिए कि जो लड़के अगुआ बने थे उन्हें उचित सजा दे, साथ ही अन्य पिछलग्गुओं को भी ऊँच-नीच समझा कर लज्जित करें।

मित्र एक दूसरे के पूरक हैं, अतएव स्कूलों मे भी इस बात की चेष्टा की जाय कि ऐसे दो बच्चो को पास-पास बैठने तथा मिलकर काम करने का अवसर दिया जाय जो एक दूसरे के पूरक बन सके। खिलाड़ी और फुर्तीले लड़के के साथ पढ़ने मे मेहनती और धीर लड़के की अधिक पटेगी। खामोश और विचारशील बालक के संग बातों मे तेज और हँसोड़ बालक का जोड़ अधिक ठीक रहेगा। इस प्रकार परस्पर सहयोग द्वारा उनमे सामाजिक भावना का भी विकास होगा।

इस बात की भी सावधानी रखनी चाहिए कि बच्चा किसी दुष्ट बच्चे के प्रभाव में न आ जाय। आम तौर पर देखने मे आता है कि जो बच्चे बहुत भोले-भाले तथा व्यवहारिक बुद्धि से हीन होते हैं, उनमे लीडरशिप का अभाव होता है। ऐसे बच्चे अपनी टोली के किसी दुष्ट और दुस्साहसी साथी की अधीनता शीघ्र ही स्वीकार कर लेते हैं और बिना सोचे-विचारे उनका अनुकरण करने लगते हैं। माता-पिता या गुरू जब किसी नेक बालक को विपरीत ढग से व्यवहार करते पायँ तो उन्हें चाहिए कि उनके संगी-साथियों की जाँच करें। 'मनष्य अपनी संगति से जाना जाता है', बच्चों के विषय मे तो यह उक्ति पूरी-पूरी सार्थक होती है, क्योकि उनके चरित्र मे अभी दृढ़ता नहीं आई होती, साथ ही उनकी निर्णयात्मक बुद्धि का विकास भी नहीं हुआ होता, इस कारण वे अपने संगी-साथियों की सिखावट मे झट आ जाते हैं।

बच्चे के सगी-साथियों को परखने के लिए आप मुन्ना-मुन्नी के सामाजिक जीवन में दिलचस्पी लें, उनके संग खेलें, बातों-बातों में उनके सखा-सहेलियों के विचारों और आदर्शों की जानकारी प्राप्त करें। जन्म-दिवस तथा अन्य उत्सवों पर उन्हें अपने संगी-साथियों को बुलाने का अवसर दें। आप के इस प्रकार दिलचस्पी लेने

से मुन्ना-मुन्नी अपने सखा-सहेलियों के चुनाव के विषय में सावधान रहेंगे। अपने अच्छे मित्रों की प्रशंसा सुनकर वे इस बात का विशेष ध्यान रखेंगे कि हम ऐसे मित्रों की संगति में न रहे जिनकी शोहरत अच्छी नहीं है, जो अपनी उद्दण्डता तथा शैतानियों के कारण बदनाम है, या पढाई में फिसड्डी है, नहीं तो हम भी बदनाम हो जायेंगे।

यह संगति का प्रभाव न केवल बचपन में ही पड़ता है परन्तु बड़े होकर भी बच्चों के चरित्र पर संगी-साथियों की ही छाप स्पष्ट बनी रहती है। कालिजों के लड़के-लड़कियाँ जिस प्रकार अपने सखा सहेलियों को करते देखती है उसका अनुकरण वह भी करने लगती है। घर गृहस्थी वाले व्यक्ति तक संगति के प्रभाव से अछूते नही रह सकते। इसलिए आप बच्चो को छुटपन में ही अच्छी संगति का महत्त्व बताना न भूले। अगर आप ने उन्हें अच्छे मित्रो का चुनाव करना सिखा दिया है, ती बड़े होकर वे भी गलती नहीं करेंगे। क्योंकि बचपन के संस्कार और रुचि उन्हें बुरी संगति से दूर रहने की प्रेरणा देती रहेगी।

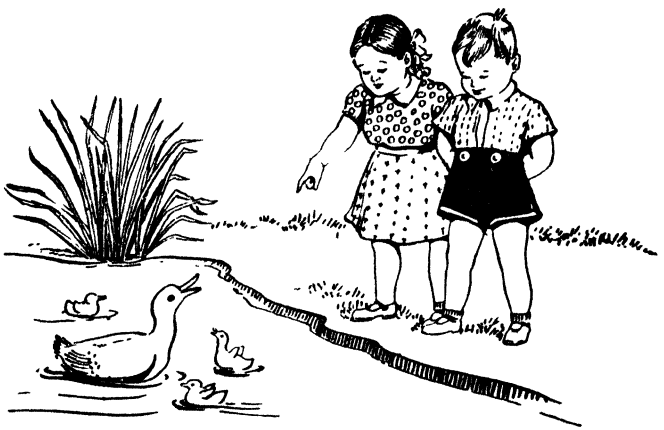
अठारहवाँ अध्याय

सामाजिक जीवन

'माता-पिता का प्रभाव, घर मुहल्ले तथा गाँव का वातावरण तथा संग में खेलनेवाले लड़को की संगति आदि का प्रभाव ही बालकों के चरित्र निर्माण मे काम करता है । अतएव कुसंग और सतसंग का विचार अवश्य करना चाहिए ।'

श्री स्वामी सन्तसिंह जी

जन्म के पश्चात् एक-दो-तीन वर्ष, बच्चे को अपना शरीर संभालने में लगते है । वह अपने लिए ही जीता है, अकेला खेलता है, स्वयं मस्त रहता है । शनैः-शनैः वह माँ-बाप, बहन-भाई तथा अन्य बच्चो के साथ मिलकर खाना-पीना, खेलना सीखता है, तथा दिनचर्या मे सहयोग देने लगता है । माँ से अलग अपने अस्तित्व का उसे भान हो जाता है, अब वह चौबीस घंटे माँ के आँचल से बंधा हुआ रहना नहीं चाहता । वह घर तथा माँ-बाप की समीपता सुरक्षा की भावना से चाहता है । जैसे-जैसे वह बड़ा होता है, समाज में अपना स्थान बनाने की चेष्टा करता है । उसकी दैनिक क्रिया भी



नियमित हो जाती है । उपयुक्त स्थान पर टट्टी-पेशाब करना, भूख लगने पर भोजन माँगना, थक जाने पर सो जाना आदि कार्य वह स्वतंत्र होकर करता है ।

अब वह प्रेम, ममता तथा क्रोध और प्रसन्नता को समझता है । वह अनुभव तो बहुत कुछ करता है, परन्तु अपने उद्‌गार तद्‌नुसार ठीक से प्रगट नहीं कर सकता ।

जो वह कहने में असमर्थ है, उसकी पूर्ति उसकी आँखे तथा मुख के भाव तथा आवेग कर देते हैं। मनोवैज्ञानिकों का कहना है कि बच्चों के आवेग को रोकना नहीं चाहिए। प्रेम, घृणा, ईर्ष्या, क्रोध आदि के आवेग जब निकल जाते हैं तब बच्चा अधिक स्वस्थ रहता है। अन्यथा वह इन आवेगों को रोक कर अन्दर-ही-अन्दर घुटता रहेगा और एक दिन कोई शारीरिक अथवा मानसिक बीमारी के रूप में इस घुटन का विस्फोट हो उठेगा। यही कारण है अधिक दबाए हुए बच्चे छल-प्रपंच-प्रिय, झेपू, डरपोक तथा झूठे होते हैं। उन में आत्मबल कम होता है। बाल्यकाल के अभाव और असन्तोष की छाप उन पर इतनी गहरी पड़ जाती है कि बड़े हो कर भी वे उस कमी की पूर्ति नहीं कर पाते। जब नींव ही कच्ची रहे, तो इमारत कैसे ऊँची उठ सकती है? वे अपने बचपन का कटु अनुभव आगे जाकर अधिक तीव्रता के साथ दूसरों को करवाते हैं या प्रतिक्रिया रूप स्वयं अधिक उच्छृङ्खल हो जाते हैं।

बच्चों के मन को चोट न पहुँचायँ—बच्चा छोटा है, नन्हा है, बल में कम है, यह सोच कर उसका महत्व कम नहीं करना चाहिए। अगर आप छोटे बच्चे के प्रति सज्जनता, शिष्टता तथा सहनशीलता दिखायँगे, तो बचपन से ही उसमें 'गुड मैनर्स' आ जायँगे। वह जोर से चिल्लाकर बातचीत नहीं करेगा। न ही रोकर, मचलकर, बेबात सब को परेशान करेगा। अपने क्रोध और प्रेम को भी ठीक ढंग से प्रदर्शित करेगा। अपने संगी-साथियों के प्रति सहनशील होगा, उसे उनके साथ हिल-मिल कर खेलना, परस्पर निभाना आयगा। इस तरह वह समाज में अपना स्थान ठीक से बना सकेगा। बच्चे को सिखाने के लिए उदाहरण ही काफी है। रोकने-टोकने की अगर आवश्यकता पड़े, तो उसकी आलोचना करके या आक्षेप करके वर्जित न करें। अपितु जो बात ठीक हो उसका उल्लेख करके, या दिखाकर शेष भार उस पर छोड़ दें।

अपने पर किए हुए भरोसे की रक्षा करना बच्चे खूब जानते हैं। एक बार आठ वर्ष के मोहन को उसकी माँ ने १५ रुपये उसके स्कूल की फीस पकड़ा दी। पिता ने टोका भी कि कहीं मोहन रुपये खो न दे। परन्तु माँ ने कहा कि मुझे पूरा भरोसा है, मोहन फीस संभालकर रखेगा और क्लास-टीचर को दे देगा। उस दिन मोहन अभी स्कूल के फाटक पर ही था कि प्रार्थना की घंटी बज गई। जल्दी के कारण मोहन ने बस्ता बरामदे में ही रख दिया और वह प्रार्थना-भवन (हाल) में चला गया। इसी बीच वह रुपये किसी लड़के ने निकाल लिए। क्लास-टीचर को देखकर मोहन को रुपयों की याद आई। बहुत ढूंढ़ने पर भी जब उसे रुपये नहीं मिले, तब वह रोने लगा। क्लास-टीचर ने बहुतेरा दिल-दिलासा दिया कि उसके पिता जी से वह कह देंगे, वे सजा नहीं देंगे। पर मोहन बोला, "फीस के रुपये तो पिता जी और भी दे देंगे, परन्तु माँ ने मुझ पर जो भरोसा किया था, अब वह कभी भरोसा नहीं करेगी।" यह कहकर

वह और भी रोने लगा । क्लास-टीचर पर मोहन के उत्तर का बड़ा प्रभाव पड़ा। उन्होंने स्कूल के स्काउट मास्टर पर चोरी का पता लगाने का भार छोड़ा, दोपहर की छुट्टी में चाट वाले से १० रुपये का नोट भुनाते समय, एक लड़का पकड़ा गया और चोरी का पता चल गया। प्रिंसिपल ने मोहन के पिता को चिट्ठी में लिखा--'मैं आपको, मोहन के द्वारा आपके भरोसे की इतनी कद्र किए जाने पर बधाई देता हूँ।'

बच्चा जैसे के संग तैसा व्यवहार करता है—बच्चा इज्जत तभी करता है, जब कि उसे इज्जत मिलती हो। इसी प्रकार ममता, दया, सहानुभूति दिखाने की प्रेरणा भी उसे अपने से बड़ों के व्यवहार को देखकर ही मिलेगी। आदान-प्रदान, बाँट कर काम करना, बाँटकर चीज़ का उपयोग करना भी वह देखा-देखी ही सीखता है। बड़ों के प्रति वह वैसा ही व्यवहार करेगा जैसा अपने बड़े बहन-भाइयों को करते देखता है। इसी प्रकार छोटों के प्रति भी वैसा ही व्यवहार करता है, जैसा बड़े उसके प्रति करते हैं। एक परिवार में तीन बच्चे थे। रमेश बड़ा था, मीरा उस से छोटी थी, महेश सब से छोटा था। रमेश बहुत ऊधमी और बहुत काल तक इकलौता बच्चा होने के कारण अधिक जिद्दी और असहनशील बन गया था। इस कारण उसे सब डाँटते थे, मीरा छोटी थी तथा देखने में भी अधिक सुन्दर। उसके प्रति सब अधिक प्रेमालु थे। फलस्वरूप मीरा स्वभाव से मृदु तथा अपने छोटे भाई महेश के प्रति बहुत दयालु थी, जब कि रमेश बड़ो के साथ भी मुँहजोरी करता तथा छोटे बहन-भाइयों को भी रुलाता और परेशान करता था। सभी घर में आश्चर्य करते कि दोनों छोटे बच्चे तो इतने सभ्य और नेक हैं, यह बड़ा किस पर पड़ा है? अब देखिए बड़ों की भूल के कारण रमेश समाज में अपना स्थान ठीक से नहीं बना सका। यह उखड़ेपन की भावना बड़े हो कर भी उसे परेशान करेगी।

बच्चे के जीवन की प्रारंभिक भूलें तो बहुत स्वाभाविक हैं। उन्हें हम ठीक रास्ते पर ले जाने वाली चेतावनी कहें तो अत्युक्ति नहीं होगी। उन भूलों के पीछे उन्हें डाँटना-डपटना, लांछित करना, महा मूर्खता है। फिर तो इलाज ही मर्ज बन जायगा। हम बच्चों को ठीक से समझाने की चेष्टा नहीं करते, इसी से वे जिद्दी, चिड़चिड़े, असहनशील तथा असंतोषी बन जाते हैं। हर समय उन्हें डाँटना-डपटना या दबाना उचित नहीं है।

प्राकृतिक रूप से विकसित होने के लिए उनके जीवन में प्रेम, सहानुभूति मनो-रंजन, सुविधाएं तथा प्रोत्साहन की आवश्यकता है। छोटा बच्चा दिन भर माँ के साथ रहता है। माँ उसकी कल्पना की परी और देवी है, उससे लाड-प्यार तथा सहानुभूति पाकर वह गद्-गद् हो जाता है। माँ उसकी दीन-दुनिया सभी कुछ है। वह अगर झूठ-मूठ को भी रोती है तो बच्चा बिलख-बिलखकर रोने लगता है। वह चाहता है

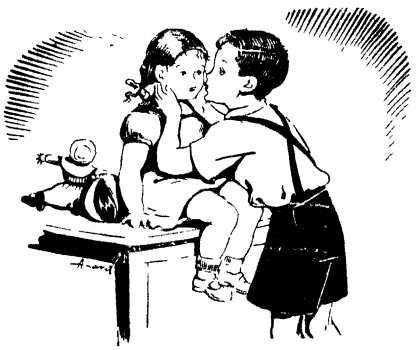
कि माँ उसके संग ही सोये, खाये और खेले। माँ जब बच्चे को खाना खिलाती है, तो उसे एक विशेष तृप्ति होती है। थका-हारा, डरा हुआ बच्चा माँ की गोद में जाकर सब दुःख-दर्द भूल जाता है। यह बात उसकी कल्पना के परे है कि उसकी माँ, किसी की पत्नी तथा गृहिणी भी है। वह अपनी माँ पर एकछत्र अधिकार चाहता है। शाम को जब पिता घर वापिस आते हैं, माँ मुन्ने को छोड़कर, उनकी सेवा में लग जाती है। बाप को मुन्ना का माँ के पीछे-पीछे चलना पसन्द नहीं। वह थका-मांदा घर आता है, मुन्ना का ठुनकना उसे नापसन्द है। वह एक घुड़की देकर उसकी बाँह पकड़, एक कुर्सी पर बिठा, चुप रहने का आदेश देता है। मुन्ना माता-पिता को हँसते-बोलते, अपने परिहास में मस्त देख अपनी तुलना उस नन्हे-मुन्ने राजकुमार से करता है जिस की परी को, शाम को दानव घर आकर अपने कब्जे में कर लेता है। रात्रि के सन्नाटे में जब उसे माता-पिता की हल्की हँसी और फुसफुसाहट सुनाई देती है, वह मन-ही-मन घुटता और कुढ़ता है। उसे अपने पिता का व्यवहार फूटी आँख भी नहीं सुहाता।

एक महात्मा का कथन है कि बालक का सुधार वही कर सकता है, जो मन का सुधार कर सकता है। इसी कारण प्राचीन काल में बालकों को उन्हीं लोगों की देखभाल में रखा जाता था, जो मन-इन्द्रियों को जीत कर सेवा तथा सत्य की खोज में एवं भगवान चिन्तन में लगे रहते थे, किन्तु आज तो दुर्भाग्यवश बालकों को मोह-युक्त माता-पिता की गोद में अथवा बिगड़े हुए नौकरों की गोद में ही पोषण तथा शिक्षण मिलता है। मोह की गोद में न्याय और नौकरों की गोद में यथेष्ट स्नेह नहीं मिलता, न्याय न मिलने से बालक में बेईमानी और स्नेह न मिलने के कारण हृदय-हीनता आ जाती है जो सभी दोषों का मूल है। जब तक बाल-मन्दिर द्वारा बच्चों को मोहयुक्त माता-पिता तथा नौकरों की गोद से मुक्त न कर दिया जायगा, तब तक वे ईमानदार एवं हृदयशील न हो सकेंगे।

प्रत्येक प्रतिक्रिया का हेतू होता है—कई घर ऐसे हैं, जहाँ बाप-बेटे की बिल्कुल नहीं बनती। लड़का बाप के प्रति असहनशील है, जब कि माँ का अनुरोध वह नहीं टाल सकता। लड़के की इस असहनशीलता के मूल में अवश्य ही बचपन का कुछ कटु अनुभव छिपा है। या तो बाप कन्या के प्रति पक्षपात-पूर्ण व्यवहार करता होगा, अथवा वह माँ को लड़के के प्रति अधिक दुलार दिखाने से उसके सामने ही रोकता-टोकता होगा। बस बाप के इस प्रतिरोधी व्यवहार ने मुन्ना को, जब वह बड़ा हुआ तो असहनशील बना दिया। माँ-बाप बच्चे की उपस्थिति में इस प्रकार व्यवहार करना चाहिए कि वह भी उनके स्नेह का हिस्सेदार बना रहे। शाम को घर आ कर, बाप पहले मुन्ना को पुचकारे-दुलारे, तब पत्नी से बातचीत करे, इसी प्रकार जाते समय, या सोने से पूर्व अथवा प्रातःकाल उठने पर, मुन्ना को प्यार का हिस्सा अवश्य मिलना चाहिए।

जिस प्रकार हम भोजन दिए बिना खाना अनुचित समझते हैं, उसी प्रकार परस्पर अथवा अन्य बच्चों को दुलारते समय मुन्ना को भी नहीं भूलना चाहिए।

मुन्ना को अपने माँ-बाप प्यारे हैं; बहन-भाई से उसे स्नेह है, अपना घर उसे अच्छा लगता है। वह किसी को दुःखी नहीं करना चाहता। वह जान-बूझकर कोई बुरा काम नहीं करना चाहता, परन्तु उत्सुकता से और कुछ करने तथा जानने की भावना के वश हो कर कभी-कभी वह ऐसे काम कर बैठता है कि लोग उसे दुष्ट, शरारती ढीठ, उद्दण्ड और बदमाश कहने लगते हैं। मुन्ना को अपने पिता जी बहुत अच्छे लगते हैं, अतएव वह उनकी नकल यहाँ तक करता है कि एक दिन सिगरेट जलाकर, या उनका वक्का गुड़गुड़ा कर पिता का अभिनय करने लगता है। उसे ठसका लग जाता है, या हजामत करते समय ब्लेड से हाथ कट जाता है। पकड़े जाने पर उस की पिटाई होती है, यहाँ तक कहा जाता है—मुन्ना ने गजब कर दिया, अभी से सिगरेट पीने और हजामत करने का शौक लगा है, आगे जाकर राम जाने क्या करेगा? यही दशा मुन्नी की होती है। वह माँ का अभिनय करते समय ड्रेसिंग टेबिल के पास खड़ी हो, पाउडर-बिंदी लगाकर, साड़ी का छोर सिर पर डालकर, घूँघट खींच, बहूरानी बनने की चेष्टा करती है। अथवा गुड़िया को सीने से चिपकाए फिरती है। जब कोई उसे ऐसा करते देखता है, तो उसकी भी मजाक बनती है।



असामाजिक व्यवहार क्यों—बच्चा जब कोई काम आपके आदर्शों के विरुद्ध करे, तब उसके मूल में उन्हें प्रेरणा देने वाले, हेतू की खोज अवश्य करें। कभी-कभी बच्चे बातें मन से भिड़ाकर सुनाते हैं, बात का बतंगड़ सुनकर आप उन्हें झूठा और चुगलखोर समझ बैठती हैं। परन्तु जिन बच्चों की कल्पना बहुत तेज होती है, वे अपने सपने में देखी हुई तस्वीरों तथा इधर-उधर की कहानियों को जोड़ कर ऐसी-ऐसी बात गढ़ लेते हैं, जिनके न सिर होते हैं न पैर।

बच्चे को इस प्रकार की बातें—'मुन्ना उन से कह दे हम तुम से नहीं बोलते, तुम खराब हो, तुम जाओ, हम तुम्हें मारेंगे, तुम्हें यह चीज़ नहीं देंगे'—आदि कहना न सिखायें। आरम्भ में बच्चे के मुँह से ऐसी बातें सुनने में चाहे बुरी नहीं लगतीं, परन्तु बाद में आपके सिखाए से ही वे वह गाली देना, मारना तथा कठोर शब्द कहना

सीख जायगा। आपको चाहिए अपने मुन्ना-मुन्नी के सामाजिक जीवन का आरम्भ ठीक से करें। जिस से वह अच्छे संगी-साथियों का चुनाव, उनके साथ सहयोग, एक दूसरे के जन्म-दिवस तथा तीज-त्योहारों पर मिलकर खुशियां मनाना, हार-जीत, सुख-दुःख में समवेदना तथा हर्ष प्रगट करना सीखें। आपको अपने मित्रों के साथ मिलते-जुलते तथा प्रीतिभोज, विवाह-शादियों में सम्मिलित होते देख, बच्चे का भी मन होता है कि मैं भी अपने मित्रों को बुलाऊँ। उनके यहाँ जाऊँ। समझदार माँ-बाप अपने बच्चों के लिए इस प्रकार की सुविधाएँ अवश्य पैदा करते हैं। और उस में खुद भी शरीक होकर उनके सामाजिक जीवन को महत्त्व प्रदान करते हैं।

मुन्ना धीरे-धीरे समाज में अपना स्थान बनाता है। घर के बाद उसका स्कूली जीवन भी कम महत्त्व नहीं रखता। शाम को जब वह घर आता है, दिन भर की घटनाएँ—अध्यापिका तथा संगी-साथियों की खबरें, किसने क्या किया, क्या कहा, स्कूल में आज किसे सजा मिली, किसकी प्रशंसा हुई आदि खबरें सुनाने के लिए वह भी उतावला रहता है। उसकी बातों को कुछ देर तो आप अवश्य सुनें, उसके संगी-साथियों में दिलचस्पी दिखावें, उसके पालतू कुत्ते, बिल्ली या तोता-मैना का हाल-चाल पूछें। कुछ सुझाव दें। इससे मुन्ना अपने सामाजिक जीवन में तरक्की करेगा, आप की सलाह के अनुसार कार्य कर अपनी अड़चने हल कर सकेगा। 'अपनी बक-बक से मेरा सिर चाट गया, तेरे दोस्त ने क्या किया या अध्यापिका ने क्या कहा, हमें क्या पड़ी है यह सुनने की, चुप भी रह'—इस प्रकार कहकर, आप मुन्ना की बहुत हानि करेंगी। बच्चे जिस प्रकार काम करते नही थकते, वैसे ही बात करते भी नहीं थकते। उनके विचार तेजी के साथ दौड़ लगाते हैं, अपने भाव प्रगट कर वे स्वस्थता अनुभव करते हैं। जो बच्चा चुपचाप रहता है, साथियों के साथ खेल में भाग नही लेता, शैतानी नहीं करता, उसे संभालना चाहे सुविधाजनक हो, परन्तु उसका विकास स्वाभाविक नहीं होगा।

जिस तरह आपको अपने प्रिय मित्रों की आलोचना असहनीय होती है उसी प्रकार मुन्ना भी अपने संगी-साथी, गुरू तथा स्कूल की निन्दा सुनकर खुश नही होता। अतएव इनके विषय में अपने विचार प्रगट करते समय आप सावधानी रखें। अन्यथा मुन्ना के सामाजिक जीवन पर आघात पहुँचेगा। अगर किसी कारणवश आप उसे किसी के सम्पर्क से अलग रखना चाहें, तो इस ढंग से उपाय करें कि मुन्ना को कुछ आकस्मिक परिवर्तन न लगे। मुन्ना के अपराध करने पर उसे सब के सामने लज्जित न करें। इससे उसका अपने समाज में सिर नीचा होता है। उसके आत्मसम्मान को चोट लगती है। बदनाम हो जाने पर वह अच्छा बनने की चेष्टा नहीं करेगा। उसे तरक्की करने में दिलचस्पी ही नहीं रहेगी।

बच्चों को बाल्यकाल से ही सामाजिक जीवन की थोड़ी-थोड़ी जिम्मेदारी सम-

झायें ताकि वह दूसरों के अधिकारों की इज्जत करें, धांधली मचाकर सभी चीज, और सुविधाएँ खुद ही प्राप्त करने की भूल न करे। शनैः-शनैः उन्हें अच्छे नागरिक बनने की भी ट्रेनिंग दी जाय। जहाँ-तहाँ कूड़ा-कचरा फेंकना, मलमूत्र त्यागना, दूसरों की शान्ति को भंग करते हुए, हल्ला करना आदि बातों की भूल को वह समझ जायेंगे।

मेल-मिलाप से रहना सिखायें—अपनी चीजों की संभाल, स्कूल में संगी-साथियों के साथ मिलकर काम करना, अपनी छोटी-छोटी सेवाओं से दूसरों को प्रसन्न करना, अपने दल, मित्र तथा परिजनो के प्रति अपनी जिम्मेदारी को समझना आदि बातों की शिक्षा उन्हें बचपन मे ही मिलनी चाहिए। घर और बाहर जहाँ भी रहें अपने पालकों और अभिभावकों की चिन्ता का विषय न बने, उनके काम मे हाथ बटायें। बड़ों को भी चाहिए कि उनकी आयु और योग्यता के अनुरूप उन्हें काम सौंपकर उन का सहयोग प्राप्त करे। जब कोई छुट्टी या त्योहार आय तो सब के साथ मिलकर कैसे उत्सव मनायेंगे, इस का विचार करना सिखायें। इसी प्रकार काम में सफलता मिलने पर अपने संगी-साथियों को क्या इनाम देगे, इस रूप में वे सोच सकें, न कि मुझे क्या इनाम मिलेगा, इस प्रकार की आस लगायें। निस्वार्थता तथा पर-सेवा से उन्हें सुख और प्रसन्नता हो ऐसी टेव डालें।

वे दूसरों की भावनाओं का ध्यान रखें, दूसरों की खूबियों को समझें, पर उन की कमियों की आलोचना करके स्वयं को अच्छा प्रमाणित करने की चेष्टा न करें। दूसरे के सिर बुराई थोपकर या दूसरे को बुरा प्रमाणित करके मैं प्रेम प्राप्त कर लूं यह प्रवृत्ति बहुत बुरी और समाज के लिए अहितकर है। इसे बचपन से ही रोकना चाहिए।

बड़ों के दृष्टान्त से बच्चे बहुत कुछ सीख लेते है। माता-पिता के सामाजिक जीवन की बच्चे पर छाप इस हद तक पड़ती है कि मित्रों के चुनाव, उन के प्रति व्यवहार, अपने अवकाश के समय को किस प्रकार से व्यतीत करना चाहिए आदि बातें बच्चे अपने बड़ों से ही सीखते है। जितने प्रसिद्ध लेखक, कलाकार, वैज्ञानिक या राजनीतिज्ञ हुए है उनके बाल्यकाल के इतिहास में अवश्य इस प्रकार की घटनाएँ घटित हुई होंगी, जिन का प्रभाव उनके चरित्र पर इतना सजीव पड़ा कि बड़े होकर वे इतनी सफलता प्राप्त कर सके। अपने पिता को साहित्यिकों, कलाकारों अथवा राजनीतिज्ञों की सोहबत में बैठ कर चर्चा करते देख उन के भी संस्कार प्रबल हो गए होंगे।

एक विद्वान का कथन है कि प्रत्येक प्राणी में कुछ संस्कार पूर्वजन्म के यानी जन्मजात होते है और बहुत से संस्कार आसपास के वातावरण और शिक्षा के द्वारा, ज्यों-ज्यों बालक बड़ा होता जाता है, विकसित एवं दृढ होते रहते है। कई कच्चे संस्कार परवती वातावरण एवं शिक्षण आदि के प्रभाव से विलीन भी हो जाते हैं एवं

संगति के प्रभाव से कई नये-नये संस्कार जीवन मे अपना घर बनाते रहते हैं। शिक्षा के द्वारा जीवन सुसंस्कारों मे ढलता जाता है।

माता-पिता किन लोगो से मिलते हैं, किन बातों मे दिलचस्पी लेते हैं, उन की 'हौबीज़' क्या है तथा समाज मे उनका क्या स्थान और शौहरत है—इसकी जानकारी बच्चों को जैसे-जैसे वे बड़े होते हैं, होती रहती है और उनका सामाजिक जीवन भी उससे प्रभावित होता रहता है। आपके बच्चो के सामाजिक जीवन का स्वस्थ विकास हो, वे एक जिम्मेदार नागरिक बने, इस बात के लिए यह आवश्यक है कि घर, स्कूल तथा कालेज में उसके सामाजिक जीवन का क्रमशः सुन्दर विकास होता रहे इसकी चेष्टा की जाय। घर मे आप उसके अधिकार, सम्मान तथा सुविधाओं की रक्षा करे ताकि वह भी दूसरों के अधिकार, सम्मान और सुविधाओ की रक्षा करनी सीख जाय। जिन व्यक्तियों का बचपन उपेक्षित, तिरष्कृत और असुविधाजनक होता है, बड़े होकर वे ही समाज में अव्यवस्था फैलाते हैं।

उन्नीसवाँ अध्याय

खेलने की प्रवृत्ति

'बालक का जीवन उसकी लीला है। इसका यह अर्थ है कि खेल की तरह परिश्रम भी उसकी क्रीड़ा होनी चाहिए। सारी कल्याणकारी क्रियाएँ सहजभाव से और आनन्दपूर्वक करने की वृत्ति का निर्माण करना ही खेल का उद्देश्य होना चाहिए। हम अपने सब कर्तव्य राग-द्वेष से मुक्त होकर उत्साहपूर्वक और शौक से करें, यही खेल का प्रयोजन होना चाहिए।'

बच्चे के मानसिक और शारीरिक विकास के लिए खेल बहुत ही आवश्यक है। बच्चा खेल में जभी तक उलझा रहता है, जब तक कि खेल के द्वारा उसका



मनोरंजन होता है। जैसे ही खेल उसे नीरस और आकर्षणहीन प्रतीत हुआ, उसका मन खेल से ऊब जाता है, और वह अपने खेल-खिलौनों और खिलाड़ियों को छोड़कर, किसी दूसरी ओर ध्यान देता है।

आयु के अनुरूप खेलने की प्रवृत्ति का विकास—आयु के साथ-ही-साथ बच्चों के खेलने के ढंग में भी परिवर्तन होता है। छः महीने की मुन्नी भी गेंद को दबोचकर या लुढ़काकर खेलती है और तीन साल का मुन्ना भी गेंद से खेलना पसन्द करता है, परन्तु उसका खेलने का ढंग मुन्नी के ढग से भिन्न है। वह गेंद को अपने साथी की ओर उछालकर, या किक मार कर फेकता है। गेंद को प्राप्त करने

या कैच करने के लिए वह उसकी ओर भागता है, इसके अतिरिक्त गेंद से वह अन्य खेल भी खेलता है। छोटा बच्चा लकड़ी का चमचा पकड़ क- उसे अपने झूले अथवा गाड़ी पर ठुकठुकाता है, अगले साल वह इसी चम्मच से अपनी नन्हीं बाल्टी में रेत या मिट्टी भर कर खेलता है। पहले साल उसे झुनझुने से खेलना अच्छा लगता था, परन्तु दूसरे वर्ष झुनझुने के स्थान पर छोटा-सा डम गले में लटकाकर उसे पीटने में मुन्ने को अधिक आनन्द आता है।

खेलने की प्रवृत्ति ही बच्चे को कुछ करने और जानने की प्रेरणा देती है। दो महीने का मुन्ना अपने पाँवो के अँगूठे पकड़कर हाथ-मुंह मे ठूँसकर खेलता है, वह रंग-बिरंगे चिड़ियों के झब्बों अथवा गुब्बारों को देखकर हाथ बढ़ाता है, और एक-दो मास में कुछ पकड़ना सीख जाने पर, अपनी आस-पास की चीज, रंगदार कपड़ा, झुन-झुने, गोदी लेने पर आपकी नाक का चश्मा, या अपनी माँ की गले की चेन अथवा चूड़ियों को पकड़ने की चेष्टा करता है। कभी-कभी तो वह अपने बालों को ही पकड़कर नोचने लगता है। जब मुन्ना चार मास का होता है, उसे मुंह से विचित्र-विचित्र ध्वनि करनी, थूक के बुदबुदे उठाने, गले से गर्र-गर्र करना अथवा उछल-कूदकर, किलका-रियाँ भरना बड़ा अच्छा लगता है। अपनी इन विचित्र ध्वनियों को सुनकर उसे आनन्द आता है, वह प्रसन्न होता है। अकेले बैठे-बैठे अपने नन्हे-नन्हे हाथों को धरती पर पीटता हुआ, अथवा झुनझुने को लकड़ी पर ठक-ठक बजाता हुआ वह स्वयं में मस्त-सा दीखता है। इस प्रकार के खेलों से उसका स्पर्श ज्ञान बढ़ता है।

(१) जब मुन्ना साल भर का हो जाता है, उसकी श्रवण-शक्ति भी बढ़ जाती है, वह आपकी भाव-भंगी से भी प्रभावित होता है। ऐसी कहानियाँ जिनमे आप जानवरों की बोलियों की नकल करती है तथा अभिनय करके सुनाती है, उसे बहुत अच्छी लगती है। संगीत पर नाचना भी उसे अच्छा लगता है। फिर आँख मींचकर या धोती से मुंह ढककर 'झांत' कहते हुए, आँख-मिचौनी का खेल अथवा हाथ में अटकन-बटकन करते हुए, 'बिल्ली आई, खीर खा गई,' कहकर बगल में गुदगुदी करने का खेल भी मुन्ने को बहुत पसन्द है।

(२) दूसरे वर्ष में पदार्पण करते-करते मुन्ने के इधर-उधर हाथ-पाँव मारने तथा घुटने-घुटने या पकड़कर चलने में तीव्रता-सी आ जाती है। वह सारे घर की तलाशी ले आता है। मेज पर की चीजों को गिरा देना, सीढ़ियों पर चढ़ना-उतरना, दरवाजा या मेज का दराज खोलना, बंद करना उसे अच्छा लगता है। जूतो के ढेर में भी वह मग्न हो जाता है। खाना खाते समय अपने चम्मच से खट-खट करना या उसे छत्र से गिराने में भी उसे अच्छा लगता है। कोई बर्तन यथा छोटी कटोरी या छोटा डिब्बा लेकर फर्श पर उसे उल्टा करके आगे-पीछे खिसकाने का उसे बड़ा शौक है।

चाहे उसे भली प्रकार बोलना नहीं आता, परन्तु अन्य ऊधमी और बातूनी बच्चों की संगति उसे बड़ी पसन्द है। आप उसे तैयार करके बिठायँ और कुछ ही देर में वह अपनी टोपी और जूते-मोजे खींचकर निकाल देता है। मिट्टी या पानी से खेलना उसे बड़ा अच्छा लगता है।

दो वर्ष की मुन्नी गुड़िया को सीने से चिपटाकर, उसे उसी तरह संभालने की चेष्टा करती है, जैसे अपनी माँ को बच्चा संभालते देखती है। छोटा-सा झाड़ू लेकर झाड़ देना, झाड़-पोछ करनी, छोटे गिलास मे पानी भरना आदि खेल उसे अच्छे लगते है। बड़ों की नकल करना मानो उसके लिए एक मनोरंजक खेल है। मिट्टी के खिलौने बनाना, अथवा नन्हे झारे मे पानी भरकर फुलवाड़ी सींचना तथा छोटे से फावड़े से मिट्टी खोदना, रेत का महल बनाना भी उसे अच्छा लगता है।

अपने तीसरे वर्ष मे पहुँचते-पहुँचते मुन्ना रंगीन तस्वीरों की ओर आकृष्ट हो जाता है। रंगदार तस्वीरों को वह गौर से देखता है, उत्सुकतापूर्वक उनकी कहानी सुनता है। कुछ वर्णन उसे याद भी रहता है और छोटे-छोटे वाक्यों में वह उन्हें दोहरा भी देता है। बच्चों को इस उम्र मे चटख़ रंग की बड़ी तस्वीरों की किताब दें। उन्हें तस्वीर के विषय में थोड़ी-थोड़ी जानकारी दें। गीदड़ और कुत्ता, बकरी तथा भेड़, घोड़ा और गधा, गाय और भैंस आदि परस्पर सादृश्यता रखने वाली चीज़ों को साक्षात या तस्वीरों में देखकर वे उनको पहचानना सीख जायँगे।

(३) बच्चों के खेलों में पुनरावृत्ति अधिक होती है। बार-बार वही पुरानी कहानी—'एक था कौवा, एक थी चिड़िया'—रोज सुनने में उतना ही आनन्द आता है, जो कि प्रथम बार आया था।

दो वर्ष तक तो बच्चा अकेला खेलकर ही खुश है, पर तीन वर्ष का मुन्ना अपने सगी-साथियों के साथ खेलना पसन्द करता है। इस आयु में बच्चे में टीम-स्प्रीट नहीं होती, मिलकर खेलना उसे नहीं आता, वह तो प्रत्येक खेल में अपनी प्रधानता रखना चाहता है। इसीलिए छोटे बच्चों के खिलाने के लिए किसी बड़े की आवश्यकता होती है, अन्यथा उनका खेल जमता नहीं, क्योंकि प्रत्येक बच्चा अपनी हकूमत चलाना चाहता है।

(४) छोटे बच्चों के अधिकांश खेल अनुभवात्मक होते है। वह जानकारी प्राप्त करने के लिए खिलौनों को तोड़-मरोड़कर, कल-पुर्जे उल्टे-सीधे घुमाकर नष्ट भी कर देते है। अतएव इस उम्र में उन्हें अधिक बढ़िया खिलौने देने भी नहीं चाहिएँ। बच्चों की कल्पना बहुत सजीव होती है, वे एक डंडे को घोड़ा, अथवा एक टूटी डिबिया को गुड़िया का सन्दूक, एक पुराने डिब्बे में डोरी बाँधकर उसे गुड़िया की बग्घी मानकर बड़ी खुशी से खेलते है। एक बार मैंने ५-६ वर्ष की आयु की पाँच-सात लड़कियों को नीम

की निबोलियाँ बीनते देखा। कुछ देर बाद वे गुड़िया की शादी का खेल खेलने लगीं, और उन्हीं निबोलियो को उन्होने बरातियो को मीठे अगूर कहकर परोसा और खुद भी बड़े चाव से खाया। एक लड़की जिसने उन निबोलियो को कड़वा कहा, उसे उन्होंने अपने खेल में से यह कहकर निकाल दिया कि तुम्हें खेलना नहीं आता, जाओ, हम तुम्हें दावत मे शामिल नहीं करेगे। कोई आश्चर्य नहीं कि अपनी कल्पना के बल पर उन्हें उन निबोलियो मे चमन के अंगूरों का मजा आया होगा।

(५) आप जब भी बच्चों के सग खेलें उनके ढंग से ही खेले। जिस बात से उनका मनोरंजन हो, आप भी उनमे सहयोग दे। उनकी रफ़्तार से खेल करवायें। आपका सहयोग ऐसा हो कि उनका खेल जम जाय और सभी को खेलने की पारी मिले। इस बात का ध्यान रखे कि लड़कियाँ अपने खेल और खिलौनों मे नवीनता अधिक पसंद करती है, परन्तु लड़को को इस प्रकार के सभी खेल खेलना अधिक रुचिकर है जिनमे दौड़-धूप, उछल-कूद आदि करनी पड़ती हो। यही बात है कि कुछ बड़े होने पर मुन्नी लड़कियो के और मुन्ना लड़को के संग खेलना अधिक पसन्द करता है।

बच्चों को जहाँ तक हो सके, सुबह-शाम खुली जगह यथा पब्लिक पार्क में खेलने भेज दिया जाय। इससे दो लाभ है, एक तो उन्हे खुली हवा और खेलने को काफी जगह मिलेगी, दूसरी बात गली अथवा सड़कों से परे, घास पर खेलते हुए वे अधिक सुरक्षित भी रहेगे।

खेल और शिक्षा—बच्चा जब कुछ बड़ा हो जाय तो उसे प्रतियोगिता के खेल, अथवा अभिनयात्मक खेल खिलायें। इससे उसका मनोरंजन और शिक्षण दोनों होगा। जिन खेलों में अभिनय के साथ-ही-साथ गीत भी गाये जायँ, वे खेल बच्चों को अधिक प्रिय होते है। बच्चे म्यूज़िकल चेयर, रेलगाड़ी का खेल अथवा फूलों के बीनने का खेल झुंड बनाकर, गाना गाते हुए अथवा बाजे की ताल पर क़दम-क़दम चलते हुए खेलना बहुत पसन्द करते है। इसके अतिरिक्त ऐसे गाने जिनमें गीत के साथ ही जानवरों या पक्षियों की बोलियाँ भी बोली जायँ, उन्हें बहुत रुचिकर है। बच्चों की रुझान देखकर इस प्रकार के गाने मामूली-सी तुकबन्दी करके आसानी से रचे जा सकते है। बच्चों की दिनचर्या में खेल और मनोरंजन का बहुत महत्त्व है। अतएव नये-नये प्रकार के खेल जो बच्चों की आयु तथा स्वास्थ्य के अनुकूल हों तथा जिनसे उन्हें शारीरिक और मानसिक स्फूर्ति मिले, उन्हें खिलाये जायँ।

बहुत कम माता-पिता अपने बच्चों के खेल मे सहयोग देते है। इसका कारण यह है कि वे उनके खेल-खिलवाड़ को एक फिजूल-सी बात समझते है। वास्तव में खेल के द्वारा ही बच्चे का शारीरिक और मानसिक विकास होता है। वह अपनी जानकारी बढ़ाता है, उसमें सहयोग और मेल-मिलाप की भावना पैदा होती है। आपने देखा

होगा कि जो परिजन या शिक्षक बच्चों के खेल मे दिलचस्पी लेता है, बच्चे उसका कहना सहज ही मान लेते है। 'देखो, बच्चो, इस वक्त काम का समय है, काम करो, जल्दी काम खत्म हो जायगा तो फिर हम खेलने चलेगे, नहीं तो खेल के समय भी काम करना पड़ेगा।' अभिभावकों के इतना कहने की देरी है कि बच्चे जल्दी-से-जल्दी अपने काम को निबटाने की चेष्टा करने लगते है।

बच्चो के सग मेल-मिलाप बढ़ाने का सब से सरल तरीका है, उनके खेल में शामिल होना। मनोवैज्ञानिकों का कहना है कि प्रारम्भ मे एक-दो वर्ष बच्चो को खेल-खेल में ही वस्तुओं के आकार, लबाई-चौड़ाई, वजन, ऊंचाई आदि से परिचित कराया जाय। इसी आधार पर नर्सरी स्कूलों में उस प्रकार के खेल-खिलौने दिये जाते है; बच्चा भिन्न-भिन्न प्रकार के गुटको को छूकर उन्हे ठीक खानो मे फंसाकर उनके आकार से परिचित होता है; तस्वीरों को देखकर सचित्र गुटको को जमाकर पूरी तस्वीर बनाता है; अपने शरीर के संतुलन को संभालता हुआ झूले पर पेंग बढ़ाता है; चिकने तख्ते पर से सरकता है आदि। बच्चों के स्कूलो में खेल के साधनों से युक्त 'प्ले ग्राऊंडो' (खेल के मैदानो) की आवश्यकता सभी महसूस करने लगे है।

आयु के अनुसार बच्चो को खेल खिलाने चाहिएँ। क्योकि जिस खिलौने को बच्चा ठीक से संभाल नहीं सकता, उसके साथ खेलने मे भी उसे आनन्द नहीं आता। छोटा मुन्ना एक हल्का बल्ला और रबड़ की गेद के सग ही खेलकर प्रसन्न होता है, टेनिस का बड़ा रैकट उसे आकर्षित नही करता। छोटे बच्चे अपना खेल स्वयं नहीं जमा पाते, क्योकि अपनी प्रधानता जमाने के लिए उनमे परस्पर झगड़ा हो जाता है। जो बच्चा हारता है वह या तो अपनी बारी खेलकर चला जाता है या फिर धाँधली मचाकर दूसरों का खेल बिगाड़ने की चेष्टा करता है, इसलिए बच्चो को खिलाने, तथा उनमे टीम-स्प्रीट से काम करने की भावना उत्पन्न करने के लिए आरम्भ में किसी बड़े व्यक्ति की देखभाल हो तो अच्छा है। आँख-मिचौनी, कुत्ता-बिल्ली, खो-खो, कबड्डी, काले कोटले की मार, पऊआ, सीताराम आदि खेल प्रायः सभी प्रान्त के बच्चे खेलते है। इन खेलों को खेलने के लिए कुछ विशेष सामग्री की भी आवश्यकता नहीं है। साथ ही इसमें बहुत से बच्चे मिलकर एक साथ खेल सकते है।

चार-पाँच वर्ष तक तो लड़के और लड़कियाँ एक-से ही खेल खेलती है। उसके पश्चात् लड़के दौड़-धूप के खेल यथा फुटबॉल, क्रिकेट, हॉकी, गुलामदंडा, पतंग उड़ाना, गुल्लीदंडा आदि खेलो में अधिक दिलचस्पी लेने लगते है और लड़कियों को गुड़िया खेलना, घरौंदे बनाना, गुड़िया की गृहस्थी जमाना, रसोई पकाना, कपड़े सीना झुंड बनाकर गीत गाते हुए अभिनय करना आदि अधिक भाता है। इन सभी प्रकार के खेलो में उनकी रचना और कलात्मक प्रवृत्तियों को सन्तोष मिलता है।

खेल और मानसिक प्रसन्नता—बच्चे सर्वदा प्रसन्न क्यों दिखते हैं ? कारण वे जीवन की मौज में बहते हैं, वह प्रत्येक कार्य को खेल समझकर ही करते हैं। जिस काम में खेल-खिलवाड़ नहीं उसे वे कभी भी करना पसन्द नहीं करते। आप उन्हें गेहूँ बीनने या मटर छीलने में लगा दें। चुपचाप काम करना उन्हें कभी रुचिकर नहीं होगा, परन्तु अगर आप उन्हें कहें कि 'चलो गेहूँ बीनने की प्रतियोगिता करें, अपना-अपना पार्टनर चुन लो, जिसकी ढेरी सबसे पहले बिन जायगी, वह पार्टी जीती हुई मानी जायगी।' बस आपका इतना कहना है कि बच्चे दौड़कर अपनी-अपनी पार्टी बना लेंगे और खेल शुरू हो जायगा। आप कहीं बाहर गये हैं, अगर लौटते समय सवारी न मिलने के कारण दो मील का रास्ता पाँव-पाँव करना पड़े तो यह देखकर मुन्ना-मुन्नी तो घबड़ा जायँगे। परन्तु आप के यह कहने पर कि 'चलो, पगडंडी-पगडंडी चलते हैं, रास्ते में मुन्ना-मुन्नी की दौड़ भी करवायँगे' बस बच्चे हँसते-खेलते वह मार्ग बातों-बातों में पार कर लेंगे।

बच्चों की दैनिक क्रियाओं को खेल का रूप देकर जितना ही रोचक और आकर्षक बनाया जायगा, बच्चों को अपनी दिनचर्या उतनी ही सरल और मनोरंजक प्रतीत होगी। वह प्रसन्न तथा फुर्तीले दिखेंगे। हमेशा कुछ-न-कुछ करते रहेंगे। झगड़ा करने या वस्तुओं को तोड़ने आदि के लिए उनको अवकाश ही नहीं मिलेगा। विनाशात्मक कार्यों की ओर उनका ध्यान ही नहीं जायगा। बच्चों को अनुशासन में रखने का सब से उत्तम तरीका यह है कि उनकी शक्तियों को खेल-कूद तथा रचनात्मक कार्यों में लगायँ। नकारात्मक आदेशों से बच्चों को बाँध कर आप उनकी प्रगति को रोकते हैं। एक खेल से जब वे ऊब जायँ उन्हें दूसरे खेल में लगा दें। 'आओ; भई, अब जरा सुस्ता लें, तब दौड़ेंगे; अच्छा, बैठे-बैठे कोई कहानी ही सुनाओ; आओ, एक गीत गायँ; अच्छा, अब सब जने पारी-पारी से एक-एक चुटकुला और कविता सुनाओ; चलो, अब जरा बगीचे में नई क्यारी बनायँ, कल इसमें फूलों की पौध लगायँगे, और हाँ शाम को रोज अपनी-अपनी क्यारी सींचा करेंगे, फिर इनमें फूल खिलेंगे तो बसन्त पंचमी पर सरस्वती का पूजन करेंगे'—बस आप के इस प्रकार प्रोत्साहन देने पर बच्चों का झुंड आपके बगीचे में काम करने के लिए तैयार हो जायगा। उनका तो खेल और मनोरंजन होगा, साथ में वे बागबानी में भी दिलचस्पी लेने लगेंगे, और इधर उनके सहयोग से आपका बगीचा भी लहलहाने लगेगा।

खेल द्वारा सद्गुणों का विकास—बच्चे की रुचि, चरित्र, जिम्मेदारी तथा मिल-जुलकर काम करने की भावना आदि का विकास खेल के मैदान में ही होता है। जो बच्चा खेल की ओर से उदासीन रहता है, उसमें बाल-सुलभ स्फूर्ति और चपलता का अभाव होता है। ऐसे बच्चे का मानसिक और शारीरिक स्वास्थ्य सन्तोषजनक नहीं होता। प्रत्येक माता-पिता का यह कर्तव्य है कि बच्चे को खेलने के लिए प्रोत्सा-

हित करें और खुद भी उसके खेल के साथी बनें।

कहते हैं एक बार इंग्लैंड के एक राजा अपने बच्चों के साथ खेल रहे थे। खेल मे हार जाने के कारण उन्हें बच्चो ने यह सजा दी कि वे नन्हे युवराज को पीठ पर चढ़ाकर कमरे के तीन चक्कर काटे। जब कि वे युवराज को पीठ पर चढ़ाए हुए दूसरा चक्कर काट रहे थे, कोई राजदूत वहाँ अचानक आ गया। राजा कुछ झिझके, पीठ पर चढ़े हुए युवराज ने पीठ पर थपकी मारकर कहा—"डैडी, आपको तीसरा चक्कर पूरा करना ही पड़ेगा।" राजा ने रुककर राजदूत से पूछा—"क्यों भई तुम्हारे भी बच्चे हैं?" उनके हाँ कहने पर वह बोले—"तब तुम मेरे कार्य की सराहना कर सकते हो।" यह कहकर उचकते हुए, हँसते हुए उन्होने तीसरा चक्कर भी पूरा कर दिया—तब बच्चे ताली बजा-बजाकर हँसने लगे।

बड़ो को अपने खेल मे भाग लेते देखकर बच्चो का मन बड़ा प्रसन्न होता है। अगर प्रत्येक घर और स्कूल मे बच्चों के लिए खेल की सुविधाएँ जुटाई जायें, उनके मनोरंजन के लिए साधन जुटाए जायें, तथा उन्हें खेल के लिए प्रोत्साहित किया जाय, ताकि शारीरिक और मानसिक विकास बहुत ही सुन्दर और सन्तोषजनक ढंग से उन्नति कर जाय।

अगर आप बच्चे को कोई उपदेश देना चाहते हैं, यथा—व्यवस्था-प्रियता या मेल-मिलाप से काम करना, अथवा एकाग्रता से लाभ आदि का महत्त्व समझाना चाहते हैं तो उसके लिए सब से अधिक प्रभावशाली तरीका यह है कि आप उनके खेल में शामिल हो जायें, उनके खेल को अधिक-से-अधिक मनोरंजक और सफल बनायें, बस वे आप का नायकत्व अवश्य स्वीकार कर लेगे, अब उन्हें संगठित करना, अनुशासन में रखना, एकाग्रता का पाठ पढ़ाना आपके लिए बहुत सरल होगा।

आखिरकार बच्चे बड़ों से क्यों इतना कतराते हैं? कारण वे उनके समतल पर उतरकर—बच्चे के सदृश्य खिलाड़ी बनकर उनसे हेल-मेल नहीं बटाते। आप अपने बचपन की कोई ऐसी घटना याद करें, जब कि आपके माता-पिता ने आप को कोई बात बहुत सरलता से और प्रभावशाली ढंग से सिखाई हो, जो कि आप के मस्तिष्क में कोई सुखद स्मृति छोड़ गई है, तो इस घटना का सम्बन्ध अवश्य ही किसी खेल-खिलवाड़ या मनोरंजक कथा-कहानी से होगा। 'जब हम छोटे थे तो पिता जी हमारे संग गुल्ली-डंडा खेलते थे;' 'बसंत पंचमी पर बड़े उत्साह से वे हमारी पतंग चढ़ा देते थे;' 'मेरी माता जी ने मेरी गुड़िया के ब्याह पर खूब बड़ी दावत दी थी और बुआ जी ने सुहाग और बनड़े गाये थे।' बचपन की यह सुखद स्मृतियाँ आप के लिए अभी भी आनन्दप्रद हैं। प्रत्येक बच्चे के लिए खेल में माता-पिता का सहयोग बहुत महत्त्व रखता है। आपकी प्रशंसा प्राप्त करने के लिए वे उपयोगी खेल खेलेंगे,

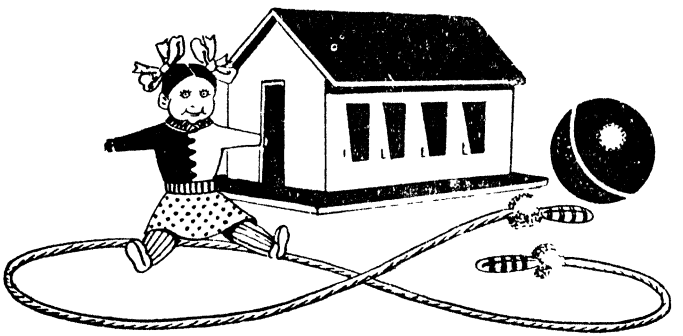
खेल में तरक्की करेंगे, साथ ही अपना कौशल दिखाकर खुद भी प्रसन्न होंगे और आपको भी प्रसन्न करेंगे।

आप यह न सोचें कि बच्चों के संग बच्चा बनकर खेलना क्या बड़ों को शोभा देता है। बच्चों के खेल मे सहयोग देने से न केवल बच्चे को ही परन्तु आप को भी लाभ होगा। आप की सारी थकावट दूर हो जायगी। आप के मानसिक स्वास्थ पर भी इसका बहुत सुन्दर प्रभाव पड़ेगा। परन्तु जब आप बच्चों के सँग खेलें उन पर अपने बड़प्पन की धौंस न जमाये आपको भी बच्चों के स्तर पर उतर कर उनके सँग उसी प्रकार चोंचलें करने होंगे जैसे कि पशुपक्षी अपने बच्चों के सँग करते है। तभी खेल का रंग जम सकता है।

बीसवाँ अध्याय

मुन्ना के खेल-खिलौने

खेल और विकास—खेल-खिलौने बच्चो के जीवन का एक आवश्यक तथा विशेष अंग है। बड़ो की दृष्टि मे बच्चो का खेल केवल एक खिलवाड़ दीखता है, परन्तु वास्तव मे इसी खेल और खिलौने के द्वारा बच्चे की स्पर्श-शक्ति, रंग-रूप परखने की सामर्थ्य, स्मरण-शक्ति, रचना-प्रवृत्ति आदि का विकास होता है। यह कहना अत्युक्ति न होगा कि बचपन का यह खेल ही उनका कार्य है और ये खिलौने उस कार्य के साधन है।



माँ को बुनने देख छोटी मुन्नी झाड़ू की दो सींक लेकर उस पर मोटी सुतली या पुरानी ऊन लेकर लपेटती है या साईकिल की पुरानी तीली लेकर वह तकली कातने का अभिनय करती है। उसकी जल्दी-जल्दी चलती हुई सलाइयों को देख आप हँसें नहीं, उसका यही खेल भविष्य में उसकी बुनाई और कताई में प्रगति का द्योतक है। इसी प्रकार मुन्ना एक टूटे हुए तख्ते पर बैठकर उसमें कील ठोक-ठोककर एक बढ़ई का खेल खेलता है। कौन जानता है कि आज का उसका यह खेल आने वाले युग के एक निपुण इंजीनियर के कार्यों का आरम्भ है।

प्रायः देखने में आता है कि डॉक्टर के बच्चे, नर्स और डॉक्टर का और अध्यापक तथा व्याख्यानदाता के बच्चे एक टीचर और उपदेशक का तथा फ़ौजी अफ़सर के बच्चे अपने दल के मुखिया का अभिनय करते है। वे खेल-खेल में अपनी छुपी हुई प्रवृत्तियों को प्रगट करने की चेष्टा करते है। इन संस्कारों में उनके भविष्य की झाँकी दिखती है। चतुर माता-पिता अपने बच्चे के मनोभावों तथा रुचि का अध्ययन कर,

उन्हें इस प्रकार के खेल-खिलौने ला कर दें, जिनसे उनके ये संस्कार प्रबल होते जायँ और आयु के साथ-ही-साथ उनके चरित्र का विकास सही तरीके से होने का प्रोत्साहन मिले। आप बच्चों के खेल को समय की बर्बादी न समझें। उल्टा इस बात का प्रयत्न करें कि खेल-खेल मे ही वे सब सीखे। आजकल शिक्षा को सरल और मनोरंजन बनाने की चेष्टा की जा रही है। भूगोल और इतिहास, या नेचर स्टेडी इन विषयों का किताबी ज्ञान न देकर विद्यार्थियो को इन स्थानों को दिखाने ले जाना, इन विषयों की कहानी सुनाना या अभिनय करना आदि शिक्षण का अधिक सुन्दर और मनोरंजक ढंग है। पढ़ाई-की-पढ़ाई और खेल-का-खेल।

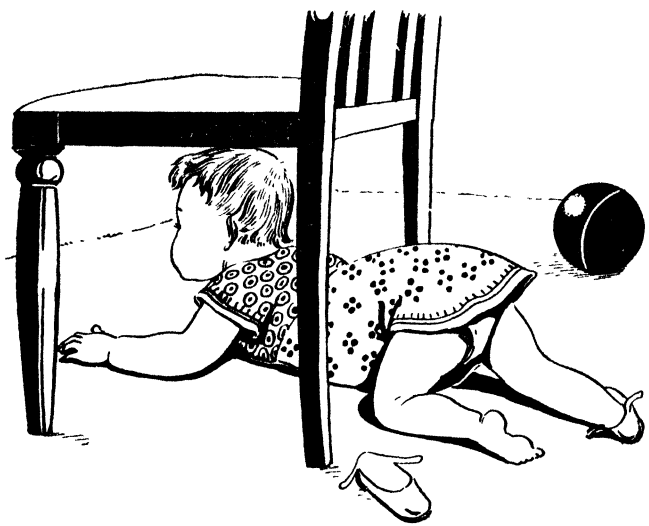
जब बड़ों के लिए खेल और मनोरंजन आवश्यक है तो फिर बच्चों का तो यह जीवन तथा ध्येय ही है। इस खेल को सफल बनाने के लिए खिलौनों की आवश्यकता है। आदिकाल से खिलौनों का उल्लेख मिलता है। प्रत्येक गृहस्थ अपनी आर्थिक स्थिति के अनुसार अपने बच्चे के लिए खिलौने खरीदता है। परन्तु हर सूरत मे बच्चे की आयु के अनुसार उसकी रुचि का ध्यान रखकर खिलौने खरीदने ठीक होंगे, तभी इन खिलौनों की उपयोगिता प्रमाणित हो सकती है। एक साल भर के बच्चे के लिए यदि लकड़ी का बड़ा घोड़ा या पैडल से चलने वाली मोटर लाकर दे दें तो उन के प्रति उसे कुछ आकर्षण नहीं होगा। भले ही चाहे आप उसे घोड़े पर या मोटर पर चढ़ा-कर स्वयं झुला दें या घुमायँ, पर हर समय उसे अपने गिरने की संभावना बनी रहेगी और वह थोड़ी सी देर में ही ऊबकर, रोने लगेगा।

खिलौने ऐसे हों कि उनके जरिये बच्चा धीरे-धीरे परिवार मे, तत्पश्चात् संगी-साथियों में, बाद मे स्कूल में और शनैः-शनैः संसार में घुल-मिल जाय।

(१) बच्चा खिलौनो के प्रति धीरे-धीरे आकृष्ट होता है। जन्म के कुछ दिन बाद बच्चे की दृष्टि स्थिर होने लगती है। आरम्भ में केवल लाल अथवा गहरे पीले रंग की ओर उसकी दृष्टि आकृष्ट होती है। किसी वस्तु का स्पर्श अनुभव करने के लिए वह उसे अपने मुँह मे ठूँसता है, क्योंकि उसकी जिह्वा हाथों से अधिक जल्दी अनुभव करने की शक्ति रखती है। आरंभ में बच्चे के पालने मे लाल या पीले रंग का गुब्बारा या चिड़ियों का झब्बा ही सबसे अधिक सुन्दर और उपयुक्त खिलौना है। छोटा मुन्ना पालने में पड़ा हुआ उस हिलते हुए गुब्बारे या झब्बे को देखकर खुश होता है, किलकारियाँ मारता है। जब वह तीन-चार महीने का होता है, अपनी मुट्ठी में उसे कुछ थामना आ जाता है। ऐसी अवस्था में उसे ऐसे खिलौने देने चाहिएँ जो हल्के तथा गोल हों। वह उन्हें लेकर मुँह मे ठूँसेगा, अतएव कच्चे रंग के, या गंधक के बने हुए रबड़ के खिलौने न दें। और इस बात का भी विशेष ध्यान रखें कि खिलौने में कोई ऐसा हिस्सा न हो जो दबाने या मुँह में लेने से उसके गले में फंस जाय।

आजकल ५-६ आने में प्लास्टिक के झुनझुने या रंग-बिरंगी गेंद अथवा गोल-गोल गुड्डे मिलते हैं, जो कि सात-आठ महीने के लिए बहुत ही उपयुक्त खिलौने हैं। यह धुल भी सकते हैं और हल्के होते हैं।

(२) साल भर का मुन्ना पकड़-पकड़कर चलना सीख जाता है। इस अवस्था में तीन पहियों का गड़ूरना पाकर वह बहुत प्रसन्न होगा। क्योंकि अब उसे चलने का चाव है, अतएव बैठकर खेलने के बदले वह घूम-फिरकर खेलना अधिक पसन्द करता है। जिससे उसका व्यायाम और खेल दोनो हों, उस प्रकार के खिलौने उसे दें। मुन्ने के गड़ूरने में कोई नोकदार हिस्सा न निकला हो, उसके डंडे सभी गोल हों, साथ ही अगर उनमे घुँघरू हों तो गड़ूरना चलाते समय घुँघरू की मधुर-मधुर आवाज से मुन्ने का मनोरंजन भी होगा और वह किलकारियाँ भरता हुआ, गड़ूरने के सहारे चलना झट सीख जायगा। इस आयु मे मुन्ने के मिज़ाज मे जरा उतावलापन भी आ जाता है। उसे अपने भुजबल पर भी अभिमान हो जाता है। खेलते-खेलते वह अचानक



खिलौनों को उठाकर पटकना शुरू कर देता है। अतएव मुन्ना के खिलौने मजबूत, हल्के तथा सहज ही पकड़ में आने वाले हों। रबड़ के हल्के फुटबाल, गोल रिंग, कपड़े के बने गुड्डे-गुड़िया, भालू बंदर आदि उपयुक्त खिलौने हैं।

खिलौने और बच्चों को पसंद—छोटे बच्चों को भयंकर आकृति के खिलौने न दें कारण वे डर जाते हैं। जो खिलौना उनकी आँखों को न भाए उससे वह कभी

प्रसन्नता से नहीं खेलेंगे। एक बार एक तीन वर्ष की बच्ची के जन्म-दिवस पर एक स्त्री काले मुँह वाला बंदर ले आई। बच्ची ने खिलौना बड़े चाव से हाथ में पकड़ लिया, पर जब अचानक उसकी दृष्टि उसके काले मुँह और चमकती हुई आँखों पर पड़ी उसने 'को को ! को को !' कहकर बन्दर को धरती पर पटक दिया। जब उसे वह बन्दर दोबारा थमाने की चेष्टा की गई, तो वह चिल्लाती हुई अपनी माताजी के पीछे छुप गई। उस खिलौने के बदले में उसने सस्ते दामों वाली, छींट की फ्रॉक पहने हुए, एक गुड़िया को अधिक पसंद किया।

इससे यह स्पष्ट होता कि खिलौने के विषय में बच्चों की अपनी-अपनी रुचि है। खिलौने खरीदते समय उस की रुचि का ध्यान अवश्य रखना चाहिए। दो वर्ष से चार वर्ष तक की आयु के बच्चे ऐसे खिलौने अधिक पसन्द करते हैं जिन्हें वे साथ-साथ घसीट सकें। लकड़ी की गोड़ी, मोटर एंजिन आदि में एक डोरी बांधकर खींचना उन्हें बहुत अच्छा लगता है। आप एक हल्के डिब्बे में एक डोरी बांध दें और उसमें गुड़िया बिठा दें, बस बच्चे की कल्पना गुड़िया की उस सवारी के साथ उड़ती चली जायगी।

तीन पहियों की साइकिल सभी बच्चे पसन्द करते हैं। इसे चलाने में उन्हें एक बड़प्पन का अनुभव होता है। वे साइकिल पर बैठकर घंटी बजाते हुए पिताजी के सदृश्य आफिस जाने का खेल खेलते हैं। साइकिल पर चढ़कर बाग-बगीचे तथा आँगन या बरामदे में घूमना उन्हें घंटा आध घंटा तक व्यस्त रखता है। एक साइकिल से तीन-चार बच्चे मिलकर बारी-बारी से खेल खेल सकते हैं। इसी खेल में सड़क के नियम भी उन्हें समझाए जा सकते हैं। वे अपने साइकिल को साफ करना, उसे ठीक तरह रखना आदि भी सीख जाते हैं। उन्हें साइकिल पर बैठकर हैंडिल घुमाना, मोड़ना, घुमाकर निकल जाना भी सहज ही आ जाता है।

इस उम्र में लड़की-लड़के दोनों के लिए गुड़िया का खेल खेलना लाभदायक है। अगर अपनी माँ को देखकर एक गृहिणी का पार्ट अदा करने मे मुन्नी मे मातृत्व का स्वस्थ विकास होता है, तो कोई कारण नहीं कि मुन्ना भी हँसी-खेल मे स्वस्थ पितृत्व का विकास नहीं कर पायगा। इन गुड्डे-गुड़ियों को लेकर अनेक खेल खेले जा सकते हैं। घरौंदे बनाना, स्कूल लगाना, भोजन पकाना, गुड़िया का सारा संसार चलाना, प्रीतिभोज का आयोजन, नर्स और डॉक्टर का अभिनय आदि। सभी देश के बच्चे प्रायः इन खेलों को खेलते हैं।

आप कुछ बच्चों को खेलते देखें, तो आपको पता लगेगा कि एक दो वर्ष के आयु के बच्चे स्वयं में लीन होकर खेलते हैं। जब कि तीन वर्ष से बड़ी आयु के बच्चे परस्पर मिलकर खेलते हैं। उन्हें खेल के साथी चाहिएँ। एक दूसरे की हार-जीत

में उन्हें विशेष आनन्द आता है । इस आयु में बच्चों में प्रतिस्पर्द्धा की भावना आ जाती है ।

रचनात्मक खेल—वे रचनात्मक खेलों में विशेष रुचि लेने लगते हैं । बाग-बानी, घर की झाड़-पोंछ, छोटी-सी थाली लेकर दाल-चावल बीनना, डिब्बे में कुछ चीज़ भरकर रखना, चलनी से आटा नहीं तो रेत ही छानना, माला गूँथना, मोती पिरोना, कागज़ के घर बनाना, गुड़िया का घर सजाना आदि खेल उनको विशेष प्रिय हैं । अतएव उनको इन खेलों के उपयुक्त खिलौने लाकर देने चाहिएँ । पानी देने के लिए छोटा झारा, कुन्द खुर्पी, गुड़िया की रसोई के छोटे-छोटे बर्तन, कुन्द सुई, बड़े-बड़े मोती, रंगदार धागे, कार्ड बोर्ड आदि वस्तुएं इन खेलों के लिए ठीक होंगी । बगीचे के



कोने में या आँगन में बच्चों के लिए मिट्टी का ढेर और पानी आदि रखना चाहिए ताकि वे मिट्टी के घरौंदे बनायें और अपनी-अपनी क्यारी में पानी दे सकें । खराब होने के डर से बच्चों को पानी-मिट्टी से खेलने से रोकना भूल है ।

लकड़ी के गुटके, ताश, तसवीरें, स्नेक एंड लैडर आदि से खेलना भी उन्हें झट समझ में आ जाता है । रंग पहिचानना, मोतियों को गिनना, गुटकों के आकार पहिचानना और उन्हें सही खाँचे में फंसाना, तसवीरें रंगना—इस प्रकार के खेल मनोरंजन के अतिरिक्त बच्चे की बुद्धि विकास में भी सहयोग देते हैं । किंडरगार्टन स्कूलों में बच्चों को इसी प्रकार के खिलौनों से खेल-खेल में दो वर्ष तक शिक्षण दिया जाता है। इन दो वर्षों में कागज़ के कई खिलौने बनाने, फ्रेम सजाने, तसवीरें काटकर एल्बम

सजाना, तसवीरें रंगना, संगीत की ताल पर ड्रिल करना, अपने जूतों के फीते बाँधना, कोट अथवा फ्रॉक के बटन खोलना और बंद करना, कंघी करना, बिछौना लगाना, अपनी मेज सजाना आदि रचनात्मक कार्य वे खेल-खेल में सीख जाते हैं।

एक मनोवैज्ञानिक का सुझाव है कि बच्चों को कल-पुर्जेवाले मोटरगाड़ी आदि देने से, यह अधिक अच्छा होगा कि उन्हें मैकानो अथवा अन्य ऐसी वस्तुएं दी जायँ जिनसे वे स्वयं खिलौनों का निर्माण कर सकें। दो-चार पहिये, एक लकड़ी का डिब्बा, कुछ कीलें तथा रंग देकर उन्हें गाड़ी बनाना सिखायँ। चिकनी मिट्टी से सरल खिलौने बनाकर, तत्पश्चात् उन्हें रंगने में बच्चों को बड़ा आनन्द आता है। फटे हुए साफ चिथड़ों से गुड़िया बनाना, बची हुई रेशमी कतरन से गुड़िया के कपड़े सींना, मोती के जेवरों से उसे सजाना आदि खेल लड़कियों को विशेष प्रिय है।

बच्चे स्वयं खिलौने बनायँ—सात-आठ वर्ष की आयु के बच्चों को जब स्वयं खिलौने बनाने का शौक पैदा हो जाय, तब उनके लिए खिलौने खरीदने में व्यर्थ पैसा न खर्चें। उन्हें स्वयं खिलौने बनाने की शिक्षा दें, उनकी रुचि और योग्यता देखकर उन्हें प्रोत्साहन दें। अड़ौस-पड़ौस में स्वनिर्मित खिलौनों की प्रतियोगिता करने से बच्चे शीघ्र ही इस विषय में उन्नति कर जायँगे। इससे दो लाभ होंगे। पैसे की बचत तथा बच्चे की निर्माण-शक्ति की उन्नति। बच्चों को परस्पर एक दूसरे के जन्म-दिवस पर या तीज-त्योहारों पर इन खिलौनों का आदान-प्रदान करना सिखायँ। टूटे हुए खिलौनों की मरम्मत करना तथा नये खिलौनों को अधिक सुन्दर बनाना और संभाल-कर रखना भी बच्चों को सिखाया जाय। यह तभी संभव हो सकता है, जब हम अपने मुन्ना-मुन्नी के साथ खेल में भाग लें। उनके खिलौनों की दुनिया में दिलचस्पी दिखावें। इन्हीं खेल-खिलौनों के जरिये उन्हें सब प्रकार की शिक्षा दी जा सकती है। खिलौने खरीदने के लिए धन-संचय की वृत्ति भी उनमें जाग जायगी।

जो बच्चे अपने खिलौने संभालकर रखते हैं वे उनको उठाने-धरने में इस बात का ख्याल रखते हैं कि हमारी कठोरता से उन्हें चोट न लगने पावे। वे अपने संगी-साथियों के प्रति भी अधिक शिष्ट और कोमल होते हैं। खिलौने बच्चों के साथी हैं, उनके प्रति ममता, दया और सावधानी की भावना बच्चे में कोमल वृत्तियों का विकास करती है। मुन्नी की गुड़िया उसके लिए केवल लत्ते की बनी हुई निर्जीव वस्तु नहीं है वह उसे अपने पर निर्भर एक सजीव वस्तु समझकर उसकी संभाल करती है।

बच्चों को खेल में नवीनता प्रिय है। एक साथ उन्हें बहुत से खिलौने न दें। एक खिलौने से खेलकर कुछ दिन बाद जब उनका मन भर जाय, आप उस खिलौने को उठाकर रख दें। उसके स्थान पर घर की और कोई बेकार वस्तुएं यथा—पुरानी टोपी, डिब्बे, जूते, पुरानी ओढ़नी, साड़ी, बैग, शीशा, कंघी आदि दें। कुछ रंगदार कागज भी

उन्हें सजाने को दें। आप देखें कि इन्हीं चीजों से वह 'फैन्सी ड्रेस' का आयोजन कर लेंगे। एक तख्तपोश पर पुरानी दरी बिछाकर, रंगमंच का काम लेंगे और अभिनय शुरू हो जायगा। आपके अनुभवी सुझाव उनके खेलों मे नवीनता ला देंगे।



बच्चों को सर्वदा खेल में व्यस्त रखें, फिर देखिए वे कितने प्रसन्न, आज्ञाकारी तथा स्वस्थ दिखते हैं। निठल्ला बच्चा ही ऊबकर माँ-बाप को परेशान करता है

बड़ों के कामों में दखल देता है और रो-रोकर अपना महत्त्व प्रगट करना चाहता है।

कागज़, लकड़ी, कांच, पत्थर, हाथीदाँत, मिट्टी, चीनी मिट्टी, भूसा, प्लास्टिक, अबरक, रबड़, कपड़ा आदि अनेक वस्तुओं के खिलौने बनते हैं। यहाँ तक कि खाँड और अनाज के खिलौने भी बिकते हैं। जिस चीज़ से खेला जा सके, मन बहलाव तथा मनोरंजन हो सके वे सभी बच्चे के लिए खिलौना ही हैं। इस व्यापक दृष्टि से पालतू जानवर तथा बिल्ली, कुत्ता, चिड़िया, तोता-मैना, मुर्गी आदि पक्षी भी खिलौने ही हैं। इन सजीव खिलौनों से भी बच्चों को मन बहलाव की सामग्री मिलती है। अपने इन पालतू पशु-पक्षी पर अपनी ममता और प्रभुत्व दिखाकर उन्हें एक विशेष प्रकार की आत्म-सन्तुष्टि होती है। अपने पर निर्भर जीव की देख-भाल तथा शिक्षण का उत्तर-दायित्व उन्हें कर्तव्य निभाने की प्रेरणा देता है। अतएव बड़े बच्चों के लिए इस प्रकार के खिलौनो की भी आवश्यकता है।

बच्चे की पसंद का ध्यान रखें—खिलौने तो अनेक हैं पर आवश्यकता इस बात की है कि खिलौनों के चुनाव में अभिभावक गलती न करें। अपनी पसन्द को बच्चों पर न लादें। बल्कि बच्चे की आयु, पसन्द तथा खिलौने की उपयोगिता को देखकर उनका चुनाव करें। इस विषय में अध्ययन की आवश्यकता है। आपकी भूल बच्चे के दुराग्रह का कारण बन सकती है। वह वर्जित खिलौने को प्राप्त करने की चेष्टा करेगा और संभव है कि इसमें उसे चोट लगे तथा हुक्म-उदूली की आदत पड़ जाय।

आप अपने बच्चों को ऐसी आदत न पड़ने दें कि जब भी आप परदेश से आवें तो वे आपसे या अन्य सम्बन्धियों से यह उम्मीद करें कि हमारे लिए क्या लाये हैं? या माँ-बाप, काका-मामा, मौसी जी कोई भी शापिंग के लिए गये हैं, हमारे लिए कौनसा खिलौना लाये हैं? बच्चे को खिलौनों का लोभी न बनायँ, नहीं तो वह स्वार्थी हो जायगा। उसे अपने खिलौने दूसरों को उपहार मे देना भी सिखायें। अपने छोटे बहन-भाई के जन्मदिन पर वह क्या भेंट देगा या अपने मित्र को अपने खिलौनों में से वह क्या देगा? इसकी शिक्षा भी उसे मिलनी चाहिए। बच्चों को निम्नलिखित बातें सिखानी उचित होंगी।

(१) खेलने के पश्चात् खिलौनों को यथास्थान रखना।

(२) अपने संगी-साथियों के संग हिल-मिलकर खेलना।

(३) किसी दूसरे के घर जाकर उसके खिलौनों से खेलकर वहीं छोड़ देना। उनको हथियाने की चेष्टा नहीं करना।

(४) जब अपने लिए खिलौने खरीदें एक-आध खिलौना अपने मित्र के लिए भी खरीदना।

(५) सब खिलौने एक साथ ही नहीं निकालने । कुछ खिलौनों को विशेष अवसरों पर खेलने के लिए सुरक्षित रख देना ।

(६) घर में जितने खिलौने आयँ, सब पर अपना ही अधिकार नहीं समझना ।

(७) टूटे-फूटे खिलौनों को सुधारना और स्वयं कुछ खिलौने बनाना ।

(८) सस्ते, हल्के और शीघ्र टूट जाने वाले खिलौने के बदले अच्छे, टिकाऊ तथा उपयोगी खिलौनों को पसन्द करना, ताकि उनके खिलौनों का संग्रह सुन्दर और ठीक हो और ऐसे चुने हुए खिलौनों की संभाल वह अच्छी तरह करें ।

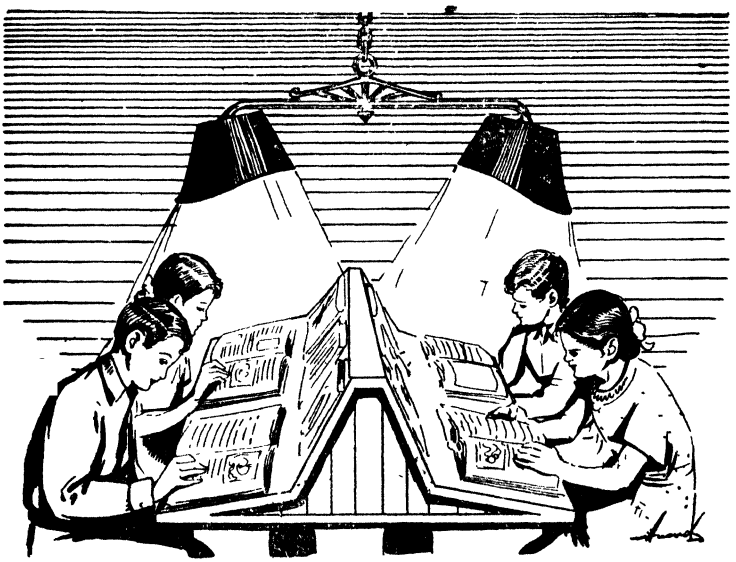
इस विषय में आपका सहयोग बच्चे को खिलौने के चुनाव और उनकी संभाल में बहुत लाभदायक प्रमाणित होगा । खिलौने उसकी शिक्षा के प्रथम साधन हैं । बड़े यह समझने की भूल करते हैं कि शायद कीमती खिलौने से बच्चे का अधिक मनोरंजन होता है । पर बच्चा सस्ते और कीमती खिलौनों के भेद को नहीं समझता, उसके लिए तो वही खिलौना सबसे अच्छा है जिससे उसका मनोरंजन हो । आप एक कागज़ का हवाई जहाज़ बनाकर उसे उड़ाना बच्चे को सिखायँ । फिर आप देखेंगे कि वह अपनी कीमती मोटर एक ओर पटककर अपने साथियों के साथ कागज़ के हवाई जहाज़ को उड़ाने की प्रतियोगिता मे भाग लेने में उसका अधिक मनोरंजन होगा ।

अगर आपने आरम्भ में खेल-खिलौनो द्वारा ही अपने मुन्ने की रुचि तथा झुकाव का अध्ययन कर लिया है तो आगे जाकर आपको उसकी छुटी हुई प्रवृत्तियों तथा संस्कार को सही सहज रास्ते की ओर मोड़ने में बहुत कुछ सुविधा होगी । आप उसकी योग्यता के सच्चे पारखी होंगे । बड़ा होकर मुन्ना चाहे स्वयं को समझने में गलती कर जाय, पर आपके लिए वह हमेशा एक उलझी हुई पहेली रहेगा ।

इक्कीसवाँ अध्याय

पढ़ाई के प्रति रुचि जाग्रत करनी चाहिए

एक अनुभवी शिक्षक का कहना है कि हम लोग अपने बालकों की शिक्षा के सम्बन्ध मे भी उदासीन हो गये है। माता-पिता को समय ही नहीं मिलता (अथवा ऐसा समझते है) कि बालकों की शिक्षा तथा उनके आचार-विचार के विकास की ओर समुचित ध्यान दें। वे चाहते है कि बालक को पाठशाला में भर्ती करा दे और आगे का सब काम गुरू ही कर ले, पर आज के गुरू को कोई परवा ही नहीं। यह एक कारण है, जिससे बालकों की शिक्षा दूषित होती है।



आप पिकनिक के लिए जाते है, वहाँ झाड़ू देकर जमीन भी साफ करते है, लकड़ियां बीनकर आग जलाना भी आप महसूस नहीं करते, बर्तन साफ करना, चाय आदि बनाना या पत्तों पर खाना भी आप को नागवार नहीं गुजरता, पर अगर यही सब काम आपको घर पर किसी दिन करना पड़ जाय, तो कम-से-कम पुरुष तो जरूर कह देंगे कि यह क्या हमारा काम है ? परन्तु पिकनिक में उन्हीं सब कामों में आपको

दिलचस्पी होने के कारण एक प्रकार का खूब आनन्द ही आता है, और घर आकर आप यही कहेंगे—आज खुद पकाकर खाना खाया, बड़ा मनोरंजन रहा।

जब तक बच्चे मे किसी काम के लिए रुचि अर्थात् शौक न पैदा हों जाय उसके ऊपर वह काम कभी न लादे। किसी काम मे रुचि जाग्रत करना ही शिक्षक का प्रथम कर्तव्य है। बच्चों के झुकाव तथा योग्यता को समझकर उसी के अनुसार शिक्षक को सुविधाजनक तरीका पकड़ना चाहिए।

जिस प्रकार मकान की इमारत का ख्याल रखकर हम नींव डालते है, उसी प्रकार बच्चे की समझ तथा पढने की कठिनाई को समझकर हमें पहले उस ओर बच्चे की दिलचस्पी पैदा करनी आवश्यक है। बहुत से माता-पिता की यह शिकायत होती है कि बच्चा खुद नहीं पढ़ता, उसको एक साल स्कूल जाते हो गया पर वह कुछ नहीं सीखा है। घर पर भी मार-मारकर पढ़ाना पड़ता है। अब भला बताइये जिस काम के कारण शुरू मे ही बच्चे का खेलना बंद हो जाय, तीन घंटे क्लास में बंधकर बैठना पड़े, पढ़ाई कुछ समझ में न आने पर मास्टर से तथा घर पर मार-पीट अलग सहनी पड़े, उस काम में बच्चे की दिलचस्पी कैसे हो सकती है? वह तो मास्टर को हऊआ तथा पढ़ाई को एक मुसीबत समझेंगे। जहाँ भी पढ़ाई के विषय में बच्चे का आरम्भिक अनुभव बुरा हुआ, बड़ा होने तक दूर नहीं होता। यही कारण है कि मेधावी बच्चों में भी दिलचस्पी की कमी बनी रहने से वह जितना अच्छा चाहिए, उतना अच्छा नतीजा नहीं दिखा पाते।

इस से यह साबित होता है कि एक ही काम भिन्न-भिन्न स्थिति तथा तरीके से दिलचस्प भी हो सकता है और नागवार भी। बच्चों के विषय में भी यही बात है कि उनको आप जब कोई काम सिखायें तो उसके प्रति बच्चो की उत्सुकता तथा शौक बनाये रखें, फिर आप देखें कि बच्चे अपना खाना-पीना भूलकर किस प्रकार ध्यान से आपकी बात सुनते है।

असल में माता ही बच्चों की सर्वप्रथम गुरू है। पाँच वर्ष तक की उमर में बच्चा योग्य माँ से इतना कुछ सीख सकता है, जितना चार साल आगे स्कूल में नहीं सीख सकेगा। कहानी-किस्से के रूप में ही बच्चा माँ से इतिहास, भूगोल, धार्मिक कथाएं, विज्ञान, स्वास्थ्य-रक्षा, हाईजिन, कविता, कहानियाँ, चुटकुले आदि की शिक्षा प्राप्त कर सकता है। बच्चे कहानी सुनने के बड़े शौकीन होते है। कहानियों के द्वारा ही बच्चों के चरित्र का निर्माण हो सकता है। घर में जब बच्चे की स्मरण-शक्ति का इन कहानियों के द्वारा विकास हो जायगा, और वह बड़ा होकर उन्हीं बातों की चर्चा इतिहास, भूगोल, विज्ञान आदि की पुस्तकों में पढ़ेगा, तब उस विषय के अपने बाल्यकाल के ज्ञान को वह उसी कड़ी में जोड़ देगा। इस प्रकार उस अवस्था में शिक्षण की जो

पहली कड़ी तैयार हुई होगी, आगे का ज्ञान उसी के साथ शृंखलाबद्ध होता जायगा। पहली मजबूत नींव पर ही आगे की इमारत सहज ही खड़ी कर दी जायगी।

बच्चों को स्कूल तभी भेजना चाहिए जब अपने संगी-साथियों, बड़े भाई-को स्कूल जाते देख, वहाँ की मनोरंजक घटनाएँ, खेल-तमाशे आदि के विषय में सुन, उनके दिल मे भी स्कूल जाने की लालसा जाग्रत हो जाय। आप भी बच्चे के दिल में इस लालसा को जाग्रत करने मे मदद दे। यह कहने से कि 'वाह मुन्ना अब बड़ा हो गया है, अब तो वह भी शान से बस्ता दबाकर स्कूल जाया करेगा। वह भी अपने बड़े भय्या की तरह इनाम जीतेगा। अपनी क्लास मे फर्स्ट रहेगा। मुन्ना ने जो कहानियाँ और कविताएँ याद की है, उन्हें जब वह अपने टीचर को सुनायगा, वह कितने खुश होंगे। सालाना जलसे पर उसे कविता सुनाने का मौका दिया जायगा, क्योंकि मुन्ना कविता कहने मे जरा भी नहीं शरमाता। देखना तो सही जब हमारा मुन्ना स्कूल जायगा उसकी कितनी शान रहेगी।' इस प्रकार के वाक्यों से मुन्ना की आँखों में एक खुशी की तथा उत्साह की चमक आ जायगी। वह खुद ही स्कूल जाने के लिए उतावला रहेगा। अपना नया बस्ता, नई आकर्षक तसवीरों वाली पुस्तक, टिफिन ले जाने के लिए नया डिब्बा, छोटी गिलासी ये सभी चीजें उसमे एक बडप्पन और विशेषता का अनुभव पैदा करेगी।

उपयुक्त उपकरणों से लाभ—अच्छा हो कि आरम्भ में बच्चे को ऐसे स्कूलों में भेजा जाय जहाँ मौंटेसरी अथवा किंडरगार्टन प्रणाली पर शिक्षा दी जाती हो। इन स्कूलों मे केवल किताबें और स्लेटों के द्वारा ही बच्चे को नहीं पढ़ाते। वर्णमाला का परिचय किंडरगार्टन के बक्सों के द्वारा दिया जाता है जिनमे वर्ण के आकार के भिन्न-भिन्न टुकड़े होते है। उन पर नंबर लिखे रहते है, प्रत्येक बच्चे को एक-एक बक्स दे दिया जाता है। एक बक्स अध्यापिका के पास होता है। बच्चे चार-चार के ग्रुप में छोटी नीची टेबिलों के आस-पास अपनी-अपनी कुर्सियों पर बैठ जाते है और अध्यापिका जिन-जिन टुकड़ों को जिस प्रकार से सजाती है, उसी प्रकार से सजाकर वे भी वर्णों की आकृति बनाते है, जिस ग्रुप के बच्चे सब से पहले दिये हुए शब्द बना लेते है वही ग्रुप जीत जाता है। इसी प्रकार से गिनती सिखाने के लिए दस रंग की लकड़ी की रंग-बिरंगी गेंदें होती है, उन पर संख्या लिखी होती है। गेंदें लुढ़का-लुढ़काकर खेलने में ही बच्चे दस तक गिनती सीख जाते है। तत्पश्चात् उन्हें तार में पिरोये हुए मनकों पर सौ तक गिनना झट आ जाता है। गोल-गोल रंगदार पहियों की छोटी-बड़ी ढेरी लगा कर भी गिनना, जोड़ना, घटाना बच्चे आसानी से कर लेते है। इसी प्रकार उन्हें लोग, चौखूंटा, तिकोना आदि आकार का ज्ञान कराने के लिए एक लकड़ी के बोर्ड में खाँचे बने होते है। वे गुटकों के ढेर में से खाँचे के आकार के गुटके छाँट-छाँटकर उन खाँचों

में फिट करते है, इस प्रकार से उन खांचों के आकार और नाप से वे सहज में ही परिचित हो जाते है।

रंगों का ज्ञान करवाने के लिए भिन्न-भिन्न रंगों के हल्के गहरे शेड के गुटके बच्चों को दिये जाते है। उनको बच्चे तुलना करके क्रम से सजाते है और बच्चों को रंगों की किस्म तथा हल्के-गहरे शेडों का ज्ञान खेल-खेल मे ही हो जाता है।

नर्सरी स्कूल के कुछ खेल—अपने हाथो को स्थिर रखने का अभ्यास बच्चे एक बर्तन से दूसरे में पानी भर के करते है, जो इस प्रकार करने मे सबसे कम पानी गिराये वह जीत जाता है। २. चम्मच मे आलू रखकर दौड़ना भी एक खेल है जिसमें हाथ की स्थिरता रखनी आवश्यक है। ३. रंग-बिरगे कागजों से नाव, बटुआ, गुब्बारा, टोप आदि बनाना तथा कागज़ के अन्य खिलौने बनाने सिखाना भी शिक्षा का एक अंग है। ४. पिक्चर एलबम बनाने में भी बच्चे बहुत दिलचस्पी लेते है। इस प्रकार से उन्हें इतिहास तथा नामी लीडरों तथा इमारतों आदि का परिचय दिया जा सकता है। ५. बच्चों की याददाश्त तेज करने के लिए भी कई एक खेल है। जैसे सबको बिठा कर पन्द्रह व्यक्तियों के नाम सुनाये अथवा एक जगह बीस चीजें रखकर ढक दीं। बारी-बारी से प्रत्येक बच्चे को बुलाकर उन चीजों को उन्हे कुछ सेकिंड देखने का मौका दिया, तत्पश्चात् उन्हे उन लोगों के नाम अथवा चीजो की सूची बताने या लिखने को कहा। जो सब से अधिक बता दे या लिख दे वह जीता। ६. बच्चों की श्रवण शक्ति को तेज करने के लिए एक खेल इस प्रकार खेला जा सकता है कि पर्दे की ओट में भिन्न-भिन्न धातु के बर्तनों पर बारी-बारी से चोट मारकर उनसे उत्पन्न ध्वनि से परिचित करवाना। बाद मे जब बच्चे स्वर से परिचित हो जायँ तो उनसे ध्वनि को पहिचानने को कहना। इस खेल का हारमोनियम तथा अन्य वाद्यों पर भी अभ्यास करवाया जा सकता है। इस प्रकार बच्चे भिन्न-भिन्न वाद्यों के स्वरो से परिचित हो जायँगे।

खेल के पश्चात् बच्चों से ही उनका कमरा ठीक करवाया जाय, भोजन के समय मेज लगाने तथा भोजन परसने में भी उनकी मदद ली जा सकती है। इसी प्रकार बच्चों को जूते बांधने, टबन लगाने, कपड़े पहिनने आदि सिखाए जा सकते है। इस प्रकार के शिक्षण से माताओं को भी बड़ी सुविधा होगी, क्योंकि छोटी उमर में ही बच्चे अपना काम खुद करने लग जायेंगे।

क्रियात्मक शिक्षण-विधि—छोटी क्लासों में बच्चों का शिक्षण इस प्रकार का होना चाहिए कि उनमें रचनात्मक कार्य अधिक हो। छोटे बच्चों के लिए यह बड़ा असंभव है कि किताब-पेंसिल लेकर अध्यापक का व्याख्यान सुने। यह भी एक कारण है कि उन्हें पढ़ाई में दिलचस्पी नहीं मालूम होती और पढ़ना और स्कूल जाना उन्हें

बुरा लगता है। किसी भी स्कूल में कुछ गुटके तथा खाली डिब्बे रंगकर तैयार किये जा सकते है। इसमें अधिक खर्चे की कोई शिकायत नहीं है। स्कूल में ही बच्चों की किताबें, पेंसिले तथा कापियाँ पढ़ाई समाप्त होने पर एक आलमारी में रखवा दी जायँ ताकि बच्चों को उनके संभालने की जिम्मेदारी न उठानी पड़े। रंगदार चाक, नर्म मिट्टी और प्लास्टिक से बच्चे भिन्न-भिन्न खिलौने बनाना बहुत पसंद करते है, इसी प्रकार से बड़े बच्चों को कुछ कार्डबोर्ड देकर छोटे बच्चों के लिए खिलौने तैयार किये जा सकते है। अगर क्लास मे एक दो मैकेनो हो तो उनके सहारे से बच्चों को एक प्रकार की मशीने, मोटर तथा अन्य खेल बनाने सिखाये जा सकते है।

म्युजिकल ड्रिल के द्वारा व्यायाम तथा संगीत दोनो का शिक्षण हो सकता है। ड्राइंग बनाने, तसवीरें रंगने तथा तसवीरें काटने में भी बच्चे बहुत दिलचस्पी लेते है। यह है भी आकर्षक विषय। इस के द्वारा बच्चों को अपनी कल्पना सजीव करने तथा संग्रह-वृत्ति को सन्तोष मिलता है।

नेचर स्टडी तथा बागबानी ऐसे विषय है जिस में अधिकांश बच्चे दिलचस्पी लेते है। उन्हे अपने-अपने डिब्बो मे कैटर पिलर पालना सिखायें तथा किस प्रकार फिर वह तितली बनती है, यह सब देखकर बच्चे बड़े प्रसन्न होते है और तितली की जीवनी उन्हें झट समझ में आ जाती है। तीन-चार बच्चों को मिलाकर एक क्यारी को पानी देना, सुधारना, बीज बोना आदि का काम अध्यापिका को निगरानी में सौंपा जा सकता है। इस प्रकार से पौधे के अंकुर से लेकर फूल तक का जीवन भी बच्चे समझेंगे तथा उसे अपने सामने उगते देख उसकी रक्षा करने का भार वह खुशी से अपने ऊपर लेगे। अपने हाथ से बोये हुए पौधे मे फूल आदि देख, उन्हें कितना आनन्द होगा ? फूलों की रक्षा करना, उन्हें सुरक्षित रखना आदि की भावना उन में बचपन से ही आ जायगी। बाद में उन्हीं फूलों को उन्हें गुलदस्ते मे लगाना सिखायें, उनकी पत्तियाँ आदि पुस्तकों में दबाकर, फूल-पत्तियों का एलबम बनवायें।

बच्चों को भूगोल का ज्ञान भी वास्तविक चीजों को दिखाकर ही देना चाहिए। सूरज, चाँद, सप्तऋषि, ऋतुएं, दिशाएं, नदियाँ, पहाड़, झील, तालाब, फसल, गाँव, कस्बा, कल-कारखाने आदि बच्चों को दिखाने से उस विषय में वह जल्द समझ जायंगे, बनिस्बत इसके कि किताबों से उनकी परिभाषा रटाई जाय।

तसवीरें, मैजिक लालटेन तथा सिनेमा बच्चों के शिक्षण मे बहुत उपयोगी साधन साबित हुए है। इनके द्वारा बच्चों को देश-विदेशों के विषय मे परिचित कराना बिल्कुल सहज है। इसी प्रकार से हाईजिन, स्वास्थ्य-रक्षा का ज्ञान, बीमारियों से बचाव विज्ञान आदि का ज्ञान देने में यह सब बहुत उपयोगी है।

बच्चों के शिक्षण में लाइब्रेरी एक विशेष स्थान तथा महत्त्व रखती है। बच्चों

की रुचि आकृष्ट करने के लिए मोटे टाइप की सचित्र, पुस्तकें बहुत उपयोगी होती हैं। चित्रों की भाषा को बच्चे बड़ी जल्दी समझते हैं और उसका प्रभाव उनके हृदय तथा दिमाग पर अधिक स्थायी होता है।

रेडियो भी बच्चों के मनोरंजन में बहुत लाभदायक सिद्ध हुआ है। हमारे रेडियो स्टेशन से हर सप्ताह बच्चों का जो प्रोग्राम ब्रॉडकास्ट होता है उसमें बच्चे कितनी अधिक दिलचस्पी लेते हैं, इसका सभी को अनुभव है। बच्चों के प्रोग्राम को वह एक अपनी चीज समझते हैं और बहुत दिलचस्पी से उन कहानियों तथा कविताओं को सुनते हैं जो कि बच्चों के द्वारा ही खास उन्हीं के मनोरंजन के लिए ब्रॉडकास्ट होती हैं।

अच्छी कहानियों का प्रभाव बच्चों पर बहुत जल्द होता है। देखने में आया है कि जो बुराइयाँ बच्चे डाँट-डपट से नहीं छोड़ते वही अच्छी कहानियों के प्रभाव से दूर हो जाती हैं। महापुरुषों ने अपनी आत्मकथा में किसी-न-किसी कहानी या बड़ों के जीवन की मुख्य घटनाओं से प्रभावित होने का उल्लेख किया है। महात्मा गाँधी पर श्रवणकुमार तथा सत्य हरिश्चन्द्र का और अपनी माता की धर्म-परायणता का चिर-स्थायी प्रभाव पड़ा, इसका उल्लेख उन्होंने अपनी जीवनी में भी किया है। प्रत्येक बच्चे के जीवन-काल में इस प्रकार के अनुभव होते हैं और वह उनके चरित्र-निर्माण तथा शिक्षण में बड़ा महत्त्व रखते हैं। इसीलिए कथा-कहानी द्वारा बच्चों को किसी बात के विषय में बताना एक बहुत ही सरल तथा मनोरंजक तरीका है।

माध्यम मातृभाषा हो—आरम्भ में बच्चों के शिक्षण का माध्यम मातृभाषा ही होना चाहिए। अन्यथा बच्चों के भाव-प्रकाशन शक्ति का विकास ही नहीं हो पाता। इंग्लिश स्कूलों में जो बच्चे पढ़ते हैं उनमें इस तरह की कमी अमूमन पाई जाती है। वह भूगोल, इतिहास तथा मोटी-मोटी इंग्लिश की पुस्तकें पढ़ तो अवश्य लेते हैं और कुछ पाठ रट भी लेते हैं परन्तु समझते बहुत कम हैं। इतनी बात जरूर है कि बड़े होकर उनकी इंग्लिश जरूर अच्छी हो जाती है परन्तु मातृभाषा में उन्हें एक पत्र लिखना भी नहीं आता। जो विषय बच्चों को मातृभाषा में समझाया जाता है, उसको वह शीघ्र ही समझ लेते हैं। विदेशी भाषा में समझने के लिए उन्हें दोहरी मेहनत पड़ती है। पहले भाषा समझना फिर विषय समझना। इसलिए दस वर्ष की उम्र तक तो बच्चों को मातृभाषा के जरिये ही शिक्षा देना उचित है।

दूसरी बात जो अनुभव से पता चली है वह यह है कि पुरुषों की बनिस्बत स्त्रियाँ बच्चों के लिए अधिक सफल शिक्षिका साबित हुई हैं, क्योंकि स्त्रियों को बच्चों को फुसलाने का ढंग आता है और उन में धीरता भी उन से अधिक है।

बच्चों की लिखने की स्पीड कम होने के कारण वह लिखकर प्रश्न का उत्तर

देने में इतने सफल नहीं होते जितना मुँहजबानी देने में। छोटे बच्चों को रोज सुलेख तथा पाठ के कठिन शब्दो को लिखवा करके याद करवाने से दो लाभ होंगे। एक तो लिखने का अभ्यास हो जायगा, दूसरे उनकी लिखाई और स्पेलिंग दोनों सुधर जायँगे।

बच्चों की परीक्षा अधिकतर मुँहजबानी लेनी चाहिए। वार्षिक परीक्षा के ऊपर बच्चों का प्रमोशन निर्भर न रखकर, रोजाना हाजिरी तथा क्लास-वर्क पर होना चाहिए। क्लास मे बच्चों का शिक्षण इतना पूर्ण हो कि घर पर माँ-बाप के ऊपर सबक रटाने का काम नहीं छोड़ा जाय। अगर स्कूल का शिक्षण ठीक है तो ७-८ वर्ष की उम्र तक के बच्चों को घर पर केवल कहानी पढ़ने अथवा तसवीरें रंगने के सिवाय और कोई काम देना आवश्यक नहीं है।

बच्चों की शारीरिक सफाई के विषय में भी शिक्षकों को खास दिलचस्पी रखनी चाहिए। इससे बच्चे स्कूल आने से पहले अपने नाक, कान, मुँह, हाथ, बाल तथा पोशाक की सफाई का ध्यान रखेंगे। इस विषय मे पालको को शिक्षक को पूर्ण सहयोग देना आवश्यक है।

जहाँ एक ओर पढ़ाई में दिलचस्पी पैदा करना जरूरी है, वहाँ यह भी आवश्यक है कि पालकों तथा शिक्षको मे परस्पर सहयोग भी हो। बच्चो के सामने शिक्षकों की आलोचना करना या ट्यूटरो को डाँटना भारी भूल है। इससे बच्चे की नजर मे शिक्षक केवल एक बुद्धू तथा पेड़-सर्वेंट रह जायगा। अगर पालकों को शिक्षक के विषय मे कुछ कहना हो तो उसके स्थान की मान-मर्यादा रखकर उन से मिलकर अथवा लिख-कर उनका सहयोग प्राप्त करना चाहिए। शिक्षकों के लिए भी यह आवश्यक है कि वह धीरता और प्रेम से प्रत्येक बच्चे की तरक्की का ध्यान रखे। इस विषय मे मैं तीसरे भाग में विस्तारपूर्वक लिखूँगी।

बड़ों के बनिस्बत बच्चों को पढ़ाना अधिक कठिन है। बच्चों को कभी भी मार या सजा के डर से पढ़ने के लिए बाध्य नहीं करना चाहिए। अगर कोई बच्चा तेज बुद्धि का नहीं है, तो शिक्षक का यह कर्तव्य है कि उसकी ओर विशेष ध्यान दे, न कि उसे बुद्धू और कुन्द कहकर क्लास मे लज्जित करे अथवा उसकी आलोचना करे। अगर बच्चे के दिमाग मे यह हीनता पैदा हो जाय कि मैं कुन्द दिमाग हूँ, मुझे पढ़ना आ ही नहीं सकता, तो यह विचार उसकी तरक्की के लिए बहुत घातक है। ऐसे बच्चों से तो प्रश्न इस प्रकार से किया जाय तथा घुमा-फिराकर उत्तर तक उन्हे इस प्रकार ले जाया जाय कि वह झट से उत्तर दे सके। कई बच्चे सकोची स्वभाव के होते हैं, वह उत्तर जानते हुए भी क्लास मे बोलने से झिझकते है, ऐसे बच्चों को उत्तर देने के लिए अधिक अवसर दिया जाय तथा उत्साहित किया जाय। ऐसा करने से थोड़े ही दिनों मे वे उत्तर देने के आदी हो जायँगे। अगर किसी बच्चे को एक-दो बार समझाने

पर भी कोई विषय समझ में नहीं आये तो उसको हतोत्साह नहीं होने दें। 'मेरे बूते के बाहर है यह करना' ऐसी भावना बच्चे मे आनी ही नहीं चाहिए। उल्टा हर एक बच्चे मे यह आत्मविश्वास होना चाहिए कि चेष्टा कर के मैं भी हर एक बात सीख सकता हूँ।

बड़े बच्चे छोटे बच्चों की कक्षा मे अक्सर बड़ी शर्मिन्दगी-सी अनुभव करते हैं। इसी प्रकार छोटा बच्चा भी अपने से बड़ी आयु के बच्चों की कक्षा मे दबा हुआ-सा रहता है, इसलिए इस बात का विशेष ध्यान रखना चाहिए कि बच्चे अपनी ही आयु के बच्चों के साथ ही पढ़े। अगर कोई बड़ा बच्चा किसी खास कारण से छोटी कक्षा मे ही रह गया है तो उसे खास कोचिंग करके बड़ी कक्षा में करना अच्छा होगा। इसी तरह छोटी उम्र के बच्चे को बड़ी क्लास मे रखने पर जोर नहीं देना चाहिए। अपनी ही कक्षा मे अगर वह शुरू से फर्स्ट रहेगा तो इससे उसकी नींव अच्छी पड़ जायगी और उसे पढाई मे हमेशा दिलचस्पी रहेगी।

प्रत्येक शिक्षक का यह कर्तव्य है कि अपनी कक्षा के प्रत्येक बच्चे के विषय में व्यक्तिगत जानकारी रखे। जिस प्रकार माली बगीचे के प्रत्येक पेड़ की नसल को समझता है उसी प्रकार बच्चे का मनोवैज्ञानिक अध्ययन करने का शिक्षक को पूरा मौका मिलता है। कुदरत के इन सजीव फूलों को सँवारने का काम शिक्षक का है। इसीलिए शिक्षक के ऊपर देश की बड़ी भारी जिम्मेदारी है क्योंकि कर्तव्यपरायण शिक्षक देश के भावी स्तम्भों का निर्माता है। *

---

* बच्चों की पढाई तथा स्कूल सम्बन्धी अन्य समस्याओ पर मैंने इस पुस्तक के तीसरे भाग में विस्तारपूर्वक लिखा है। जो पालक अपने बच्चो की शिक्षा सम्बन्धी समस्याओ से परेशान है वे इसका तृतीय भाग अवश्य पढ़ें।

बाईसवाँ अध्याय

बच्चों से बातचीत

आरम्भ में बच्चा अपने बड़ों के उदाहरण से ही बहुत कुछ सीखता है। विशेष-कर उसकी बातचीत का उन पर बहुत प्रभाव पड़ता है। उस के मनोवेग, क्रियाएं तथा



भाषा पर बड़ों की बातचीत अपनी छाप अवश्य छोड़ जाती है। अपने भाषा-ज्ञान का वह सही प्रयोग कर सके, उसे उचित शब्दों में अपने विचार प्रगट करने आ सकें, दूसरों की बात का वह सही अर्थ लगा सके, इसके लिए यह आवश्यक है कि उसके संग बात-चीत सही ढंग से, ठीक शब्दों में की जाय। बच्चों में तर्क-बुद्धि नहीं होती। वे अपने बड़ों की बात को ही सच समझते हैं। सुनी-सुनाई बात पर वे विश्वास कर लेते हैं। वे ज्ञान-उपलब्धि भी बड़ों की बातचीत से ही करते हैं। एक विद्वान का कहना है कि—

बालक अवस्था ही ऐसी अवस्था है जिसमें विशेष परिश्रम के बिना ही वस्तु का ग्रहण हो सकता है, इस अवस्था में न अश्रद्धा है, न कुतर्क है और न किसी मत का आग्रह ही है। अतएव इसी अवस्था को सुरक्षित समझकर बालकों को मानव-जीवन के परम लक्ष्य और चरम आनन्द की प्राप्ति के सन्मार्ग में लगाने का प्रयत्न प्रत्येक मनुष्य को करना चाहिए।

हम बच्चों को यह सिखाते हैं कि वे अपने से बड़ों के अधिकार, विचार तथा मान-मर्यादा का ध्यान रख, उनसे किस प्रकार बातचीत करें, कोई बात उनके मुँह से ऐसी न निकले कि वे रुष्ट हो जायँ, या उनकी किसी हरकत से बड़ों का 'इम्प्रेशन बिगड़ जाय, अथवा उनकी मानसिक चिन्ता बढ़ जाय। यह शिष्टाचार सिखाना सब ठीक ही है। परन्तु कितने बड़े इस बात को जानने की चेष्टा करते हैं कि बच्चों के साथ किस प्रकार बातचीत करनी चाहिए? कहीं ऐसा न हो कि हमारे रिमार्क से उनका नन्हा-सा दिल चोट खा जाय, या बढ़ावा पाकर वे इतने निडर हो जायँ कि नियमों का उल्लघन करने लगे, और फिर बाद में उन्हें सिरचढ़ा, बदतमीज़ आदि की उपाधि मिले, अथवा प्रशंसा सुन वे इतने सिरफिरे हो जायँ कि दिनभर उन्हें स्वाभाविक रूप से शान्त रखना कठिन हो जाय।

गलत ढंग—प्रायः ऐसा होता है कि मुन्ना बैठा हुआ खाना खा रहा है, और पिता जी का कोई दोस्त या माता जी की कोई सहेली आती है और मुन्ना में अपनी दिलचस्पी दिखाने तथा उसके माता-पिता की प्रसन्नता प्राप्त करने के लिए वह मुन्ना के संवारे हुए बालों में उंगलियाँ फेरकर कहती है, 'अहा! कैसे सुन्दर काले-काले घुँघराले बाल हैं, और ये कजरारी आँखे तथा लाल 'रौम्पर' इस पर कितना खिलता है! इसके बाद मुन्ना के गुदगुदी करके वे उसे हँसा-हँसाकर लोट-पोट कर देती हैं।

बस, मुन्ना को उत्तेजित करने के लिए इतना ही क्या कम है? अब दिनभर उसका दिमाग सात आसमान पर चढ़ा रहता है। आत्म-प्रशंसा सुन वह फूल उठा है। उसके बने हुए बाल बिगड़ गए हैं; कपड़ों पर पानी गिर जाने से, वह गीले हो गए हैं; काजल फैल गया है; उसने खाना भी पूरा नहीं खाया। न तो वह मुँह पुंछवाता है, न कपड़े बदलने जाता है, जूठे हाथों को अपने कपड़ों मे ही रगड़कर वह अपनी प्रशंसक 'आँटी' या 'अंकल' का हाथ पकड़कर उनके पीछे-पीछे चल देता है। ड्राईंग रूम में जाकर वह बड़ों की बातचीत में हर्जा करता है। ध्यान आकृष्ट करने के लिए वह आँटी के पर्स को खोलने की चेष्टा करता है अथवा अंकल की छड़ी या फाइल से खिलवाड़ करना शुरू करता है। उसे बहलाने के लिए अंकल जेब मे से मुट्ठीभर टाफ़ी निकालकर देते हैं—'जाओ, जाओ, खा लो, माँ कुछ नहीं कहेगी।' यह कहकर वे उसे दरवाजे के पास खड़ी आया को थमा देते हैं। पर मुन्ना तो आज मौज में है, वह आया की नहीं सुनता, एक के बाद दूसरी टाफ़ी खाता ही चला जा रहा है। उसने हाथ-मुँह, कपड़े, यहाँ तक कि पलंग भी चिपचिपा कर दिया है। आज उसकी दोपहर की नींद भी भाग गई है।

शाम होते-होते मुन्ना थककर, खिसियाकर रोने लगता है। बिना खाना खाये वह शाम को ही सो जाता है और रात को जब सब सोने जा रहे हैं, वह उठकर

रोना शुरू करता है। इस प्रकार बड़ों की जरा सी भूल से मुन्ना का सारा दिन खराब हो जाता है।

बच्चे से बातचीत करते समय—(१) बच्चा बड़ों की बातचीत सुनकर ही बहुत कुछ सीखता है। अतएव जब आप उससे बात करें, उसे खिलौना न समझकर एक व्यक्ति समझें।

(२) उसे गुदगुदाकर, उछालकर या विस्मयबोधक उद्‌गारों द्वारा हँसाने तथा चकित करने की चेष्टा न करें। बच्चों का मनोरंजन करने के अनेक ढंग हैं। उनकी पढ़ाई, खेल आदि के विषय में पूछें। आपको समय हो तो कोई कहानी या गीत सुनाकर या कुछ क्षण उसके संग खेलकर उसका मन बहलायें। प्रायः होता क्या है कि बड़े अपना मनोरजन करने के लिए बच्चे का एक तमाशा बना देते हैं। लाड में आकर वह उत्तेजित हो जाता है और ऐसी हरकत तथा भूल कर बैठता है जिसके कारण बाद में उसे डाँट या सजा मिलती है या माँ के झुँझलाने से वह रो देता है, उसका मूड बिगड़ जाता है। वह अंकल या आँटी को तो ख़ुशमिज़ाज समझने लगता है और माँ उसके लिए एक पहेली बन जाती है। वह सोचता है कि जिस बात से आगन्तुक प्रसन्न हुए, उसी पर माँ नाहक मे चिढ़ क्यों गई ?

(३) जब आप मुन्ना की माता से मिलने जायँ, पहले उसकी माता का अभिवादन करके तब मुन्ना की ओर मुड़ें। कुशल-समाचार पूछने के बाद, उसकी दिलचस्पी की दो-चार बातें करके फिर उसकी माता से बातचीत करें। अगर आप बच्चे की बिल्कुल उपेक्षा करेंगी तो वह अन्य तरीकों से आपका ध्यान आकृष्ट करेगा। बच्चे से फ़ुरसत पाकर तभी आप निश्चिन्तता से उसकी माता से बातचीत कर सकेंगी। बच्चा जब आपके घर आय, तब उसे इस प्रकार का बढ़ावा कभी न दें कि 'मेरे घर में तुम अमुक काम कर सकते हो, यहाँ तुम्हारी माँ कुछ नहीं कहेगी'। पालकों की उपेक्षा करना बच्चे को कभी न सिखायँ। जो बात बच्चे की सामर्थ्य या अधिकार के बाहर है, उस विषय में बच्चे को उलाहना न दे। यथा—तुम मेरे यहाँ क्यों नहीं आये ? तुमने अपने जन्म-दिन की पार्टी पर हमें तो बुलाया नहीं ? ऐसी बातों में बच्चा स्वाधीन नहीं होता, यह जानते हुए भी उसे शर्मिन्दा करना उचित नहीं।

(४) बच्चा अगर तुतलाकर बोलता है, तो आप भी उससे बातचीत करते समय तुतलाकर न बोलें, बच्चा सुन-सुनकर ही शुद्ध उच्चारण सीखता है। गलत बोलकर आप उसे इस सुविधा से वंचित करती हैं। उसके तोतलेपन की हँसी उड़ाकर या आलोचना करके आप उसे लज्जित नहीं करें, नहीं तो वह आप से बात करते झिझकेगा अथवा आपका मनोरंजन होते देखकर वह हमेशा तुतलाकर ही बोलेगा।

(५) प्रगट रूप में बच्चा चाहे अपने खेल में व्यस्त दिखे, परन्तु उसके सामने

उसकी आलोचना या प्रशंसा न करें। पूरी बात समझ न सकने पर भी वह अपनी कल्पना से कुछ बे-सिर-पैर की बात जोड़कर उसका उल्टा-सीधा मतलब निकालेगा। हो सकता है, आपकी चर्चा का उस पर बुरा असर पड़े और उसके मन में कई दुःशंकाएं उठ खड़ी हों।

(६) अगर बच्चे को कभी चोट लग जाय, आप सहानुभूति दिखायें, उसकी मदद करें, परन्तु बार-बार उस घटना का वर्णन करने का प्रोत्साहन न दें। 'मुन्ना बेचारे का सिर फूट गया, ओ हो ! तू गिर गया था, कैसे गिरा था ? किसने मारा ? कहाँ चोट लगी है ?'—आदि प्रश्नों के उत्तर मे वह जो अभिनय करेगा उससे आपका मनोरजन चाहे होगा, परन्तु बच्चे के लिए यह हितकर नहीं है। वह अपने राई से दुःख को भी पहाड़ समझने लगेगा। अगर आप कोई अन्य मनोरंजक प्रसंग चलाकर उसका ध्यान दूसरी ओर लगा दें तो ज्यादा अच्छा है। मुन्ना के गिर पड़ने पर आप उसे उठा तो लें...पर साथ ही—'ओ हो ! मुन्ना ने छलाँग लगाई थी। उठो, उठो, मुन्ना ! देखो, कोई चिऊंटी तो दबकर नहीं मर गई ?' आपके ऐसा कहने से मुन्ना अपनी चोट भूलकर चिऊंटी की फिक्र में लग जायगा।

(७) बच्चे से बातचीत करते समय उसकी समझ तथा जानकारी का ध्यान जरूर रखें। छोटे वाक्य, सरल भाषा तथा परिचित विषय चुनने चाहिएँ। बच्चे आपकी बोल-चाल की भाषा ही समझ सकते हैं। अगर उसे कोई बात मालूम नहीं है, तो ऐसा न कहें, 'अरे ! तुम यह भी नहीं जानते।' अपितु इस ढंग से जानकारी दें कि बच्चा अपनी जानकारी की कड़ी से आप द्वारा दी गई नई जानकारी को, सहज ही जोड़ ले। अगर वह शरमाता है तो बार-बार उसके पीछे मत पड़ें। 'मुन्ना ! एक गाना गाओ, कविता है सुना दो, अच्छा जरा नाचना तो, अरे भाई शरमाने की क्या बात है ? जरा सुना ही दो'—आपके बार-बार ऐसा कहने से वह सचमुच में शरमाने लगेगा, या फिर अपना महत्त्व बनाये रखने के लिए आप से बार-बार आग्रह करवायेगा। अतएव बार-बार कहना व्यर्थ ही है।

(८) बच्चे से बातचीत करते समय जोर-जोर से हँसना, धमकाकर या चिल्लाकर बोलना, हँसी-मजाक में अशिष्ट शब्दों का प्रयोग, हाथ-मुंह बनाकर बात करना आदि ढंग बुरे हैं। बच्चे इन दुर्गुणों की झट नकल कर लेते हैं। बातचीत में दोष आ जाने से बच्चों का व्यक्तित्व प्रभावहीन हो जाता है। जल्दी-जल्दी बोलना, कुछ तकिया-कलाम यथा—'समझे न', 'हाँ तो', 'क्या समझे', 'बड़े आये', 'ठीक है ठीक है', 'बड़े अच्छे', 'क्या कहने आपके'—आदि निरर्थक शब्दों का प्रयोग बच्चे सुन-सुनकर ही सीख जाते हैं। इसी प्रकार हाथ हिला-हिलाकर बात करना, मुंह बनाना, आँखें झपकनी, कचर-कचर, जल्दी-जल्दी कतरनी-सी जीभ चलानी आदि दोष भी बच्चों में देखा-देखी ही आ जाते हैं।

प्रत्येक मनुष्य का यह सामाजिक कर्त्तव्य है कि जब वह बच्चों से बातचीत करे अपनी जिम्मेदारी को पूरी तरह से समझें। इसलिए जिस तरह छोटे बच्चों के लिए बड़ों के साथ शिष्टतापूर्वक बातचीत करने का ज्ञान आवश्यक है, उसी प्रकार बड़ों के लिए भी यह जरूरी है कि वे बच्चों से सही ढंग से बातचीत करना सीखें। कई बार ऐसा होता है कि बड़ों की बेपरवाही से बच्चों के नन्हे-से मन में बहुत चोट लग जाती है, उन्हें गलतफ़हमी हो जाती है तथा वे उलझन में पड़ जाते हैं।

बच्चों को जली-कटी न सुनायँ—स्त्रियों मे यह विशेष दोष है कि जब वे किसी बच्चे के माता-पिता की उपस्थिति में अपना क्रोध व्यक्त करने में असमर्थ होंगी, तो बच्चों से बातचीत करते समय उनके माँ-बाप को बुरा-भला कहना शुरू कर देंगी।

"ए तेरी माँ तो ऐसी बुरी है कि कुछ पूछो मत, उसके मुंह को तो सब थूकते हैं, इतना पैसा है पर है महा कजूस। कभी अपने सगे-सोई को तो देना ही नहीं जानती। यह तो हमारे भाई ने सिर चढ़ाया हुआ है, मेरा बस चले तो दो दिन में डंडे मारकर ठीक कर दूं।" अपनी बुआ की ऐसी बातें सुनकर नन्हीं मोहिनी और मदन को इतना बुरा लगा कि वह अपनी माँ से आकर बोले—"माँ, हम अब कभी भी बुआ के घर नहीं जायेंगे। जाते ही वह हमें ताने देने लगी—तुम्हारे बारे में ऐसा-ऐसा कह रही थीं और दादी जी पास में बैठी हँसती जा रही थीं। और कह रही थीं—'जाने दे, चुप भी हो जा, ये बच्चे भोले नहीं हैं, अपनी माँ से जाकर सब कहेंगे'—यह सुनकर बुआ बोली—'कहने दो, उसे जलाने के लिए ही तो मै सुना रही हूँ।' यह कहकर सब जनी हँसने लगीं।"

जो स्त्रियाँ बच्चों की ओट में इस प्रकार अपनी ईर्ष्या प्रकट करती है वे महामूर्खा हैं। बच्चों से बातचीत करते समय किसी की आलोचना या निन्दा से उन्हें परेशान करना या उनके मन को कलुषित करना बड़ी भारी भूल है।

जिस घर में सम्मिलित पारिवारिक जीवन की प्रथा है, वहाँ अगर बहू-बेटियों में मेल-मिलाप है तब तो बच्चों से सभी प्यार से बोलते है अन्यथा देवरानी-जिठानी, या ननद-भावज द्वेषवश एक दूसरे के बच्चों को नाहक ही कटु वचन सुनाती है, अकारण ही उन्हें धुड़क देती है, उनकी आलोचना करती है, उन पर लांछना लगाती है। उनके कटु शब्द सुनकर बच्चे भी कटु-भाषी बन जाते है।

इसके अतिरिक्त छोटे बच्चों की खिल्ली उड़ाकर कई बड़ों को आनन्द भी आता है। वे पहले तो प्यार से बच्चे को अपने पास बुला लेंगे, फिर उसकी वेशभूषा, चाल-ढाल, बातचीत, योग्यता आदि की हँसी उड़ायेंगे—'अरे, देखो तो यह ढीला पायजामा पहिनकर मुन्नू पूरा जोकर लगता है; हाँ, मुन्नू यह किसका माँगकर पहिना

है ? अरे, अरे तुझे तो हमेशा उतार ही पहिनने को मिलती है । बेचारे को कोई पूछता ही नहीं ।'

'ए मुन्नी, देख तो तेरी चुटिया तो बिल्कुल चूहे की दुम के सदृश्य खड़ी है । देख लेना, तुझे पीछे से बिल्ली ने आकर दबोच लेना है ।'

'अरे मुन्ना, तुम गा रहे थे, हम तो समझे गधा रेंग रहा था'—बस, ऐसी आलोचना सुनकर मुन्ना-मुन्नी मन-ही-मन कटकर रह जाते हैं और कभी दोबारा बड़ों की उपस्थिति में गाने आदि की चेष्टा नही करते ।

बड़ों की दृष्टि में उनकी इस प्रकार की बातचीत मामूली बात है, पर बच्चे को इससे दुःख होता है । वह चिड़चिड़ा बन जाता है । कोई और बहाना ढूंढ़कर रोने लगता है या अपना गुस्सा प्रगट करता है । बच्चे अपने बड़ों के प्रत्येक रिमार्क को बहुत महत्त्व देते हैं । अगर वे उनकी बातचीत तथा कामों में दिलचस्पी लेते हैं, अपनी कहानियो तथा चुटकलों से उनका मनोरंजन करते हैं तो बच्चे उनसे बातचीत करने के लिए विशेष उत्सुक रहते हैं । अरुण के कई मामा हैं, परन्तु वह अपने बड़े मामा को सब से अधिक पसन्द करता है । कारण, वे जब भी आते हैं अरुण की पढ़ाई, खेल खिलौने, प्रतियोगिता, हॉबीज़ तथा संगी-साथियो के बारे में पूछते हैं, उसे कुछ नये सुझाव देकर प्रोत्साहन देते हैं और अपने शिकार के अनुभवो से उसका खूब मनोरंजन करते हैं । उनमें एक खूबी है, वे बच्चे की समझ और रुचि को खूब परखना जानते हैं, इसीलिए सभी बच्चे उनकी बातचीत से प्रभावित होते हैं । परन्तु बच्चों को चकित करने के लिए वे भयोत्पादक वर्णन या बात बढ़ाकर कभी नहीं करते । क्योंकि उनका कहना है कि ऐसी चर्चा जिनसे बच्चे उलझन में पड़ जायें, उनके लिए हानिकारक है ।

बच्चे बहुत सी बाते बड़ों से सीखते हैं । वे उनके वर्णन का ढंग, लहजा, भावभंगी, मुहावरे आदि को दोहराने की चेष्टा करते हैं ।

अगर माँ बच्चो को गाली देकर, 'ए मुन्नी इधर आ'; 'अबे नालायक किधर मर गया ? क्या बहरा हो गया है ?' इस तरह बुलाती है और पिता जी भी हमेशा घुड़ककर बोलते हैं, तो मुन्ना-मुन्नी भी अपने संगी-साथियों से इसी प्रकार बातचीत करेंगे । बच्चों की शिष्टता और विनम्रतापूर्वक बातचीत सुनकर इस बात को समझते देर नहीं लगती कि ये कुलीन घर के बच्चे हैं । जिस प्रकार अच्छी वेशभूषा व्यक्तित्व को उभारती है, उसी प्रकार शिष्ट और मधुर बातचीत भी मनुष्य के सुशिक्षित और सभ्य होने की द्योतक है । इसलिए बड़ों पर इस बात की विशेष जिम्मेदारी है कि उनकी बातचीत का ढंग शिष्ट, दोषरहित तथा सरल और सुबोध हो ।

ठीक शब्दों का प्रयोग करें—बच्चों से बातचीत करते समय बड़ों को ऐसे

शब्दों का प्रयोग करना चाहिए जिनके अर्थ स्पष्ट हों। यथा—जब बच्चा कोई बाल-सुलभ चपलता दिखाता है उस समय भी उसे दुलार में 'शैतान' कहना और कोई अपराध करने पर भी उसे 'शैतान' कहकर डाँटना ठीक नहीं है। बच्चे का नटखटपना और दुष्टता दोनों एक से कार्य नहीं है। बुरा, गंदा, मूर्ख, शैतान, नटखट, नालायक आदि शब्दों का ठीक अर्थ में ही प्रयोग करना चाहिए। जरा-जरा-सी बात पर निरर्थक धमकियाँ देना भूल है। कोई-कोई माताएँ बात-बात पर बच्चे को इस प्रकार धमकाती हैं—'ठहर जा, आकर तेरा सिर फोड़ती हूँ,' 'तेरी जान न ले ली तो कहना,' 'ठहर तेरी कचूमर निकालती हूँ,' 'आज तुझे भूखो न मारा तो मेरा नाम नहीं।' 'तू कहना नहीं सुनता, हम सब चले जायँगे और तुझे यहीं पर बंद कर जायँगे।' इस प्रकार की निरर्थक धमकियों का बच्चों पर कुछ भी प्रभाव नहीं पड़ता। उल्टा वे डाँट-डपट को मामूली बात समझने लगते हैं और ढीठ तथा कर्कश बन जाते हैं।

ढीठ न बनायँ—आप अपने बच्चे को एक नुमाइशी पुतला न बनायँ। बहुत से माता-पिता अपने मुन्ने से बड़ों का मज़ाक उड़वाते हैं। 'अजी ! अपने चाचा की नकल हमारा मुन्ना खूब करता है, देखोगे तो हँसते-हँसते लोट-पोट हो जाओगे। हाँ मुन्ना, जरा बता तो दे तेरे चाचा कैसे डाँटते हैं चाची को ?' अब मुन्ना प्रशंसा प्राप्त करने के लिए मज़ाकिया ढंग से चाचा-चाची के झगड़े की नकल करता है। उस समय बड़े यह बात भूल जाते हैं कि हम स्वयं ही अपने मुन्ने को ढीठ और अशिष्ट आलोचक बना रहे हैं।

बच्चों से इस प्रकार के प्रश्न न करें—'हाँ, तू वहाँ खड़ा था, क्या बातें हो रही थीं ?' 'तूने क्या कहा ?' वहाँ कौन थे ?' 'फिर क्या हुआ ?' आपके ऐसे प्रश्न बच्चे को दूसरों की बातों में दखल देने की प्रेरणा देते हैं। बड़ों की बातचीत से बच्चा घुमा-फिराकर बातें करना, बहानेबाज़ी तथा जवाब-सवाल करना सीखता है। और बड़े भी अपनी स्वार्थ-सिद्धि होते देख अपने बच्चों की इन बातों की प्रशंसा करते हैं—'अरे ! हमारा मुन्ना बड़ा होशियार है, वह तो बाल की खाल निकालता है ? उसे चकमा देना सरल नहीं।' 'देखना, हमारी मुन्नी तो पूरी खबर लेकर आयगी।' और सचमुच मे मुन्नी माँ को प्रसन्न करने के लिए नमक-मिर्च लगाकर इधर की उधर जड़ती है। फलस्वरूप घरों मे लड़ाई मच जाती है। अगर माँ ने अपनी मुन्नी की अहितकर प्रशंसा न की होती तो वह चुगलख़ोर कभी न बनती।

बच्चों की उपस्थिति में बड़े जो राय प्रगट करते हैं, अथवा अपना स्वार्थ-सिद्ध करने के लिए बच्चों को साधन बनाते हैं, उससे उनका बड़ा अहित होता है। यथा—'जा मुन्ना, यह चिट्ठी अमुक को दे आना, पर अकेले में देना।' 'चुपके से मेरे लिए वहाँ से यह चीज़ उठा ला।' आप सोचते होंगे कि यथार्थ बात मुन्ना को भला क्या पता।

परन्तु बच्चे यह बात जरूर ताड़ जाते हैं कि बड़े कुछ अनुचित कार्य कर रहे हैं, पर उसे छिपाकर करने में वे कोई बुराई नहीं समझते। बच्चे जब प्रायः आपको आपस में झूठ बोलते, बहाने बनाते तथा एक दूसरे को चकमा देते या झगड़ते देखते हैं तो आपकी बातचीत से परोक्ष रूप में उन्हें भी असामाजिक व्यवहार करने की प्रेरणा मिलती है।

बड़ों की बेतुकी बातें—स्त्रियां में यह एक विशेष दोष है कि वे अपनी किसी सहेली से मिलने जायेंगी तो उसे प्रसन्न करने के लिए उसके बच्चे के विषय में अनावश्यक रिमार्क पास करेंगी—अगर वह कोई शैतानी कर रहा है तो मुस्कराकर कहेंगी—'बड़ा शैतान है, अरे नटखट इधर आ।' तब बच्चा सोचेगा कि शैतानी करना बड़ी अच्छी बात है, और वह जान-बूझकर कुछ-न-कुछ काम बिगाड़ेगा। किसी छोटे बच्चे से यह पूछना कि 'हम तुम्हारा खिलौना ले लें?' 'तुम्हारे छोटे भैया को ले जायें?' 'तुम हमारे घर चलोगे?' 'हमारे बेटे बनोगे?' आदि बातें बेतुकी-सी हैं और नन्हे-मुन्ने पर इन प्रश्नों का अच्छा प्रभाव नहीं पड़ता, भला अपना प्यारा खिलौना या भाई मांगने वाला व्यक्ति उसे कैसे अच्छा लग सकता है?

सन्देहात्मक विचार प्रकट न करें—बच्चे से बातचीत करते समय बिना पूरी जांच करे उसके विषय में सन्देहात्मक विचार प्रकट करना ठीक नहीं है—'मुझे यकीन है, तुमने अपना स्कूल का काम तो कभी नहीं किया होगा?' 'भला तू कभी पास हो सकता है?' 'भला तुझ से कोई अच्छे काम की उम्मीद की जा सकती है?' आपके इस प्रकार कहने से बच्चे का विश्वास हिल जाता है। बच्चे के विषय में अपनी ऐसी राय प्रगट करके आप उसके विकास को कुंठित करने की भूल करती हैं। 'मेरी मुन्नी शर्माती है'—मां के इस प्रकार कहने पर सचमुच मे मुन्नी शर्माने लगती है। क्योंकि वह समझती है कि मेरी माता मुझ से ऐसे ही व्यवहार की आशा करती है। और तब उसकी मां लाड़ से उसे अपनी ओर खींच लेती है। इस प्रकार मुन्नी एक नुमाइशी ढंग से व्यवहार करना सीख जाती है। धीरे-धीरे यह बनावटी ढंग उसका स्वभाव बन जाता है। 'दिखता है, मुन्ना डर गया है;' 'चुन्नू थक गया है;' 'मुन्नी को बुरा लग गया है'—आपके इस प्रकार कहने से बच्चे सचमुच में उसी प्रकार व्यवहार करने लगते हैं।

कभी-कभी बच्चे छोटे मुंह बड़ी बात कह बैठते हैं। उस समय माता-पिता प्रशंसा की दृष्टि से कहते हैं—'लो सुनो इसकी बात, इसे छोटा न समझो इसके तो पेट में दाढ़ी है। ऐसा जवाब देता है कि तुम हमको न सूझे।' अपनी ऐसी प्रशंसा सुन बच्चा आगे के लिए बड़ों की बात में दखल देने तथा बोलने में अपनी चतुराई समझने लगता है।

बच्चे को ऐसी प्रतिज्ञा करने को कभी न कहें जिसका पालन उसके लिए असंभव हो। 'कान पकड़ और कह कि अब कभी झूठ नहीं बोलूँगा' या 'अब बहन को कभी नहीं मारूंगा।' आपके ऐसा कहने को बाध्य करने पर मुन्ना चाहे ऐसा कह देगा पर इससे उसका कुछ सुधार नहीं होगा। उल्टा वह प्रतिज्ञा करके तोड़ने का आदी हो जायगा। 'सच बोलने की चेष्टा करूंगा;' 'ऐसा बुरा काम न करने की चेष्टा करूंगा'—ऐसा कहलवाना अधिक उचित होगा।

जो व्यक्ति बच्चों की समझ तथा भावनाओं का ध्यान रखकर बातचीत करना जानता है वह बच्चों में जल्द लोकप्रिय हो जाता है। उसकी बात का बच्चों पर असर भी अच्छा पड़ता है, वे उसकी बात भी सुनते हैं। वह उन्हें अपनी बात समझाने, सिखाने और कहना मनवाने में भी सफल होता है। ऐसे व्यक्ति बच्चों के आदर्श बन जाते हैं। वे उनका अनुकरण करने में गौरव का अनुभव करते हैं। उनकी बातचीत में उन्हें विशेष रस आता है। इसी आकर्षण के वशीभूत होकर बच्चे किसी शिक्षक को अधिक पसन्द करते हैं, किसी को नहीं। जो व्यक्ति बातचीत में कटु, अधीर, आलोचक तथा नीरस होते हैं, बच्चे उनके सामने तक जाने में कतराते हैं। 'मैं नहीं जाऊँगा उनके सामने, वे हमेशा जली-कटी सुनाते रहते हैं।' 'वे बात-बात में बिगड़ते हैं, उनकी आवाज सुनकर मेरे प्राण सूख जाते हैं, फिर भला उनका पढ़ाना क्या ख़ाक समझ में आयगा।'

बच्चों का आरम्भिक शब्द-ज्ञान बड़ों की बातचीत से ही बढ़ता है। इसलिए इस बात की बहुत आवश्यकता है कि बड़ों की बातचीत विशेषकर बच्चों की उपस्थिति में बहुत सरल, शिष्ट तथा सार्थक हो। मैंने कई व्यक्तियों को कहते सुना है—'राम जाने लोगों को बच्चों से बातचीत करने में क्या मज़ा आता है? मुझ में तो धीरज है नहीं बच्चों से सिर खपाने का। बच्चों से क्या बात की जाय, मेरी तो यह समझ में ही नहीं आता।'

सचमुच में बच्चों से बातचीत करना उतना सरल नहीं है जितना कि हम उसे समझते हैं। बच्चों से बातचीत करने में आपकी धीरता, योग्यता, शिष्टता तथा समझदारी की परीक्षा होती है, और देखा गया है कि असावधानी के कारण अधिकांश लोग इसमें सफल नहीं हो पाते।

तेईसवाँ अध्याय

बेचारे मुन्ना-मुन्नी !

'प्रभो ! बाल-जीवन के रहस्यों को समझने में हमारी सहायता करो—जिससे कि हम बालक के स्वरूप को जान सकें, उसे प्यार कर सकें और तुम्हारे नीति-नियमों के अनुसार और तुम्हारे दिव्य संकल्प के अनुकूल उसकी सेवा कर सकें।'

—डॉ मॉण्टेसरी

जिस प्रकार बच्चों से बातचीत करते समय हमें यह सावधानी रखनी पड़ती है कि हम अपनी बातचीत से उनको अनावश्यक उत्तेजित न करें या वे प्रतिकूल प्रोत्साहन प्राप्त न कर लें, अथवा हमारे भाव-भंगी और भाषा की भूल की वे भी नकल करने के आदी न हो जायँ, उसी प्रकार हमें यह भी देखना चाहिए कि उनके प्रति हमारा व्यवहार भी ऐसा सभ्य तथा मर्यादापूर्ण हो कि उन्हें यह कहने का मौका न मिले कि 'हमारे माँ-बाप या अन्य बड़े लोग बहुत स्वार्थी और चालाक हैं, उनके सारे उपदेश और नियम केवल हमें सिखाने और रोकने-टोकने के लिए हैं, अपने लिए तो उन्होंने सभी छूट रखी हुई है।

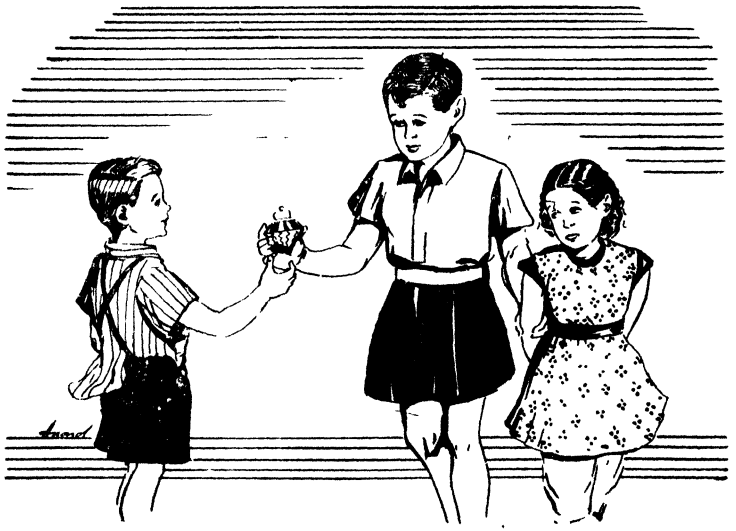
बच्चों द्वारा आलोचना—बच्चे चाहे प्रतिरोध न करें, चाहे वे लिहाज करके मुंह पर न सुनायें, पर पीठ-पीछे अवश्य आलोचना करते हैं।

एक डॉक्टर पिता, अपने बच्चे को जो कि आइसक्रीम तथा कोल्ड ड्रिंक का बड़ा शौकीन था और हमेशा उस में पैसा खर्चता रहता था, बहुत डाँट-डपट करता था कि तुम्हारा गला खराब है, टाँसल बढ़ गये हैं, तुम्हें हजार-बार कहा कि ठंडी चीजें मत खाया करो, पर तुम मानते ही नहीं। एक दिन गुस्से में आकर उन्होंने उसे दो-चार चपत भी लगा दिए। बच्चा उस समय तो डरकर रोने लगा, परन्तु बाद में अपने से दो साल बड़ी बहन से बोला—'बाबूजी, मुझे तो मारकर डराते हैं, पर माँ उन्हें कितनी बार कहती है, इतनी सिगरेट मत पिया करो, तुम्हारे गले में खराबी हो जाती है, पर वह क्या माँ का कहना सुनते हैं ?'

इसी तरह से आम बच्चे अपने माता-पिता तथा बड़े भाई-बहन के दोषों और भूलों को समझ जाते हैं, और जब वे ही लोग उनकी कमियों और भूलों की आलोचना करते हैं, तो उन पर कुछ प्रभाव नहीं पड़ता, वे उनकी चेतावनी को निरर्थक समझते हैं। कई बार ऐसा होता है कि माता-पिता या बड़े भाई बच्चों को अपने रुआब में रखने की इस हद तक चेष्टा करते हैं कि बच्चे उनकी उपस्थिति में सहमे हुए-से रहें

है। मजाल है कि उनके हुक्म को चाहे उचित हो या अनुचित—कोई टाल जाय। जब वे घर में कदम रखते हैं, बच्चों का हँसना-खेलना बन्द हो जाता है। मानो उनके मूड पर ही बच्चों की खिलखिल-खेला निर्भर होनी चाहिए। अगर उनका मूड बिगड़ा हुआ है और बच्चों के हँसने-खेलने की आहट मिली, तो वे गरजकर कह उठते हैं—'कम-बख्तों ने क्या हिड-हिड लगाई हुई है। शर्म नहीं आती इन्हें जरा भी, चलो, पढ़ने बैठो।' बस, फिर चाहे वह शाम का ही समय क्यों न हो और बच्चे दिनभर स्कूल से थक-कर आए हों, उन्हें किताब सामने खोलकर पढ़ने का स्वांग तो करना ही पड़ता है—और कोई ताज्जुब नहीं, इस प्रकार उनकी पढ़ाई से रुचि दिन-पर-दिन कम होती जाय।

बड़ों की धांधली—अनेक बार ऐसा होता है कि बच्चे को मानसिक रूप से तैयार किए बिना हम उस को किसी सुविधा से अचानक वंचित कर देते हैं। यथा कोई मित्र या मेहमान अपने बच्चों सहित आप के घर आए, अब उनके छोटे बच्चे को आपकी मुन्नी का कोई खिलौना पसन्द आ गया, आप चाहती हैं कि यह खिलौना मित्र के बच्चे को



दे दिया जाय। बस मुन्नी को इस बात के लिए राजी किये बिना ही, आप वह खिलौना उस बच्चे को दिलवा देती है और जब मुन्नी आँखों में आँसू भरकर पिता जी से इस बात की शिकायत करती है तो आप उसको घुड़ककर कहती हैं—"बड़ी नालायक है तू, खिलौने क्या तू जन्म से साथ बाँधकर लाई थी—ला देंगे तुझे और—रोने की क्या बात है ?"

अगर आपने जरा भी बुद्धिमानी से काम लिया होता, तो उसका खिलौना सहेली के बच्चे को दिलवाने से पूर्व आप मुन्नी को दुलारकर कहतीं—'बेटी, यह खिलौना अपने इस मित्र को दे दो, हम तुम्हें इस दिवाली पर इससे भी अच्छा खिलौना ला देंगे। देखो! पिछली बार तुम्हें ला दिया था, न ? तुम कहो तो दे दें, और तुम खुद ही अपने हाथ से उसे दे दो।' बस, मुन्नी कुछ देर सोचकर स्वयं ही अपना खिलौना अपने मित्र को पकड़ा देगी। इस प्रकार करने से उसे न तो मित्र से द्वेष होगा और ना ही आपके प्रति वह मलाल रखेगी। क्योंकि जो कुछ किया उसकी रजामंदी से किया गया, साथ ही उसे आप की प्रशंसा तथा दिवाली पर नये खिलौने मिलने की आशा से बहुत कुछ सन्तोष हो गया।

इसी प्रकार कभी घर में अचानक कोई मेहमान आ जाते हैं, बच्चों का कमरा या पलंग उनके लिए डाँट-डपटकर खाली करवा लिया जाता है, इसके अतिरिक्त मेहमानों के साथ बैठकर बड़े लोग तो दावतें उड़ाते हैं, पर क्योंकि, बच्चे पहले खाना खाते हैं, उन्हें सभी स्वादिष्ट वस्तुएं इस डर से नहीं परोसी जातीं कि कहीं मेहमानों के लिए कम न पड़ जायँ। खैर, ऐसी स्थिति में पड़कर बड़े भी लाचार हैं, परन्तु दूसरे दिन बच्चों के लिए या तो फिर खीर, हलुवा अथवा पुडिंग या पुलाव जो उन्हें रुचिकर हों बनवा दिया जाय, या फिर कुछ उत्सवों पर, यथा—बच्चों का जन्म-दिवस-भोज, कन्याष्टमी, गणेश-पूजन, सरस्वती-पूजन आदि पर विशेष रूप से बच्चों के लिए ही पार्टी दी जाय, इसमें उनको ही प्रधानता दी जाय। इस प्रकार बच्चे स्वयं को उपेक्षित अनुभव नहीं करेंगे।

बच्चों को समान सुविधाएँ दें—किसी-किसी घर में ऐसा होता है कि घरों में सभी सुविधाएँ बड़े बहन-भाइयों को प्राप्त होती हैं, छोटे मुन्ना-मुन्नी बेचारों को कोई नहीं पूछता। मुन्नी देखती है बड़ी दीदी नयी साड़ियाँ, नये ओवरकोट, उनसे मैच करती सैंडल या चप्पल पहिन, सजधजकर कॉलिज जाती हैं, जबकि बेचारी मुन्नी अपने बड़े भाई का पुराना छोटा कोट ही पहिनती है। स्कूल में सब उसे चिढ़ाते हैं कि लड़कों का कोट पहिने हुए है। पाँव में भी उसके या तो सफेद टैनिस शू होते हैं, अथवा फिसर-फिसर करती हुई चप्पल। वह कभी भी 'टायडी' नहीं दिखती। जाड़ों में बिना क्रीम के उसका मुँह फट जाता है, इस से उसकी रौनक और भी बिगड़ जाती है। मुन्ने का भी यही हाल है। स्याही से सना कोट पहिन, सिलाई उधड़े हुए जूने पाँवों में फंसा, मैला-सा बस्ता गले में लटकाये वह स्कूल चल देता है, जब कि उसके बड़े भाई सूट में डटे, साइकिल पर सीटी बजाते हुए पास से निकल जाते हैं। न तो बड़ी दीदी चाहती है कि मुझे कोई गंदी चुड़ैल-सी मुन्नी के साथ खड़ा देखे और ना ही बड़े भैया यह पसन्द करते हैं कि स्कूल के लड़के यह जान पायँ कि 'पिलपिली साहब'

(मुन्ना) उसका छोटा भाई है। बेचारे मुन्ना-मुन्नी को भी तो अपनी दशा पर अफ़सोस आता है, पर वे क्या करें ? सभी सुविधाएँ बड़ों ने अपने लिए रिजर्व' रखी हुई हैं।

मैंने माना कि बड़ों की सभी सुविधाएँ बच्चों को नहीं मिल सकतीं। परन्तु इतना ध्यान तो अवश्य रखना चाहिए कि घर के बच्चे के रहन-सहन का स्टैंडर्ड इतना न गिर जाय कि वे अपने हमजोलियों मे हीनता का अनुभव करने लगें। उनके दिल में यह खेद न छा जाय कि क्योंकि हम बच्चे हैं, अधीन हैं, लाचार हैं, इसलिए हमे सब दबाए हुए हैं।

बच्चे के दृष्टिकोण को समझें—बच्चों के दृष्टिकोण को समझने की कोई चेष्टा नहीं करता। अगर उनकी ओर से आपकी सुविधा में कोई भी अड़चन पैदा हुई तुरन्त उसे दबाने की चेष्टा की जाती है। माता खुशामद का सहारा लेकर दुलारती हुई कहेगी—'मुन्ने देख, अगर माँ का कहना नहीं मानेगा, तो मै फिर तुझे प्यार नहीं करूँगी।' बेचारा मुन्ना सोचता है—'दुनियाँ में सब से प्यारी चीज़ है माँ, अगर वह प्यार न करेगी तो अच्छा खाना कौन खिलायेगा ? पिता जी से मेरी सिफ़ारिश कौन करेगा ? बड़े भैया जब मेरे कान उमेठेंगे तो कौन छुड़ायेगा ?' माँ का चैलेंज सुन मुन्ना के नन्हे मस्तिष्क मे ये सब विचार दौड़ जाते हैं।

इस प्रकार मुन्ने को न केवल माँ ही दबाती है, पिता जी की एक घुड़की से ही उसके प्राण सूख जाते हैं। यह देखकर बड़े भैया या बड़ी बहन, प्रायः उसे डराते रहते हैं—'आने दे पिताजी को, आज तेरी शिकायत लगाकर तुझे जरूर पिटवायेंगे, तूने उनका फाउंटेनपैन छुआ था न ? जरूर तूने ही उनके साइकिल की हवा निकाली थी।' बेचारा मुन्ना फिर दब जाता है। क्योंकि नक्कारखाने में तूती की आवाज-सदृश्य मुन्ना की बात भला कौन सुनेगा। क्योंकि मुन्ना शैतान है, चंचल है, इसलिए भी वह बदनाम है।

इस विषय मे मुझे एक घटना याद आई। छः वर्ष के अरुण के प्रभात और नन्दिनी दो बड़े भाई-बहन हैं। प्रभात और नन्दिनी दोनों बनारस में पढ़ते हैं। इन जाड़ों की छुटियों में वे घर आये हुए थे। एक दिन उनकी माँ ने दो रुपये के रसगुल्ले मंगाये, सब बच्चों को रसगुल्ले देने के बाद उन्होंने बस रसगुल्ले उठाकर रख दिये कि दूसरे दिन काम आयेंगे। पर जब दूसरे दिन देखा तो वहाँ केवल पाँच रसगुल्ले बाकी बचे थे। बेचारा मुन्ना (अरुण) फंस गया। माँ ने भी उसे घुड़की लगाई। भाई भी बोला—'हाँ माँ, यह बड़ा चटोरा हो गया है, जो चीज़ देखता है वही सफाचट कर जाता है, मेरी जेब में चाकलेट का पैकट था, वह भी यही खा गया है।' लेकिन, उस दिन तो मुन्ना डाँट सहकर भाई के संग सिनेमा देखने चला गया। दो दिन बाद मुन्ने

को किसी बात पर प्रभात ने मार दिया, बस मुन्ना रोता हुआ माँ के पास आया और बोला—"देखो माँ, भैया हमें हमेशा बेबात के मारता रहता है। उस दिन की तुम्हें इनकी बात बताऊँ—रसगुल्ले भैया और जीजी ने खाये थे— भैया ने तीन और जीजी ने दो, और मेरा नाम लगा दिया। मैं उनकी पोल खोलने वाला था, पर भैया बोला—अगर तूने कुछ कहा, या मेरी बात काटी तो हम तुझे सिनेमा नहीं ले जाएँगे ? इसलिए मैं चुप हो गया था।"

यह बात सुनकर प्रभात भी हँसता हुआ आया और बोला—"माँ जी, आप इसकी बात सच मत मानना, यह रसगुल्ले खा रहा था, फिर हमने भी खा लिए थे।"

यह सफेद झूठ सुनकर मुन्ना बिगड़कर बोला—"झूठ, एकदम झूठ। इन्होंने एक रसगुल्ले में से मुझे जरा सा टुकड़ा दिया था। मुझे तो बाद में पता चला कि यह लोग पाँच रसगुल्ले खतम कर चुके थे।"

बेचारा मुन्ना अपनी सफाई देता रहा, पर भैया और जीजी हँस-हँसकर उसे ही बेवकूफ़ बनाते रहे।

माँ ने मुन्ने के आँसू पोंछकर कहा—"भाई तुम लोग मेरे मुन्ने को बहुत बदनाम करते हो। यह बेचारा तो छुट्टियों में तुम लोगों के आने की बाट जोहता रहता है, और तुम दोनों मिलकर उसे बे-बात के परेशान करते हो, यह ठीक नहीं है।"

बस बेचारा मुन्ना उस दिन भैया और जीजी से दुरदुराया हुआ, माँ के संग-संग लगा रहा।

बच्चे को चिढ़ायें नहीं—किसी-किसी घर में तो बड़े भाई-बहन मुन्ना-मुन्नी को चिढ़ाते भी इस हद तक हैं कि उसका आत्मसम्मान चोट खा जाता है, सब के सामने ज़लील होकर, उसकी आँखों में आँसू तक छलक आते हैं। प्रायः अपने बड़े भाई-बहन के छोटे कपड़े तथा अन्य उपयोग में लाई गई चीज़ें घर में छोटे बच्चे के काम में ले ही लेते हैं। इस बात पर छोटे मुन्ने श्याम को उसका बड़ा भाई, 'मंगतू' 'मंगतू!' कहकर हमेशा चिढ़ाता है। उसे इस बात में बड़ा आनन्द आता है कि मुन्ने की सब के सामने खिल्ली उड़ाई जाय। 'ये देखो, मंगतू ने यह स्वेटर तो मेरा पहिना हुआ है और हाँ, यह कमीज़ भी मौसी जी ने दी थी और हाँ, यह नेकर मेरी पतलून को काटकर बनाया गया है। यह बस्ता तो जीजी का है, यह किताबें भी सेकंड हैंड ख़रीदी गई हैं। बस, यह मुन्नू तो पूरा मंगतू है।'

मुन्ना बेचारा नहा-धोकर धुले-धुलाये साफ़ कपड़े पहिनकर स्कूल जाने के लिए तैयार हुआ है, पर उसके भैया अपनी परिहास-प्रियता में इस हद तक बढ़ जाते हैं कि उसे रुला तक देते हैं। दूसरे दिन मुन्ना उन कपड़ों को पहिनने से इनकार कर देता है। इस पर माँ समझाती है,—"अरे पगले, भैया तो ऐसे ही बकता है। किस्मत

वाले बच्चों को ही अपने बहन-भाइयों की चीज़ें मिलती हैं। जिनके कोई बहन-भाई नहीं होते, उन्हें भला कहाँ से चीज़ें मिलेंगी ?" पर मुन्नू मचलकर कहता है—"तुम तो सब नई चीज़ भैया को ही ले देती हो ! हमें तो नया सूट सिलाकर नहीं देतीं।"



माँ फुसलाकर कहती है—"अच्छा, अच्छा, अब की बार दशहरे पर तुझे नया सूट सिलवा देंगे।"

पर जब दशहरा आता है, सबके नये सूट सिल जाते हैं, मुन्ने को अपने भैया या पिता जी की पुरानी पतलून को काटकर तैयार की हुई पतलून ही मिलती है। बेचारा मुन्ना इसी में खुश है।

मुन्ना-मुन्नी के संग की हुई बहुत कम प्रतिज्ञाएं पूरी की जाती हैं। शाम के

समय मुन्नी कहती है—"माँ तुमने कहा था कि गेहूँ बीन लूँगी तो शाम को मुझे शान्ति के घर जाने दोगी—अब मैं जाऊँ ?" पर माँ उसी समय टोककर कहती है—"तुझे तो खेलने की पड़ी है, देखती नहीं है तेरे पिता जी आने वाले हैं—मैं नाश्ता तैयार करने जा रही हूँ, तू चाय के बर्तन साफ कर ले और मेज़ सजा दे, और जरा छोटे बेबी का भी ध्यान रखना।"

इसी प्रकार मुन्ना अपने स्कूल का काम कर रहा है, या मैकेनों का कोई खेल बनाने में मग्न है, बस पिता जी या बड़े भैया पुकारकर कहते हैं—'ए मुन्ना, जरा मेरे बूट पालिश तो कर दे;' 'जरा दौड़कर मेरा यह जूता तो मोची से बनवा ला;' 'जा, जरा नीचे से अखबार और सिगरेट का पैकिट ले आ और हाँ, यह चिट्ठी भी पोस्ट कर आना।'

बच्चों के समय का भी महत्त्व है—बड़ो की दृष्टि मे बेचारे मुन्ना-मुन्नी का अपना समय या मनोरंजन-प्रियता कुछ महत्त्व ही नही रखती !!

अगर वे कोई दिलचस्प कहानी पढ़ रहे हैं या किसी खेल में मस्त हैं, तब तो उन्हें जान-बूझकर डाँट-डपटकर काम में लगा दिया जाता है। अगर वे अपने स्कूल का काम कर रहे हैं तब भी बेपरवाही के साथ उनकी किताबें एक ओर फेंककर, यह कहा जाता है, 'बड़ा आया पढ़ने वाला, जा दौड़कर पहले मेरा काम कर आ, तब पढ़ना। दूसरी-तीसरी क्लास में पढ़ाई ही कितनी है ?'

ऐसा व्यवहार करते समय बड़े ये भूल जाते हैं कि मुन्ना-मुन्नी के लिए उनकी दूसरी-तीसरी कक्षा की पढ़ाई भी उतनी ही कठिन है, जितनी उनके लिए एम० ए० की। इस प्रकार समय-असमय पढ़ाई मे हर्जा होने से जब उनका सालाना नतीजा खराब निकलता है, तब यही बड़े उनके कान उमेठते हैं। बेचारे मुन्ना-मुन्नी की असुविधाओं को कौन ध्यान मे रखता है? उधर स्कूल में साल भर मास्टर भी पढ़ाई की ओर कुछ ध्यान नहीं देता, पर मासिक रिपोर्ट में हर साल खानापूरी करना नहीं भूलता। वार्षिक परीक्षा मे फेल होने पर सारा दोष बच्चे के सिर ही मढ़ दिया जाता है। बच्चों की अड़चनो को समझने की कोई भी चेष्टा नहीं करता। पढ़ाई में बच्चे की रुचि को जाग्रत करने के लिए न तो स्कूलों में चेष्टा होती है, न घर में ही प्रोत्साहन मिलता है। छोटी-छोटी क्लासों मे भारी-भारी बस्ते ढोते-ढोते बच्चा थक जाता है। और कुछ दिनों बाद ही पढ़ने से उसका मन ऊब जाता है। बचपन में पढ़ने के प्रति उनकी यह अरुचि आगे जाकर उन्हें निकम्मा और आवारा बना देती है।

बच्चे पर अपना गुस्सा न निकालें—अपने बड़ों के अकारण गुस्से का शिकार भी बच्चे ही होते देखे गए हैं। माँ काम में लगी है, लकड़ियाँ गीली हैं, वह फूँकते-फूँकते थक जाती है, पर आग ही नहीं जलती। समय पर खाना तैयार न होने के

कारण पिता जी माँ को दो-चार बात सुनाकर दफ़्तर बिना खाना खाये ही चले जाते हैं। इतने में किसी से लड़कर अथवा ठोकर खाकर या पेंसिल बनाते समय चाकू हाथ में लग जाने पर मुन्ना रो देता है। बस, माँ हाथ में बेलन या चिमटा लेकर गरजती-बरसती मुन्ना पर टूट पड़ती है—'कमबख़्तों ने जान खा ली है, इनका करूँ कि उनका करूँ ? सब मर जायँ तो जान छूटे। चौबीस घंटे की गुलामी से तो पिंड छूटेगा—जब देखो तब इसका भोंगा बजता ही रहता है।'

मुन्ना बेचारा दो-चार धप्प खाकर तथा माँ का चंडी-रूप देख, जान की ख़ैर न समझ और भी जोर-जोर से रोने लगता है। मुन्नी यह देखकर ओट में हो जाती है। मुन्ने के हाथ से अधिक खून जाते देख माँ चिल्लाकर पुकारती है—'ए मुन्नी की बच्ची, किधर मर गई ? दीखता नहीं तुझे कि खून निकल रहा है, पट्टी और दवाई ले आऊँ ? इन लड़कियों को पढ़ा-लिखाकर और भी गलती की, घर के काम के लायक भी नहीं रहीं।'

बेचारी मुन्नी डरती-डरती दवाई, पट्टी आदि लेकर आती है।

आये दिन घरों में बच्चों पर इसी प्रकार गुस्सा निकाला जाता है। जिसका कुछ प्रभाव नहीं होता। उल्टा बाद में बच्चे एकान्त में अपने बड़ों की नकल करते हैं तथा उनका मज़ाक उड़ाते हैं। एक मुन्ना-मुन्नी ने मुझे अपने माता-पिता के विषय में बताया—"मौसी ! हमारे पिता जी जब हाथ मे हंटर पकड़कर गरजते हैं, तो हिटलर के बाप की मजाल नहीं कि उनके सामने बोल जाय। हमारी यह मुन्नी जीजी तो कोने मे छिपकर रोने लगती है और मेरी माता जी को तो नर्वस डायरिया लग जाता है। जब तक वे घर में रहते हैं सिवा उनके किसी की आवाज़ नहीं सुनाई पड़ती। हम लोग अपने कमरे मे मेज़ पर सामने किताबे खोलकर पढ़ने का ढोंग रचाए बैठे रहते हैं। जब वे दौरे पर चले जाते हैं, घर मे सब शान्ति की साँस लेते हैं। मैं तो यही मनाता रहता हूँ कि पिता जी हमेशा दौरे पर ही रहा करे।"

मैंने मुन्नी से पूछा—"पिता जी की गैरहाज़िरी मे तुम्हारे घर मे सुख तथा शान्ति रहती होगी ?"

मुन्नी बोला—"काहे की सुख-शान्ति, मौसी ! उनकी गैरहाज़िरी मे दोनों भाई कुछ पढ़ते-लिखते नहीं, दिनभर खेल-कूद में लगे रहते हैं, माँ कलपती रहती है, पर उनकी कौन सुनता है ? पिता जी को लौटकर आने पर किसी-न-किसी तरह पता चल ही जाता है कि दोनों भैया पिकनिक, सिनेमा तथा मैच खेलने गए हुए हैं, वे फिर माँ और भैया सबकी खबर लेते हैं।"

यह सब सुनकर मुझे उनके डिक्टेटर पिता की बुद्धि पर बड़ा क्रोध आया। अपनी समझ मे वे सब पर शासन करते हुए, घर में व्यवस्था रखने की चेष्टा करते

है। वास्तव में उनकी नासमझी से ही बच्चे प्रतिक्रियावादी बन गए हैं, और उनकी आँखों मे माता का महत्त्व भी घट गया है। तथा अपनी माता की दुर्दशा देखकर मुन्नी के हृदय मे पुरुष जाति के प्रति घृणा दिन-प्रति-दिन बढ़ती ही जा रही है। आयु में छोटी होती हुई भी उसके मुँह पर एक प्रकार का खेद-सा छाया रहता है। अपनी माता के असफल नारीत्व और मातृत्व मे वह स्त्री मात्र के जीवन की असफलता देखती है। इस खिन्नता का उसके भविष्य-जीवन पर अवश्य प्रभाव पड़ेगा।

एक अनुभवी का कहना है कि संस्कार प्रारम्भिक अवस्था में ही बनते है और फिर जब एक बार बन जाते है, तब फिर कभी बदलते नहीं। इसलिए बालक के प्रारम्भिक संस्कार का निर्माण करने मे माता-पिता को स्वयं अपना संस्कार ठीक करना चाहिए।

बहुत से माता-पिता अपने बालको को छोटी-छोटी बात मे डाँटते और मारते रहते है। किन्तु यदि वे बालको के अपराधो की शान्तिपूर्वक परीक्षा करें तो उन्हें यह जानकर आश्चर्य होगा कि बालको ने अधिकाश अपराध उन्ही से अनुकरण मे सीखे है, अथवा उनकी किसी असावधानी, त्रुटि, दोष या दुर्बलता से बालक में वे दोष आ गये है।

मोह से पंगु न बनायँ—कभी-कभी माता-पिता अधिक ममता के कारण भी अपने मुन्ना-मुन्नी को पर-निर्भर बना देते है। वे उन्हे अपने से दूर नही करना चाहते। उन्हें यही चिन्ता लगी रहती है कि 'हाय! हम से परे होकर यह कैसे रहेगा? इसे तो अपने खाने-पीने की ही याद नही रहती, अपनी चीजों की संभाल ही नहीं करनी आती, बोर्डिग हाउस में रहकर यह तो बीमार हो जायगा। यह तो हमारी आँख का तारा है। अगर इसे कुछ हो गया तब हमारी तो जान पर बन जायगी।'

बस, माता-पिता के ऐसे उद्‌गार सुन-सुनकर बच्चे भी स्वय में विश्वास खो बैठते है। वे अपनी निर्णय-बुद्धि ही खो बैठते है। फलस्वरूप माता-पिता से अलग होकर वे अपने को खोया-खोया-सा अनुभव करते है।

एक इसी प्रकार के लड़के को बड़ी कोशिशों से बनारस इंजीनियरिंग कालेज में दाखिला मिल गया था। परन्तु माता-पिता की देखभाल का वह इतना आदी हो गया था कि वहाँ जाकर उसकी आधी तो चीजे खो गईं, रुपये चोरी हो गए, कुछ चालाक दोस्त किताबें माँगकर ले गए, बाद मे उन्होंने लौटाई नहीं। साथ के लड़के उसे बेवकूफ़ बनाते; उसका मज़ाक उड़ाते आदि। तंग आकर वह तीन महीने बाद ही घर लौट आया। उसके माता-पिता भी चार दोस्तों मे यह बात बड़े गौरव से कहते थे कि 'हमारा मुन्ना भैया हम लोगों को छोड़कर रह नहीं सका, उसकी ममता हमसे इतनी है कि कहता है, मै तो आप के पास ही रहकर पढ़ूँगा।'

इसी प्रकार का एक और किस्सा है। हमारे एक मित्र का एक पन्द्रह वर्ष का लड़का मैट्रिक पास करके जे० एस० डब्ल्यू के चुनाव मे सफल हो गया। वह इन्टरव्यू में भी चुन लिया गया। पर जब उसकी माँ को पता चला कि वह मिलिटरी ट्रेनिंग के लिए देहरादून जा रहा है, उसने रो-रोकर घर सिर पर उठा लिया—'हाय ! मुन्ने का बाप नहीं है, भाई-भावज मिलकर उसे मिलिटरी ट्रेनिंग के लिए भेज रहे हैं। मेरा बेटा लड़ाई में मारा जायगा। मै तो भूखी रहकर जान दे दूँगी। चाहे मेरा मुन्ना किसी दफ़्तर में क्लर्क बन जाय मुझे वह मंजूर है, पर रहेगा तो मेरे घर में ही, मै उसे आँखों से ओझल नहीं करूँगी।'

उस लडके की भावज मेरी सहेली थी। उनके अनुरोध से मै भी उस मुन्ने की माँ को समझाने गई। बहुतेरा समझाया कि 'माता जी, देखिए मेरा बेटा भी तो हवाई जहाज़ की ट्रेनिंग के लिए गया हुआ है। जब लड़ाई होती है, तो फ़ौजियों से अधिक नागरिक मारे जाते है। और फिर जो मिलिटरी में होते है, वे सभी खतरे में तो नहीं होते। जिसकी मौत आई होगी, वह क्या घर बैठने से बच जायगा ? आख़िरकार देश के लिए इतनी माताओं ने अपने बेटे भेजे है, आप इतनी अधीर क्यों हो रही है ?'

पर मेरा सब समझाना व्यर्थ ही रहा। उस मुन्ने को भी अपनी माँ के इस दुराग्रह से बहुत रंज हुआ, पर उसमे माँ का प्रतिरोध करने का साहस नहीं था। क्योंकि माता ने छुटपन से इतनी ममता मे जकड़ा हुआ था कि वह माँ के अन्याय को भी चुपचाप सह लेता था। आजकल वह लड़का किसी आफ़िस में क्लर्क लगा हुआ है। अब वह स्वयं समझता है कि उसने देहरादून जाने का मौका खोकर बड़ी भूल की। वहाँ तो वह कुछ साल बाद अफ़सर बन जाता और कहाँ अब एक सौ रुपये की नौकरी पर पक्के होने के लाले पड़े हुए है। अब आप देखिए, इस प्रकार की ममता बच्चे को कैसा पंगु बना देती है।

बच्चे माँ-बाप से ही व्यवहार-बुद्धि सीखते है। अच्छे नागरिक, आदर्श मित्र, कर्तव्यपरायण माता-पिता या पति-पत्नि बनने का पाठ वह बचपन में ही सीखते है। छुटपन में उनके साथ माता-पिता, बड़े बहन-भाई आदि सम्बन्धियों का जैसा व्यवहार उनके प्रति होता है, उसकी छाप उनके चरित्र पर शनैः-शनैः पड़ती रहती है, इस प्रकार उनकी आदतें, स्वभाव, मैनर्ज़ तथा चरित्र का निर्माण होता है। यहाँ तक कि उनकी भाव-भंगी, चाल-ढाल, रुचि-अरुचि पर भी बाल्यकाल के वातावरण की छाप होती है। उनका दृष्टिकोण निर्णयात्मक बुद्धि तथा मनोभावों का विकास भी माता-पिता के सहारे ही होता है। अतएव बड़ों के ऊपर इस बात की बड़ी जवाबदारी है कि वे मुन्ना-मुन्नी के प्रति बहुत सोच-समझकर व्यवहार करें। ऐसा न हो कि उनकी भूल के कारण वे क्रोधी, स्वार्थी, कामचोर, उद्दण्ड, मुँहफट, चिड़चिड़े, रोंदू, बहानेबाज़,

निकम्मे तथा धोखेबाज़ बन जायें या उनमें सहनशक्ति, आत्मनिर्भरता तथा निर्णयात्मक बुद्धि का अभाव ही रह जाय और वह दब्बू तथा पर-निर्भर बने रहें।

जिस बच्चे के हृदय मे बचपन का कटु अनुभव रहता है, वह बड़ा होकर प्रतिक्रियावादी बन जाता है। इसी प्रकार जो अधिक ममता में जकड़े रहते है, उनमें उद्यमशीलता कम होती है। योग्यता होते हुए भी वह कोई निर्णय लेने या आगे बढ़ने में झिझकते है, इस प्रकार उनमे हीनता की भावना घर कर जाती है।

बचपन का सुखद और स्वस्थ अनुभव बच्चों के प्राकृतिक विकास के लिए बहुत आवश्यक है। इसलिए बड़ों को बच्चो के प्रति व्यवहार करने में बहुत सचेत रहना चाहिए। बच्चा होने के कारण वह उपेक्षा या अधिक लाड़ का पात्र है, यह समझना भूल है। वह भी घर का एक मेम्बर है; घर की असुविधाएँ, अड़चन, सुख-दुःख, सफलता-असफलता सभी मे आप उसे अपना साझीदार बनायें। अपनी सामर्थ्य के अनुसार की गई उसकी चेष्टाए तथा त्याग को प्रोत्साहन दे। उसके मान-सम्मान तथा अधिकारो की भी रक्षा की जाय। उसकी सुविधाओ तथा मनोरंजन को भी महत्त्व दें। ना ही उस पर इतनी ममता और सेवा करे कि वह आप पर भार हो जाय और ना ही उसे ऐसे कठिन नियंत्रणों मे रखे कि वह आपको डिक्टेटर तथा स्वयं को दबा हुआ समझने लगे। जब आपका प्रेम और नियंत्रण मर्यादित रहेगा, तभी मुन्ना-मुन्नी का शारीरिक और मानसिक विकास सन्तोषजनक हो सकेगा।

चौबीसवाँ अध्याय

नियमों की पाबंदी

'बच्चे देश की सर्वोत्तम निधि है। अगर बचपन में ही उनका चरित्र ठीक से घड़ा जा सके तो वे रत्न के सदृश्य जगमगायेंगे। माता-पिता तथा गुरुओं पर बच्चों के पालन-पोषण और चरित्र-निर्माण की बड़ी भारी जिम्मेदारी है। अगर हम अपने बच्चों की देखभाल सुचारू रूप से करते हुए उन्हें आदर्श नागरिक बनाने का दावा कर सकें तो भारत का भविष्य उज्ज्वल है, इसमें कोई सन्देह नहीं।'

—राजकुमारी अमृतकौर

मनुष्य समाजबद्ध प्राणी है। जिस प्रकार समाज को सुसंगठित रखने के लिए प्रत्येक के लिए नियमों की पाबंदी जरूरी है, उसी प्रकार से घरों में शान्ति और व्यवस्था बनाये रखने के लिए भी यह आवश्यक है कि बच्चों के लिए भी नियम की पाबंदी हो। जिस घर में चार-पाँच बच्चे हैं अगर वे माँ-बाप के नियन्त्रण और काबू में नहीं हैं, तो वे सब की सुख-शान्ति नष्ट कर देंगे। इसलिए नियमों की पाबंदी या उचित नियन्त्रण अथवा डिसिप्लिन बच्चों के लिए भी उतना ही आवश्यक है जितना बड़ों के लिए।



नियमोल्लंघन का कारण—अगर कोई बच्चा बार-बार आपकी हुक्मउदूली करता है तो उसके कारण की खोज करें कि कहीं आप हुक्म देने में बहुत सख्ती तो

नहीं करते ? क्या आपके हुक्म को पालन करना उसकी उम्र, योग्यता और सामर्थ्य के अन्दर है ? जो व्यक्ति बच्चे को हुक्म देता है उसका स्वयं का उदाहरण तथा आदर्श कैसा है ? क्योंकि अगर कोई शिक्षक स्वयं समय पर शाला नहीं आता, तो वह बच्चों से वक्त का पाबंद होने का तकाजा कैसे कर सकता है ? इस बात की भी जाँच करें कि बच्चे के साथ पक्षपात तो नहीं हो रहा है ? या आपके आदेश देने का ढंग गलत तो नहीं है ? कहीं आपके हुक्म देने पर कोई दूसरा उसका खंडन तो नहीं करता ? क्योंकि बच्चा एक समय में एक ही आज्ञा-पालन कर सकता है। उपरोक्त सब प्रकार की जाँच कर लेने पर भी अगर बच्चा नहीं सुनता है तो उसे उचित सज़ा देकर, प्रशंसा करके, उत्साहित करने के लिए इनाम देकर, या बुराई-भलाई समझाकर सुधारने की चेष्टा करनी चाहिए।

सज़ा—पहले सज़ा के तरीके को ही लीजिए। अगर आप अपने बच्चे को बेरहमी के साथ बार-बार सज़ा देंगी तो वह ढीठ हो जायगा और उसके आत्मसम्मान की भावना को चोट पहुँचेगी और वह आपके प्रति बदतमीज़ भी हो सकता है। इसलिए सज़ा देने का तरीका अन्तिम तरीके के रूप में लाचारी को ही अपनाना उचित होगा। जहाँ तक हो सके बच्चे को बुराई की ओर आकर्षित ही न होने दें, उनकी संगति का आप विशेष ध्यान रखें। स्वयं का दृष्टान्त अच्छा रखें, बुरी संगति में ही रहकर बच्चे गंदी आदतें—गाली देना, रोना, जिद करना, पैसे खर्चना, चटोरापन आदि सीख जाते हैं। मान लीजिए बच्चे ने आपको छाबड़ी वाले से चाट या फेरी वाले से आइसक्रीम लेकर खाते देखा, तब अन्य बच्चों को वह जब भी खाते देखेगा आपके पास आकर ज़िद करेगा, रोयेगा कि उसे भी वह चीज़ मिलनी चाहिए। अगर आप उसे, बाज़ार की चीज़ खराब है, इसलिए हम भी कभी नहीं खाते, यह समझा दें, और वही चीज़ घर बनाकर उसकी तृप्ति कर दें तो वह कभी बाज़ार की चीज़ों की तरफ ललचाई आँखों से नहीं देखेगा।

जब कभी सज़ा देनी पड़े तो बच्चे के मन में यह बात भली प्रकार बिठा दें कि सज़ा का सम्बन्ध बुरे काम से है बच्चे से नहीं, उसको सज़ा इसलिए मिल रही है कि उसने बुरा काम किया, न कि इसलिए कि बच्चा बुरा है। जब बच्चे को यह बात समझा दी जाय कि किसी की चीज़ बिना पूछे नहीं लेनी चाहिए और तिस पर भी वह किसी के घर जाने पर चुपके से उसकी चीज़ उठाकर घर ले आय तो उसे सज़ा देनी ही पड़ेगी। पर साथ में उदाहरण देकर समझा दें कि अगर बड़े लोग भी चोरी करते हैं तो उन्हें सरकार सज़ा देती है। इस प्रकार उस बुरे कार्य के प्रति उसको घृणा हो जायगी। सज़ा उसी समय दी जाय जब वह बुरा काम करे। झूठी धमकी कभी न दें। कभी बुरे काम के लिए सज़ा देना और कभी ढील देना बुरी बात है। परन्तु खुद गुस्से में आपे से बाहर कभी न हों, अन्यथा आपकी सज़ा का प्रभाव बच्चे पर कुछ

नहीं पड़ेगा।

सज़ा देने के पश्चात् बच्चे के प्रति आपका बर्ताव रुखाई या घृणा का नहीं होना चाहिए। क्योंकि आपकी रुखाई को देखकर बच्चा सज़ा का सम्बन्ध बुरे काम से न समझ अपने से समझेगा। इसलिए आपके तथा बच्चे के लिए यह अधिक सुविधा-जनक होगा कि सज़ा समाप्त हो जाने पर उससे आप इस प्रकार से सलूक करें कि मानो वह बात वहीं समाप्त हो गई है। घर में भी बहन-भाइयों में से किसी को भी उस बात को लेकर बच्चे को चिढ़ाना या उसके प्रति तिरस्कार या तुच्छता का भाव प्रदर्शित नहीं करना चाहिए।

दो वर्ष से चार वर्ष तक की उमर ऐसी होती है कि बच्चे की समझ का विकास नहीं हुआ होता, अतएव इस उमर मे केवल समझाने से काम नहीं चलेगा। अगर बच्चा प्रेम और फुसलाने से भी नहीं समझता तब उसे धमकाना या हल्के से एक-आधा थप्पड़ लगाना ही पड़ता है। उसको डराने के लिए इतना ही काफ़ी है। इस प्रकार की सज़ा लाचारी में ही देनी चाहिए जब कि और सब उपाय व्यर्थ हो गए हों।

सज़ा देने का एक दूसरा ढंग यह भी है कि जिसने बुरा काम किया है, उसे मिठाई न दी जाय अथवा बाहर घूमने या पिकनिक में नहीं ले जाया जाय। परन्तु यह तभी सफल हो सकता है जब जिस दिन बच्चे ने बुरा काम किया, उसी दिन ऐसा मौका आ जाय कि अन्य बच्चे बाहर खेल-तमाशे में जायँ केवल उस बच्चे को ही घर पर छोड़ दिया जाय।

सज़ा के रूप में बच्चे को किसी कमरे में बंद करने का ढंग भी बुरा नहीं है। परन्तु इस बात का ध्यान रहे कि कमरे में अंधेरा न हो तथा वहाँ पीने का पानी भी रख दिया जाय। बंद करने से पहले उसे समझा दिया जाय कि तुम्हें इस कमरे में आधे घंटे यहां बंद करके सज़ा दी जा रही है। अगर तुमने दरवाजे पीटे या दुहाई मचाई तो आधा घंटा सज़ा और बढ़ा दी जायगी, और अगर आधा घंटा बंद रहने के बाद तुमने अपनी गलती को समझा और माफ़ी माँग ली तो तुम्हें मुक्त कर दिया जायगा।

बहिष्कार करने का दूसरा तरीका यह भी है कि मंडली ने उसकी तरफ उदा-सीनता का भाव रखना। क्योंकि बच्चा अपनी मंडली मे उपेक्षणीय नहीं होना चाहता। अपने संगी-साथियों में शामिल हुए बिना उसे अकेलापन बहुत बुरा लगता है, अतएव वह बहुत जल्द ही अपनी बुराई को छोड़ देगा ताकि अपने समाज में उसका सम्मान के साथ हेल-मेल हो जाय।

बच्चे को जब आप बुरे काम के लिए डाँटें तब अपने गुस्से को काबू में रखें और उसको सीधी-सादी भाषा में उसका कसूर समझाकर लज्जित करें तथा उसके दिल में यह बात भली प्रकार जमा दें कि इस प्रकार के कार्य करना बड़े शर्म की बात

है और भविष्य में वह ध्यान रखे कि इस प्रकार की भूल फिर न हो अन्यथा कड़ी सज़ा मिलेगी। इतना सब करने के बाद फिर किसी के सामने या बात-बात पर उस बात का ज़िक्र करके ताने न दे। जिन माँ-बाप मे ताने देने की, अथवा खिल्ली उड़ाने की आदत होती है वह उनके तथा बच्चे—दोनों के लिए हानिकारक है। बच्चा उन्हें अपनी भलाई चाहने वाला नहीं समझता और बार-बार कहने से उसमें या तो हीनता की भावना आ जाती है या वह ढीठ हो जाता है।

प्रशंसा—बच्चे को सुधारने का एक ढंग यह भी है कि जब वह अपने व्यवहार में तरक्की दिखाये तो 'शाबास' कहकर और पीठ ठोककर उसके काम की प्रशंसा करनी चाहिए। बच्चे की प्रशंसा न करके जो काम उसने किया है उसकी तारीफ़ करने से बच्चा प्रशंसा प्राप्त करने की इच्छा से दुबारा वैसी तरक्की दिखायगा।

अच्छा काम करने पर या आज्ञा-पालन करने पर बच्चे को इनाम आदि देकर भी उत्साहित करना चाहिए, परन्तु इनाम अच्छे काम करने पर ही देना चाहिए। पहले से इनाम का लोभ दिखाकर अच्छा काम करवाना उपयुक्त नहीं है। यथा—कोई बच्चा बिना किसी डर या लालच के अपनी पढ़ाई करता है और साप्ताहिक परीक्षा में उसका नतीजा फर्स्ट आता है तो उसको इनाम देना उचित है, परन्तु किसी बच्चे को हर समय इनाम का लालच देकर पढ़ने के लिए राजी करना उचित नहीं है। पहला कार्य तो इनाम अपनी योग्यता से जीतना हुआ, दूसरा कार्य घूंस लेने के सदृश्य है।

इस प्रकार योग्यता प्राप्त करके इनाम प्राप्त करने की आशा उस में जाग्रत होगी। बहुत से बच्चे इसी प्रकार से अच्छे काम में उत्साहित होकर तरक्की कर जाते है। कई एक बच्चे ऐसे सुशील और विनम्र होते हैं कि वे मार-पीट, डाँट-डपट तथा सज़ा से सर्वथा अनभिज्ञ होते है। उनके माँ-बाप ने उन्हें कभी कठोरता का अनुभव ही नहीं होने दिया। प्रेम और प्रशंसा ही उनको सुधारने के लिए काफ़ी थी। ऐसे बालक बड़े भाग्यशाली है। बड़े होकर वे दयालु, सज्जन, मेधावी और परोपकारी निकलते है।

इनाम कोई अवसर और योग्यता होने पर ही देना चाहिए ताकि उसका महत्त्व बना रहे और बच्चा उसका आदी न हो जाय। नहीं तो इनाम का आकर्षण चला जायगा। इनाम भी इस प्रकार के देने चाहिएँ जो बच्चे के उपयोग में आयें। अवसर पर ऐसी चीजें दी हुई एक तो इनाम का महत्त्व रखती है, दूसरी बच्चे की आवश्यकता-पूर्ति करती है, जिसके लिए आपको दोबारा पैसा नहीं खर्चना पड़ेगा। उपयोगी खिलौने, पुस्तकें, कपड़े आदि चीजें इनाम में दी जायँ तो ठीक है, या कहीं पिकनिक के लिए अथवा सिनेमा, सर्कस या घूमने अथवा किसी मित्र के यहाँ या मैच आदि देखने की इजाजत मिल जाने से भी बच्चे प्रसन्न हो जाते है।

प्रेरणा—बच्चे लम्बे-चौड़े लैक्चर नहीं समझते, अतएव आप उन्हें उनकी

भूल संक्षेप में और सीधी-सादी भाषा में समझायें। अगर घर मे उसी प्रकार की थोड़ी-बहुत भूल कई अन्य बच्चो में भी हो तो खेल के अवसर पर सब बच्चों को इकट्ठा करके इस प्रकार की शिक्षाप्रद कहानी सुनाई जावे जिससे बच्चों को अपनी भूल का स्वयं ज्ञान हो जाय, और वे उसके लिए लज्जित होकर भूल सुधारने की कोशिश करें। हितोपदेश के द्वारा ही राजकुमारो को विद्वान् पण्डितों ने सारी राजनीति सिखा दी थी। फिर भला साधारण बातें सिखानी कौन कठिन है ?

हमारे यहाँ एक मित्र आते है। उन्हें बच्चों को उत्साहित करने के ढंग खूब आते है। कुछ बच्चों को वह इकट्ठा कर कोई शिक्षाप्रद कहानी सुनाकर फिर बाद में बच्चों से जवाब-सवाल मे उसी कहानी के आधार पर प्रश्न पूछते है, उससे जो शिक्षा मिलती है उस विषय मे बच्चो से अलग-अलग पूछते है कि किस-किस मे वे गुण है। यथा—कोई मेधावी बच्चे की कहानी सुनाकर फिर पूछते है कि कक्षा में कौन लड़का फर्स्ट रहता है ? सप्ताह मे किस के नम्बर अधिक थे ? घर पर कौन कितने घंटे पढ़ता है ? किसकी किस विषय मे रुचि है ? कभी वे उनसे कविता या कहानी सुनते, मुंहजबानी सवाल पूछते अथवा उनकी अक्ल की परख के लिए प्रश्न पूछते है, सो बच्चे उनके साथ रहकर पढ़ने लिखने मे दिलचस्पी लेने लगे है तथा बहुत से बच्चे उनकी शिक्षा की बातों से सुधर भी गये है।

जब किसी बच्चे ने कसूर किया हो तो सजा देने से पहले उसकी ओर से क्या कथन है, यह भी जान लेना चाहिए। बातों-ही-बातों में आप उसकी भूल पकड़ लेंगे तब उसी से पूछें कि जिस प्रकार तुमने दूसरे को मारा या दूसरे का नुक्सान किया, अगर तुम्हारे साथ भी वैसा व्यवहार किया जाय तो क्या तुम्हें अच्छा लगेगा या तुम उसे ठीक समझोगे ? जब वह अपनी भूल समझ जाय तब उससे कहलाएँ कि अब ऐसा नहीं करूँगा और मुझे अपनी गलती पर शर्म है।

कई बच्चे ऐसे होते है कि उनमें चीज़ों को तोड़ने-मोड़ने की प्रवृत्ति बहुत होती है। इसका कारण उनकी उत्सुकता है। अतएव उन्हें ठीक तरीके से चीज़ों के विषय में जानकारी प्राप्त करनी सिखायें। अगर उनका खिलौना टूट गया है तो उसे जोड़ना सिखाना चाहिए। नकारात्मक बन्धनों मे बाँधने के बदले उन्हें रचनात्मक कार्य में लगाना अधिक उचित है।

कई माताओं का विचार है कि लड़कियों से लड़के अधिक नटखट और बेकाबू होते है। ऐसा होने का कोई कारण नहीं दीखता। बात यह है कि माता-पिता कन्याओं के साथ नरमी और धीरता से पेश आते है पर लड़कों के साथ उसी कसूर पर अधिक कठोरता से। फल यह होता है कि लड़की कठोरता की अभ्यस्त न होने के कारण जरा से धमकाने से डर जाती है जब कि लड़का कुछ ढीठ

हो जाता है।

माता-पिता को चाहिए कि अपने अनुभव तथा योग्यता से धीरतापूर्वक बच्चों को नियन्त्रण या डिसिप्लिन का आदी बनायें। सहानुभूति तथा प्रेम से बच्चे शीघ्र ही काबू में आ जाते हैं। आप बच्चों को मुसीबत न समझें वस्तुतः उनकी कठिनाइयों को सहानुभूतिपूर्वक सुलझायें। बच्चे स्वभाव से ही नेक और सरल होते हैं। कहते हैं कि हज़रत ईसा के पास जब छोटे-छोटे बच्चे दौड़कर आ रहे थे, तब लोग उन्हें रोकने लगे। वे समझे कि ये लड़के अपनी उद्दण्डता से ईसा को तंग करेंगे, परन्तु ईसा ने कहा कि तुम इन बच्चों को मेरे पास आने से मत रोको, क्योंकि स्वर्ग का राज्य वास्तव में इन्हीं का है और मैं सचमुच मे तुम से यही कहता हूँ कि जब तक तुम भी अपने मन से बच्चों जैसे नहीं बन जाओगे, तब तक तुम्हे स्वर्ग के भीतर नहीं जाने दिया जायगा।

अनुशासनप्रियता का विकास—अगर हम बच्चे को अनुशासन मे रखना चाहते है तो इस बात की आवश्यकता है कि हम ऐसी परिस्थितियाँ पैदा करें कि बच्चा अनुशासन की ओर झुके। इसके लिए निम्न तीन बातों की आवश्यकता है—

(१) बड़ों का उदाहरण;

(२) बड़ों के आदेशों में सादृश्यता और समानता; और

(३) नियमों का बच्चे की आयु और योग्यता के अनुरूप होना।

जिस घर में माता-पिता तथा अन्य बड़े भाई-बहन अपने स्वास्थ्य, परिवार तथा समाज के लिए हितकारी नियमों का पालन करते है, बच्चों को भी उनकी देखा-देखी उन नियमों को पालन करने की प्रेरणा मिलती है। बच्चे जब देखेंगे कि बड़े प्रातःकाल उठकर एक दूसरे को नमस्कार करते हैं, शौच-क्रिया से निवृत्त होकर, दातुन-कुल्ला करने के पश्चात् चाय पीते हैं, तो वे भी ऐसा ही करेंगे।

अपने बहन-भाइयों को जलपान करते देख एक तीन-चार वर्ष का मुन्नू भी सोकर उठते ही बिस्कुट माँगने लगा। यह देखकर माँ ने कहा—"छि, छि, गंदा लड़का, बासे मुँह बिस्कुट खायगा !"

यह सुनकर मुन्नू चट बोल उठा—"हाँ, बाबू जी तो पलंग पर लेटे-लेटे ही सिगरेट और चाय पीते है, वे भला कहाँ मुँह धोते है ? क्या बाबू जी गंदे है ?"

बाबू जी की जो आदत माँ नहीं छुड़ा सकी, मुन्नू ने छुड़ा दी। उस दिन से मुन्नू के बाबू जी भी हाथ-मुँह धोकर चाय पीने लगे। अब मुन्नू रोज सबेरे उठकर बाबू जी से कहता—"चलो बाबू जी, उठो, हाथ-मुँह धोओ, अगर तुम समय पर तैयार नहीं हुए तो चाय नहीं मिलेगी।"

बाबू जी हँसकर कहते—"चलो भाई मुन्नू, तुम तो हमारे गुरू हो।"

बाबू जी की देखा-देखी सभी मुन्नू को गुरू जी कहने लग गए। अब माँ को जब किसी काम से मुन्नू को बरजना होता, तो वह कहतीं—"अरे तू अगर ऐसा करेगा, तो फिर तुझे कोई गुरू जी नही कहेगा। तू अच्छे काम करता है, तभी तो सब अच्छे बने हुए हैं। उन्हें शर्म लगती है कि छोटा मुन्नू तक अपना काम खुद करता है, अगर हम नही करेंगे तो शर्म की बात है।"

इस प्रकार महत्त्व देने से तथा प्रशंसा करने से मुन्नू नियमो का पालन करने का अभ्यस्त हो गया।

कभी-कभी ऐसा भी होता है कि बड़ों का मिज़ाज बिगड़ा होता है या वे जल्दी में होते है अथवा किसी और काम मे उलझे होते है तो बच्चे के अपराध पर वे झुँझलाकर बच्चे के साथ बुराई से व्यवहार करने लगते है, अथवा अपनी जान छुड़ाने के लिए जिस काम से उसे एक बार वर्जित किया है उसी को करने की आज्ञा दे देते है। इसका फल यह होता है कि बच्चा अपने बड़ो के व्यवहार मे सादृश्यता न पाकर, नियम को तोड़ने मे बुराई नही समझता, परन्तु इस बात की ताक मे रहता है कि माता-पिता का मूड देखकर उनसे हाँ करवाई जाय। इसलिए वह रो-धोकर अथवा अनुनय-विनय करके उन्हे झुकाने की चेष्टा करता है। जब घर में कोई मेहमान हो अथवा माता-पिता ऐसे व्यक्तियों के बीच में बैठे हों जहाँ वे लिहाज में आकर बच्चे को रोकना-टोकना नही चाहेंगे, तो बच्चे जान-बूझकर वर्जित कामों को करने की चेष्टा करते है। ऐसी स्थिति मे मंडली में से उठकर बच्चे को एकान्त में ले जाकर उचित बात समझा देनी चाहिए। बच्चे को यह समझाना चाहिए कि जो बात बुरी है, उसे करना प्रत्येक अवस्था मे बुरा है। यह नहीं कि केवल माता-पिता के सामने ही बच्चा गाली न दे, और गली तथा स्कूल में जाकर गाली-गलौज करने मे कोई बुराई न समझे।

जब आपके घर आपके मित्र का कोई बच्चा आय आप उसे यह कभी न कहें, 'अरे तुम्हारे घर मे तो व्यर्थ की बन्दिशें है, यहाँ तुम्हारे माँ-बाप नहीं देख रहे। जाओ, तुम यह काम कर लो कोई कुछ नहीं कहेगा। यहाँ तुम्हें पूर्ण स्वतन्त्रता है।'

आपके इस प्रकार के व्यवहार से बच्चा चाहे आपको अच्छा समझने लगे, परन्तु इससे अपने माता-पिता उसे सनकी तथा कठोर प्रतीत होने लगेंगे।

प्रायः देखने मे आता है कि बड़े बहन-भाई, या ननद, देवर मुन्ना-मुन्नी की माँ को परेशान करने अथवा बच्चे की फजीहत करवाकर हँसने का मौका प्राप्त करने के लिए पहले तो बच्चे को कोई अपराध करने के लिए उकसा देते है। फिर पुकारकर कहते है, 'देखो भाभी, यह मुन्ना सिगरेट जला रहा था;' 'रेडियो का बटन उल्टी तरफ मरोड़ रहा था;' 'इसने डोली मे से मिठाई निकालकर खाई है।' उस समय मुन्नू भी

हँसता हुआ कहता है, 'माँ, भैया या चाचा ने भी मिठाई खाई है, सिगरेट ये लोग पी रहे थे, मुझे कहने लगे कि तू भी एक सूटा मारकर देख, क्या मज़ा आता है।'

बेचारी काम मे व्यस्त माँ झुँझलाकर रह जाती है। मुन्नू देखता है कि चाचा और भाई भी तो अपराध करते है, पर वे बच जाते है, सो अपराध करने का उपयुक्त अवसर तभी है जब कि भैया और चाचा का सहयोग मिल सके। क्योंकि माँ लिहाज में उनको कुछ नहीं कहती। न्हें

पर जब कभी अधिक नुकसान हो जाता है, तो माँ मुन्नू के मुँह पर तड़ातड़ चाँटे जड़कर अपना गुस्सा निकालती है। फिर सिसकता हुआ मुन्नू सोचता है—'जितनी रोक-टोक है सब बच्चों के लिए ही है, बड़ों को कोई कुछ नही कहता।' इस प्रकार के विचार जब मुन्ना के हृदय मे घर कर जाते है तो वह नियमो का सहर्ष नहीं, अपितु लाचारी में पालन करता है।

बड़ों के सहयोग न देने पर मुन्ना इच्छा होते हुए भी नियम-पालन करने से लाचार हो जाता है। मुन्ना का स्कूल साढ़े नौ बजे लगता है, पर माँ भोजन समय पर तैयार नहीं कर पाती। मुन्ना झुँझलाकर बिना खाना खाए जाने को तैयार हो जाता है यह देखकर माँ कह उठती है—'ऐसा क्या गजब हो चला है, अगर दस मिनट की देर हो भी गई तो क्या हुआ? खाना खाकर जा, बहुत होगा जुर्माना दे देना या कह देना 'बस' देर में मिली थी इसलिए आने मे देरी हो गई।' इधर स्कूल मे मास्टर भी, हेडमास्टर, या इंस्पैक्टर के डर से बच्चों को बहानेबाज़ी करना सिखाता है। सालभर काम नहीं करवाया जाता, इन्स्पैक्शन के समय कापियाँ भरवा ली जाती है और पिछली तारीखें डालकर दस्तख़त कर दिये जाते है। बड़ो के व्यवहार में सादृश्यता का अभाव और नियमों के प्रति इस प्रकार की उपेक्षा का बच्चे पर बहुत बुरा प्रभाव पड़ता है।

एक भूल बड़े और करते है, वे बच्चे की योग्यता और आयु को भूलकर उसे कठोर नियमो से जकड़ने की चेष्टा करते है, उनके विफल होने पर वे उसकी कटु आलोचना करने लगते है कि यह बच्चा बड़ा निकम्मा है, नालायक है, बहानेबाज़ है, विनाशशील है, बेपरवाह है, कहना नहीं सुनता इत्यादि, इत्यादि। नियम-पालन मे बच्चे की चेष्टा ही महत्त्व रखती है। पूर्णरूप से सफलता तो उसे अभ्यास से ही प्राप्त होगी। इस विषय मे तुलनात्मक दृष्टिकोण भी नहीं रखना चाहिए। प्रत्येक बच्चे की अपनी-अपनी सामर्थ्य होती है। कोई बच्चा अल्पायु में होशियार और समझदार हो जाता है, कोई देर में।

बड़ों के उदाहरण पेश करने पर तथा सहयोग और प्रेरणा देने पर बच्चा नियमों का पालन करना सीख जाता है। इस विषय में भेदनीति नहीं बरतनी चाहिए। नियम सब बच्चों पर लागू होना चाहिए। स्कूल मे बच्चों को नियमो की पाबंदी नहीं

अखरती। क्योंकि वे अपने संगी-साथियो को भी नियमों का पालन करते देखते है। इस विषय में मिलिटरी स्कूलों का उदाहरण अनुकरणीय है।

एक मनोवैज्ञानिक का कहना है कि आज के बालक कल के पुरुष और स्त्रियाँ है। अब से कुछ ही समय पहले लोगों की ऐसी धारणा न थी। वे यही समझते थे कि बच्चो की इच्छा को तोड़ना और अधीन रखना चाहिए। बालक जिस वस्तु के लिए हठ करे, वह उससे बलात् छीन लेनी चाहिए और प्रत्येक काम उससे डंडे के जोर से करवाना चाहिए। वे बच्चे का एक स्वतन्त्र अस्तित्व न समझकर उसे एक खिलौना समझते थे. परन्तु अब सभ्य ससार बालक के अतिशय महत्त्व का अनुभव करने लगा है। उसे अब इस बात की समझ आने लगी है; कि हमारे बच्चो के ही हाथ मे किसी दिन देश और शासन की बागडोर होगी, वही गृहस्थी को सुखी या दुःखी बनायँगे और यदि हम अपने देश को स्वतन्त्र और उन्नत देखना चाहते है तो हमें अपने बालकों की शिक्षा पर विशेष ध्यान देना चाहिए।

पच्चीसवाँ अध्याय

रूप क्या अभिशाप भी है ?

मुन्ना सुन्दर है, मुन्नी लुभावनी है। सुन्दर बच्चों पर माँ-बाप को अभिमान है। बच्चों के मनमोहक चेहरे तथा स्वस्थ शरीर सुरभित रंगीले पुष्पों के सदृश्य सब का ध्यान आकृष्ट करते हैं। जो कोई आपके प्यारे-प्यारे बच्चों को देखता है, प्रशंसा किए बिना नहीं रहता। वे सहज ही सब की आँखों पर चढ़ जाते हैं। एक अपरिचित भी उनकी नन्हीं-सी ठोड़ी को गुदगुदाकर हँसाने की चेष्टा करता है और उनके चेहरे पर सहज मुसकान की छटा देख प्रसन्न हो उठता है। आपके मित्र और सम्बन्धी उन्हें 'होनहार', 'भाग्यशाली', 'ए ब्यूटी', 'चार्मिंग' आदि कहकर प्रशंसा करते हैं। आप यह सब सुनकर आनन्द-विभोर हो उठती हैं।

सुन्दर बच्चे के प्रति पक्षपात न करें—रूप सचमुच में अपना प्रभाव और महत्त्व रखता है। पर अपनी भूल से माँ-बाप बच्चों के इसी गुण को उनके लिए अभिशाप बना देते हैं। प्रकृति का यह नियम है कि पाँचों उंगलियाँ बराबर नहीं होतीं, अगर मुन्ना-मुन्नी सुन्दर हैं, तो संभव है उनके भाई-बहन चुन्ना और चुन्नी या तो रंग में काले हैं या उनके दाँत बड़े-बड़े हैं, जिनसे उनका चेहरा आकर्षक नहीं दीखता। मुन्ना और मुन्नी ईश्वरीय इच्छा से रूप लेकर पैदा हुए हैं, जब कि चुन्ना-चुन्नी भी अपनी रूपहीनता के लिए जिम्मेदार नहीं हैं। माँ-बाप इस बात को न समझते हुए अपने व्यवहार में बच्चों के प्रति सादृश्यता नहीं रखते। मुन्ना माँ का दुलारा है, जब कि मुन्नी बाप की लाड़ली है, जो अनुग्रह इन दोनों पर माँ-बाप का है वह चुन्ना-चुन्नी के प्रति देखने में नहीं आता।

कहने को तो सभी कहते हैं कि किसी भी माँ को अपना बच्चा बदसूरत नहीं लगता। ठीक है, चुन्ना-चुन्नी माँ की आँखों में चाहे बदसूरत न दीखते हों, पर मुन्ना-मुन्नी अधिक आकर्षक प्रतीत होते हैं। बस, यही तुलनात्मक दृष्टिकोण अनजाने में पक्षपात को प्रेरणा देती रहती है। अगर चुन्नू और मुन्नू में लड़ाई हुई और चुन्नू रो दिया तो माँ मुन्नू को थप्पड़ मारने के लिए हाथ उठाकर आगे बढ़ती है, पर उसका सुन्दर मुँह और नटखटभरी मुसकान देख, थप्पड़ का वेग कम हो जाता है और धीरे से उसकी पीठ पर थपकी मारकर माँ कहती है कि मुन्नू तू बड़ा शैतान हो गया है।

बस, मुन्नू समझ गया कि माँ की ममता पिघल उठी है, वह हँसता हुआ भाग जाता है। माँ आँचल से चुन्नू का मुँह पोंछकर पुचकारकर कहती है—'अच्छा, बस चुप हो जा।' परन्तु इतने से चुन्नू के घायल आत्मसम्मान पर मलहम नहीं लग पाती,

वह माँ का दुलार पाने के लिए और जोर-जोर से रोने लगता है। काम में उलझी हुई माँ खीजकर कहती है—'अब, चुप भी हो जा। मुँह फाड़-फाड़कर घर ही सिर पर उठा लिया है। रोता रह, बैठकर, मैं तो चली नीचे, यह उपेक्षा पाकर चुन्नू चुप हो जाता है।

पर अगर दृश्य ठीक इससे उल्टा होता, चुन्नू ने मुन्नू को मार दिया होता, तो माँ गरजती हुई आती और पहले मुन्नू को गोदी में उठाकर उसको पुचकारती। उसको बेहाल होकर रोते देख, चुन्नू की ओर लपकती और उसका कान ऐंठकर एक थप्पड़ उसके जड़ती हुई कहती—'अरे कलूटे, तेरा हाथ बहुत चलता है। मुन्नू के आँख-कान में अगर कहीं लग जाती, तो तेरा क्या बिगड़ता, उसकी तो सूरत बिगड़ जाती ना ?' चुन्नू की कहानी बिना सुने, रोते हुए मुन्नू को उठाकर वह अन्दर ले जाती



है। काम चाहे पड़ा रहे, कुछ मिठाई देकर उसे वह फुसलाती है, और मुन्नू उस दिन एक विजयोल्लास में पिता के आने पर चुन्नू की शिकायत करता है। आज बेचारे चुन्नू की सुन्दर मुन्नू को मारकर दिनभर घर में मुँह छिपाने में ही कुशल है।

इसी प्रकार मुन्नी और चुन्नी की कहानी है। मुन्नी को माँ अपने संग पहिना-उढ़ाकर ले जाती है, जब कि बड़े-बड़े दाँतों वाली चुन्नी को पहिनाने और सजाने का उसे शौक नहीं होता। माँ की हर एक चीज़ पर मुन्नी अपना अधिकार समझती है, पर चुन्नी माँगने में भी झिझकती है। मित्र और सम्बन्धी भी मुन्नी और मुन्ने की प्रशंसा उनके मुँह पर करते हैं, जब कि चुन्ना और चुन्नी को देखकर उनकी उपस्थिति में ही वे कह उठते हैं—'ए बहन, तेरे ये दोनों बच्चे तो मुन्ना-मुन्नी से बिलकुल भिन्न हैं। किस पर पड़े हैं ये ?' न तो माँ ही उनमें अपनी सादृश्यता देखना चाहती है और न बाप ही यह पसंद करता है कि वे उसके सदृश्य हैं। बस, भविष्य में वे इन बच्चों

को साथ ले जाने के विषय में उदासीन-से रहते हैं।

एक विद्वान् का कहना है कि बालक प्रायः न्यायसंगत और विवेकपूर्ण व्यवहार को समझते हैं। यदि कोई माता-पिता किसी संतान के प्रति अपेक्षाकृत अधिक स्नेह करेंगे तो दूसरी संतानों के हृदय में ईर्ष्या-द्वेष की भावना पैदा हो जायगी, जिस का भविष्य में महा भयंकर परिणाम होगा। यह स्वाभाविक है कि माता-पिता अपनी संतति से सम्मान की आशा करते हैं,परन्तु इस आशा के करने से पहले बच्चों को सम्मान का पात्र बनाना चाहिए। उनको अपनी ओर से संतान के व्यक्तित्व का आदर करना चाहिए। बुरे लगने वाले शब्दों को विशेषकर दूसरों के सामने प्रयुक्त करके उसके आत्मसम्मान को ठेस न लगने देनी चाहिए।

पक्षपात का कुपरिणाम—अनेक घरों मे पक्षपात का आरम्भ अनजाने मे ही हो जाता है। वे विवाह, प्रीतिभोज, दावत आदि मे सुन्दर मुन्ना-मुन्नी को ही अधिकतर ले जाते हैं,स्कूलों मे भी उन्हीं को अभिनय तथा डिबेट और गेम्स मे अधिक प्रधानता मिलती है। घर मे जो मित्र और परिजन आते हैं वे भी सुन्दर मुन्ना-मुन्नी को ही दुलारते हैं। उन्हीं के हाथ में खिलौने और मिठाई थमा देते हैं। उन्हीं के साथ उनकी ठठोली और खेल-खिलवाड़ चलता है, बेचारे चुन्ना-चुन्नी में कोई दिलचस्पी ही नहीं दिखाता। ऐसे अवसरों पर माता-पिता भी उन्हें बैकग्राउंड मे ही रखते हैं।

शनैः-शनैः मुन्ना-मुन्नी को अपने रूप का गर्व हो जाता है और चुन्ना-चुन्नी एक प्रकार की हीनता का अनुभव करने लगते हैं। यह हीनता की भावना उन्हें 'इन-फिरियोरिटी कॉम्प्लेक्स' की उलझन में डाल देती है। वह योग्यता रखते हुए भी आगे बढ़ने की हिम्मत नहीं करते। अपने घर, स्कूल तथा मित्र-मंडली का तुलनात्मक दृष्टि-कोण देख, उसमें पक्षपात की बू पाकर वे एकाकीपन को अधिक पसंद करने लगते हैं। उनकी सभी शक्तियाँ या तो कुंठित हो जाती हैं, या फिर वे एकाग्रचित्त होकर अपनी मानसिक उन्नति में लग जाते हैं। संसार की जितनी महान् विभूतियाँ या बड़े-बड़े विद्वान् और कार्यकर्ता हुए हैं, उनमें से अधिकांश या तो देखने में साधारण थे या एक हद तक कुरूप ही कहे जा सकते हैं।

इसके विपरीत सुन्दर बच्चे अपने रूप के घमंड मे इतने फूले रहते हैं कि मिज़ाज से वे शोख़ और व्यवहार मे वे लापरवाह बन जाते हैं। वे एक हद तक कटु-भाषी और उद्दण्ड भी होते हैं।

हमारे एक मित्र की दो कन्याएँ हैं, एक बाप के सदृश्य रूपवती है, दूसरी माँ के सदृश्य देखने मे बिलकुल साधारण। रूपवती कन्या माँ-बाप दोनों की बहुत दुलारी थी। पढ़ने-लिखने या गृहकार्य में उसने निपुणता प्राप्त करने की कभी चेष्टा भी नहीं की। इसके विपरीत बड़ी बहन हमेशा अपनी क्लास में अव्वल रहती, घर के काम में

भी वह दिलचस्पी रखती थी। परिश्रम करके बड़ी बहन आज एक प्रसिद्ध लेडी डॉक्टर बन गई है, वह यश और धन दोनों की स्वामिनी है। उसका गृहस्थ-जीवन भी बड़ा सफल है।

छोटी बहन ने लेडी इरविन कॉलेज ज्वाइन किया था पर वहाँ भी दो साल रह-कर कुछ डिप्लोमा हासिल नहीं कर पाई। दिन-रात फैशनपरस्ती का भूत उसके सिर पर सवार रहता है। बनाव-शृंगार से उसे जो अवकाश मिलता है, वह क्लब और नाचघर में गुज़रता है। कहने को तो वह सभा-सोसाइटी में काफी प्रसिद्ध है, पर कोई नवयुवक उससे विवाह करने को राजी नहीं होता। 'ए गे वर्ड', 'चहकती चिड़िया', 'तितली', 'बुलबुल' आदि नामों की उपाधि उसे मिली हुई है। अधिकांश नवयुवकों की यह राय है कि वह एक अच्छी गृहिणी नहीं बन सकती। मिज़ाज से वह इतनी नाज़ुक है कि बस पूछो मत। अगर कोई उसे समझाने की चेष्टा करे या कुछ ऊंच-नीच सुझावे, तो उसको वह ऐसी खरी-खोटी सुनाती है कि बस दोबारा कोई उससे बात करने की चेष्टा ही नहीं करता। ईर्ष्या, क्रोध और असहनशीलता उसके स्वभाव का अंग बन गई है। स्त्रियोचित शीलता और विनम्रता का अभाव होने के कारण उसके मुख का भाव तक बड़ा क्रूर लगने लगा है। अब तो उसके माँ-बाप तक उससे परेशान हैं। वे पछताते हैं कि अगर उन्होंने बचपन में उसके प्रति पक्षपात न दिखाया होता और उसके दिमाग को सात आसमान पर न चढ़ने दिया होता, तो आज वह भी एक उपयोगी नागरिक तथा रूपवती, कर्तव्यपरायणा गृहिणी बनी होती।

रूप भी इस संसार में अपना न्यारा महत्त्व रखता है। अल्प सजावट से ही रूपवान बच्चा सज उठता है। उसके स्वास्थ्य और सौन्दर्य दूसरों को अपने व्यक्तित्व से प्रभावित करने में बहुत सहयोग देते हैं। समाज में उन्हें प्रशंसा और सहानुभूति सहज ही मिल जाती है। जीवन-यात्रा उनके लिए सहज हो जाती है। उनके प्रशंसक तथा सहकारी उन्हें सर्वदा सहयोग देने को तैयार रहते हैं। परन्तु देखने में आया है कि माँ-बाप अपने रूपवान बच्चे को सही मार्ग से ले जाने में असफल रहते हैं। बच्चे के रूप के आगे वे भी झुक जाते हैं। उनके सभी नियम और आदर्श ढीले पड़ जाते हैं। यह दुर्बलता देखकर बच्चा उच्छृङ्खल हो जाता है। उसकी यही उच्छृङ्खलता उसे आगे जाकर सफल जीवन-यापन करने में अयोग्य बना देती है।

जैसे-जैसे ऐसे व्यक्तियों का यौवन ढलता और बाह्य रूप फीका पड़ता जाता है, वे आत्मप्रशंसा सुनने के लिए अवांछनीय ढंग से व्यवहार करने लगते हैं। कभी-कभी तो मर्यादा का भी उल्लंघन कर जाते हैं। पर उनकी रूप-प्रशंसा सुनने की पिपासा शान्त नहीं हो पाती।

एक स्त्री को मैं जानती हूँ। वह अपने परिवार में सब से अधिक सुन्दर है।

बचपन से ही उसे अपनी रूप-प्रशंसा सुनने की आदत-सी पड़ गई है। अतएव बड़े होकर वह बड़ी रूप-गर्विता बन गई है। उसके सगे-सम्बन्धी उसकी इस दुर्बलता को जानते है। उन्हें जब भी कोई काम उससे करवाना होता है वे उसके रूप की प्रशंसा किसी-न-किसी बहाने से करने लगते है। जो व्यक्ति उसकी इस दुर्बलता को नहीं जानते वे कभी भी उसके घर मे आकर सम्मानित नहीं हो पाते। अब इस समय उस स्त्री की आयु लगभग पैंतालीस के करीब है। बाल सफेद हो गए है। परन्तु रूप-प्रशंसा सुनने की उसकी साध अभी बुझी नही है। जब लोग उसे कहते है—'ओहो ! भाभी जी, आप तो इतने बच्चों की माँ-सी नहीं दीखतीं, आप पर तो हर साल नया यौवन छा रहा है, तब वह प्रशंसा से फूल जाती है। पर पीठ-पीछे लोग उसका मज़ाक उड़ाते है।

मै सुन्दर बच्चों के माता-पिताओं के लिए आगे कुछ सुझाव देती हूँ, अगर वे उन पर अमल करें, तो बच्चे के चरित्र-निर्माण मे उन्हें बहुत कुछ सफलता मिलने की संभावना है।

(१) बच्चों मे रूप-रंग के कारण कोई भेदभाव नहीं रखें और ना ही कोई पक्षपात दिखाएँ।

(२) आप बच्चो की परस्पर तुलना किए बिना उन्हें प्रोत्साहन दें। प्रत्येक बच्चे की योग्यता, सामर्थ्य तथा गुण और रुचि का अध्ययन करके तदनुसार उनकी योग्यता को ठीक मार्ग की ओर लगायें।

(३) रूपवान बच्चों को ऐसे कार्य दे, जहाँ वे अपने रूप तथा व्यक्तित्व से अपना चमत्कार दिखा सकें, जहाँ उनका स्वस्थ विकास हो सके। उनको अन्य सुन्दर तथा योग्य बच्चों के साथ प्रतियोगिता करने का अवसर दिया जाय।

(४) उनको अपनी सुन्दरता को बाहरी आडंबर और सजावट से चमकाने का प्रोत्साहन न दे। सादगी और स्वच्छता उनको अधिक प्रभावशाली बनायगी।

(५) उन्हें अन्य साधारण बच्चो के गुणों को परखना तथा उनके प्रति सम्मान-जनक व्यवहार करना सिखायें।

(६) रूप का घमंड उन्हें न होने दे, न ही आत्म-प्रशंसा सुनने की आदत पड़ने दें। अन्यथा बड़े होकर ऐसे बच्चों में दूसरों की अवहेलना तथा अन्य सुन्दर बच्चों से ईर्ष्या करने का दोष आ जाता है।

मनोवैज्ञानिकों का यह अनुभव है कि अधिकांश सुन्दर बच्चे साधारण बच्चों से योग्यता तथा कर्तव्यपरायणता में कम होते है। पढ़ाई-लिखाई, गाना-बजाना तथा अन्य कलाओं मे रूप मे साधारण लड़के और लड़कियाँ ही विशेष निपुण पाई गई हैं। ऐसे बच्चे ही सफल नागरिक और दम्पत्ति बनते है। रूपवान बच्चे अधिकतर बेपरवाह तथा असहनशील पाए गए है। उनके स्वभाव में मधुरता तथा विनयशीलता का अभाव

रहता है। बिना सुन्दर स्वभाव के रूप फीका प्रतीत होता है।

अधिक सुन्दरता तो जीवन का अभिशाप बन जाती है। इतिहास और पुराण इस प्रकार के दृष्टान्तों से भरे हुए हैं। अधिक सुन्दर बच्चा अधिकांश का ईर्ष्यापात्र बन जाता है क्योंकि उसके कारण अन्य बच्चों की उपेक्षा होती है। प्रायः देखने में आया है कि जो बच्चा बचपन मे बहुत सुन्दर और भोला लगता है, रूप-गर्वित होने पर, प्रौढ़ होकर वह शीघ्र ही आकर्षणहीन दीखने लगता है। क्योंकि लोगों की प्रशंसा प्राप्त करने और अपने को मोहक प्रमाणित करने के लिए वह आडंबरपूर्ण ढंग से बात-चीत तथा नाज़ो-नखरे करने लगता है। बूढ़े मुँह-मुँहासे सदृश्य उसकी ये हरकतें उसे उपहास का पात्र बना देती हैं। उसका व्यक्तित्व फीका पड़ जाता है। जब कि देखने में साधारण बच्चा अपने सुघड़पन और मीठे स्वभाव के कारण वृद्धावस्था मे भी शोभनाशील और प्रभावशाली व्यक्तित्व बनाए रखता है।

अतएव माता-पिता का यह कर्तव्य है कि रूपवान बच्चे के चरित्र तथा व्यक्तित्व को भी दृढ़ और प्रभावशाली बनायें अन्यथा रूप उसके लिए अभिशाप बन जायगा, तथा उसके प्रति माता-पिता का पक्षपातपूर्ण व्यवहार अन्य बच्चों के लिए घातक सिद्ध होगा।

छब्बीसवाँ अध्याय

प्रेम और मोह

'बालक भगवान् के जीते-जागते खिलौने हैं। बालकों में भगवान् का दर्शन जितनी जल्दी हो सकता है, उतना शायद ही किसी में हो। मनुष्य कितना ही पण्डित और ज्ञानी हो लेकिन जब तक उस में बालोचित सरलता और निष्पापता नहीं आ जाती, तब तक उसका पाण्डित्य और ज्ञान सफल नहीं कहा जा सकता। दूसरे शब्दों में मनुष्य को अपने जीवन की परिणत अवस्था में बालक हो जाना पड़ता है। यह अवस्था भगवान् की समीपता की अवस्था है।

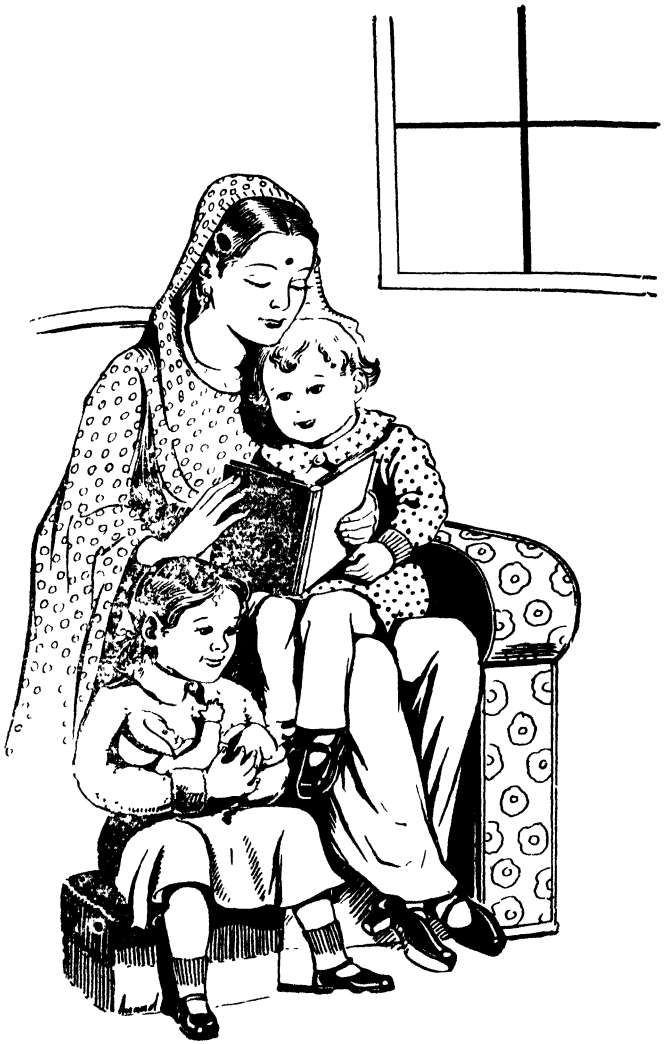
'जिस घर में बालक नहीं, जिसके जीवन में बालक नहीं, जो स्वयं जीवन में बालक नहीं, वह अभागा है, भगवान् की कृपा से वंचित है।'

—पं० हरिभाऊ उपाध्याय

बच्चे के शारीरिक और मानसिक विकास तथा आत्म-संतुष्टि के लिए प्रेम, प्रोत्साहन तथा ममता परम आवश्यक है। अपनी सन्तान के प्रति प्रेम पशु-पक्षी आदि, केवल सहजबुद्धि रखने वाले जीवों, में भी होता है। हाल की ब्याही हुई कुतिया, बिल्ली, चुहिया तथा गिलहरी आदि भी अपने नन्हे-मुन्ने बच्चों को अपने मुँह में धीरे से दबाकर किस प्रकार सुरक्षित स्थान पर उठा ले जाती हैं, उन्हें दूध पिलाती हैं तथा ख़तरे के समय उन्हें अपने पीछे करके मरने-मारने के लिए तैयार हो जाती हैं। परन्तु उनका यह प्रेम मोह का रूप कभी धारण नहीं करता, और न ही अपने बच्चों के प्रति वे पक्षपात ही करती हैं। मनुष्य ही है जो अपने प्रेम को स्वार्थबुद्धिवश दूषित करके बच्चे का अहित करता है। यह अहित वह कैसे करता है इस विषय को मैं आगे स्पष्ट करूँगा। पहले उचित प्रेम का बच्चे के जीवन पर स्वस्थ प्रभाव तथा उससे विकास में प्रगति कैसे होती है, इस पर प्रकाश डालना उचित होगा।

सभी मनोवैज्ञानिकों ने इस बात को स्वीकार किया है कि जो बच्चे बाल्य-काल में माता-पिता के प्रेम से वंचित हो जाते हैं, उनका जीवन असन्तोष से भर जाता है। अनेक सुविधाओं के होते हुए भी वे मन-ही-मन खिन्न रहते हैं। विशेषकर माता के स्नेह की पूर्ति संसार में कोई नहीं कर सकता। मनोवैज्ञानिक भी अपने सुझावों को स्नेहमयी माता की कल्याणकारी चेष्टाओं द्वारा ही सफलीभूत देखने की आशा करते हैं। अगर आप किसी समस्यापूर्ण बच्चे को माता के स्नेह से दूर रखकर मनोवैज्ञानिक ढंग से सुधारने की चेष्टा करें, तो आप अपने प्रयोगों में आसानी से सफल नहीं हो सकते। अगर वे ही प्रयोग माता अपने स्नेह से बच्चे को आनन्द-विभोर

करके अजमाय तो उसे थोड़े समय में ही आशातीत सफलता मिल सकती है।



माँ की ममता और स्नेह—पंजाबी में एक कहावत है : 'अपनी अमड़ी लावे खलड़ी, फेर अमड़ी दी अमड़ी' अर्थात् अपनी माँ चाहे मारते-मारते खाल ही क्यों न

उधेड़ दे, फिर भी उसकी ममता बनी ही रहती है, क्योंकि वह माँ है। उसकी ओर बच्चे का आकर्षण कम नहीं होता। मार खाकर भी उसे अपनी माता के प्रति अविश्वास नहीं होता। माँ की ममता ही कुछ ऐसी अनोखी चीज़ है कि रोता, कराहता हुआ बच्चा भी सिसकता, माँ के सीने से लगकर शान्त हो जाता है।

एक बार डेढ़ वर्ष के रमेश को घर पर छोड़कर उसकी माता जी दो दिन के लिए किसी आवश्यक काम से पीहर चली गईं। क्योंकि पीहर में बच्चों को चिकिन-पौक्स निकली हुई थी उन्होंने रमेश को साथ ले जाना उचित नहीं समझा। घर पर रमेश के पिता, चाचा, बड़ा भाई, पुराना नौकर सभी रमेश के आगे-पीछे फिरते रहे। उन लोगों ने उसको बहलाने और 'माँ के पास चलो, माँ के पास चलो' इस रट को भुलाने के लिए रमेश को खिलौने, चाकलेट और टॉफ़ीज़ के पैकिट दिलवा दिए, परन्तु रमेश का मन माँ के लिए तड़पता रहा। दो दिन तक वह रें-रे करता रहा। घर भर उससे तंग आ गया। कोई उसे ज़िद्दी और रोंदू कहता, कोई माँ का बिगाड़ा हुआ कहता। जब पिता जी ने तंग आकर उसे एक बार डाँट दिया, तब रमेश घंटों रोता रहा। माँ के वियोग में बच्चा रो-रोकर मुरझा गया। अधिक चाकलेट खाने से उसका पेट भी बिगड़ गया। ये दो दिन रमेश की माँ ने भी न जाने किस तरह काटे। दो दिन बाद माँ को देखकर मुरझाया हुआ रमेश खिल उठा—'तुम मुझे छोड़कर क्यों गई थीं ?' इस प्रकार बार-बार कहता हुआ और अपने नन्हे-नन्हे हाथों से माँ को थपकता हुआ वह माँ की गोदी में मचल गया। माँ भी अपने बेटे को हृदय से लगाकर गद्‌गद् हो गई।

रमेश के चाचा बोले, "भाभी तुम्हारे मुन्ने ने तो पीछे से बहुत परेशान किया, हमें तो नाच नचा डाले इसने, राम जाने तुम इसे कैसे संभालती हो !"

रमेश के पिता जी ने हँसकर कहा—"भाई, संभालने की एक ही कही ! अब तुम देखना इन दोनों की गुटरगूं, सब की शिकायतें लगायेगा, मुन्नू। देखते नहीं, माँ को पाकर कैसा शेर हो गया है, मानों तीन लोक का राज्य मिल गया हो।"

सचमुच में माँ का प्यार बच्चे के लिए अमूल्य निधि है, भगवान् का वरदान है। किसी ने ठीक कहा है—'माता बिन आदर कौन करे ? बादल बिन सागर कौन भरे ?' जिन बच्चों को बचपन में ही माता के स्नेह से वंचित होना पड़ता है, उनके जैसी दैन्य दशा और किसकी हो सकती है ? माँ का सूखा हाथ फिरने मात्र से बच्चा हरा-भरा हो जाता है। बच्चा इस बात को अनुभव करता है कि मुझे मारकर माँ को सन्ताप होता है। इसीलिए माँ से दंडित होकर भी उसके मन में दरार नहीं पड़ती। एक मूक भाषा में दोनों एक दूसरे के प्रेम की सत्यता को समझते और स्वीकार करते हैं। मानव के रोम-रोम में माँ का प्रेम समाया हुआ है, तभी न दुःख पड़ने

पर उसके मुंह से निकल पड़ता है—'हाय माँ !'

मातृहीन बच्चे—माँ के मरने के पश्चात् बच्चे की दशा एक कवचहीन सैनिक के सदृश्य हो जाती है। मातृहीन बालक अपने को अकेला और असहाय समझने लगता है। उसका तो मानो नीड़ ही उजड़ जाता है। वह सोचता है, 'हाय अब किसके गर्म-नर्म सीने के नीचे दुबककर सोऊँगा ? असफल होने पर कौन पीठ पर हाथ फेरकर, आगे बढ़ने की हिम्मत बंधायगा ?'

माता के स्नेह से वंचित होकर बच्चे के विकास का संतुलन ही बिगड़ जाता है। बहुत कम पिता बच्चे के इस अभाव को इस तीव्रता के साथ यथार्थरूप में समझने का हृदय रखते हैं। बच्चे के खाने-पीने, रहने-सोने तथा देखभाल की व्यवस्था हो जाने तथा उसे अपने संगी-साथियों के संग खेलते देख, बाप यह समझता है कि 'बस अब यह तो अपनी माँ को भूल गया है, और जैसे-जैसे समय गुजरता जायगा, यह घाव भरता जायगा।' परन्तु बाप का इस प्रकार सोचना सर्वथा गलत है।

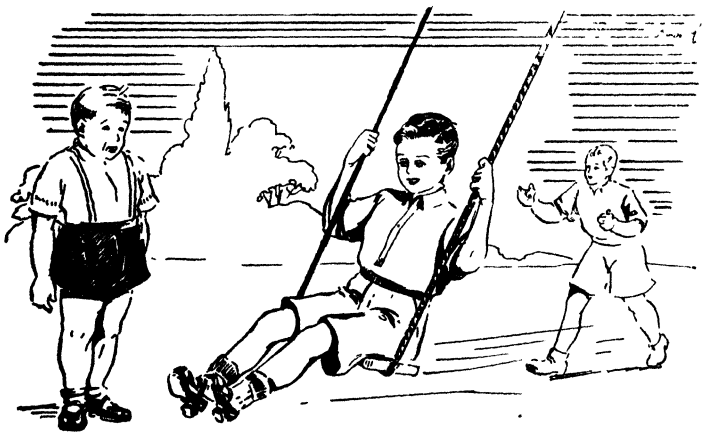
बच्चे को जब कभी असफलता और कठोरता का सामना करना पड़ता है, जब कभी भी वह अपने को उपेक्षित अनुभव करता है, उसका दिल माँ के लिए रोने लगता है। वह अपने संगी-साथियों से यह सुनता है कि 'स्कूल से घर लौटने पर उनकी माँ द्वार पर ही उनकी प्रतीक्षा करती हुई खड़ी रहती है, हाथ-मुंह धुलवाकर गर्म-गर्म खाना बड़े प्यार और आग्रह से खिलाती है, कसूर हो जाने पर माँ डाँट-डपट करने के पश्चात् जल्द क्षमा भी कर देती है और पिता तथा बड़े भाई के क्रोधित होने पर वे माँ की ओट में ही रक्षा पाते हैं, किसी काम में असफल होने पर माँ उन्हें बार-बार प्रोत्साहन देती है, थोड़ी-सी भी तरक्की करने पर माँ ही बड़ाइयों का पुल बाँध देती है, मानो बच्चे की सफलता उसकी अपनी सफलता है।'

अपने मित्रों के इस सौभाग्य की अपने दुर्भाग्य से तुलना करता हुआ एक मातृ-हीन बच्चा अपने जीवन में जो अभाव अनुभव करता है, उसकी कचोटन उसे युवावस्था तक बनी रहती है। वह अपनी पत्नी की सेवा और प्यार में उसी मातृत्व की झाँकी देखता है। अगर सौभाग्य से उसे पतिपरायणा पत्नी मिल गई, तब तो उसको बहुत कुछ शान्ति मिल जाती है, उसके बचपन के घाव मिटने लगते हैं, अन्यथा एक सेप्टिक फोड़े के सदृश्य उसमें से जीवन भर असन्तोष का मवाद बहता रहता है।

तिरस्कृत बच्चा—जिस घर में मातृहीन बच्चे विमाता, चाची, ताई या भाभी के द्वारा सताये जाते हैं, वहाँ प्रेम से वंचित होकर तथा पक्षपात, उपेक्षा, कटु आलो-चना, द्वेष, ईर्ष्या और अन्याय से पिसकर बच्चों का शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य दिन-पर-दिन दुर्बल होता जाता है। उनकी प्रगति रुक जाती है। वे दब्बू, झेंपू तथा मुंहचोर हो जाते हैं। अपने अधिकारों से वंचित तथा सबसे तिरस्कृत होकर वे छल

और फरेब का आश्रय लेकर सुविधाएँ प्राप्त करने की चेष्टा करते हैं। उनका व्यक्तित्व दब जाता है। ऐसी स्थिति में बच्चे या तो उद्दण्ड और आवारा निकल जाते हैं या फिर उदासीन, निस्तेज और निश्चेष्ट-से दिखने लगते हैं।

कभी-कभी ऐसा भी होता है कि माता-पिता गुणवान और रूपवान बच्चे के प्रति अधिक प्यार प्रदर्शित करते हैं। उसी को अपने साथ बाहर ले जाते हैं, मित्रों और सम्बन्धियों से उसकी ही प्रशंसा की जाती है, जब कि रूप और गुण में पिछड़ा हुआ बच्चा घर में उपेक्षित-सा रहता है। जब वह तुलनात्मक आलोचना का शिकार बनता है और उसकी खिल्ली उड़ती है तब तो उसका घायल आत्माभिमान चोट खाकर फुंफकारने लगता है, और वह अपने उस 'दुलारे' भाई से ईर्ष्या करने लगता



है। माँ-बाप को चाहिए कि अगर कोई बच्चा रूप में कम है, तो उसे गुणों में उन्नति करने में सहयोग दें ताकि उसकी हीनता की भावना दूर हो जाय। बच्चों में परस्पर तुलना करके एक को प्रोत्साहन देना और दूसरे को हतोत्साहित करना भी बड़ी भारी भूल है। प्रत्येक बच्चे की प्रगति विषयक् अपनी-अपनी विशेषता और भिन्नता होती है, इस विषय में जन्मजात संस्कार भी होते हैं। अगर कोई बच्चा यथाशक्ति चेष्टा करके भी अपने छोटे भाई के बराबर उन्नति नहीं कर पा रहा है, तो इसमें उसका क्या अपराध है ? अगर आप उसकी तुलनात्मक आलोचना कर उसे लज्जित करेंगे तो उसकी रही-सही प्रगति भी रुक जायगी। अधिकांश माँ-बाप ऐसी भूल कर बैठते हैं। उपेक्षित बच्चे पर उनके अत्याचार का बहुत बुरा प्रभाव पड़ता है, वह उन्हें निर्मम और निष्ठुर समझने लगता है और चेष्टा करना भी छोड़ देता है।

अगर किसी कारणवश यथा—किसी बच्चे के बीमार होने पर अथवा नए

बच्चे के जन्म लेने पर—माँ का ध्यान दूसरे बच्चे की ओर बँट जाय तो पिता का यह कर्तव्य है कि अन्य बच्चों की ओर अधिक ध्यान दे, ताकि उन्हें यह अनुभव न हो कि उनकी उपेक्षा की जा रही है। नये बहन-भाई के जन्म से पहले ही मुन्ना-मुन्नी को उसका स्वागत करने तथा अपना स्नेह उसको बाँटने के लिए तैयार कर लेना चाहिए। इस प्रकार की मानसिक तैयारी हो जाने पर, बड़ा मुन्ना या मुन्नी अपनी ज़िम्मेदारी समझने लगते हैं, और नन्हे बहन-भाई को असहाय समझ माँ को उसे संभालने में सहर्ष सहयोग देते हैं।

कभी-कभी ऐसा भी होता है कि घर में कुछ मित्रों के बच्चे कुछ दिनों के लिए रहने आते हैं। उस समय उनकी ओर विशेष ध्यान दिया जाता है। आप उनको विशेष रूप से बाहर ले जाते हैं। उनकी बड़ाई करते हैं। देखा-देखी मुन्ना-मुन्नी भी वैसी ही सुविधाएँ प्राप्त करने की ज़िद करते हैं। वे भी चाहते हैं कि हम भी उनके सदृश्य ही अपने अच्छे कपड़े निकालकर, सजधजकर इधर-उधर घूमने-फिरने जायें। उनकी यह इच्छा बहुत स्वाभाविक है। अपनी मंडली में सभी अपनी शान दिखाना चाहते हैं। बड़े इस बात को भूल जाते हैं और नन्हे-मुन्ने को डपटकर कहते हैं—'हम देखते हैं कि घर में जब कोई मेहमान आते हैं तो तू बहुत सिर चढ़ जाता है। अपनी सूरत और सीरत तो देख, तब दूसरों की नकल करना। खबरदार ! जो चूं-चपट की, चल, उधर चलकर पढ़ने बैठ।'

बड़ों से हमजोलियों के बीच में इस प्रकार अपमानित होकर मुन्ना मन-ही-मन उन्हें कोसता है। पर वह छोटा है, उसका बस नहीं चलता, इसलिए वह लाचार होकर चुप हो जाता है, परन्तु बाद में वह ऐसी चेष्टा करता है, जिससे बड़ों को कष्ट हो। यथा—वह पढ़ेगा नहीं, किताबें फाड़ देगा; ऐसे मनुष्य के पास जो उनकी निन्दा सुनकर प्रसन्न होगा, उनकी शिकायतें करेगा। मुन्ना-मुन्नी के ऐसे असामाजिक व्यवहार का कारण बड़ों की कठोरता है।

स्वार्थ-वृत्ति और मोह से हानि—बड़े कहते हैं, 'हम बच्चे को प्यार करते हैं,' परन्तु कभी-कभी स्वार्थ और अहंकारवश वे बच्चों के प्रति बड़ा अत्याचार करते हैं। वे अधिकांश सुविधाएँ अपने लिए ही रखते हैं। अच्छा साफ़-सुथरा कमरा, नया फर्नीचर, नये बढ़िया कपड़े, अच्छा भोजन आदि वस्तुएँ मुन्ना के पिता जी तथा बड़े भाई को सहज प्राप्त हैं। उनको सामाजिक जीवन को उन्नति करने की भी सुविधाएँ दी जाती हैं। परन्तु बेचारे मुन्ना-मुन्नी को कोई नहीं पूछता। अगर वे कभी अपने सखा-सहेलियों को घर में ले आयें तो उन्हें दरवाजे पर से ही, 'जाओ, जाओ, बाहर खेलो, यहाँ क्या ऊधम मचाया हुआ है' कहकर बिदा कर दिया जाता है। अगर उनके मित्रों का जन्मदिन है और उन्हें बुलाया गया है, तो इस ख़्याल से कि

उपहार के लिए पैसे खर्च करने पड़ेंगे, माँ कह देती है—'क्या करोगे जाकर, देर हो जायगी, तुम्हारे पिता जी डाँटेंगे।'

उचित तो यह है कि बच्चों को सोशल होना सिखाया जाय। उन्हें रंगदार काग़ज़ों, डिब्बों या चिथड़ों से स्वयं उपहार बनाना सिखायें। इस प्रकार वे रचनात्मक कार्य भी सीखेंगे साथ ही तीज-त्योहार तथा जन्म-दिवस आदि पर मित्रों को उपहार आदि देकर प्रेम और प्रशंसा प्राप्त करेंगे। आदान-प्रदान का महत्त्व तो उन्हें सिखाना जरूरी है।

जिस घर में एक ही बच्चा होता है, या माँ-बाप की अधिक आयु होने पर सन्तान होती है वहाँ बच्चा अधिक लाड़-प्यार में बिगड़ जाता है। वह यह सोचने लगता है कि घर में सर्वत्र मेरी प्रधानता होनी चाहिए। प्रत्येक सुविधा और आराम मुझे मिलना चाहिए। घर का प्रत्येक प्राणी पहले मेरा काम करे, मुझे चीज़ दे और मेरी बात सुने। माँ-बाप भी उसकी हाँ-में-हाँ मिलाते हैं। ऐसा प्यार बच्चे के लिए इस प्रकार हानिकारक है। वह निकम्मा और स्वार्थी बन जाता है।

सम्मिलित पारिवारिक जीवन में स्त्रियाँ अपनी प्रधानता प्रकट करने के लिए अपने-अपने बच्चों को विशेष सुविधा देने की चेष्टा में अपने बच्चे का पक्षपात करने लगती हैं। वह अगर गलती करता है, तब भी उसे बचाने के लिए झूठे बहाने गढ़ लेती हैं। उसके अवगुणों पर पर्दा डालने की चेष्टा करती हैं। उनका यह मोह बच्चे का बहुत अहित करता है। वह झूठा, बहानेबाज और फरेबी बन जाता है।

श्री सम्पूर्णानन्द जी के शब्दों में—अन्याय उन बच्चों के साथ भी होत हैं, जो सम्पन्न घरों में जन्म लेते हैं। यह अन्याय दो प्रकार से होता है। पहले-शैशवावस्था में बच्चे घर के बड़ों के लिए खिलौनों का काम देते हैं। उनसे ऐसी बातें की जाती हैं, जिनसे वे हँसें और हँसायें, न हँसे, तब भी हँसायें। यह नहीं सोचा जाता कि इसका बच्चे पर क्या प्रभाव पड़ रहा है। कभी-कभी तो अश्लील बातें भी उनसे कहलाई जाती हैं। गुरुजन चाहे जो समझें, पर उनका मनोविज्ञान-सम्बन्धी अज्ञान प्रकृति की गति को तो रोक नहीं सकता। ढाई-तीन वर्ष का होते-होते बच्चे की बुद्धि प्रस्फुटित होने लगती है। चार-पाँच साल में तो वह बहुत कुछ समझने लगता है और जो नहीं समझता, उसको कल्पना से बैठाने लगता है। वह जान लेता है कि कुछ बातों का कहना, विशेष प्रकार से व्यवहार करना, बड़ों को अच्छा लगता है और इससे उसका काम बनता है। बस, वह उनको प्रसन्न करने का, यत्न करता है, चाटुकारिता बरतता है। दम्भ और कपट का अंकुर फूटने लगता है। लाड़-प्यार बच्चे के जीवन को दूषित कर देता है।

कई माताएँ मोहवश बच्चे को आत्म-निर्भर नहीं होने देतीं। बच्चे के बड़े

हो जाने पर भी वह उसका नहलाना, खिलाना, उसकी वस्तुओं की संभाल, उसके कमरे की व्यवस्था, यहाँ तक कि उसके स्कूल का होम-वर्क भी खुद ही कर देती है। ऐसे बच्चों में बड़े होकर भी आत्म-निर्भरता नहीं आती, वे दूसरों का आसरा ढूँढ़ते रहते हैं। वे माँ से कहते हैं, 'माँ, तुम से अलग होकर मुझे तो बड़ा कष्ट होता है, तुम्हारे बिना तो मेरा काम ही नहीं चलता।' यह सुनकर माँ को एक विशेष आनन्द आता है कि मेरा बच्चा बड़ा मातृभक्त है। मेरा वियोग उसे असह्य है। असल में बात यह होती है कि माँ उस पर अधिकार जमाए रखने के लिए उसे पंगु बना देती है, उसे अपने मोह के जाल में ऐसा जकड़ देती है कि वह उस पर निर्भर हो जाता है। यह प्रेम नहीं मोह है। इससे बच्चे का आत्मविश्वास हिल जाता है, वह भीरू बन जाता है और बड़े होकर उसका प्यार आडम्बरपूर्ण हो जाता है। विशेषकर कई माताओं को इस बात में विशेष आनन्द आता है कि मेरा बेटा हमेशा छोटे बच्चों के सदृश्य व्यवहार करता रहे, प्रत्येक काम के लिए मुझ पर निर्भर रहे। मुझे ही सब से अधिक प्रेम करे।

इस विषय में मुझे एक रोचक घटना याद है। मेरी एक सखी ने मुझे अपने पति की मातृभक्ति की कहानी सुनाई थी। मैं उन्हीं के शब्दों में कथा दोहराती हूँ—

"जब मेरा विवाह हुआ तो हम पन्द्रह दिन के लिए हनीमून मनाने मसूरी गए। हम एक होटल में ठहरे। सुबह उठकर मेरे पति चाय पीते समय पहला काम करते थे अपनी माता को पत्र लिखना। एक दिन उत्सुकतावश मैंने उनका पत्र पढ़ा। लिखा था—'माँ तुम्हारे बिना मैं यहाँ खोया-खोया-सा रहता हूँ। मुझे हरदम तुम्हारी याद आती रहती है, मेरा मन बड़ा उदास रहता है इत्यादि।'

"मैंने सोचा कि शायद मेरे पति मुझ से असन्तुष्ट हैं। उन्हें ज़रूर कुछ मानसिक कष्ट है तभी वे हनीमून में भी माँ के बिना इतने दुःखी रहते हैं। शाम को जब हम घूमने गए तो मैंने उनसे इस विषय में पूछा। वह आश्चर्य से बोले—'तुम्हें यह भ्रम कैसे हुआ ? मैं तो स्वयं को बहुत सुखी समझता हूँ। मेरे जीवन के यह बहुत ही मधुर और सुखद दिन हैं।'

"अब मैं बड़ी उलझन में पड़ी। मुझे खिन्न पाकर वे दुलारते हुए बोले—'शीला, मुझे बड़ा दुःख है इस गलतफ़हमी का। पर मुझे यह तो बताओ कि तुम्हारे दिल में यह विचार आया ही क्यों ?'

"मैंने कहा—'मैं देखती हूँ, आप रोज़ ही अपनी माँ जी को पत्र लिखते हैं। माफ करना आज मैंने आपके पत्र की कुछ पंक्तियाँ पढ़ी थीं। दिखता है, आप रोज़ ही अपना मन हल्का करने के लिए ऐसे ही पत्र लिखते होंगे उन्हें ?'

"वे ठहाका मारकर हँसे और बोले—'अरी पगली ! क्या बताऊँ, हमारी माँ जी

का स्वभाव ही ऐसा है। अगर मैं उन्हें इस प्रकार पत्र न लिखूं तो वे समझेंगी कि ब्याह के बाद मेरा बेटा बहू की ममता में मुझे भूल गया है। आते समय उन्होंने ललकार कर कहा था कि, देखते हैं—अब भी तुझे अपनी माँ से उतना ही प्यार रहता है कि नहीं। क्या बताऊँ शीला मुझे यह प्रेम-अभिनय लाचारी में करना पड़ता है। माँ का स्वभाव तो बदलने से रहा। बचपन से ही उन्होंने मुझ पर इसी प्रकार का एकछत्र अधिकार बनाया हुआ है। वे हमेशा मुझे अपने मोह में जकड़ने की चेष्टा करती रहीं। छुटपन की एक घटना मुझे याद है—एक बार छुट्टियों में बहुत आग्रह करके मौसी जी मुझे अपने साथ ले गई थीं। माँ का यह ख़्याल था कि मैं उनके बिना रह ही नहीं सकूँगा। मौसी जी के यहाँ बहन-भाइयों में जाकर तथा घूमने-फिरने में और खेल में मैं इतना मस्त रहा कि मुझे घर की याद भी नहीं आई। मौसी जी ने माँ को तसल्ली देने की दृष्टि से कहीं यह बात लिख दी—मुन्ना यहां बड़ा प्रसन्न है। वह अभी यहाँ कुछ दिन और रहना चाहता है—बस, माता जी के स्वाभिमान को इससे बड़ी चोट लगी। घर लौटने पर मुझे निर्मोही और तोता-चश्म आदि जाने क्या-क्या उलाहने दिए। कई दिन तक बात-बात में वे मुझे सुना-सुनाकर कहतीं—अजी, बच्चे किसके सगे हुए हैं ? जो बहलाए, फुसलाए उसी के बन जाते हैं। माँ की ममता भला यह क्या समझें' ? लाख हो, वे मेरी माँ हैं। मैं उन्हें रुष्ट करने का साहस नहीं कर सकता।'

"मैंने शान्त होकर कहा—'ख़ैर बात स्पष्ट हो गई। पर आप से मेरी यह प्रार्थना है कि मेरे संग इस प्रकार का प्रेमाभिनय न करियेगा।'

"पति ने हँसकर कहा—'पर तुम भी मुझे इस प्रकार के मोह-जाल में जकड़ने की भूल न करना'।"

यह तो ख़ैर है कि शीला और उसके पति में परस्पर एक समझदारी है। कई बार उनकी माता ने अपने बेटे के प्रेम की परीक्षा के लिए ऐसे-ऐसे ढोंग रचे कि अगर शीला की जगह कोई और स्त्री होती तो पति-पत्नी में काफी गलतफ़हमी पैदा हो जाती। पर शीला एक समझदार सहचरी के सदृश्य अपने पति की लाचारी को सरल बनाने की चेष्टा करती रहती है। वह समझती है कि जिस बेटे को माँ ने बचपन से ही मोह में जकड़ा हुआ था उसका अब बिलकुल से प्रतिकार होना असंभव है। अगर दुर्भाग्य से शीला के पति को शीला का सहयोग प्राप्त न हुआ होता तो वह अपनी सम्मान-रक्षा और स्वतन्त्रता प्राप्त करने के लिए जबरदस्त प्रतिक्रिया करता। जिस से माता और पुत्र दोनों का जीवन किरकिरा हो जाता।

प्रेम कल्याणकारी हो—ऐसे स्वार्थी माँ-बाप के बच्चे अपनी जीवनयात्रा सफलतापूर्वक करने में असमर्थ होते हैं। सच्चा प्रेम वह है जो बच्चे के विकास के लिए अनुकूल परिस्थितियाँ पैदा करे। माता-पिता को चाहिए कि बच्चे को स्वयं बुरा-भला

परखना तथा अपना काम स्वयं करना सिखायें। उनमें ऐसी शक्तियां विकसित करें कि वे मुसीबतों से जूझ सकें, आत्मनिर्भर बने तथा उनकी निर्णयात्मक बुद्धि का विकास हो। अगर माता-पिता मोह से अन्धे हो जायँगे तो वे बच्चे के रक्षक और पथ-प्रदर्शक नहीं बन सकते। इसके विपरीत, बच्चा उनकी ओट में अपराध करके भी रक्षा पाने का चेष्टा करेगा, उनके धन और प्रतिष्ठा का सहारा लेकर वह उद्दण्डता और अत्याचार करेगा, दूसरे की भावनाओं को चोट पहुँचायगा।

यथार्थ प्रेम वह है जो बच्चे के शारीरिक और मानसिक विकास में सहयोग दे। उसके सम्मान, सुविधाओ तथा अधिकारों की रक्षा करे, ताकि वह भी दूसरों के प्रति सम्मानजनक व्यवहार करना सीख जाय। घर और समाज में अपने को उपयोगी और प्रिय बनाकर सफलतापूर्वक जीवन व्यतीत करे। सच्चा प्रेम बच्चे के लिए कल्याणकारी होता है, वह उसमें सद्गुणों का विकास करता है, उसे न्यायप्रिय तथा सम्मानप्रिय बनाता है, जब कि मोह उसके चरित्र मे दुर्बलता पैदा करता है, वह ढोंग-फरेब द्वारा दूसरो की प्रशंसा और सहानुभूति प्राप्त करने की वृत्ति जाग्रत कर बच्चे के स्वस्थ विकास को कुठित कर देता है। प्रत्येक माता-पिता का यह कर्तव्य है कि वे अपने बच्चे को सच्चा प्रेम करें और मोह के जंजाल में उसे न जकड़ें।

प्रेम कोई ऐसी वस्तु नहीं है जो बचपन मे बच्चे को माँ-बाप की ओर से दी जाय और जब वह बड़ा हो तो उससे वह प्रेम मय सूद के वसूल किया जाय। यही गलतफ़हमी अनेक माता-पिता की निराशा का कारण होती है। बच्चे के प्रेम-प्रदर्शन का ढंग बड़ों से भिन्न होता है। जो माता-पिता यह चाहते है कि हमारे मुन्ना-मुन्नी एक बच्चे के सदृश्य ही हम से लाड़-प्यार करते रहें वे उनकी उन्नति में बाधा डालते है। बच्चा जैसे-जैसे बड़ा होगा उसकी दिलचस्पी की दुनिया का दायरा बढ़ेगा। वह अपने संगी-साथियों तथा गुरुओं और अपने आदर्श व्यक्तियों को प्रेम और श्रद्धा का आधार बनायगा। वयःसंधि आने पर उसे अपने मित्र तथा विरोधी सेक्स के प्रति भी आकर्षण होगा। विवाह के पश्चात् अपनी पत्नी और बच्चों में उसका स्नेह होगा। उसके इस प्रेम-प्रदान में जो माता-पिता स्वार्थ या बेवफ़ाई देखते है वे बहुत भारी भूल करते है। समझदार माता-पिता को यह बात भूलनी नहीं चाहिए कि उनके बच्चे का जो प्रेम अपनी स्त्री तथा बच्चों में है वह बहुत स्वाभाविक है। उसके कारण माता-पिता के प्रति प्रेम में किसी प्रकार की भी रुकावट या कमी नहीं आ सकती, यदि माता-पिता प्रतिद्वन्द्वी का-सा व्यवहार करने की भूल न करें और स्थिति की स्वाभाविकता को समझे। इससे माँ-बाप और सन्तान दोनों का हित है। उनकी परस्पर सद्भावना बनी रहेगी और सबसे अधिक कल्याण उस बेकसूर बहू का होगा जिसके सिर पर अकारण ही लड़के की काल्पनिक बेवफ़ाई का सब अपराध थोप दिया

जाता है।

इस भूल का आरम्भ माता-पिता की नासमझी से, मुन्ना जब छोटा होता है तभी हो जाता है। अतः इसको तभी से रोकने की चेष्टा करनी चाहिए। अतएव आप अपने मुन्ने को प्यार तो करें, पर अहितकर मोह से कभी न जकड़ें। नहीं तो पीछे आप को ही पछतावा होगा। बड़ा होकर आपका बच्चा जब स्वार्थी बन जायगा या उसका ध्यान स्वाभाविक रूप से दूसरी ओर बँट जायगा तो आपको ऐसा महसूस हो कि अब मेरा बेटा निर्मोही हो गया है। अपने माँ-बाप को तो वह अब भूल ही गया है।

कुछ इसी प्रकार की शिकायत आजकल अनेक माता-पिताओं की है। अगर वे अपने पिछले व्यवहार का मनोवैज्ञानिक विश्लेषन करें तो उन्हें पता चल जायगा कि उन्होंने अपने बच्चों को बचपन में मोह से जकड़ने की भूल की थी।

सत्ताईसवाँ अध्याय

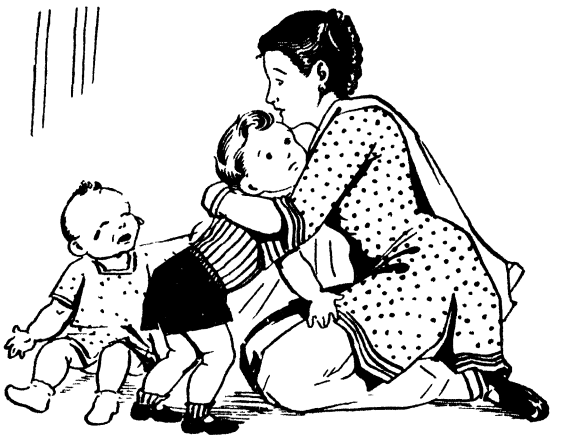
मुन्ना और मुन्नी में भेद क्यों ?

बड़े-बूढ़े आशीर्वाद देते हैं—'दूधन नहाओ पूतन फलो।' कोई भी यह कामना नहीं करता कि पुत्रियों से भी फलो। भला क्यों ? बेटी क्या सींग लगाकर पैदा होती है ? जिसके पैदा होने का इतना दुःख है। एक जमाना था कि लोग बेटी को जन्मते ही मार देते थे। जो पुरुष बेटी का बाप बन जाता, उसे लाल चीरा बाँधने का अधिकार नहीं रहता था, कारण बेटी वाले को आगे जाकर झुकना पड़ता था। इस प्रकार की सामाजिक रूढ़ियों ने बेटी को भार-रूप बना दिया। सभ्यता तथा शिक्षा का प्रचार होने पर भी लोगों के संस्कार अभी भी पूर्ण रूप से परिष्कृत नहीं हुए हैं।

एक से अधिक कन्या का जन्म, हर्ष का विषय नहीं माना जाता। तीन-चार भाइयो की एक बहन लाड़ली तो रहती है, परन्तु वह लाड़ भी ऐसा होता है कि उसे अधिक कोमल, परमुखापेक्षी तथा निकम्मा बना देता है। अगर किसी के घर केवल लड़कियाँ ही हो, और वे होनहार निकलें, तो प्रशंसा करते समय भी लोग यह कहे बिना नहीं चूकते—'काश कर ये लड़कियाँ लड़के होते, तो कुल को चार चाँद लग गए होते।' इस प्रकार के विचार हमारी संकुचित वृत्ति के द्योतक है। कुल, समाज और देश की श्रेष्ठता के लिए, लड़कियों की सफलता और उन्नति भी उतनी ही महत्त्व रखती है, जितना कि लड़को की।

कन्याओं को हीन मत समझें—मुन्ना-मुन्नी मे किसी प्रकार का भी भेद करना, दोनो के लिए हानिकारक है। अगर आप मुन्नी से मुन्ने को खान-पान, शिक्षा आदि की अधिक सुविधाएँ देंगे, तो मुन्ना स्वार्थी बन जायगा। वह अपनी बहन को केवल इसीलिए हेटी समझेगा कि वह एक लड़की है—मानो लड़की होना कोई बुरी बात है। स्त्री और पुरुष एक दूसरे के पूरक है। कोमलता, सेवा-परायणता, भावुकता आदि गुण स्त्रियों में अधिक होते है, परन्तु इसका यह मतलब नहीं है कि पुरुष में अगर इन गुणों की अधिकता हो, तो कोई शर्म की बात है। अगर कोई लड़का दूसरे का दुःखी देखकर दर्याद्र हो जाय, तो लड़के उसे चिढ़ाने लगते है—'अबे, छोकरियों की तरह रोने क्यों बैठ गया है ?' इसी तरह अगर कोई कन्या अधिक साहसी तथा अत्याचार का मुकाबिला करने पर तुली दिखती है, तो लोग उसे बेशरम, निडर, बेअदब आदि कहते है। उपरोक्त दोनों ही दृष्टिकोण अनुचित है। जो बातें लड़कों के लिए आवश्यक तथा उचित है, वही लड़कियों के लिए वर्जित कैसे हो सकती है ? पौष्टिक भोजन, स्वच्छ कपड़े, पढ़ने-लिखने की सुविधाएँ तथा लाड़-दुलार, मुन्ना-मुन्नी

दोनों को मिलना चाहिए। सदाचार तथा शीलता का पाठ दोनों को पढ़ाया जाय। 'तू तो लड़की है, वैसे ही बाँस-सी बढ़ी जा रही है, तुझे दूध पीने की क्या जरूरत है'; 'तुझे पढ़कर क्या नौकरी करनी है या परिवार पालना है, जो तुझे इतनी उच्च



शिक्षा दी जाय ? पराया धन है, तेरे हाथ पीले करके हम सुखरु हो जायें। बस, फिर अपने घर जाकर जैसा चाहे करियो, यहाँ तो दबी-छुपी रहे तभी ठीक है।' कन्या के प्रति इस प्रकार के विचार, आम घरों में पाये जाते है।

माता-पिता तथा परिजनों की ऐसी संकुचित वृत्ति कन्या के स्वस्थ तथा पूर्ण विकास में बहुत बाधा पहुँचाती है। उनकी उच्चाकांक्षाएँ उड़ान नहीं भर पातीं, सुविधा तथा अवसर के अभाव में, वे इच्छा और योग्यता होते हुए भी तरक्की नहीं कर पातीं। अपने भाइयों की सुविधाओं के लिए उन्हें अपना अधिकार छोड़ना पड़ता है। कुछ धनाड्य या मध्यम घरानों की बात छोड़ दें; आम घरों में लड़कियों की शिक्षा मौहल्ले तक और हद हुई तो शहर के स्कूल तक ही सीमित रहती है। पढ़ाई के साथ-ही-साथ उन्हें गृह-कार्य में माता का हाथ भी बटाना पड़ता है। भाई चाहे बहन से बड़ा ही क्यों न हो, पर वह कभी घर की सफ़ाई, भोजन परोसने, छोटे भाई को खिलाने या पढ़ाने में हाथ नहीं बटाएगा। उल्टा अपनी किताबें बिखरी छोड़ जायगा, बिस्तरा और कपड़े कभी भी सहेजकर नहीं रखेगा, यहाँ तक कि नहाने जाते समय तौलिया और साबुन भी ले जाना भूल जायगा, और-तो-और धोबी के यहाँ से धुलकर आए कपड़े भी वह खुद उठाकर नही रखेगा। कमीज के टूटे बटन तथा उधड़ी जेब देख वह मुन्नी पर ही झुँझलायगा कि 'इतना भी नहीं होता कि कपड़े भी देख लिया करे।

अपना गुस्सा दिखाने के लिए कभी-कभी वह चांटा भी मार देता है। मुन्नी रोती हुई माँ के पास जाकर, जब शिकायत करती है, तब वह भी हँस कर कहती है—'क्या हुआ फिर ? तेरा भाई है, बहन-भाई लड़ा ही करते हैं।' मुन्नी सोचती है—'मैं बड़ी हूँ, तिस पर मैंने तो कोई कसूर भी नहीं किया, फिर भी मुझे ही दबना पड़ता है।'

शनैः-शनैः वह इस स्थिति की आदी हो जाती है और पुरुष समाज का स्त्री समाज पर धाँधली करने के अधिकार को वह भी स्वीकार करने लगती है। इस प्रकार उसकी आत्मसम्मान की भावना धीरे-धीरे लाचारी में कुंठित होती जाती है। इधर मुन्ना एक लड़का होने के नाते अधिक सुविधा पाकर स्वार्थी, असहनशील तथा धाँधली-पसन्द बन जाता है। बड़े होकर अगर उसे दबने वाली स्त्री मिली तब तो ठीक है, नहीं तो उसका गृह-जीवन बड़ा कटु हो जायगा। अपनी स्त्री से उसकी आये दिन चखचख होगी। स्वयं भूल करके जब वह अपनी सम्मानप्रिय स्त्री को दबाने की चेष्टा करेगा, वह उसे बेढ़ब, उजड्ड, स्वार्थी तथा हृदयहीन समझेगी। कुछ दिन तरह देने पर भी जब उसकी धाँधली बढ़ती ही जायगी तो वह भी ऊबकर मुकाबिला करने को कमर कस लेगी। इस प्रकार बचपन की असहनशीलता तथा स्त्रियों को हेटी समझने की वृत्ति मुन्ना के गृहस्थ-जीवन को किरकिरा करके ही छोड़ेगी।

अगर बचपन में ही उसे बहन तथा माँ के प्रति सम्मानजनक व्यवहार करना सिखाया जाय, तो बड़े होकर वह स्त्री जाति के प्रति ऐसा असहनशील नहीं होगा। बाल्यकाल की मुन्ना-मुन्नी में भेद-नीति, मुन्ना और मुन्नी दोनों के जीवन का आरम्भ गलत ढंग से कर सकती है, इसलिए इसे रोकना होगा।

तुलनात्मक दृष्टिकोण न रखें—कहीं-कहीं ठीक इसके विपरीत भी देखने को मिलता है। अगर मुन्ना बड़ा है, मुन्नी छोटी है; मुन्ना कुरूप है, मुन्नी रूपवती है; मुन्ना शैतान है, मुन्नी गरीब है; मुन्ना तीन-चार भाई है, मुन्नी अकेली बेटी है; तब माँ-बाप मुन्ना के प्रति कठोर हो जाते हैं और मुन्नी के प्रति अधिक दयालु। मुन्ना की कड़ी आलोचना करते हैं, पर मुन्नी के जरा-जरा से कामों की भी प्रशंसा करना नहीं भूलते। मुन्नी को पहिना-उढ़ाकर माँ साथ ले जाती है, पर मुन्ने की वेशभूषा की कोई परवाह नहीं करता। इस पक्षपात के फलस्वरूप मुन्नी तो तरक्की कर जाती है, अधिक-से-अधिक सुशील बनकर, उसे न केवल प्रशंसा सुनने की इच्छा होती है, परन्तु इस प्रकार उसे मुन्ना को नीचा दिखाने का भी अवसर मिलता है। इस तुलनात्मक अभिनय में मुन्ना-मुन्नी एक दूसरे के प्रतिद्वन्द्वी बन जाते हैं, मुन्नी समझने लगती है, लड़के सभी निकम्मे और उद्दण्ड होते हैं, मुन्ना समझता है लड़कियाँ बड़ी चालाक तथा पाखंडी होती हैं। नतीजा यह होता है कि दोनों अपना-अपना अनुभव पुष्ट करते रहते हैं और आगे जाकर दोनों ही अपने-अपने जीवन-संगी को

ठीक से समझने की भूल कर जाते हैं। इस प्रकार बचपन की भूल भविष्य के असन्तोष का कारण बन जाती है।

अतएव माँ-बाप को चाहिए कि मुन्ना-मुन्नी के स्वभाव, शारीरिक और मानसिक विकास, रुचि, काम करने की योग्यता आदि का भली प्रकार अध्ययन करें, तद्नुसार उन्हे बिना किसी पक्षपात के सुविधाएँ दे। केवल लड़का या लड़की होने मात्र से न्याय या अन्याय करना उपयुक्त नहीं। निम्नलिखित बातों में अधिकांश लड़के-लड़कियों में परस्पर प्राकृतिक विभिन्नता होती है, उन्हे जानना जरूरी है—

(१) लड़कियो की तुलना मे लड़के अधिक मेधावी होते हैं, परन्तु उनमें कुछ जड़मूर्खों की संख्या भी, लड़कियों से अधिक है।

(२) लड़के अधिक यथार्थवादी होते हैं, परन्तु कन्याओं की कल्पना अधिक ऊची उड़ान भरती है।

(३) कन्याओं को अपना घरू जीवन अधिक प्यारा है—उनमें मातृत्व का विकास छुटपन से ही हो जाता है, वह अपनी सेवा और स्नेह से परिजनों को सुखी करने की चेष्टा करती हैं। उन्हे अपनी प्रशंसा और बुराई का बहुत ध्यान रहता है। इसके विपरीत लड़के अधिक बेपरवाह, घुमक्कड़, निडर तथा दूसरों की राय से विशेष प्रभावित नहीं होते। इसी कारण वे जल्दी उदास भी नहीं होते और जल्दं झगड़ा भी मोल नहीं लेते।

(४) वेशभूषा मे कन्याओं को नवीनता तथा फंशन अधिक पसन्द है। लड़के इस विषय मे अधिक मीन-मेष नहीं करते।

(५) लड़कियों मे बीमारी तथा अन्य कष्ट सहने की अधिक शक्ति होती है। तीन वर्ष के अन्दर की आयु मे लड़कियो की अपेक्षा लड़कों की मृत्यु ही अधिक होती है।

(६) कन्याओं का शारीरिक और मानसिक विकास लड़कों से जल्द होता है, वह अपेक्षाकृत छोटी आयु में ही चलने, बोलने और समझने लगती है।

(७) लड़के माँ की आज्ञा और अनुरोध सहज मे मान लेते हैं, जब कि लड़कियों का झुकाव बाप की ओर अधिक होता है।

(८) लड़कियाँ सर्दी तथा गर्मी लड़कों की अपेक्षा अधिक सह सकती हैं यही कारण है कि जुकाम, खाँसी, दमा आदि रोग लड़कों को बाल्यकाल में अधिक होते हैं।

(९) लड़कों का ढाँचा लड़कियों से अधिक मजबूत, ऊँचा तथा वजनदार होता है, जब कि लड़कियों में कोमलता, लचक तथा आकर्षण लड़कों से अधिक होता है।

(१०) लड़कियों की रुचि बहुत सी बातों में लड़कों से भिन्न होती है, वे करुण, शान्त, अद्‌भुत रस को अधिक पसन्द करती हैं; कहानी, नाटक तथा बातचीत में वे इससे अधिक प्रभावित होती हैं जब कि लड़के वीर, वीभत्स, भयानक आदि रसों में भी दिलचस्पी लेते हैं। वे जल्दी घबड़ाते नहीं हैं।

उपरोक्त बातों को ध्यान में रखकर आयु और योग्यता के अनुसार कभी लड़कों को सहूलियत देनी पड़ती है कभी लड़कियों को। पर इस विषय में मुन्ना-मुन्नी में इस बात की गलतफ़हमी पैदा न होने दें कि वे केवल लड़का या लड़की होने से ही श्रेष्ठ या हीन हैं। बचपन मे मुन्ना-मुन्नी को एक दूसरे का पूरक बनाना सिखायें, इसी पर उनके भविष्य-जीवन की सफलता निर्भर है।

देखने में आया है कि हमारे घरों मे मुन्ना-मुन्नी को एक दूसरे के प्रति सम्मानजनक व्यवहार करना नहीं सिखाया जाता। मुन्ना देखता है कि पिता जी माँ को बे-बात के डाँटते हैं। मुन्नी भी देखती है कि पिता जी प्रत्येक बात में अपनी सुविधा पहले देखते हैं। घर की व्यवस्था तथा सामाजिक जीवन मे माँ की राय कुछ महत्त्व नहीं रखती। बस इस प्रकार के दृष्टान्तों से मुन्ना-मुन्नी के भविष्य-जीवन का सन्तुलन बिगड़ जाता है। मुन्नी स्वयं को दबी हुई या छल-प्रपंच-प्रिय बना लेती है जब कि मुन्ना स्त्रियों के प्रति एक उपेक्षा की भावना रखने लगता है। यही कारण है कि कालिजों और पब्लिक स्थानों पर पुरुष स्त्रियों के प्रति अशिष्टतापूर्ण व्यवहार करते पाए गए हैं और घरों मे भी इस प्रकार के अशिष्ट तथा स्वार्थी पुरुषों का अभाव नहीं है। इसमें बच्चों का क्या कसूर है, वे बचपन से जो देखते हैं सो करते हैं। अगर माँ-बाप उन्हें शिष्टाचार और सदाचार का पाठ पढ़ायें और दूसरों के सम्मान और अधिकारो की रक्षा करना सिखायें, तो वे भी शिष्ट और सभ्य बनेंगे एक विद्वान् का कथन है कि—

'यह निर्विवाद सिद्ध है कि बालकों के मस्तिष्क और भावनाएँ बहुत ही कोमल होती हैं। उनकी बुद्धि तो परिपक्व होती ही नहीं—ज्ञान की परिधि बहुत ही सीमित होती है। अतः उनके मस्तिष्क मे उनके घर वालों आदि का बहुत जल्दी असर पड़ जाता है। चाहे वह कितना ही बुरा क्यों न हो, अथवा वे उसे ठीक-ठीक न सोच पाते हों, पर फिर भी देखा-देखी असर तो उन में उसी तरह का पड़ ही जायगा। यह तो सिर्फ़ कहने की बात है कि बालक कुछ समझते ही नही। मैं तो यह कहूँगा कि जितनी जल्दी वे नकल उतारकर उसी आचरण को करने का प्रयत्न करते हैं—चाहे वे अज्ञानता से ही करे—उतना और कोई नहीं कर सकता और बचपन मे यही देखा-देखी नकल और माता-पिता के आचरणों से बालकों के मस्तिष्क पर जो प्रभाव पड़ता है, वह प्रायः जीवन-पर्यन्त नहीं जाता।

'अतएव आज सब से बड़ी आवश्यकता इस बात की है कि यदि हमें अपनी सन्तान को आदर्श और सदाचारी बनाना है तो हमारे लिए यह परमावश्यक है कि हम अपना चरित्र इतना दृढ़, खरा और शुद्ध बना लें कि उसका असर हमारे बालकों पर जब पड़े, तब अच्छा ही पड़े। यदि वे उसका अपनी आदत के कारण अनुकरण भी करें तो उनका कोई नुकसान न हो, हमारे आचरण से उनकी आदतें खराब न हों। अगर हमारा ही चरित्र खोटा होगा, हमारी ही आदतें-हरकतें खराब होंगी तो बच्चों के सुधारने की आशा करना ही व्यर्थ है।'

अट्ठाईसवाँ अध्याय

अधिक दुलारा बच्चा

दुलार से बिगड़े हुए बच्चे—आज मुन्ना ने पड़ोसी के बच्चे का खिलौना तोड़ दिया; कल बगीचे में से फल चुरा लाया; उस दिन खिड़की में से राहगीरों पर कचरा फेंक दिया; स्कूल में किसी को गाली दी इत्यादि। आये दिन माँ-बाप को मुन्ना के कारण इसी प्रकार के उलाहने मिलते हैं। बाप ने चाहा कि बच्चे को डाँटूँ-डपटूँ, पर माँ आड़े आ गई और बोली—"क्या मैं मोहल्ले वालों के पीछे अपने लाड़ले को पिटवा दूं ? बकने दो उनको। देखूं अब कौन आता है उलाहना लेकर। उनके बच्चे क्या कम शैतान हैं ? बुद्धू ने पहले उसे मारा था, तब उसने भी एक जमा दी। और सोहन ने उसे गाली दी थी, तब उसने भी दो सुना दीं। तुम तो भोले हो, लड़के को क्या दब्बू बनाना है ? एक बार नहीं वह सौ बार सुनायगा। कोई उसे छेड़कर तो देखे। मेरा लाड़ला कोई पानी में बहता हुआ नहीं आ गया है। मैंने लोगों के कहे पर उसकी पीठ नहीं उधेड़ देनी है, कहें जो उनकी मर्जी।"

माँ ने अपने अपराधी मुन्ना की ऐसी पैरवी की कि कोई वकील भी क्या करता, और मुन्ना जी कोने में दुबके, यह सब सुनकर मन-ही-मन मुस्कराये बिना नहीं रहे। वे बार-बार कसूर करके भी बेदाग छूट जाते हैं। बस, शह पाकर मुन्ना के हौसले बढ़ जाते हैं और उसी के साथ-साथ शैतानी, धाँधली, ज़िद और मुंहजोरी भी बढ़ती है।

किसी को घर में चीज़ मिले न मिले पर मुन्ना को जरूर मिलेगी। क्योंकि मुन्ना की माँ अपनी देवरानी आदि के बच्चों की तुलना में अपने मुन्ने को अधिक सुविधा देकर अपनी प्रधानता और अधिकार का सिक्का जमाना चाहती है। मुन्ना चाची के बड़े लड़के को भी चपतिया आता है, उसके नन्हे भैय्या को बिना बात के चिढ़ा या डरा-धमकाकर रुलाने में उसे आनन्द आता है। चाची परेशान है उस से, वह अगर कुछ कहे, तो उसकी माँ शेर होकर लड़ने आ जाती है। माँ की ओट में मुन्ना इस प्रकार की धाँधली मचाकर विजय का अनुभव करता है।

एक विद्वान् का कथन है कि माता-पिता का सुधार ही बच्चों का सुधार है तथा बच्चों के सुधार में ही माता-पिता का सुधार है।

जो बच्चों को सुधारना चाहता है, उसका स्वयं सुधरना अर्थात् सुधरे जीवन का स्वामी बनना मुख्य कर्त्तव्य हो जाता है। सुधरे जीवन का स्वामी बनते ही बच्चों के सुधार का कर्त्तव्य अनायास पूरा हो जाता है।

बिगड़े हुए बालक माता-पिता की कर्त्तव्यहीनता की घोषणा करते रहते हैं। फल कड़वा है तो पेड़ मीठा कैसे हो ? बालकों को न सुधारने से आत्म-सुधार असंभव रह जाता है।



सिर चढ़ाये हुए बच्चे—इस प्रकार के दृश्य जिन घरों में हैं, वहाँ मुन्ना-मुन्नी अवश्य लाड़ से बिगड़े हुए मिलेंगे। सभी बच्चे अपने माँ-बाप के दुलारे हैं। परन्तु लाड़ और दुलार का यह अभिप्राय नहीं है कि वह बच्चे का उपकार न करके, अपकार करने वाला प्रमाणित हो और उसे अन्यायी, जिद्दी, दम्भी, उद्दण्ड तथा निकम्मा बना दे। कभी-कभी घर के बड़े-बूढ़े भी बच्चे को लाड़ में बिगाड़ देते हैं। माँ चाहती है कि मुन्ना स्कूल जाय, मुन्नी अपनी सिलाई खत्म कर ले, परन्तु नानी या दादी के बीच में रोक-टोक करने से माँ की बात की उपेक्षा कर, मुन्ना-मुन्नी खेलने चले जाते हैं। बच्चे स्थिति का लाभ उठाने से कभी नहीं चूकते और विशेषकर जब कि किसी की ओट में उन्हें मनचाही करने का मौका मिल जाय, वे मौके को छोड़ने वाले नहीं।

लाड़ले मुन्ने का मन पढ़ाई में बिल्कुल नहीं लगता। वह दिन भर खेलता है, सुबह स्कूल जाते समय उसे सवालों की एकदम से याद आती है। वह अपनी माँ के जोर पर चचेरे भाई से सवाल करवा लेता है, कभी साथी की किताब में से नकल कर लेता है। कभी बीमारी का बहाना करके पढ़ाई से जी चुराने लगता है। परीक्षा में किसी की नकल करके, कुछ सिफ़ारिश पहुँचाकर पास हो जाता है। 'पर खाली दिमाग शैतान का कारखाना होता है' इसी लोकोक्ति के अनुसार मुन्ना कुछ-न-कुछ

तो सोचेगा और करेगा ही। वह आये दिन नई शैतानियाँ, नई इल्लतें खड़ी करता रहता है। माँ उसे कुछ कहती नहीं, लाड़ला जो ठहरा !

पर कभी-कभी ऐसे रिश्तेदार भी घर में आ जाते हैं, जिनके ऊपर मुन्ना की माँ का रुआब नहीं जमता। उनके बच्चे मुन्ना की धृष्टता और धांधली को नहीं सहते, तब मुन्ना खिसियाना-सा होकर, चिड़चिड़ा बन जाता है, तब वह अपनी हार पर



झुँझलाता है, बे-बात के रोता रहता है। जरा-जरा-सी बात के पीछे ज़िद करता है। बाल-समाज से उसका बायकाट हो जाता है, वह खिन्न रहने लगता है। कभी-कभी ठीक इसके विपरीत भी होता है मुन्ना बहुत उद्दण्ड तथा मुँहजोर निकल जाता है। अपने ऊपर चारों ओर से बुराई आते देख, माँ जब मुन्ना को रोकती-टोकती है, तो मुन्ना माँ से भी मुंहजोरी करने लगता है। वह अपने ही छोटे बहन-भाइयों को सताने लगता है, उनकी चीजें उड़ा लेता है, उनके हिस्से की चीज खा जाता है, बिना बात के उन्हें छेड़ता, रुलाता और परेशान करता है। और वे दुःखी होकर बाप से कहते हैं कि माँ ने मुन्ना भैय्या को लाड़ में, सिर चढ़ा रखा है, सारा घर भर इससे दुःखी है। माँ यह सुनती है और मन-ही-मन अपना अपराध स्वीकार कर चुप रह जाती है। वह कहती है, 'मैंने तो प्यार-दुलार किया था, कोई बुरे बनने का पाठ तो पढ़ाया नहीं था। कौन माँ चाहती है कि मेरा बच्चा बुरा निकले ? ये फूल ही काँटे बन गये, मेरी किस्मत !'

ठीक है, कभी-कभी अपनी ही भूल से अपने पैर में कुल्हाड़ी लग जाती है।

जहां अधिक मिठास होती है, वहीं कीड़े भी पड़ते हैं । इतना अधिक लाड़ कि बच्चा नियंत्रण से बाहर निकल जाय, बच्चे और घर-घराने दोनों के लिए अहितकर है । सही ढंग का लाड़-प्यार बच्चे के शारीरिक और मानसिक विकास दोनों के लिए बहुत ही जरूरी है । उसके अभाव में बच्चे मुरझा जाते हैं । पर ऐसा दुलार और बढ़ावा, जिससे बच्चा बुराई की ओर बढ़े, निडर होकर संगी-साथियों को हानि पहुँचाय, घर और समाज में गड़बड़ मचाय तथा दूसरो की तरक्की में बाधा डाले, वास्तव में बच्चे के लिए बहुत हानिकर साबित होता है ।

जिस घर में विमाता, बड़ी जिठानी या कमाऊ देवर की पत्नी अथवा ननद का अधिक दबदबा या प्रधानता रहती है, वहां अन्य आश्रित व्यक्तियों के बच्चों में, अपने बच्चों की श्रेष्ठता और विशेष अधिकार बनाये रखने के लिए गृहिणी अपने बच्चे के प्रति पक्षपातपूर्ण व्यवहार करने लगती है । फलस्वरूप उसका बच्चा अधिक सुविधा और खुशामद का आदी हो जाता है । वह भी अन्य बच्चों को नीचा दिखाने के लिए अनधिकार चेष्टा करने लगता है । अपनी उन्नति की ओर से विरक्त हो जाता है । अतएव धीरे-धीरे उस पर माता के प्रपंच, छल-कपट, चुगलखोरी, बात का बतंगड़ बनाना, दिखावटीपन आदि की छाप पड़ती जाती है, उसका विकास कुंठित हो जाता है । चरित्र में निर्बलता आ जाती है । होना तो यह चाहिए था कि अधिक सुविधा पाकर लाड़ले ने अधिक तरक्की करनी थी । परन्तु अधिकांश बच्चों का स्वभाव पानी के सदृश्य ढाल की ओर बहने का होता है, बच्चे भी इसी सुविधानुसार उस ओर ही पसरते जाते हैं, विवेक-बुद्धि उनमें कम होती है । बचपन में बेंत के सदृश्य एक बार जिधर मुड़ गए बड़े होकर भी वे उधर ही मुड़े रह जाते हैं । बाद में अपनी उन्हीं बुरी आदतों के कारण वे मां-बाप को भी परेशान करते हैं । बचपन की आदतें स्वभाव बन जाती हैं । ऐसे ही बच्चों से कुल का नाम डूबता है, धन की बरबादी होती है तथा माता-पिता सन्तप्त हो जाते हैं ।

अतएव बच्चे के लाड़-दुलार में सीमा का उल्लंघन नहीं करना चाहिए । प्रेम, प्रशंसा, प्रोत्साहन तथा रक्षा करते समय निम्नलिखित बातों का अवश्य ध्यान रखें—

(१) बच्चा आपकी ममता को आपकी दुर्बलता न समझे कि उसके वशीभूत होकर आप उसकी सब बात स्वीकार कर लेंगे या आप ममतावश उसे किसी भी बात से नहीं रोकेंगे । अगर वह रो-धोकर आपको पिघलाना चाहे, तो आप कभी भी यह दुर्बलता न दिखायें । बच्चे का दुराग्रह प्रथम बार ही रोकना होगा । अन्यथा आपकी प्रथम हार दूसरी हार का हेतु बन जायगी । अगर आप समझते हैं कि अमुक काम करने से या अमुक स्थान पर जाने से मुन्ना की शारीरिक और मानसिक हानि होगी तो उसे दृढ़ता से रोकना ही होगा, परन्तु आपके आदेश में दृढ़ता तथा सामंजस्यता

होनी चाहिए।

(२) अभाव की पूर्ति के लिए जहां तक हो सके बच्चे को सुविधा दी जाय। यथा आप नहीं चाहते कि मुन्ना अमुक सिनेमा देखने जाय, परन्तु उसके मनोरंजन के लिए कुछ और साधन तो जुटाने ही होंगे। अतएव उसे समझा दें कि यह खेल बच्चों के लिए उपयुक्त नहीं है, अब सरकस आने वाला है, हम तुम्हें सरकस दिखा देंगे या पिकनिक को भेज देंगे। पर जब मौका आय, तो अपना वायदा पूरा करना न भूलें।

(३) बच्चा जब कोई ऐसा अनुचित काम करे जिससे दूसरे को हानि हो या जो सामाजिक नियम के विरुद्ध हो, चाहे इस से उसको कुछ व्यक्तिगत प्राप्ति या लाभ होता हो, ऐसा करने से उसे फौरन रोके। कोई भी काम जो कि मानव धर्म के विरुद्ध हो उसे न करने दें। दूसरे के सिर कसूर डालकर, खुद बचकर निकल जाना, किसी की चुगली, निन्दा करके स्वयं भले बनने की चेष्टा करना, दूसरे की चीज़ हथिया लेनी आदि बातें आरम्भ में मामूली लगती हैं, परन्तु आगे जाकर यही मनुष्य को गिरा देती हैं। एक प्रसिद्ध डाकू ने फांसी के तख्ते पर झूलने से पहले अपनी माता से मिलने की इच्छा प्रकट की, जब वह अपनी माँ से गले मिलने लगा, उसने माँ का कान इतने जोर से काटा कि वह लहू-लुहान हो गई। पूछे जाने पर उसने कहा कि 'आज मेरे जीवन के इस दुखान्त का कारण, मेरी माता ही है। बचपन में जब मैं संगी-साथियों की चीजें चुराकर लाता था, उस समय मेरे अपराध की उपेक्षा कर या मुस्कराकर टाल-कर इसी ने मुझे चोरी की ओर बढ़ावा दिया था।' इसी तरह से बच्चों में बहुत से दोषों की नींव मां-बाप के अनदेखी या अनसुनी करने से पड़ जाती है।

(४) किसी के प्रति अपने क्रोध या अधिकार को प्रकट करने के लिए बच्चों को साधन न बनायें। उन्हें किसी के प्रति अविनम्र या द्वेषी अथवा दम्भी न बनने दें।

(५) किसी की आलोचना अथवा अपमान उनके सामने न करें, नहीं तो वह भी छोटे मुंह बड़ी बात कहने लगेंगे और बड़ों के प्रति उद्दण्ड तथा असहनशील बन जायेंगे।

(६) अपराध करने पर उसे शान्त होने पर एकान्त में समझायें। जब उसे क्रोध या जिद चढ़ी हो, तब उसके दर्प को कुचलने के लिए तीव्रता के साथ क्रोध न प्रकट करें। हो सकता है कि पिटकर या बुरा-भला सुनकर, अपने घायल आत्मसम्मान की रक्षा के लिए, बाद के परिणाम को भूल, वह आप से मुंहजोरी करने लगे। एक-दो बार इस प्रकार करने के बाद बच्चा ढीठ हो जाता है।

(७) अमीर-गरीब, बड़े-छोटे, लाड़ला और तिरस्कृत इस प्रकार का भेद परखने का मौका ही न आने दें। स्वाभाविक बच्चों के मन में इस प्रकार की भावना नहीं आती। परस्पर बांटकर खाना, मिलकर खेलना, एक दूसरे के साथ संगी-भाव

रखना आदि उन्हें सिखाया जाय। जब वे अपने संगी-साथी या पड़ौसी भाई के दुःख-दर्द या पारिवारिक असुविधाओं की चर्चा करें, उस समय आप भी उनके संगी-साथियों के प्रति सहानुभूति प्रगट करें। अगर मुन्ना अपनी पुरानी किताबें, छोटे बेकाम कपड़े या फालतू जूते अथवा खिलौनों से उनकी सहायता करना चाहे तो आप प्रोत्साहित करें। इस तरह की सामाजिक शिक्षा स्कूलों में भली प्रकार दी जा सकती है। जो बच्चे अपने घरों से पुस्तकें, मिठाई, कपड़े, खिलौने आदि चीजें ला सकें, उन्हें ठीक कर के अन्य गरीब बच्चों को अध्यापिका बाँट दे। इस प्रकार एक दूसरे का दुःख बाँटकर बच्चों को विशेष सुख होगा।

(८) अपने बड़े होने का दम्भ, शेखी मारना, कोई काम करने में नीचपन अनुभव करना आदि बातें ऐसी हैं कि मनुष्य को आलसी, दिखावटी तथा निकम्मा बनाकर ही छोड़ती हैं। जो बच्चा इकलौता है उसे अनेक सुविधाएँ और अधिक प्यार मिलता है। अतएव इकलौते बेटे के बिगड़ने की संभावना भी अधिक है। इसी-लिए अनेक सुविधाओं के बावजूद भी इकलौते बच्चे का चरित्र-विकास उतना स्वस्थ नहीं होता जितना कि उन बच्चों का जहाँ तीन-चार बहन-भाई मिलकर सुविधाओं को बाँटकर लाभ उठाते हैं तथा हार-जीत, दुःख-सुख आदि को सहज रूप से स्वीकार करना सीखते हैं।

(९) 'अभी बच्चा है, सब सीख जायगा, बड़े होकर अपने आप समझ आ जायगी। भाई, इस लाड़ले की क्या बात, सब कुछ इसी का है, अकेला बेटा है, जो मांगे सो थोड़ा, हमारे होते इसे कौन कुछ कह सकता है'—आदि उद्‌गार बच्चे के सामने कभी प्रकट नहीं करने चाहिएँ। अपने बचपन की ओट में वे बहुत सी मनचाही बातें करने लगेंगे अथवा आपके प्रेम को दुर्बलता समझ वे निडर हो जायँगे। भला हमें किस बात की कमी है, ऐसा सोचकर वे उद्यम करना भी छोड़ देंगे।

एक सेठ परिवार को मैं बहुत दिनों से जानती हूँ। पिता ने व्यापार में लाखों रुपया कमाया है। घर में ५-६ बच्चे हैं, पर उनकी माता की मूर्खता के कारण एक भी बच्चा आज्ञाकारी या चरित्रवान नहीं निकला। इन सेठ साहिब के यहाँ उनके बड़े भाई के दो बच्चे भी पले हैं। गृहिणी की चेष्टाएँ हमेशा ऐसी रहीं कि इन दोनों बहन-भाइयों को यथाशक्ति बुरा प्रमाणित करना अथवा उनकी उन्नति के मार्ग में बाधाएँ उत्पन्न करनीं। अपनी ध्येय-पूर्ति के लिए वह अपने बच्चों को भी अपने षडयंत्र में शामिल करती रही। कोई अपराध हो बस भाई के लड़के—रमेश—का नाम लगता, घर का कोई काम पड़ा रह गया, बस उसकी बहन शीला को बुराई दी जाती। गृहिणी के इस प्रकार के पक्षपातपूर्ण व्यवहार का इतना बुरा परिणाम हुआ कि उसकी दोनों लड़कियाँ निकम्मी, फैशनपरस्त, चुगलखोर और असहनशील बन गईं।

जिस घर में वे ब्याही गई है सास, ससुर तथा पति के नाकोंदम किए हुए हैं। पर उन्हें अपने माँ के सहयोग और पिता के धन का घमण्ड है। अतएव वे किसी की भी परवाह नहीं करतीं। तीन लड़के हैं, वे भी बिगड़े हुए हैं, अच्छे-से-अच्छे स्कूल मे उन्हे पढ़ने भेजा गया, घर मे बारहों महीने मास्टर लगा रहा, पर एक लड़का भी दसवीं पास नहीं हुआ। उनके कारण मास्टरो को गालियाँ मिलीं, स्कूलों के प्रबन्धो मे दोष निकाले गए, हारकर अब एक लड़का तो बम्बई में एक्टर बनने की चेष्टा मे आवारागर्दी कर रहा है, दूसरा बाप की बिज़नेस सभालने की ओट में जमे हुए व्यापार को ही चौपट करने लगा है और तीसरा लड़का नैनीताल मे किसी अंग्रेज़ी स्कूल मे पढ़ रहा है। उसे नाचने-गाने, उपन्यास पढ़ने, सिगरेट और ड्रिंक करने की लत लगी हुई है। वह यह समझता है कि इसी हुनर के बल पर आजकल की दुनिया मे तरक्की हो सकती है। उसने अपनी माता जी को इस बात के लिए राजी कर लिया है कि उसे विलायत भेज दिया जायगा। बाप की घर में कुछ चलती नही है, वह तो केवल धन कमाने की मशीन मात्र समझा जाता है।

उनके स्वर्गीय भाई के बच्चे रमेश और शीला संघर्ष और संकटों मे से तपकर तप्त स्वर्ण के सदृश्य उज्ज्वल हो गए है। शीला ने विवाह के पश्चात् बी० ए० कर लिया, उसके पति प्रोफेसर है, चाहे उनकी आमदनी थोड़ी है, परन्तु शीला-सी सुघड़ गृहिणी पाकर आज उनकी गृहस्थी की गाड़ी बहुत सुख-चैन से चल रही है। उसके दो बच्चे है, उन्हें शीला बहुत समझदारी से पाल रही है। रमेश ने ट्यूशन आदि करके एम० ए० पास कर लिया था और अब वह आई० ए० एस० की परीक्षा मे भी सफल हो गया है।

अब आप देखिए कि अगर रमेश की चाची अपने बच्चो को लाड़ में न बिगाड़ती, तो आज सब सुविधाओं का लाभ उठाकर, उनके बच्चे भी सुशिक्षित और होनहार निकलते। जो बच्चे सभ्य और उपयोगी नागरिक बन सकते थे, वे माता की मूर्खता और पिता की ढिलाई तथा अत्याचार मे सहयोग देने से, ऐसे निकले कि आगे जाकर समाज को हानि पहुँचाने वाले तथा न केवल अपने कुल और वंश की बरबादी करने वाले ही, अपितु अपने जीवन-संगी तथा बाल-बच्चों को भी अपनी स्वार्थता के कारण दुःखी करने वाले प्रमाणित होंगे।

एक ओर माताएँ जहाँ बच्चे के लिए अपना जीवन तक उत्सर्ग करने को तैयार रहती है, दूसरी ओर अपनी अज्ञानता तथा अविवेक के कारण वे बच्चे का अहित भी बहुत करती है। बच्चे की बुरे और भले होने की अधिकांश जिम्मेदारी माँ पर ही है।

आपका प्रेम तथा लाड़ ऐसा होना चाहिए जो बच्चे की रक्षा छिपे हुए

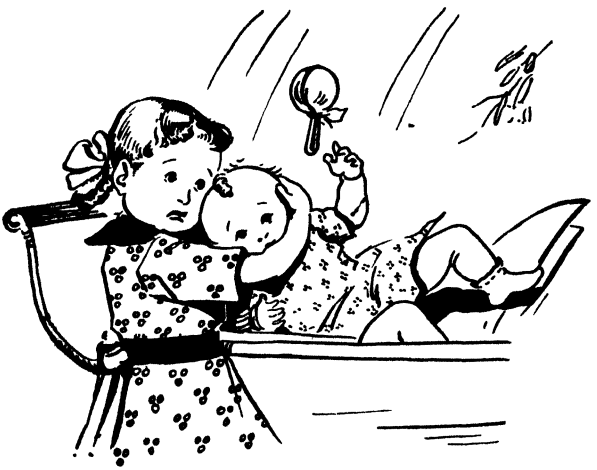
कवच के सदृश्य करे, जिसके द्वारा सिंचकर उसकी आत्मा और चरित्र तुष्ट और पुष्ट हों। जिसका अनुभव कर वह स्वयं को सुरक्षित तो समझे, परन्तु निडर होकर मर्यादा का उल्लंघन न करे, अपितु ठीक मार्ग पर चलने की प्रेरणा पाय।

ऐसा लाड़ जो बच्चे को आलसी या दम्भी बना दे, उसके चरित्र-विकास मे बहुत बाधा पहुँचाता है। वे निकम्मे और बहानेबाज बन जाते है। बचपन की आदतें ही बच्चे का स्वभाव बनाती हे। लाड़ में बिगड़े हुए बच्चे बड़े होकर जीवन-संघर्ष में असफल रहते हें। आपका प्रेम ऐसा होना चाहिए जो बच्चे में सद्‌गुणों का विकास करे। उसके जीवन को कल्याणकारी और उपयोगी बनायँ।

उन्तीसवां अध्याय

असामाजिक दृष्टिकोण

एक विद्वान् का कहना है कि यदि आपका बालक झूठ बोलता है तो उसका कारण यह है कि या तो आप स्वयं झूठ बोलते होंगे या आपने अपने क्रोधी और चिड़चिड़े स्वभाव से बालक को इतना भयभीत और त्रस्त कर रखा है कि उसे आपके सम्मुख सत्य बोलने में यह हिचक और डर लगा रहता है कि कहीं सत्य कहने पर आप उसे दण्डित न करें।



लगभग पाँच-छः वर्ष की आयु तक बच्चा संकोची स्वभाव का ही होता है। घर के अन्य बच्चे तथा अड़ौस-पड़ौस के दो-चार संगी-साथियों को छोड़कर उसकी जान-पहिचान भी सीमित ही होती है। अगर मुन्ना स्कूल जाता है, तो उसकी परिचित बाहरी दुनिया का दायरा कुछ अधिक विस्तृत हो जाता है। बच्चा जिन लोगों के सम्पर्क में आता है, उनके व्यवहार का उस पर अवश्य प्रभाव पड़ता है। इसके अतिरिक्त घुटे हुए वातावरण से जब वह छुटकारा पाता है, तो उसकी हरकतें और विचार अधिक उद्दण्ड प्रतीत होते हैं। यहाँ तक कि उनके कई एक कामों से संगी-साथियों को हानि तक पहुँचती है, संरक्षकों और गुरुओं के लिए उन्हें संभालना कठिन हो जाता है। ऐसे बच्चों को 'बिगड़े हुए', 'उद्दण्ड', 'नालायक', 'ढीठ' आदि उपाधियां

मिलती है। खोज करने से पता चलता है कि उनकी नासमझी के कुछ हेतु भी होते है।

असामाजिक व्यवहार का हेतु—निम्नलिखित कारणों से बच्चे प्रायः असामाजिक व्यवहार करते है—

(१) जब किसी बच्चे को हीनता की भावना कचोटती रहती है, तब महत्त्व प्राप्त करने के लिए वह मुँहजोर और कामचोर बन जाता है, और अपनी जिम्मेदारियों की जान-बूझकर अवहेलना करता है।

(२) अपने पालको तथा गुरुओं के कठोर व्यवहार से तंग आकर वह आज्ञा-उल्लंघन द्वारा, उन्हें परेशान करना चाहता है। अपने शासको को दुःखी और परेशान देख उसे एक विशेष प्रकार का सन्तोष होता है।

(३) बच्चे से कोई ऐसा अपराध न हो जाय कि उसे अपनी करनी पर बड़ा पछतावा हो, तब स्वयं को सजा देने के लिए कभी-कभी वह अपने को कुछ सुविधाओं से वंचित रखने की यथाशक्ति चेष्टा करता है, चाहे इससे परिजनों की परेशानियाँ भले ही बढ़ जायँ। यथा—आठ वर्ष की सुशीला को इस बात का बड़ा चाव था कि मैं पूरी तलूँ, माँ ने बहुतेरा समझाया कि 'अभी तू छोटी है, जल-जला जायगी', पर वह नहीं मानी। चुपके से एक पूरी बेलकर उसने माँ के पीठ-पीछे खड़े होकर, दूर से ही कढ़ाई में डाल दी। गर्म-गर्म घी माँ के हाथ पर पड़ा, और इससे उनकी बाँह पर बड़े-बड़े फफोले उठ आए। इस भूल पर बड़ी बहन शान्ति ने सुशीला को खूब डाँटा कि 'मना करा था, मानी क्यों नहीं ?' उस दिन दशहरे का दिन था, सब ने खाना खाया, परन्तु सुशीला दिनभर मुँह छिपाये खड़ी रही, इससे माँ को भी दुःख हुआ कि आज तीज-त्योहार के दिन बच्ची भूखी ही रह गई, परन्तु सुशीला आत्म-ग्लानि के मारे अपने स्थान से हिली नही। पिता जी ने भी कहा कि 'एक तो अपराध किया, ऊपर से खाना न खाने की जिद भी पकड़ ली है, रो-रोकर आँखे अलग सुजा ली है, बड़ी अजीब लड़की है।' असल मे सुशीला सत्याग्रह करके स्वयं को सजा देकर क्रोध प्रकट करना चाहती थी।

(४) प्रत्येक बच्चे में कुछ-न-कुछ गुण-दोष होते है, परन्तु जहाँ हर समय तुलना और आलोचना द्वारा किसी बच्चे को बुरा प्रमाणित किया जाय, उसकी अच्छी चेष्टा को भी बहानेबाजी समझा जाय, वहाँ बच्चा चिढ़कर यत्न करना छोड़ देता है और अदबदाकर उल्टे काम करता है। लक्ष्मी जब ४ वर्ष की थी उसके एक सुन्दर-सा भाई हुआ। लक्ष्मी को भाई को दुलारने और पुचकारने का बड़ा चाव था, परन्तु जब भी वह भाई के पास खड़ी पकड़ी जाती, उसे डाँट पड़ती—'ध्यान रखना, लक्ष्मी जरूर मुन्ने को हानि पहुँचायगी, उसकी आँख में उँगली चुभो देगी। कहीं

उसका हाथ न खींच ले। चल हट यहाँ से, गन्दी छोकरी, कलूटी कहीं की। मुन्ना तो ऐसा सुन्दर और प्यारा है, तू तो नकटी-चपटी है, उस से तू अलग रहा कर। तेरे संग रहकर वह भी बिगड़ जायगा।'

दिन-रात इस प्रकार के रिमार्क सुनते-सुनते लक्ष्मी के दिल मे मुन्ने के प्रति ईर्ष्या जाग्रत हो गई और वह जान-बूझकर उसे हानि पहुँचाने की ताक मे रहने लगी। छोटे लड़को के प्रति लक्ष्मी की ईर्ष्या-भावना यहाँ तक प्रबल हुई कि वह प्रत्येक छोटे लड़के को चुटकी काट लेती या धक्का दे देती, उन्हे अपशब्द भी कहती। अगर आरम्भ में ही लक्ष्मी के साथ मुन्ने की ऐसी तुलना न की जाती और मुन्ने को दुलारने-पुचकारने का सही ढंग सिखा दिया जाता, तो आज लक्ष्मी का दृष्टिकोण ऐसा असामाजिक न बनता। अब लक्ष्मी के खुद के बाल-बच्चे है, परन्तु वह अपनी मुन्नी को अधिक प्यार करती है, छोटे मुन्ने के प्रति उदासीन ही रहती है। बालपन की वह उपेक्षा अभी तक उसके जीवन मे अपना असर दिखा रही है।

(५) बच्चो के असामाजिक व्यवहार के अन्य भी कारण है—यथा पड़ौस और स्कूल मे शैतान या चोट्टे और झूठे बच्चो का साथ। उनके साथ रहकर मुन्ना भी दूसरों को सताना, किसी का बना हुआ काम बिगाड़ना, झूठ बोलना, बहानेबाजी, चुगलखोरी या चोरी करनी आदि बुराइयाँ सीख जायगा।

अगर बच्चो को अवकाश के समय मे रचनात्मक मनोरजन मे व्यस्त न रखा जाय तो वे विनाशात्मक प्रवृत्ति ग्रहण कर लेते है। सगी-साथियो के सग झगड़ा करना, किसी सीधे बच्चे को पीटकर उसका खिलौना छीन लेना, किसी बगिया या फुलवारी को उजाड़ देना, जानवरो, चिड़ियो या पशु भिखारियों को सताना, कोई वर्जित कार्य करना या बड़ो की सुव्यवस्था को बिगाड़ना आदि उत्पातों मे उन्हे आनन्द आने लगता है। घरों मे अगर अशान्त वातावरण हो, माँ-बाप की आये दिन बच्चों के सामने ही तू-तू मैं-मैं हो या घर मे सास-बहू अथवा ननद-भावज की लड़ाई हो, तब भी बच्चे बड़े कुसंस्कारी बन जाते है। अपने समाज के प्रति वे भी उद्दण्ड और असामाजिक व्यवहार करने के आदी हो जाते है। घर मे खाने-पीने की कमी या खेल-कूद में अधिक रोक-टोक होने के कारण भी बच्चों में चोरी करने की आदत हो जाती है। वे घर से पैसे चुरा लेते है, फीस के पैसे झूठ बोलकर बचाकर चाट-पकौड़ी खाने अथवा खेल-तमाशे मे उड़ा देते है। इस आदत को रोकने के लिए अगर हो सके तो बच्चे को कुछ जेब-खर्च दिया जाय और उस रकम को खर्चने का उसे पूर्ण अधिकार होना चाहिए। हाँ, आप उसे सुझाव दे सकते है।

(६) जो बच्चा स्कूल में पढ़ाई और खेल दोनों में पिछड़ा रहता है, वह भी मेल-मिलाप और सहयोग देने से कतराता है। इसलिए पिछड़े हुए बच्चों के लिए

स्कूलों में शिक्षण का प्रबन्ध अलग ही होना चाहिए। ऐसे मंद-बुद्धि बच्चे षडयंत्रकारी बच्चों की अधीनता शीघ्र ही स्वीकार कर लेते हैं और दूसरों को हानि पहुँचाने के साधन बन जाते हैं और असली अपराधी इनकी ओट में बचकर सहज ही निकल जाते हैं।

(७) जिस बच्चे को घर में स्नेह का अभाव हो या वह स्वयं को अरक्षित अनुभव करता हो, वह छिपाकर काम करने और पीठ-पीछे निन्दा करने का आदी हो जाता है। फलस्वरूप जिस मनुष्य को वह अपने दुःख और पराधीनता का कारण समझता है उसकी बदनामी करके वह अपने मन का उबाल निकालता रहता है। अपने साथ हमदर्दी करने वाले को, वह अपने पीड़क को हानि पहुँचाकर भी, लाभ पहुँचाने की चेष्टा करेगा। घरू जीवन मे दुःखी बच्चे अपनी अध्यापिका या पड़ौस की चाची, मामी या मौसी पर अपना सारा स्नेह उंडेल देते हैं। अगर ये स्त्रियाँ बच्चे को समझाकर ठीक रास्ते ले चलें, तब तो उनकी सहानुभूति से बच्चे के घाव हल्के पड़ जाते हैं और वह प्रेरणा पाकर सुधर जाता है, अन्यथा वह कटी डोर की पतंग के सदृश्य समाज में उखड़ा-उखड़ा फिरता है।

(८) इसके अतिरिक्त बड़ों के व्यवहार का भी बच्चों पर बड़ा प्रभाव पड़ता है। जाने या अनजाने मे कहे गए या किए गए बड़ों की बातचीत या व्यवहार का भी बच्चे अनुकरण करते हैं। यथा गली मे किसी कुत्ते या भिखारी को भूख या कष्ट से तड़पते देख मुन्ना-मुन्नी अपनी माँ से विकल होकर कहते हैं—'माता जी, बेचारा वह कुत्ता खुजली से तड़प रहा है, और वह भिखारी ठंड में ठिठुर रहा है।' यह सुनकर माता अगर उन दुःखी जीवों के कष्ट निवारण नहीं कर सकती है तो कम-से-कम यह तो न कहे, 'तो हम क्या करें, क्या हम साथ मर जायँ ? जिधर नजर उठाओ उधर ही दुःखी दिखाई पड़ेंगे, इनके पीछे व्याकुल होने लगें तब तो हम जी चुके।' माता के ऐसे बचन सुनकर बच्चे के हृदय मे पहले तो बड़ा आघात लगता है, धीरे-धीरे वह भी पड़ौसी और संगी-साथियों के दुःख मे दुःखी होना भूल जाता है। जब वह देखता है कि उसके पिता या बड़े भाई, परिवार, समाज, मोहल्ले तथा देश की प्रत्येक भलाई और बुराई, उन्नति और अवनति, उत्सव और मातम को अपने व्यक्तिगत लाभ-हानि को ध्यान में रखकर परखते हैं, तो मुन्ना भी समाज के प्रति स्वार्थी हो जाता है। किसी का बिगड़ता हो तो बिगड़े, जब तक अपना भला होता है, सब तरीके ठीक है; पड़ौस में घर में मातम है तो हुआ करे, हमें तो ग्रामोफोन बजाने में आनन्द आता है; दूसरे की लाज लुटे तो लुटा करे, हमारा तो सुनाम हो रहा है; दूसरे का हक मारा जाय तो कुछ परवाह नहीं, हमारी तरक्की होनी चाहिए; अपने बड़ों का ऐसा दृष्टिकोण देख-कर मुन्ना भी असामाजिक व्यवहार करने का आदी हो जाता है।

स्वार्थ-वृत्ति का कारण—माता-पिता इस बात की आम शिकायत करते हैं, 'देखो कलियुग आ गया, आजकल के बच्चों को अपने खेल-कूद और आराम से मतलब है। माँ बेचारी दिनभर काम करती थक जाती है, बाप मर-मर कर कमा रहा है, पर इनको जरा शर्म नहीं। पास के कमरे में चाहे माँ का सिर दुखता रहे, बाप खाँसता पड़ा रहे, पर ये लोग अपने संगी-साथियों के संग ही ! ही ! लगाए रहते हैं। पूछना और सेवा करनी तो दूर रही, उल्टा घर में आकर धौंस जमाते हैं। हुक्म ऐसा चलाते हैं मानो माँ-बाप नहीं इनके नौकर हैं। इन्हें अपने बड़े-बूढ़ों का लिहाज नहीं, अड़ौस-पड़ौस की शर्म नहीं, मानो बेशरमी की खोल ही ओढ़ ली है।'

बच्चों के इस ग़ैर-ज़िम्मेदार आसामाजिक व्यवहार के लिए किसी हद तक बड़े भी दोषी हैं। या तो उन्होंने अपने बच्चों को इतना सिर चढ़ा लिया कि अब वे उनका लिहाज तोड़ बैठे हैं और या फिर उन्हें ऐसा दबाया कि अपने माता-पिता की कमज़ोरियों तथा वृद्धावस्था का वे लाभ उठाने लगे हैं।

बच्चा जन्म से बुरा नहीं होता, परिस्थितियाँ, घर का वातावरण, बड़ों का उदाहरण आदि बातें मिलकर उस के चरित्र को बनाती हैं। अगर इसमें न्यूनता रह जाय तो बच्चे के चरित्र-विकास में भी कमी रह जाती है। मनुष्य-स्वभाव है कि सहूलियत देखकर वह स्वार्थ-सिद्धि की ओर झुकता है और फलस्वरूप वह आसामाजिक व्यवहार करने लगता है। जो बच्चा तुलनात्मक रूप से अन्य बच्चों से बुद्धि, बल तथा रूप में हीन होता है वह भी द्वेषवश दूसरों को नीचा दिखाने के लिए, चुगलखोर, और परनिन्दक बन जाता है। बात का बतंगड़ बनाकर दूसरे को मुसीबत में डालने में उसे विशेष आनन्द आने लगता है।

स्नेह से वंचित बच्चा भी दूसरों की सहानुभूति प्राप्त करने के लिए झूठ और फरेब का आश्रय ले लेता है। ऐसे बच्चों के चरित्र में आगे जाकर अनेक दोष आ जाते हैं। वे अपनी असफलता को दूसरों के मत्थे मढ़ने की चेष्टा में रहते हैं। 'अगर मैंने उसकी बात न सुनी होती; अगर उसने मुझे भुलावा न दिया होता; अगर मैं उसके लिए न रुका होता; तो आज इस मुसीबत में न होता।' इस प्रकार कहकर वे अपनी भूलों को छिपाने की चेष्टा करते हैं। तारीफ तो यह है कि निर्णयात्मक बुद्धि से हीन ऐसे व्यक्ति अपनी ज़िद में हितैषियों की बात कभी नहीं सुनते, बाद में अपनी भूल के कारण वे अपने परिजनों को भी मुसीबत में डालते हैं। गलती करते समय वे यह भूल जाते हैं कि उनके गलत काम या निर्णय का कुफल उनके परिवार, मित्र तथा समाज सभी को भुगतना पड़ेगा। वे समूह के प्रति अपने को जिम्मेदार नहीं समझ पाते, यही कारण है उनके आसामाजिक दृष्टिकोण का।

क्लास का एक बच्चा बुरा काम करता है, सारी कक्षा सज़ा पाती है; परिवार

का एक लड़का दुराचारी निकलता है, सारा परिवार बदनाम हो जाता है। बच्चों को समाज के प्रति जिम्मेदारी का व्यवहार करने की शिक्षा देने का बचपन में ही ध्यान रखा जाय। मुँहफट बच्चे के यह उद्‌गार कि 'तुम्हें क्या? जाओ, मै ऐसा ही करूँगा', इस बात के द्योतक है कि बच्चा घर से अपने को पृथक् समझता है। ऐसी स्थिति में उसे स्नेह और धीरता से यह समझाने की आवश्यकता है कि 'हम सब एक है; घर का प्रत्येक व्यक्ति परिवार का अंग है; प्रत्येक मोहल्ला नगर का अंग तथा अनेक नगर मिलकर देश बनते है।' बच्चे के असामाजिक व्यवहार का हेतु ढूँढ़कर सुधार करना आवश्यक है, तभी बच्चा स्वयं को समाज के प्रति जिम्मेदार समझेगा, और उसकी व्यवस्था को बनाए रखने में सहयोग देगा।

'जीवन की यात्रा मे कई वस्तुओ की आवश्यकता है। सबसे पहले तो शरीर को स्वस्थ रखना है। दूसरा काम है, विद्याध्ययन। तीसरा काम है, अपने को समाज-सेवा के योग्य बनाना।

'मनुष्य की अन्य जन्तुओं से विशेषता इस अंश में है कि उसको अपनी आत्मा का ज्ञान है। इन चार बातो का यदि बालक को ज्ञान कराया जाय तो उनका और विश्व का कल्याण संभव है।'

—डा० अमरनाथ झा

तीसवाँ अध्याय

अधिकार तथा सम्मान की रक्षा

'कौनसा सभ्य राज्य है, जिसने बालकों के अधिकारों की घोषणा की हो और उन अधिकारों की रक्षा की व्यवस्था की हो ? मानवसृष्टि में बालक एक अधिकारहीन प्राणी है, उससे मीठा बोलना, उसके साथ सद्व्यवहार करना एक दया और उदारता का काम समझा जाता है । ऐसा करके उस पर अहसान जताया जाता है, क्योंकि उसका ऐसा कुछ अधिकार तो है ही नहीं, जो कानून द्वारा मान्य हो ।'

—श्री भगवानदास केला

बच्चा विकास की शक्तियाँ लेकर पैदा होता है । जिस प्रकार एक बीज में वृक्ष विशेष के सभी गुण छिपे रहते हैं और अनुकूल धरती तथा खाद-पानी पाकर समय आने पर वह एक वृक्ष का रूप धारण कर लेता है, ठीक उसी प्रकार अनुकूल वातावरण में बच्चे का शरीर बढ़ता और पुष्ट होता है, अपनी गति में वह सन्तुलन बना लेता है, साथ ही अपनी कार्य-शक्ति और जिज्ञासा-शक्ति का सहारा लेकर वह अनेक भूलें तथा बाल सुलभ अज्ञानता प्रदर्शित करता हुआ, शनैः-शनैः अपने ज्ञान-भंडार को बढ़ाता है और उपयोगी तथा रचनात्मक कार्य करना सीख जाता है ।

स्तन-पान बच्चे का प्रथम सामाजिक कार्य है । माता के सहयोग तथा अपनी सहज बुद्धि के सहारे वह इस कार्य को करने में सफल होता है । जो बच्चा समय पर भरपेट दूध पी लेता है, चैन से सो जाता है, मल-मूत्र त्यागता है, तथा अपने में मस्त रहता है, उसे देखकर हम कहते हैं कि यह बच्चा बड़ा ख़ुशमिज़ाज और स्वस्थ है । इसके विपरीत जो बच्चा हमेशा 'रें रें' करता रहे, तथा जिसकी भूख और नींद एक समस्या बन जाय, उसे हम रोगी, रोंदू तथा समस्यापूर्ण बच्चा कहते हैं । बच्चे की सभी दैनिक क्रियाएँ स्वाभाविक रूप से हों, वह प्रसन्न-वदन तथा स्वस्थ रहे इसके लिए यह आवश्यक है कि हम उसको आवश्यक सुविधाएँ दें, उसी प्रकार उसके मानसिक विकास के लिए यह भी आवश्यक है कि हम उसकी जिज्ञासा-वृत्ति को प्रोत्साहन दें, उसको स्वतन्त्र गति करने के लिए कुछ विशेष सुविधाएँ दें । वह बच्चा है, कमज़ोर है, छोटा है, इसलिए उसके अधिकारों या उसका हँसी-मज़ाक बनाकर उसके सम्मान की उपेक्षा करना भारी भूल है ।

गाँधी जी का कहना है कि एक सुव्यवस्थित परिवार में सभी जगह सन्तुलन बना रहता है । पिता अपने बच्चे के लिए जो कुछ करता है वह निस्वार्थ भावना से करता है । यह कोई सौदा नहीं है कि वह सोचे कि मैंने अपनी सन्तान के लिए इतना

करा उसके बदले में मुझे ठीक उतना ही प्राप्त हुआ कि नहीं ! पर इसका यह मतलब नहीं है कि उसे फल-प्राप्ति नहीं होती । पर माता-पिता और सन्तान में यह आदान-प्रदान एक बहुत ही स्वाभाविक ढंग से होता है । अपना-अपना कर्त्तव्य करने के लिए कोई डर या दबाव नहीं डाला जाता है, एक दूसरे के प्रति अविश्वास नहीं होता । यही सिद्धान्त एक समाज पर भी लागू हो सकता है ।

माँ-बाप पर बच्चों का ऋण—आम तौर पर माता-पिता की यह धारणा है कि हम बच्चे के लिए त्याग करते हैं, उसकी सेवा और देखभाल तथा लाड़-दुलार में हम अपने सुख-आराम को भूल जाते हैं, मात.-पिता की सेवा का मूल्य भला बच्चे क्या चुकायेंगे ? परन्तु माता-पिता की यह उक्ति, दम्भपूर्ण है । बच्चों का भी माता-पिता पर कम ऋण नहीं है । शास्त्रों के अनुसार जो दम्पत्ति निःसन्तान मर जाते हैं, उन्हें मुक्ति नहीं होती । मुक्ति होती है या नहीं, इसको तो प्रमाणित करना कठिन है, परन्तु यह तो सच है कि माँ बाप अपने सभी प्रयत्नों, अपने गुणों तथा अपनी शक्तियों का परिष्कृत रूप अपने बच्चों में देखने की कामना करते हैं । अगर बच्चे न हों तो माँ-बाप को अपने इन गुणों को ट्रान्सफर करने के लिए, धरोहर रूप सौंपने के लिए उपयुक्त पात्र का अभाव ही बना रहे, फिर वे अपने बचपन और यौवन को किसमें पुनर्जीवित देखने की कामना करेंगे ?

बच्चे की तोतली बातों तथा बाल सुलभ क्रीड़ाओं से जो आनन्द माता-पिता को मिलता है, उनके हृदय में ममता का जो स्रोत फूट उठता है, उसका आधार भी बच्चा ही है । अपनी सन्तान, अपने आत्मज के लिए चेष्टा करना उसे फलते-फूलते देखना, उनकी सुविधाओं के लिए सुख-साधन जुटाना, ये सब कार्य माता-पिता स्वेच्छा से करते हैं । इसमें उन्हें आनन्द आता है, इसी में उन्हें अपने जीवन की सार्थकता दिखती है । निःसन्तान मनुष्य के हृदय को यह भावना कचोटती रहती है कि 'हाय ! मेरा कोई नहीं है, मैं किस के लिए जिऊँ, किस के लिए कमाऊँ ?' यह कचोटन उसकी शक्तियों को विकसित होने से रोक देती है । उसे अपने जीवन में ममत्व का अभाव-सा दिखने लगता है । महान् पुरुष, देश तथा समाज-सेवक इसके अपवाद रूप कहे जा सकते हैं, परन्तु प्रत्येक साधारण व्यक्ति सन्तान के अभाव में स्वयं को अधूरा ही समझता है, सन्तान मानो माता-पिता की पूरक है, जिस पर वह अपनी सारी ममता उंडेलकर, आनन्दविभोर हो जाते हैं । अपने ज्ञान, शक्ति तथा गुणों की बच्चों में वृद्धि देखकर, अपने आदर्शों को उनमें सफल पाकर, माता-पिता को कितना आनन्द होता है ! अतएव यह मानना ही पड़ेगा कि बच्चे का ऋण भी माँ-बाप पर कम नहीं है । इस ऋण के लिए हमें अपने बच्चों का कृतज्ञ होना चाहिए । उनका एहसान मानकर, उनके विकास के लिए आवश्यक स्वतन्त्रता तथा सुविधा देनी चाहिए । उनके

मान-सम्मान और अधिकारों की रक्षा करना हमारा कर्त्तव्य है।

बच्चे के अधिकार—जब एक स्त्री माता बनती है, उस पर सब से अधिक अधिकार उसके बच्चे का है। विशेषकर जब तक बच्चा अपने हाथ-पांव नहीं संभालता तथा इस योग्य नहीं हो जाता कि वह अपने आसपास की दुनिया से परिचित होकर, उस ओर आकर्षित हो तो, वह पूर्ण रूप से माँ पर निर्भर रहता है। माँ का दूध उसका प्राकृतिक भोजन है और माँ का स्नेह उसकी रक्षा करता है। यह बच्चे के अधिकार का तकाजा है कि उसकी माँ गृहिणी और पत्नी के कर्त्तव्यों को माता के कर्त्तव्य से अधिक महत्त्व नहीं दे। माँ सब काम छोड़कर बच्चे की देखभाल और सेवा करे, उसके साथ खेले, बात करे, ताकि उसे हाथ-पांव संभालने और जानकारी बढ़ाने में सही ढग का सहयोग प्राप्त हो सके, पर ऐसा होता नहीं है। माँ बच्चे के सग खेल रही है, या उसे गोद मे लेकर दूध पिला रही है, मुन्ना आनन्द से हाथ-पांव पटकता हुआ माँ के स्तन से खेल रहा है। माँ और मुन्ना दोनों ही एक दूसरे को लाड़ करने में मस्त है, इतने में पिता जी बाहर से आते है और कड़ककर जल्दी खाना तैयार



करने का तकाजा करते है। माँ बेचारे मुन्ने को एक ओर पटककर घबड़ाकर उठ जाती है। बेचारा मुन्ना अपने सुखद स्वप्न के टूट आने से रोने लगता है।

बच्चा अधिक प्राकृतिक है। वह जल्दी सो जाता है और सूर्योदय होने से पहले, चिड़ियों के चहकने के साथ उसकी नींद खुल जाती है, पर बड़ों के लिए उसका इतने तड़के उठना सुविधाजनक नही है। वे उसे थपक-थपककर या डरा-धमकाकर

अथवा प्रलोभन देकर फिर सुलाने की चेष्टा करते हैं। बच्चे को स्वतन्त्र रूप से अपनी दिनचर्या बनाने का अधिकार नहीं दिया जाता। उसे बड़ों की सुविधा के अनुसार काम करना पड़ता है। बच्चा चाहता है, मैं खुद अपने हाथ से खाऊँ, परन्तु माता यह पसन्द नहीं करती, कारण उसने मुन्ने को नहला-धुलाकर नये कपड़े पहनाकर तैयार किया है, अगर वह खुद खाना खायगा तो वह अपने कपडे, हाथ-मुँह और मेज की चादर सभी सानकर रख देगा। माँ को यह पसन्द नहीं है। इसी प्रकार जब मुन्ना चलना-फिरना सीख जाता है, वह अपने आसपास की चीजों को छूकर, उठाकर, घुमा-फिराकर, पटककर, उनके विषय में अपनी जानकारी बढ़ाना चाहता है। क्योंकि उसकी जिज्ञासा-वृत्ति उसे प्रेरणा देती है। परन्तु बड़ों को मुन्ना की यह चेष्टाएँ पसन्द नहीं। 'इसे मत छू,' 'वहाँ मत जा,' 'खबरदार जो ड्रॉइंग रूम में कुर्सियों पर बैठा,' 'इसे कमरे से बाहर निकाल दो, लकड़ी के जगने मे बिठा दो।' बस इस प्रकार के आदेशो से मुन्ना के घूमने-फिरने, चीजों को छूने आदि पर पाबन्दी लगा दी जाती है।

बच्चे की रुचि और समय का सम्मान करें—बच्चा कुछ बड़ा हुआ तो उसे अपने खेल से अधिक कुछ प्रिय नहीं है। बड़ों की नजरों में उसका खेल चाहे समय की बरबादी या फिजूल-सा काम है, परन्तु मुन्ना के लिए ज्ञान-प्राप्ति का वही सुन्दर साधन है। अपना मनोरजन करने का अधिकार बच्चे को होना चाहिए। उसकी रुचि और समय का भी बड़ों को ध्यान रखना चाहिए। यह नहीं कि 'यह खेल मत खेलो' या 'इस समय खेल छोड़कर मेरे पाँव दबाओ या पीठ खुजाओ।'

बड़ों की इस धाँधली को बच्चे अनधिकार चेष्टा समझते है और मन-ही-मन वे बड़ों पर झुँझलाने लगते है। यथा मुन्ना अपने मैकेनो से खेल रहा है, इतने में पिता जी पुकारते है—'ए मुन्नू, जरा दौड़कर नीचे से सिगरेट तो ले आ और हाँ, जरा पड़ौस में राय साहिब से भी कह आना कि चाय पीकर वे इधर ही चले आयें, ब्रिज पार्टी यहीं जमेगी।'

बेचारा मुन्नू बे-मन से खेल छोड़कर चला तो जाता है, पर रास्ते भर वह अपने पिता के व्यवहार की आलोचना करता जाता है कि 'पिता जी को तो हर समय अपने ब्रिज की पड़ी रहती है, हमारे खेल का कभी ध्यान ही नहीं—हमें कहीं घुमाने-फिराने या पिकनिक के लिए ले जाने का मौका आता है, तो काम का बहाना बना देते है, वैसे यूँ ही सारा दिन ब्रिज खेलने में गुजर जाय तो काम का हर्जा नहीं होता।

अभी पिता जी का काम करके मुन्ने को लौटे पाँच मिनिट नहीं हुए कि माँ पुकारती है—"ए मुन्ने, आज शनिवार है, जरा दौड़कर राशन ले आ, नौकर तो धोबी के यहाँ गया हुआ है। जा, जरा दौड़ जा, देर हो जायगी तो दुकान बन्द हो जायगी।"

मुन्ना जाना नहीं चाहता और चिढ़कर कहता है—"माँ, तुम भी राशन मंगाने

का काम शनिवार तक टाल छोड़ती हो, जब ऐसी बात थी तो नौकर को धोबी के यहाँ अभी क्यों भेज दिया ? मैं नहीं जाऊँगा।"

बस, यह सुनकर मुन्ना की माँ, गृहस्वामी को सुनाकर कहती है—"सुनते हो जी, देख लो, मुन्नू मेरी बात नहीं सुनता। हफ़्ते भर का राशन मारा जायगा।"

बस, पिता जी झुँझलाकर कहते हैं—"जाता क्यों नहीं रे, देखता हूँ तुझे बहुत बातें बनानी आ गई हैं। बहुत गड़बड़ मचाई, तो इस महीने का जेब-खर्च बन्द कर दूँगा।"

बेचारा मुन्ना अपना गुस्सा पीकर, लाचार होकर चला जाता है। पर दूसरे शनिवार और इतवार को वह फिर घर पर अपने अवकाश का समय नहीं बिताता। अपने किसी मित्र के यहाँ या किसी बगीचे में उनकी मंडली जुटती है। फिर माँ-बाप की यह शिकायत रहती है कि बच्चे घर से दूर-दूर रहते हैं। अगर बच्चे के खेल-कूद के समय पर माता-पिता उसकी रजामंदी के बिना अधिकार जमाने की चेष्टा न करें तथा उसकी सहूलियत और मर्जी का ध्यान रखकर, उसका सहयोग प्राप्त करें, तो मुन्ना खेलने जाने से पहले उन से यह अवश्य पूछ लिया करे कि 'माँ, मैं खेलने जा रहा हूँ, तुम्हें अगर कुछ काम करवाना है, तो अभी बता दो।' या फिर माता-पिता खुद ही मुन्नू से पूछ लें—'मुन्नू राजा, हमारा यह काम करना है, जब तुम खाली हो तो कर देना, बड़ी मेहरबानी होगी।' फिर देखिए, मुन्नू राजा अपना खेल छोड़कर, पहले आप का काम करेंगे। श्री सम्पूर्णानन्द जी का कहना ठीक है कि—

'एक ओर तो बच्चों से प्रौढ़ों जैसे कृत्रिम आचरण की आशा करके उन्हें सताते हैं, दूसरी ओर उनको निरा नासमझ मान बैठने की भूल करते हैं। पशु के सामने चाहे जैसा आचरण करिये, वह प्रायः अक्षुब्ध रहता है। लोग बच्चों को भी वैसा ही समझते हैं। गुरुजन बच्चों के सामने उठने-बैठने में, बात करने में, वस्त्र पहिनने-न पहिनने में लापरवाही बरतते हैं, पर बच्चा पशु नहीं है। वह कहता कम, पर देखता बहुत है। इतना समझता है कि मुँह खोलना दण्ड को बुलाना होगा, परन्तु जो कुछ देखता-सुनता है, उसका अपनी बुद्धि के अनुसार उल्टा-सीधा अर्थ तो लगा ही लेता है।'

आप बच्चे को पाकेट-मनी देते हैं, या वह आपकी सेवा करके अथवा परीक्षा में सफल होकर या अपने जन्मदिन पर आप से कुछ इनाम प्राप्त करता है, वह उसकी उपार्जित सम्पत्ति समझी जाय। मुन्ना के बिना पूछे उसके खिलौनों को अपने मित्रों के बच्चों को दे देना या उसके जमा किए हुए पैसों को खर्च लेना भूल है, और उसके उलाहना देने पर झिड़ककर यह कहना कि 'बड़ा आया तू मेरी-तेरी करने वाला, क्या जन्म के समय गठरी बाँधकर साथ लाया था ? यह हमारा घर है, यहाँ जो हम चाहेंगे सो किया जायगा।'

यह मुन्ना के प्रति भारी अन्याय है। इस प्रकार का व्यवहार करते हुए आप मुन्ना के अधिकारों को कुचल रहे हैं। आप के इस अन्यायपूर्ण रुख को देखकर वह सोचने लगता है—'जब इस घर में हमारे मनोरंजन, रुचि तथा सुविधाओं का कोई ध्यान ही नहीं रखता, हमारी उपार्जित की हुई वस्तुओं पर भी हमारा अधिकार नहीं है, फिर भला यह हमारा घर कैसे हुआ ? जब तक हम छोटे हैं माँ-बाप पर निर्भर हैं, क्योंकि और कोई चारा नहीं है, पर जैसे ही हम बड़े हो जायेंगे, कमाने लगेंगे, इस घर में कभी भी नहीं झाँकेंगे।'

बच्चे अपने ऐसे विचार परस्पर प्रकट करते हैं। यही कारण है कि जिस घर में विमाता होती है या माता-पिता के परस्पर असहयोग के कारण घर का जीवन दुःखी हो जाता है, और बच्चे स्वयं को असुरक्षित अनुभव करते हैं, वहाँ वे जल्दी-से-जल्दी अपने पाँवों पर खड़े होने की चेष्टा में रहते हैं। इच्छा होते हुए भी वे विद्याध्ययन में अधिक प्रगति नहीं कर पाते। लड़के छोटी-मोटी नौकरी लेकर, कन्याएँ छोटी आयु में ही विवाह करके, उस घर से पिंड छुड़ाने की ताक में रहती हैं। ऐसी स्थिति में बच्चे घर से बाहर किसी बोर्डिंग हाऊस में रहना अधिक पसन्द करते हैं, चाहे उन्हें वहाँ खाने-पीने की असुविधा और खर्च की तंगी ही क्यों न हो, पर वे घर आना पसन्द नहीं करते।

बच्चे की चेष्टाओं के प्रति सम्मान—भूल सब से होती है, फिर बच्चे तो भूल करके ही सीखते हैं। अतएव भूल करने पर उन्हें डराना-धमकाना उचित नहीं, इससे वे हतोत्साहित हो जायँगे। कटु आलोचना करने से या बीती हुई बात का बार-बार उल्लेख करके उसे लज्जित करने से आप उसकी प्रगति रोक देंगे। अपनी भूल को समझकर सुधारने का उसे अवसर मिलना चाहिए। बच्चे की छोटे-छोटे कामों में सफलता उतना ही महत्त्व रखती है, जितना कि बड़ों के लिए बड़े कामों में सफलता। अगर छोटा मुन्नू परिश्रम करके अपनी दूसरी कक्षा में अव्वल आया है, तो उसको वही श्रेय मिलना चाहिए जो बड़े भैया को प्रथम श्रेणी में एम० ए० पास करने में मिला था।

चेष्टा करने पर प्रोत्साहन देना, असफलता की आलोचना न करके प्रेरणा देना, जन्म-दिवस तथा अन्य उत्सवों पर बच्चों को विशेष महत्त्व देना, पास होने पर प्रशंसा करना तथा इनाम देना, बड़ों के बच्चों के प्रति ऐसे व्यवहार उनकी प्रगति में तीव्रता ला देते हैं। माँ-बाप से प्रोत्साहन, रक्षा तथा ममता प्राप्त करने का उन्हें अधिकार है। बच्चे अपने अधिकार से वंचित होकर प्रतिक्रियावादी बन जाते हैं। ऐसे बच्चे बड़े होकर या तो दब्बू तथा दीन बने रहते हैं या वे असामाजिक रूप से व्यवहार करने लगते हैं।

बड़ों को बच्चे की व्यक्तिगत विशेषता और न्यूनता को भूल नहीं जाना चाहिए। कोई बच्चा पढ़ने मे तेज है, कोई खेलने में; कोई बातचीत करने में होशियार है तो कोई काम करने में; एक बच्चा थोड़ा-सा परिश्रम करके पास हो जाता है, जब कि दूसरा उसी काम को करने के लिए अधिक समय लेता है। इस प्रकार प्रत्येक बच्चा शारीरिक और मानसिक रूप से दूसरे से भिन्न हो सकता है। ऐसी दशा में उनकी दूसरों से तुलना करके उन्हें हीन प्रमाणित करना उचित नहीं। बच्चे को जो काम दिया जाय उसकी योग्यता और रुचि का ध्यान रखकर दिया जाय। रमेश निबन्ध सुन्दर लिखता है या भूपेन्द्र अंग्रेज़ी फर्राटे के साथ बोल लेता है, पर राहुल यह दोनों काम वैसे अच्छे नहीं कर सकता। अगर आप उसके पीछे पड़ेंगे कि तुम भी ऐसा निबंध लिखो या अंग्रेज़ी में बात करो, तो वह आत्मसम्मान की रक्षा के लिए यह तो कहना पसन्द नहीं करेगा कि मैं यह काम नहीं कर सकता, पर आप के बार-बार आदेश देने पर वह कह उठेगा, 'मैं निबन्ध नहीं लिखूँगा, या मैं अंग्रेज़ी मे बात करना कोई बड़ी बात नहीं समझता।' अगर राहुल को निबन्ध लिखने का अभ्यास करवाया जाता, या भूपेन्द्र की तरह वह भी किसी कॉन्वेंट में पढ़ा होता, तो संभव है वह उन दोनों से अच्छी प्रगति कर जाता। जो सुविधाएँ उन्हें प्राप्त थीं, इसे नहीं प्राप्त थीं, फिर वह अपने को उनसे हीन क्यों समझे ?



बच्चे के सम्मान की रक्षा करें—बच्चों से बातचीत करते समय हम बहुत बार उनका मज़ाक बनाकर उन्हें शर्मिन्दा करते है, या माता-पिता से छोटे मुन्नू को डाँट

पड़ने पर बहन-भाई चिढ़ाने लगते हैं—'और करेगा ऐसा ? कैसी डाँट पड़ी ! ठीक हो गया ! अब क्या शान रही ? तू जब पिटता है तभी ठीक रहता है—पिलपिली साहब की टें बोल गई।' ऐसी बातों से छोटे बच्चे के आत्मसम्मान को बहुत चोट लगती है, वह खिसियाकर या तो बिखर-बिखरकर रोने लगता है, या फिर मार खाकर भी वही अपराध बार-बार करता है और चैलेंज देकर कहता है, 'जाओ, कर लो जो करना है, करूँगा, करूँगा, सौ बार करूँगा।'

हमें बच्चे के व्यक्तित्व का, उसकी रुचि और भावनाओं का सम्मान करना चाहिए, अगर वह कोई बात पूछे, या अपनी अबोधता प्रकट करे, तो उसकी खिल्ली न उड़ाई जाय। उसकी सलाह की उपेक्षा न की जाय, उसकी गलती की आलोचना न करते हुए, ठीक बात बताई जा सकती है। बच्चा दूसरों का सम्मान तभी करता है जब कि उसे सम्मान मिले, वह बड़ों से आदरसूचक ढंग से बोलता है, जब कि बड़े भी उसे दुलारें, अगर आप अपने बच्चों से चिल्लाकर, धमकाकर, 'जा रे', 'आ रे', 'ऐ बे', कहकर बोलेंगे तो बच्चा भी 'हाँ जी', 'आया जी', न कहकर 'क्या है ? आया', इस प्रकार उत्तर देगा।

बच्चे की रुचि का भी ध्यान रखें—बच्चे को कोई रंग, खाद्य-पदार्थ या कार्य जिसे आप उचित और उपयोगी समझते हैं, अगर नहीं भाता है, तो आप उस पर जबरदस्ती अपनी पसन्द नहीं लादें, अपितु धीरे-धीरे मुन्ना की रुचि को सुसंस्कृत करें, ताकि वह अपनी पसन्द में गलती न करे।

युगल को लौकी की भाजी बिलकुल पसन्द न थी, जब कि उसके पिता जी को वैद्य ने लौकी की भाजी और मूंग की दाल खाने की सलाह दी थी। अतएव घर में दोनों वस्तु अधिक बनती थीं। जब उन्हें यह पता चला कि जिस दिन लौकी की भाजी बनती है, युगल अपने लिए आलू खास तौर से बनवाता है, वे बहुत बिगड़े और उन्होंने यह हुक्म दिया कि 'युगल जब तक लौकी न खाय, उसे पुडिंग मत दो।'

घर के अन्य बच्चों के लिए यह एक तमाशा हो गया। वे युगल को चिढ़ाने लगे कि 'अगर तू लौकी नहीं खायगा तो हम पिता जी से शिकायत करेंगे, हम सब पुडिंग खायेंगे, तुझे नहीं मिलेगी।'

एक ओर आत्मसम्मान, दूसरी ओर पिता जी का नियंत्रण। युगल के लिए भोजन करना एक समस्या हो गई। वह कभी भी खुशी-खुशी भरपेट खाना ही न खा सकता था। इसका उसके स्वास्थ्य पर बड़ा बुरा प्रभाव पड़ा, वह दिन-पर-दिन दुबला होने लगा। ममतामयी माँ से युगल का यह कष्ट न देखा जाता था, पर पिता जी के हुक्म के आगे उनकी चलती भी नहीं थी। वह युगल के लिए चोरी-चोरी आलू की भाजी बना देतीं और उसके लिए पुडिंग भी रख देतीं। अन्य बहन-भाई चिढ़कर

यह बात पिता जी से कह देते। इसी को लेकर माता-पिता मे कभी-कभी झगड़ा भी हो जाता।

पिता कहते, "मैने जो हुक्म दिया है, उसका कड़ाई के साथ पालन किया जाय। मेरी हुक्म-उदूली करना मेरा अपमान करना है।"

बेचारी माँ कहती, "तो क्या बच्चे को भूखा मार दूँ? यह मुझ से नहीं हो सकता।"

बाप कहता, "तुम बच्चे को बिगाड़ रही हो, मेरे सुपुर्द कर दो, कुछ दिनो मे ही ठीक हो जायगा। बच्चू जी एक-दो दिन भूखे रहेगे, तो झख मारकर लौकी खायँगे।"

बाप को अपने सम्मान का अधिक ध्यान था, चाहे युगल और उसकी माँ को इसके कारण कष्ट उठाना पड़ता था। युगल अब बाल-बच्चों वाला है, पर अपने पिता के उस व्यवहार की वह अब तक कटु आलोचना करता है, और अपने घर मे वह इस बात का विशेष ध्यान रखता है, किसी की मर्जी के विरुद्ध अपनी पसन्द उस पर न लादी जाय।

जिस घर मे माता-पिता मे परस्पर मित्रतापूर्ण व्यवहार होता है, दोनों एक दूसरे के सम्मान का ध्यान रखते है, वहाँ बच्चे भी बड़ो का सम्मान तथा दूसरों के अधिकारों का ध्यान रखते है। जिस घर मे पिता माता को नौकर-चाकरों और बाल-बच्चो के सामने डाँट-डपट करता है या माँ बाप का अपमान करती है, वहाँ बच्चे भी अशिष्ट बन जाते है। अगर बच्चों को सब के सामने डाँट-डपट की जाय तो वे ढीठ हो जाते है या अपने मित्रो के सामने लज्जित किए जाने पर बाद मे अपने घायल आत्मसम्मान पर मलहम लगाते हुए वे अपने गुरुजनों की कटु आलोचना करने लगते है। इसलिए बच्चे के अपराध करने पर उसे अकेले में बुलाकर समझायँ, उसके दृष्टिकोण को समझकर, उसे ठीक बात समझा दे, उसे लज्जित देख पुचकार कर कहें कि 'खैर, कोई बात नही, भूल हो ही जाती है। मुझे पूरा भरोसा है कि अब तुम फिर ऐसा नहीं करोगे।' अगर उसने आपके आश्वासन देने पर, आप पर विश्वास रख, सारा किस्सा बता दिया है, तो आप भी उसकी चर्चा किसी से न करें। नहीं तो उसके आत्मसम्मान को चोट लगेगी। अगर आपके पास बच्चे की कोई चुगली करता है, तो जब तक आप बच्चे का कथन न सुन लें, तथा किसी निर्णय पर न पहुँचे उसे कोई सजा न दें।'

बच्चा स्वयं को घर में सुरक्षित और स्वतन्त्र अनुभव करे, उसे परिवार से ममता हो और घरेलू जीवन में आकर्षण दिखे, इसके लिए यह आवश्यक है कि हम उसके व्यक्तित्व का सम्मान करें, उसे नन्हा-मुन्ना अबोध बच्चा समझकर उसकी पसन्द, अधिकार तथा सुविधाओं की अवहेलना न करे, साथ ही उसके सम्मान को

कभी चोट न पहुँचने दें। बच्चा जिस प्रकार शारीरिक रूप से कोमल होता है, उसी प्रकार मानसिक रूप से भी वह बहुत नाजुक होता है। बड़ों की दृष्टि में जो बात साधारण होती है, बच्चे के मन में वही आघात पहुँचा सकती है। जिससे वह डर जाता है और उसकी स्वाभाविक प्रफुल्लता नष्ट हो जाती है। छोटे बच्चों की भावनाओं के प्रति हम जितने ही अधिक सचेत रहेंगे उतना ही अधिक सफलतापूर्वक हम उनकी समस्याओं को सुलझा सकेंगे। निर्बल, असहाय तथा कोमल और अबोध व्यक्तियों के प्रति सम्मान-वृत्ति मनुष्य की सभ्यता और शिष्टता की द्योतक है।

इकत्तीसवां अध्याय

बड़ों का अनावश्यक सहयोग

मेरिया मॉन्टेसरी के शब्दों मे बच्चे की माँग है—

'मुझे मदद करो ताकि मै अपने पाँवों पर खड़ा हो सकूँ। अनावश्यक मदद वास्तव में मेरी मदद नही है परन्तु मेरे विकास मे बाधा उत्पन्न करती है।'

'बड़े कहते है हम बच्चे का सब काम खुद करते है। उसे गुड्डे के सदृश्य सजाकर, संभालकर रखते है। उसको नहलाना-धुलाना, कपड़े पहिनाने, खिलाना-पिलाना, सुलाना आदि सभी कार्यों का भार हमने अपने ऊपर लिया हुआ है। इसकी प्रत्येक इच्छा पूरी करने की हम चेष्टा करते है, परन्तु फिर भी यह खुश नहीं रहता।'

बड़े यह बात भूल जाते है कि इस प्रकार करते हुए वे अनजाने में बच्चे के विकास में कितनी बाधा उत्पन्न कर रहे है। बच्चे को माँ-बाप की केवल उतनी ही मदद चाहिए जिससे वह स्वावलम्बी बन सके। उसको सही ढंग से अपनी शक्तियों को विकसित करने की प्रेरणा मिल सके। उनके उदाहरणों से वह स्वयं आगे बढ़ने का प्रोत्साहन पा सके। अपनी गलतियों से सबक सीखता हुआ वह दिन-पर-दिन प्रगति की ओर बढ़ता जाय। आरम्भ में वह भूल करता है—आगे बढ़ने के लिए; गिरता है, ठोकर खाता है—फिर संभलकर चलने के लिए; बुदबुदाता तथा निरर्थक शब्द करता है—भाषा पर अधिकार प्राप्त करने के लिए। अगर बच्चे की इन प्रारम्भिक क्रियाओं को निरर्थक और निरुद्देश्य समझकर रोक दिया जाय तो उसकी प्रगति रुक जायगी। उसने वस्तुओं से परिचय बढ़ाना है, अपनी जानकारी बढ़ानी है, जीने के लिए कर्मशील बनना है। अगर आप बच्चे की इस माँग को अनावश्यक सहयोग देकर अपूर्ण रखेंगे तो वह या तो आसामाजिक ढंग से व्यवहार करने लगेगा, आपके प्रति विद्रोही बन जायगा, आपकी आज्ञा उल्लंघन करेगा और या वह दब्बू और निकम्मा बन जायगा, उसकी प्रगति रुक जायगी। वह हमेशा दूसरों का मोहताज बना रहेगा।

'बालक के भीतर अनन्त सम्भावनाओ के बीज है, विश्व में ऐसा कुछ नहीं जो बीज रूप में बालक के भीतर न हो, समय पाकर वे ही बीज विकसित और संवर्द्धित होते है।

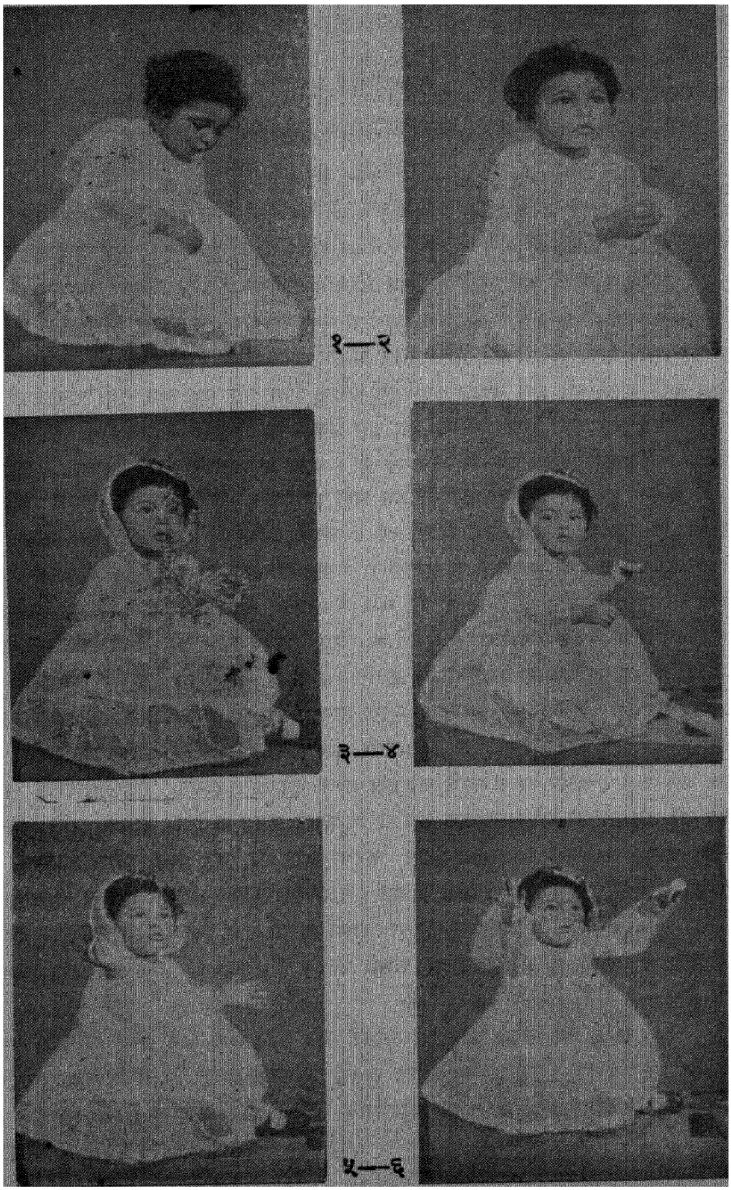
'पूर्वजों ने जो किया और जो जाना, उसे बालक के कर्म और ज्ञान में नवीन अवतार लेना पड़ेगा। इस प्रकार प्रयत्न से जो नई पीढ़ी तैयार होती है, वह उस शृंखला मे एक कड़ी है जो मानव-जाति का गौरवमय अतीत और प्राशामय भविष्य है।'

—डा० वासुदेवशरण अग्रवाल

बच्चे की संघर्ष-शक्ति—कुदरत ने हर एक प्राणी में जीवित रहन के लिए संघर्ष करने की शक्ति पैदा की है। उदाहरण के लिए आप एक कैटर पिलर को लें। तितली माँ अपने अंडे पत्तों के कोटर में देती है ताकि उस जगह अंडे शत्रुओं से सुरक्षित रहें, परन्तु जब उसमें से कैटर पिलर निकल आते हैं, उन्हें स्वयं जीवित रखने के लिए नर्म-नर्म पत्तों की फुनगियों की आवश्यकता महसूस होती है। वे विचित्र प्रकार से रेंग-रेंगकर उन फुनगियों तक खुद पहुँच जाते हैं। मनुष्य का क्रियाशील रहना उसके जीवित रहने के लिए परमावश्यक है। कुछ करने की भावना का होना बच्चे में बहुत स्वाभाविक है। पालने में पड़े हुए उसका हाथ-पाँव मारना या थूक के बुड-बुडे उड़ाते हुए निरर्थक ध्वनियाँ करना मानों उसकी प्रारम्भिक क्रियाएँ हैं, जो कि उसके लिए चलना और बोलना सीखने के लिए बहुत जरूरी है। इसी प्रकार जब वह वस्तुओं को उठाकर उलटता-पलटता तथा उन्हें फेंक देता है या बार-बार एक ही काम को दोहराता है, सीढ़ियों पर चढ़ता-उतरता है, वह ऐसा करता हुआ अपनी जानकारी बढ़ा रहा है, अपने अंगों को पुष्ट बनाने की चेष्टा कर रहा है।

बच्चे अपनी आसपास की दुनिया से परिचय बढ़ाना चाहते हैं। पर बड़े उन को पग-पग पर रोकते-टोकते हैं। इस संघर्ष में चाहे बड़ो की जीत होती है पर इसका प्रभाव बच्चों पर अच्छा नहीं पड़ता। यथा— (१) मुन्नी ने कोई वस्तु पड़ी देखी। (२) उसकी उत्सुकता जागी और उसने वह चीज़ उठा ली। (३) वह वस्तु को उलट-पुलटकर ग़ौर से देखने लगी पर मुन्नी की माता जी उसकी इस क्रिया को अनधिकार चेष्टा समझकर उस वस्तु को रख देने का हुक्म देती है। (४) माँ का हुक्म मुन्नी को सोच में डाल देता है। वह कैसे समझाये कि उसे बड़ों की यह रोक-टोक पसन्द नहीं है। उसे स्वयं कुछ करने का भी अधिकार और सुविधाएँ मिलनी चाहिएँ। (५) वह वस्तु देना नहीं चाहती, अतएव बचाने के लिए उसको वह दूसरे हाथ में पकड़ लेती है। (६) पर माँ उसे डाँटकर कहती है—ला पकड़ा मुझे, वह केमरा का रोल है—तुझे उससे क्या मतलब ? बेचारी मुन्नी हार मानकर अपने दोनों हाथ माँ की ओर बढ़ा देती है। मानो कह रही हो—अच्छा लो, ले लो, पर मुझे तुम्हारी यह धाँधली बिल्कुल पसन्द नही है। [देखिए चित्र पृष्ठ २४० पर]

बड़े यह चाहते हैं कि जैसा हम कहें उसी प्रकार बच्चों को करना चाहिए। अगर कोई बच्चा अपनी विकास सम्बन्धी सुविधाओं के लिए बड़ों के द्वारा लादी गई पाबन्दियों को तोड़ता है तो उसे शैतान, दुष्ट, ज़िद्दी, गुस्ताख़ और एक मुसीबत समझा जाता है। बड़े यह बात भूल जाते हैं कि बच्चों को भी अपनी इच्छानुसार वस्तुओं को छूने, उन से परिचय बढ़ाने, अपनी क्रियाओं में आत्मनिर्भर होने तथा जीवन संघर्ष के लिए आवश्यक अनुभव प्राप्त करने की स्वतन्त्रता मिलनी चाहिए। आपने देखा


१—२
३—४
५—६

होगा कि बिल्ली का बच्चा एक सूखी पत्ती को ही अपना शिकार समझकर उस पर झपटता है, उसे दबोचता तथा मरोड़ता हुआ शिकार के दाव-पेच सीखता है, और धीरे-धीरे अभ्यास से वह स्वयं को जीवित रखने के लिए, इस कार्य मे दक्ष हो जाता है, अगर उसे अपने बाल्यकाल मे इस अभ्यास से रोका जाता तो वह कभी भी शिकार करना नहीं सीख पाता, और उसके लिए जीवित रहना असंभव हो जाता, वह भूखों ही मर जाता। जिस प्रकार शिकारी जानवरों के बच्चो के लिए शिकार के दाव-पेच सीखना आवश्यक है उसी प्रकार मनुष्य के बच्चे के लिए इस संसार में जीवित रहने के लिए रचनात्मक कार्य सीखना भी आवश्यक है। प्रत्येक बच्चा जब वस्तुओं से अपना परिचय बढ़ाता है या स्वयं काम करने के लिए उतावला होता है तो उसमें बाधा उत्पन्न करना, 'यह मत करो,' 'वह मत छुओ,' 'वहाँ मत जाओ,' आदि नकारात्मक आदेशों से जकड़ना भूल है।

श्री कन्हैयालाल माणिकलाल मुंशी का कहना है कि जैसे सिंह-शावक जंगल मे विचरता है, वैसे ही—उसी निर्भयता से बालक को घर मे विचरने देना चाहिए। उसके उभरते हुए जोश को दबा देना तो बड़ा पाप है। उसको समझने की कला माता-पिता को हस्तगत करनी चाहिए।

विकास-काल का नाजुक समय (Sensitive Period)—बच्चे के जीवन में जब वह चलना और बोलना सीख जाता है, एक बड़ी नाजुक अवस्था आती है। वह बड़ो के द्वारा लादे गये प्रतिबन्धो को तोड़कर अपने पैरो पर खड़ा होने की चेष्टा करता है। बड़े उसके इस प्रयत्न को शैतानी समझते हैं। 'अरे तू कहना नहीं सुनता ?' 'बड़ा शैतान और चिल्बिल्ला हो गया है।' 'घड़ी भर तुझ से चुप नहीं बैठा जाता ?' 'हमारी चीजों को छूने से तेरा क्या मतलब ?' 'देखो उसे, वह अपने खिलौने छोड़कर मेरे फाउंटेनपेन से खेलना चाहता है। अरे बाबा ! अभी तो खिलौनों से खेलो। जब पढ़ने के दिन आयँगे तो कलम पकड़ना अच्छा ही न लगेगा।' इस प्रकार कहकर बड़े अपने बच्चे की हरकतों पर—जिसे वे अनधिकार चेष्टा समझते हैं—बन्दिशें लगाते हैं। वे भूल जाते हैं कि बच्चे की ये प्रारम्भिक हरकतें जीवित रहने के लिए उसी प्रकार जरूरी है जिस प्रकार कि बिल्ली के बच्चे की शिकार-क्रीड़ा, या किसी मुक्केबाज़ के अखाड़े मे आने से पहले अपने प्रतिद्वन्द्वी पर आक्रमण करने और बचाव के दाव-पेचो का अभ्यास करना। इस तैयारी के बिना बिल्ली का बच्चा या मुक्केबाज़ अपने संघर्ष में कभी भी सफलता प्राप्त नहीं कर सकता। यह सासारिक जीवन भी कर्मयोगियों का एक अखाड़ा ही है, इसमें उसी को सफलता मिल सकती है जिसने अखाड़े में कूदने से पहले अपनी कर्मशीलता का अभ्यास द्वारा अच्छा विकास कर लिया हो।

बड़ो के सहयोग का प्रतिरोध—आम माताओं की शिकायत है कि बच्चा

नहलाते, कपड़ा पहिनाते, बाल बनाते तथा खिलाते समय बहुत रोता-चिल्लाता है। भला क्यों ? इसके दो कारण हो सकते हैं, एक तो जो व्यक्ति उसको सहयोग देता है उसके कार्य करने का ढंग दोषपूर्ण है, जिसे बच्चा पसन्द नहीं करता। दूसरी बात, बच्चा स्वयं इन क्रियाओं को करना चाहता है—उसे अपने बदन पर पानी उंड़ेलने में आनन्द आता है, तौलिये से स्वयं बदन पोछना उसे अच्छा लगता है, अपने बालों में कंघी काढ़ने का उसे शौक उठता है, अपने हाथ से भोजन करके उसे अधिक तृप्ति होती है, वह आत्मनिर्भर होना चाहता है। पर बड़ो को उसकी कार्य-प्रणाली में विश्वास नहीं है, क्योंकि वे सोचते हैं कि बच्चा उनके सदृश्य ठीक ढंग से काम नहीं कर सकेगा, वह अधिक देर लगाता है। इसलिए उसका सब काम स्वयं कर देने में ही उन्हें अधिक सुविधा प्रतीत होती है।

बच्चे की पुकार—बच्चों को काम से रोकना बड़ों की धाँधली है। ऐसा वह बच्चे की पुकार को अनसुना करके करते हैं। उसकी पुकार है Help me to help myself अर्थात् मुझे स्वावलम्बी बनने भर के लिए सहयोग दो। जब बच्चा माँ के अनावश्यक सहयोग के प्रति विद्रोही हो तो उसे शान्त करने का सबसे अच्छा तरीका यह है कि उसे अपना काम स्वयं करने दिया जाय। यथा—वह स्वयं नहा सके इसके लिए उसे छोटा-सा टाम-लोट दे क्योंकि भारी लोटा उससे नहीं उठेगा, कपड़े पहनना तथा कंघी काढ़ना सिखायें, छोटी-सी थाली, कटोरी तथा गिलासी सजाकर उसे भोजन स्वय करने दें। 'अरे तू भला क्या नहायेगा ?' 'तू भला कंघी कहाँ कर सकता है ?' 'तू तो खाना बिखेर रहा है,' आदि कहकर उसकी चेष्टाओं का मज़ाक न बनायें। इससे उसका आत्म-विश्वास हिल जायगा। आपकी निगरानी, जरा-सा सहयोग और प्रेरणा उसे शीघ्र ही काम में दक्ष बना देगी। भला सोचिये, अगर आपका बच्चा आपकी धीरता से स्वावलम्बी बन जाय तो आपका कितना समय बच गया ? आप कितनी बेफिक्र हो गईं ?

देखने मे आया है कि बाज माँ-बाप झूठे मोह में अपने बच्चों को इतना जकड़ते हैं कि बड़े होकर भी वे बिना नौकर-चाकर या माँ-बहन के सहयोग के अपनी दिनचर्या नहीं कर पाते। पानी भी पीना होगा तो नौकर को आवाज देंगे। बच्चे को प्रारंभिक शिक्षा-काल में इसी बात की विशेष शिक्षा दी जाय कि वे अपनी दिनचर्या में आत्मनिर्भर हो सकें। खुद नहाना, कपड़े पहनने, कंघी काढ़नी, फीते बाँधने, अपने बर्तन तथा अन्य वस्तुएँ उठाकर यथास्थान रखनी, अपना पलंग लगाना, कमरा साफ करना, खिलौने सजाने आदि उन्हे आ सकें। आरम्भ मे चाहे उनके काम में उतनी पूर्णता या सफाई नहीं होगी परन्तु धीरे-धीरे अभ्यास से वे निपुणता प्राप्त कर लेंगे। बचपन केवल खिलौने से खेलने के लिए ही नहीं है। प्रत्येक कार्य जिनके करने में मनोरंजकता बनी हुई है बच्चों के लिए खेल के सदृश्य ही आकर्षण रखता है।

बच्चे के काम करने की रफ़्तार धीमी होती है, उससे घबड़ाकर बड़े उनके अधूरे काम को स्वयं झटपट खत्म कर देते हैं इससे बच्चे की प्रगति कुठित हो उठती है। यथा—आपका बच्चा आपके पास अपने होमवर्क में कुछ सहयोग प्राप्त करने के लिए आया है। उसने कहानी लिखी है, परन्तु उसकी रूपरेखा, लिखने की शैली आदि आपको पसन्द नहीं आतीं। उसकी लिखाई और गलतियाँ देखकर आप झुँझलाकर कहती हैं—'अरे ! यह सब क्या गलत-सलत लिख लाया है ? ला, मैं लिखकर देती हूँ। तू उसकी नकल कर लेना। तेरे से सिर खपाने का मेरे पास समय नहीं है।'

आपने अपनी बला टालने के लिए खुद सारी कहानी लिख दी। बच्चा स्कूल में आपकी लिखाई हुई कहानी को दिखाकर अच्छे नम्बर पाकर सोचने लगा। 'वाह ! यह अच्छा सरल तरीका है। कौन खुद सोचे और लिखे ?' बस, भविष्य में वह सस्ती प्रशंसा पाने तथा परिश्रम से बचने के लिए स्वयं लिखने की चेष्टा ही नहीं करता। वह माँ, बहन, बड़े भाई या टीचर से पूछकर अपना काम कर लेता है। परीक्षा-भवन में भी वह आसपास बैठे हुए साथियो की नकल करता है या किसी कागज के टुकड़े पर खुद लिखकर ले जाता है।

इस प्रकार आपका अनावश्यक सहयोग उसे गुमराह होने की प्रेरणा देता है। अगर बच्चा ठीक रास्ते चलता, उसे स्वयं परिश्रम करने, भूल करके सुधारने तथा स्वावलम्बी होने की प्रेरणा दी जाती, तो उसकी शक्तियाँ सुचारू रूप से विकसित होतीं। उसकी दशा तो उस गाड़ी के सदृश्य है जो अपनी पटरी छोड़कर एंजिन ड्राईवर की भूल से अंधकार में गलत लाइन पर चली जा रही है। कोई आश्चर्य नहीं कि वह मार्ग में किसी दूसरी गाड़ी से टकरा जाय। संभव है वह सही-सलामत दूसरे स्टेशन पर पहुँच भी जाय, परन्तु तो भी यह तो मानना ही होगा कि वह उन सब सुविधाओं से वंचित हो गई जो उसे प्राप्त होतीं, अगर वह अपनी निश्चित लाइन पर जाती, जहाँ पर कि लाईन क्लीयर का सिगनल था तथा पहुँचने वाले स्टेशन पर उसकी देखभाल की व्यवस्था थी और यात्री इंतजार कर रहे थे।

बच्चे को बाध्य किया जाता है—बच्चे और बड़ों में परस्पर एक संघर्ष-सा चल रहा है। बच्चा अपनी सुविधाओं के लिए लड़ता है—बड़े उसके अधिकारों को कुचलकर, उस पर अपना हुक्म चलाते हैं। जब बच्चा चलना और बोलना सीख जाता है—वह अपनी आसपास की दुनिया की एक अन्वेषक की तरह तलाशी लेता है। बड़ों की आज्ञा-उल्लंघन कर उनके क्षेत्र में जाता है, उनकी वस्तुओं को हथियाने की चेष्टा करता है। यह उसके विकास की नाजुक अवस्था है। इस अवस्था मे उसे बड़ों के नकारात्मक आदेशों से विशेष चिढ़ होती है। वह बड़ों की कठोरता का मुकाबला करने को तुल जाता है। 'जाओ करूँगा', 'नही दूँगा', 'नहीं जाता', 'पापा गंदा', 'मारूंगा',

आदि कहकर बच्चा अपना प्रतिरोध प्रकट करता है और जब आप उसे अधिक दबाते हैं, तो वह रो-रोकर घर सिर पर उठा लेता है। हाथ-पाँव मारकर जमीन पर बिखर जाता है और तब तक चुप नहीं होता जब तक कि आप उसके आगे हार नहीं मान लेते। और तब परास्त होकर कुढ़कर आप कहती हैं—'मुन्नू तो बड़ा बिगड़ गया है, जी करता है इसे मार-मारकर ठीक कर दूँ।'

आप कहेंगी कि बच्चे को मनमौजी कार्य भला कैसे करने दिया जाय ? इससे तो घर की व्यवस्था बिगड़ती है ? ठीक है, पर आरम्भ मे ही बच्चे की गाड़ी ठीक लाइन पर मोड़ें। आप उसे अपने उदाहरण तथा गलत सहयोग से उल्टे रास्ते क्यों ले जाने की भूल करती हैं ? जो बच्चा अपनी सुविधा तथा अधिकारों के लिए चेष्टा नहीं करता वह बड़ों की दृष्टि में चाहे सीधा और नेक हो पर उसके व्यक्तित्व का विकास नहीं हो पाता। वह एक हारे हुए खिलाड़ी के सदृश्य जीवन से उदासीन ही रहता है, उसकी संघर्ष-शक्ति कुंठित हो जाती है। ऐसे बच्चे गुमसुम, उदास तथा निकम्मे बन जाते है।

इस बात की बहुत आवश्यकता है कि बच्चा केवल अपनी कल्पना में ही न डूबा रहे। उसे अपने विचारों तथा इच्छाओं को प्रकट करने तथा उन्हें साकार करने का भी अवसर मिले। अन्यथा वह जीवन मे असफल रहेगा। मान लीजिए कोई बच्चा बहुत काल्पनिक है, वह एक कुर्सी को घोड़ा तथा एक लकड़ी को हवाई जहाज़ कल्पना कर सकता है। बड़ों की रोक-टोक या कभी गिर पड़ने के कारण एक लकड़ी के घोड़े पर चढ़ने में उसे डर लगता है या अपने साथियों को एक लोहे की चकरी को उड़ाते देख उसे यह दुविधा होती है कि कहीं मेरे लग न जाय, नहीं तो माँ डाँटेगी। ऐसी सूरत में बच्चे का व्यक्तित्व बहुत घटिया ढंग का रह जायगा। उसमें व्यावहरिक ज्ञान की कमी रहेगी। वह खुद आगे बढ़कर जोखिम उठाना पसन्द नहीं करेगा। ऐसा उन्हीं बच्चों मे होता है जो परनिर्भर होते हैं जिनकी अपनी कुछ इच्छाएं नहीं होतीं। जिन्हें बड़ों की इच्छा के विरुद्ध कुछ काम करने का साहस नहीं होता। 'माँ डाँटेगी', 'पिता जी मारेंगे', 'कहीं मेरे चोट न लग जाय', इस प्रकार की भावनाएं उन्हें भीरु बना देती हैं। ख़तरे से डरना और अपना बचाव करना दूसरी बात है, परन्तु दब्बूपन और भीरुता बच्चे के व्यक्तित्व के विकास में बाधा उत्पन्न करती है।

बच्चे के विकास काल में बच्चे की शक्तियाँ बढ़ने के लिए जोर मारती हैं। दिन-प्रतिदिन वह शारीरिक और मानसिक प्रगति करता है। उसके शरीर की ग्रंथियाँ-विशेष उसके शरीर और मन को जल्द ही आन्दोलित कर देती हैं। यही कारण है कि प्रतिकूल वातावरण उसके शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य पर जल्द अपनी छाप छोड़ जाता है। इस कारण जिस बच्चे को इस नाजुक अवस्था (Sensitive Period) में अधिक दबाव के नीचे रहना पड़ता है, जिसका अधिकार और सम्मान

बड़ों द्वारा कुचल दिया जाता है, जो अपने मनोवेगों को प्रकट नहीं कर पाता, उसका स्वाभाविक विकास रुक जाता है। बच्चे के अन्दर अपने विकास के लिए चेष्टा करने की अनन्त शक्ति छिपी हुई है। नया काम सीखने का अदम्य उत्साह भरा हुआ है। परन्तु जब उसकी शक्ति का सोता किसी प्रतिरोध से टकराता है, तो उसमें तूफान उठ खड़ा होता है। बड़े उसके इस आन्दोलन को समझ नहीं पाते और वह उसे उसकी ज़िद, मचलना, रोना, हठ और मन की मौज कहकर टाल देते हैं। असल में बच्चा जब इस प्रकार असामाजिक रूप से व्यवहार करता है तो इसका यह मतलब है कि उसके अरमान अधूरे ही रह गये हैं। उसके शरीर और मन की माँगों को कुचला जा रहा है और संभव है कि उसका विस्फोट आगे जाकर भयकर रूप से हो।

असन्तोष की प्रतिक्रिया—मनोवैज्ञानिकों का कहना है कि कई लोग जल्दी थक जाते हैं, या अकारण ही उनको झुंझलाहट आने लगती है, वे ज़रा-सी बात पर चिढ़ जाते हैं, उनमें ज़िन्दादिली का अभाव होता है। भला क्यों? इसका भी मनोवैज्ञानिक कारण है, जिसका सम्बन्ध भी उनके बचपन से होता है। इस प्रकार की असहनशीलता या थकावट का कारण नाड़ी मंडल का कमज़ोर होना पाया गया है। अगर किसी व्यक्ति को बचपन से ही प्रतिकूल वातावरण में रहना पड़ा हो, उसका नाड़ी मंडल हमेशा एक प्रकार के खिचाव के कारण दुर्बल हो जाता है। उत्साह के नष्ट हो जाने पर, अनिच्छापूर्वक लादे हुए काम में लगे रहने से, प्रेम और सहानुभूति के अभाव में बच्चे इस प्रकार की प्रतिक्रिया दिखाते हैं।

एक बच्चे को गणित से बड़ी अरुचि थी, क्योंकि जब उसे सवाल समझ में नहीं आता या वह उसे करते समय गलती कर जाता तो उसके पिता जी उस पर बिगड़ने लगते थे। जब रात को उसके पिता जी उसे गणित पढ़ाने बैठते, वह ऊँघने लगता। पिता जी ने सोचा शायद थके हुए होने के कारण इसे सुस्ती आती है इसलिए उन्होंने सुबह को गणित पढ़ाना शुरू किया। पर क्योंकि बच्चे की रुचि विषय की ओर जाग्रत नहीं की गई थी, इस कारण वह सुबह भी जितनी देर उसे पिता जी गणित सिखाते सुस्त और थका हुआ-सा बैठा रहता। उसके सिर मे अकसर दर्द रहने लगा, धीरे-धीरे बच्चे का स्वास्थ्य गिरने लगा। बच्चे को पढ़ाई, खाने-पीने और खेलने की ओर ऐसा उदासीन देख उसके पिता ने समझा कि शायद यह बीमार रहता है। संयोग से उन्हीं दिनों उनके एक चाचा वहाँ आये। वे एक ट्रेण्ड अध्यापक थे। उन्होंने बच्चे का मनोवैज्ञानिक अध्ययन किया और तब वे इस निर्णय पर पहुँचे कि पिता के द्वारा डाँट-डपटकर गणित सिखाए जाने पर बच्चे का मानसिक स्वास्थ्य धक्का खा गया है। वे गर्मियों की छुट्टियों में बच्चे को अपने साथ ले गये और उन्होंने इस ढंग से बच्चे को पढ़ाया कि उसकी रुचि गणित की ओर हो गई और उसने कुछ ही समय में बिल लगाकर

अपना कोर्स पूरा कर लिया।

बड़ों से अधिक डराया-धमकाया जाकर बच्चा अपना असन्तोष प्रकट करते डरता है। यह घुटन उसे अन्दर-ही-अन्दर दबाती रहती है। और जैसे किसी बंद नाली की दुर्गन्ध घर की वायु को दूषित कर देती है उसी प्रकार बच्चे का मानसिक स्वास्थ्य दिन-पर-दिन दुर्बल होता जाता है। देखने में आया है कि बच्चे अपनी माता से अपनी सब बात कह देते हैं। माँ की सहानुभूति और सहयोग पाकर उनकी नाड़ी मंडल का दबाव बहुत कुछ हल्का हो जाता है। इस बात का उल्लेख मैं पीछे भी कर आई हूँ कि बाज-बाज पिता बड़ी कठोरता से अपने बच्चों पर शासन करते हैं, वे समझते हैं कि बच्चों पर अगर उनका आतंक छाया रहेगा तो वे सीधे रास्ते पर रहेंगे पर प्रायः ऐसा होता नहीं है, ऐसी स्थिति में बच्चों के हृदय में अपने पिता के प्रति असन्तोष छाया रहता है। लाचारी में वे उनसे डरते अवश्य हैं, परन्तु पिता के प्रति उनके हृदय में कोई सम्मान नहीं होता।

हमारे पड़ोस में एक डिप्टी साहब रहते थे। उनके दो लड़के थे। बड़ा १५ वर्ष का तथा छोटा १३ वर्ष का था। उनकी माता स्वभाव से ही बड़ी धीर, शान्त तथा दयालु स्वभाव की थी। पर अधिक पढ़ी-लिखी न होने के कारण उसके पति उसे मूर्ख समझा करते थे। इस कारण घर की व्यवस्था तथा बच्चों के विषय में उनका ही हुक्म चलता था। डिप्टी साहब का मिज़ाज ऐसा तेज था कि ज़रा-सी बात पर वह अधीर होकर डाँट-डपट करने लगते थे। एक बार उनकी स्त्री से भोजन में नमक अधिक पड़ गया। वे थाली पटककर बोले—"मैं भूखा-प्यासा घर आऊँ और तुम मुझे परेशान करने के लिए ऐसा खाना पकाती हो। तुम ६ महीने की कैद के लायक हो।"

उनके बच्चे उनकी ऐसी बात सुनकर पीठ-पीछे उनकी हँसी उड़ाया करते थे। एक दिन उनकी बहन घर पर आई और भावज से उसकी किसी बात पर लड़ाई हो गई। बस, भाभी से बदला लेने के लिए उसने अपने भाई (डिप्टी साहब) से कह दिया कि 'भैया, ये बच्चे पीठ-पीछे तुम्हारा मज़ाक बनाते हैं। मुझे तो लगता है कि भाभी की शह है इन्हें।'

डिप्टी साहब ने सोचा कि अगर मैंने ढिलाई की तो बच्चे गुमराह हो जायँगे। बस, उन्होंने सिखाए में आकर पत्नी को तो कुछ दिनों के लिए पीहर भेज दिया और पीछे से लड़कों पर खूब कड़ाई की। उनका पाकेट-मनी बन्द कर दिया, बाहर आने-जाने से रोक लगा दी। डिप्टी साहब हरदम पढ़ाई का डंडा उनके पीछे लगाये रखते और बात-बात पर उन्होंने बच्चों की लानत-मलानत शुरू कर दी। इससे बच्चों का मानसिक स्वास्थ्य दिन-पर-दिन गिरता गया। फलस्वरूप वार्षिक परीक्षा में वे दोनों फेल हो गये। इस पर पिता ने हंटरों से उनकी खाल उधेड़कर रख दी।

उसी रात को दोनों भाइयों ने सलाह की कि घर से भाग जाना चाहिए। बस, रात को वे दोनों गाड़ी पर सवार होकर अपनी ननसाल माँ के पास पहुँच गये। सब हाल सुनकर माँ को बड़ा दुःख हुआ। उनके मामा ने चाहा कि दोनों लड़कों को शर्मिन्दा करके बाप के पास वापिस भेज दिया जाय। क्योंकि वे नहीं चाहते थे कि बच्चे माँ के पास रहें, उससे पढ़ाई का खर्च उन्हें देना पड़ता और संभव था कि डिप्टी साहब चिढ़कर अपनी पत्नी को भी वापिस नहीं ले जाते।

भाई का रुख देखकर माँ ने बेटों से कहा—"बच्चो, तुम लोग पिता जी के पास वापस चले जाओ। यहाँ तुम्हारा बोझ कोई लेने को तैयार नहीं है।"

माँ की लाचारी देखकर बड़ा लड़का बोला—"ठीक है माँ, पर अब मुझ से तो पिता जी का अत्याचार नहीं सहा जाता। मैं चाहे मर जाऊँ, पर वहाँ वापस नहीं जाऊँगा।" और सचमुच उस रात को वह लड़का तो घर छोड़कर चला गया। कोई कहता है कि वह ईसाई हो गया और किसी मिशनरी के साथ गोआ पहुँच गया, कोई कहता है कि उसने आत्महत्या कर ली। अपने बड़े पुत्र को खोकर डिप्टी साहब की पत्नी का मन पति से इतना खट्टा हो गया कि वह फिर लौटकर वापिस नहीं गईं। इसका हेतु उसका छोटा लड़का भी था। वह भी बाप के पास जाने को तैयार नहीं था। उस स्त्री ने एक स्कूल में नौकरी कर ली और अपने छोटे बेटे को स्कूल में दाखिल कर दिया।

जो बेटा बाप की डाँट-डपट और कठोरता से काबू में नहीं आया, वही अपनी माता के त्याग से इतना प्रभावित हुआ कि उसने गरीबी और अभावों से संघर्ष करते हुए बी० ए० पास करके आई० ए० एस० की परीक्षा पास की और आज वह उसी ज़िले में नियुक्त है, जहाँ उसका पिता काम कर रहा है।

डिप्टी साहब के सदृश्य कई माता-पिता अपनी कठोरता, बन्दिशें तथा अनावश्यक सहयोग से अपने बच्चों का विकास कुंठित कर देते हैं। उनके व्यक्तित्व और इच्छा-शक्ति को कुचलकर उन पर शासन करने की भूल करते हुए, वे उन्हें प्रतिक्रियावादी, परनिर्भर और असन्तोषी बना देते हैं।

उचित सहयोग—आप अपने बच्चे के सच्चे पथ-प्रदर्शक बनें। अगर आपके प्रति उनके हृदय में सम्मान और विश्वास है तो वह स्वयं ही आपके पीछे-पीछे आयगा। आपकी सलाह से लाभ उठायेगा, आपके उदाहरण से प्रेरणा पायेगा और सहर्ष आपके चरण-चिन्हों पर चल पड़ेगा। बच्चे के अभिभावक के नाते आपका कर्त्तव्य है कि उसे ठीक ढंग की प्रेरणा दें, परन्तु डिक्टेटर बनकर उसे एक जल्लाद के सदृश्य अपने वांछित मार्ग पर धकेलकर न ले जायें। आपका यह कार्य सहयोग नहीं अपितु अत्याचार है। यह मत भूल जाइये कि बच्चे की अपनी भी इच्छा-शक्ति और

रुचि है। उसका व्यक्तित्व और विशेषताएँ हैं। उनकी शक्तियाँ अनुकूल वातावरण में स्वयं सही रास्ते की ओर विकसित होने के लिए जोर मारेंगी। आप डाक्टर या वकील हैं तो यह जरूरी नहीं है कि आपके बेटे में भी डाक्टर या वकील बनने की योग्यता या रुचि होगी। संभव है उसमें अपने किसी पूर्वज चित्रकार के संस्कार जोर मार रहे हों या उस पर किसी ऐसे साथी या गुरू का प्रभाव पड़ा हो कि उसकी इच्छा एक चित्रकार बनने की हो और इस ओर सफलता प्राप्त करने के लिए वह दृढ़ निश्चय कर तन-मन से जुट जाय और कोई आश्चर्य नहीं कि वह एक सफल चित्रकार बने। बच्चे पर अपना रंग चढ़ाने की अपेक्षा यह लाख दर्जे अच्छा होगा कि आप उसकी रुचि, रुझान तथा योग्यता का अध्ययन करें, उसके व्यक्तित्व की मौलिकता को ठीक समझें और तब परोक्ष रूप से उस पर प्रभाव डालें। आपका ऐसा सहयोग उसके विकास के लिए कल्याणकारी होगा।

आपकी चेष्टा ऐसी होनी चाहिए कि बच्चा अपनी संघर्ष-शक्ति का विकास कर सके। वह स्वयं अपनी कठिनाइयों को सुलझाने की चेष्टा करे। 'जा, तुझे फिकर करने की क्या जरूरत पड़ी है, हम जो तेरे सिर पर हैं, सब काम हो जायगा। बात बिगड़ भी गई तो क्या हुआ, किसी की मजाल है जो तुझे कुछ कह जाय।' बड़ों के इस प्रकार पक्ष लेने से बच्चा स्वयं चेष्टा करना छोड़ देता है। अगर उसने गलती नहीं की है तो आप उसे अपनी बात की वकालत खुद करने दें। कोई गलतफ़हमी हो जाय या झगड़ा बढ़ जाय तभी आपका बीच में पड़ना आवश्यक है। भूल करने पर भूल सुधारकर आगे बढ़ने की प्रेरणा देना ठीक बात है, पर अपने बच्चे का पक्षपात करना अनुचित है। बच्चे को जीवन की हार और जीत को सहज रूप से स्वीकार करना सिखायें। अधिक अभावों में जैसे बच्चे का विकास चोट खा जाता है उसी प्रकार अभाव और असफलता से कभी परिचित न होना भी बच्चे के लिए हानिकारक है।

प्रत्येक बच्चे के अन्दर जो स्वाभाविक संघर्ष-शक्ति है उसी के बल पर वह बार-बार डूबकर भी ऊपर उठ आता है। यही बात है कि कई बच्चे प्रतिकूल परिस्थितियों में भी उन्नति कर जाते हैं। उनकी संघर्ष-शक्ति बहुत प्रबल होती है। जो बात बच्चा अनुभव से सीखता है, उसे वह कभी नहीं भूलता। एक बार आग से जलकर या पानी में गोता खाकर बच्चा आग और पानी दोनों से बचेगा। ख़तरे से दूर रहने के लिए बच्चों में एक सहज बुद्धि भी होती है। अन्यथा सभी बच्चे छत से छलाँग लगा दें अथवा सड़क पार करते समय मोटर के नीचे आ जायें। पर ऐसा होता नहीं है।

बड़ों का सहयोग ऐसा होना चाहिए जो बच्चों के चरित्र में लोच पैदा करे, उनको संघर्ष में से सफलतापूर्वक निकलने की प्रेरणा दे, बीती बात को भूलकर

भविष्य को उज्जवल बनाने की चेष्टा करना सिखाय, उन्हें आशावादी बनाय। इससे यह लाभ होगा कि बच्चे के विकास की रफ़्तार का संतुलन बना रहेगा। उसके अन्दर की क्षमता, योग्यता तथा विशेषता का पूर्ण विकास होगा। असफलता और प्रतिरोध से वह घबडायेगा नही, परन्तु उल्टा उसमे अधिक सावधानी के साथ आगे बढ़ने की प्रेरणा पायगा। वह अपने शरीर, अपनी मानसिक विशेषताओं, सामाजिक स्थिति और प्राप्त सुविधाओ का उपयोग अपने व्यक्तित्व को उभारने के लिए करेगा। वह स्वावलम्बी और आत्मनिर्भर बनकर अपनी उपयोगिता प्रमाणित कर सके, ब. इतना ही सहयोग आपका उसे मिलना चाहिए। याद रखे आपका अनावश्यक सहयोग उसके विकास के लिए हानिकारक है।

अंत में मै श्री केला जी के शब्दों में कहूँगी कि बालक महिमावान् है, मानव-जगत् का निर्माता है। तिस पर भी उसकी कितनी उपेक्षा, कितना अपमान और कितना तिरस्कार ! हम अपने घर पर नज़र डाले या बाहर, पाठशाला मे या अन्य शालाओं में, समाज मे या राज्य मे—कहीं भी उसे उसके योग्य मान नहीं, वह हर जगह कुछ अवांछनीय-सा, कुछ भार रूप-सा बना हुआ है। अच्छी फसल के लिए बीज की सार-संभाल का महत्त्व हम कुछ समझते है, पर भावी जगत् के सुन्दर निर्माण के लिए बालक की सार-संभाल करने की हमें चिन्ता नही।

बालक का निर्माण करने वाले है—माता-पिता, अध्यापक, समाज और राज्य। ये भी सोचें कि हमें बालक का कैसा निर्माण करना है। क्या हमें गाँधी, विनोबा, सुभाष, रवीन्द्र, अरविन्द, तिलक, कबीर, तुलसी, अहिल्या, लक्ष्मीबाई, अकबर और अशोक की आवश्यकता है ?

ऐसी विभूतियाँ एकदम आसमान से बनी-बनाई नहीं आ जातीं। ऐसा कोई यंत्र नहीं है, जहाँ बटन दबाने मात्र से ये तैयार मिल जायँ। बालरूप से विकसित होकर ये धीरे-धीरे बनती है। इनके निर्माण में जिन-जिन व्यक्तियोंका हाथ होता है, वे सब गम्भीरता से अपने कर्त्तव्य का निश्चय करे। तभी संसार के सुन्दर भविष्य की आशा कार्यरूप में परिणत होगी।

बत्तीसवाँ अध्याय

उपयोगिता और आत्मनिर्भरता

'आज के बालक ही देश के भावी नागरिक है और देश की स्वतन्त्रता की रक्षा और उसकी परिपुष्टि का भार उन्हीं के कन्धो पर पड़ेगा। अतएव यह आवश्यक है कि हमारे बालकों के जीवन का विकास इस ढंग से हो कि समय आने पर अपने राष्ट्र के प्रति कर्त्तव्य का निर्वाह वे उचित रीति से कर सकें।

'बालकों को यह समझाना है कि स्वतन्त्रता की प्राप्ति का महत्त्व एक और ऊँचे उद्देश्य की पूर्ति के साधन के ही रूप मे है। यह उद्देश्य है देश को सुखी, सम्पन्न, समृद्ध और सबल बनाना—जिससे प्रत्येक भारतवासी को खाना, कपड़ा और रहने की सुविधा मिल सके, प्रत्येक को अपने पूर्ण विकास, नैतिक और सांस्कृतिक उन्नति का भरपूर अवसर मिले।'

—श्री गोविन्दवल्लभ पन्त

बच्चों को पंगु न बनायँ—बच्चा इस संसार में कुछ करने और सीखने



की भावना लेकर आता है। एक पौधे में जिस प्रकार उसके फलने-फूलने और विकसित होने की शक्तियाँ छिपी रहती हैं, उसी प्रकार बच्चे में सभी मानवीय गुण मूल

रूप में निहित होते है। उसकी रचनात्मक प्रवृत्ति, आत्मनिर्भरता की आतुरता तथा स्वयं को उपयोगी प्रमाणित करने की चेष्टा अनुकूल वातावरण में शीघ्र ही प्रकट हो जाती है। जिन बच्चो मे ये गुण स्वाभाविक रूप से होते है वे अधिक चंचल, उत्सुक, प्रसन्न-वदन तथा स्वस्थ पाये जाते है। अपनी उपयोगिता प्रमाणित करने के लिए वे कभी-कभी काम बिगाड भी देते है, कुछ असहनशील तथा जल्दबाज भी प्रतीत होते है, प्रत्येक काम स्वयं करने की चेष्टा करते है, इसी वजह से वे आसानी से 'मैनेजेबल' भी प्रतीत नहीं होते।

बडो को तो अपनी सुविधा देखनी है, वे जो बच्चा उन पर निर्भर रहे, जो प्रत्येक काम मे माँ के सहयोग की अपेक्षा करे, यथा—माँ खिलायेगी तो खाऊँगा, मै तो माँ से ही नहाऊँगा, माँ कहेगी तो जाऊँगा, माँ अपने हाथ से देगी तभी लूँगा—जो बच्चे इस प्रकार कहते है, वे माँ के लिए चाहे आसानी से 'मैनेजेबल' हों, उनके कथनों से चाहे माँ को एक विशेष प्रकार का सन्तोष हो, परन्तु वास्तव में ऐसे बच्चे आगे जाकर भी परमुखापेक्षी ही बने रहते है। उनका आत्मविश्वास नष्ट हो जाता है। आत्मनिर्भरता उनमे आती ही नही। दूसरों के कन्धो पर सहारा देकर चलने की उन्हें बान-सी पड़ जाती है। 'कोई मेरी सिफारिश कर दे, दूसरे मेरी पैरवी कर दें, मेरे मित्र और सम्बन्धी दया करके खुद ही मेरे अधिकार सुरक्षित रखें—यही वे चाहते है। संघर्ष में तो वे भाग ले ही नहीं सकते। क्योकि मुकाबले मे वे हमेशा पिछड़े रहते है।

इस असफलता की भूल में मुन्ना की माँ की भूल है। उसने बचपन में ही उसको कठपुतली बनाकर क्यों रखा? उसकी अपनी इच्छा माँ की इच्छा के आगे दब गई, माँ पर निर्भर रहने वाला मुन्ना, माँ के लिए एक 'गुड़ बाबा' मात्र बनकर रह गया। यह सौदा उसके लिए बहुत महँगा पड़ा। उसकी स्वयं काम करने हारकर भी आगे बढ़ने, जोखिम उठाने आदि की सभी शक्तियाँ कुंठित हो गईं। शनैः-शनैः दबना, अपनी नकेल दूसरो के हाथ में थमाकर पीछे-पीछे चलना, अपने अधिकारों का छीना जाना आदि वह चुपचाप सहने का आदी हो गया। 'गुड बाबा' की सीमा को पार करके, व्यवहार करने का उसमे आत्मबल नहीं है, और यह दुर्बलता जीवन-भर उसे जकड़े रहती है।

माँ-बाप अपने ऐसे बेटे को नेक, साधु आदि कहकर प्रशंसा करेंगे, परन्तु दूसरे उसे 'भौंदू', 'सीधा', 'कठपुतली' आदि कहकर मज़ाक बनायँगे। तभी न कहा है—'अपना पूत पराया ढींगर'। अन्य होशियार बच्चों की तुलना में जब मुन्ना स्वयं को पिछड़ा हुआ पाता है, तो उसके मन में हीनता की भावना प्रबल हो उठती है, जिसके कारण योग्यता रहते हुए भी वह हार खा जाता है।

बच्चे को खुद काम करने दें—माँ-बाप का यह कर्त्तव्य है कि वे बच्चे की शक्तियों को विकसित करने में सही ढंग अपनायें। अपनी इच्छायें उन पर लादें नहीं। उन्हें स्वयं करने और समझने का मौका दें। आरम्भ में चाहे वे गलती करेंगे, परन्तु एक-दो ठोकर खाकर ही वे सही रास्ते पर आ जायेंगे। कोई इनाम या सुविधा प्राप्त करने के लिए उन्हें चेष्टा करने दें। सहज ही प्रत्येक वस्तु के प्राप्त हो जाने पर, बच्चों का आनन्द नष्ट हो जाता है। उन्हें बचपन से ही आत्मनिर्भरता सिखायें। यही तो उनकी प्रारम्भिक शिक्षा होनी चाहिए। बच्चा देखा-देखी काम करना सीखता है। जब वह आपका अनुकरण करने लगे, उसे करने का सही ढंग बतायें, एक-दो बार उसके सामने काम करने से, वह खुद करने की चेष्टा करेगा, तब उसे प्रोत्साहन दें।

(१) जब आप बच्चे को नहलाती हैं, तब देखा-देखी उसका भी यह मन होता है कि मैं खुद ही बदन मलूँ या अपने शरीर पर पानी उंडेलूँ। ऐसी सूरत में पहले आप उसका बदन मलकर पानी डालकर नहला दें, बाद में उसे खुद मलने को कहें। किस तरह कान, नाक, आँख साफ करना तथा सिर मलना आदि बतायें। बाद में कोई हल्का बर्तन देकर उसे शरीर पर खुद ही पानी डालने दें, इससे बच्चों को बड़ा आनन्द आता है, साथ ही स्नान करना उन्हें रुचिकर प्रतीत होने लगता है।

(२) इसी प्रकार बदन पोंछना, कपड़े पहनना भी सिखायें। एक ही काम



को बार-बार करने का उनमें बड़ा धीरज होता है। आपने देखा होगा कि मुन्ना शीशे के सामने बैठकर, बार-बार बालों में कंघी काढ़ता और माँग निकालता है। जब तक

माँग ठीक नहीं निकलती, वह बार-बार बाल बिगाड़ता और बनाता है। जब उसे यह सन्तोष हो जाता है कि उसके बाल ठीक बन गये है, वह नेकर की जेबों में हाथ डाल, शीशे मे देखता हुआ एक-दो बार गर्दन इधर-उधर घुमा, मुस्कराता है और कंघी यथास्थान रख, बालो पर हाथ फेरता हुआ, चल देता है।

(३) बच्चो को उपयोगी तथा आत्मनिर्भर बनाने की भावना से नर्सरी स्कूलों मे कई बातों की शिक्षा इस प्रकार से दी जाती है, जिसमे खेल भी निहित होता है। यथा—एक पंक्ति मे कुछ छोटे बच्चे खड़े कर दिए जाते है, दूसरी ओर कुछ बड़ी उम्र के उतने ही बच्चे, थोड़ी दूरी पर खड़े रहते है। उनके पार्टनर भी पहले ही से निश्चित होते है, छोटे बच्चे भागकर अपने-अपने पार्टनर के पास जाते है। वे उनके जूते खोलकर, फिर से पहिनाकर बाँध देते है, जो बच्चा जूते बंधवाकर सबसे पहले वापस आ जाय, वह जोड़ी जीत जाती है। इसी प्रकार सुई-धागे की दौड़ या चम्मच-आलू की दौड़ मे तथा पानी का भरा गिलास हाथ मे लेकर दौड़ने पर जो अव्वल रहे, उसे अधिक नम्बर मिलते है। इस प्रकार के खेलो मे बच्चों को नियमित समय के अन्दर काम करना, बैलेंस संभालकर दौड़ना आदि आ जाता है। इसके अतिरिक्त क्लास मे पढ़ाई या खेल खत्म होने पर, जो दल अपनी चीजें जल्दी हो ठीक ढंग से रखले वह प्रतियोगिता मे विजयी समझा जाता है। इस प्रकार अन्य खेलों में भी बच्चो में टीम भावना में काम करने की आदत पड़ जाती है।

(४) घर पर भी खेल के समय मुन्ना को खुद चटाई लाकर बिछाने दे, खेलने के पश्चात् अपने खिलौने डिब्बे या पिटारी मे भरकर यथास्थान रखने पर उसकी प्रशंसा करे, 'मुन्ना अपनी चीज भली प्रकार सभालना जानता है', 'मुन्ना अपने संगी-साथियो को खेल में रिझाये रखेगा', 'क्यो मुन्ना, तुम्हारा दोस्त आया है, उसका मन बहलाना तो तुम्हारा फर्ज है न ? जाओ, उसे अपने खिलौने दिखाओ।' इस प्रकार कहने से मुन्ना अपने मित्र की जिम्मेदारी अपने ऊपर समझ, उसका यथाशक्ति मनोरंजन करेगा। कभी-कभी ऐसा भी होता है कि पिता जी बाहर गये हुए है और माँ रसोईघर में या स्नानघर में है, तो ऐसे समय जब कोई मित्र या सहेली अकस्मात् आ जाय तो कुछ क्षणो के लिए उनका मनोरंजन करने का भार मुन्ना-मुन्नी पर छोड़ दें। इस प्रसंग में मुझे एक घटना याद है—

एक बार मैं अपनी सहेली मिसेज भल्ला के यहाँ गई। उनकी ४ वर्ष की लड़की पुष्पा बाहर पोर्च में साइकिल चला रही थी। मुझे बंगले में घुसते देख वह भागी-भागी माँ के कमरे में चली गई, वे उस समय स्नान करने घुसी ही थीं। उन्होंने अन्दर से ही पुकारकर कहा—"बेटी, अपनी आंटी को ड्राइङ्ग रूम में बिठाओ, मै जल्दी ही आती हूँ।"

तब तक मैं पोर्च में पहुँच गई थी। पुष्पा ने झट से आकर मेरा हाथ पकड़ा और बोली—'आंटी चलो, बैठो, मम्मी अभी आती है।"

उसकी मम्मी को आने में १५ मिनट लगे होंगे, इस बीच में पुष्पा ने अपनी गुड़िया, तसवीरों की किताब, खिलौने सभी मेरे आसपास ढेर लगा दिए। कौनसा खिलौना उसे कब मिला, किसने दिया, उसकी गुड़िया का क्या नाम है, उसके पास कितनी साड़ियाँ हैं, सभी किस्से सुनाए।"

मैंने पूछा—"बेटी, तुम नाचना भी जानती हो ?"

वह कुछ शरमाकर बोली—"हाँ नाचती हूँ, जब मम्मी रिकार्ड लगाती है।"

मैंने कहा—"लाओ, मैं रिकार्ड लगाती हूँ, तुम नाचो।"

वह झट से एक खाली फूलदान में से घूघरू निकाल लाई और उन्हें बाँधकर ठुमकने लगी। उन १५ मिनट में उस बच्ची ने मेरा ऐसा जी बहलाया, उसकी बात-चीत इतनी मनोरंजक थी कि मैं बहुत ही प्रभावित हुई। थोड़ी देर बाद उसकी माता जी आई और वे हँसकर उससे बोली—"आंटी का पेट केवल बातों से ही भरेगी, कुछ खिलायेगी नहीं ?"

यह सुनते ही वह भोली बालिका दौड़ी-दौड़ी गई और अपनी आलमारी में से टॉफ़ी का एक डिब्बा निकाल लाई। उसके बहुत आग्रह करने पर, मुझे एक टॉफ़ी लेनी ही पड़ी। फिर उसकी माँ ने धीरे से उसे कुछ कहा और चाबी पकड़ा दी। दूसरे कमरे में अलमारी खोल, उसने नौकर को बुलाया और वह तीन गिलासों में लैमन स्कॉश बनाकर ले आया। अपने नन्हे गिलास को खाली कर, चाबी माँ को पकड़ाकर, वह बाहर खेलने चली गई।

मैं प्रायः अपनी सहेली के घर उस बच्ची से बातचीत करने के लोभ से भी जाती थी। जब कभी हमारी मोटर आती और फाटक लगा होता, वह दौड़कर आती और फाटक खोलकर, एक ओर खड़ी हो जाती थी। एक दिन मैं उनके घर गई, तो क्या देखती हूँ कि मिसेज़ भल्ला लेटी हुई हैं और पुष्पा धीरे-धीरे सिर दबा रही है। पता लगा, उनके सिर में दर्द हो रहा है। मुझे उस बच्ची पर ताज्जुब हुआ, किस धीरता से वह अपने नन्हे-नन्हे हाथों से माँ का सिर सहला रही थी। मैंने कहा—"बेबी, ला मैं दबाती हूँ, तू जा।"

पुष्पा बोली—"नहीं आंटी, मम्मी का सिर जब मैं दबाती हूँ, तभी अच्छा होता है।"

मिसेज़ भल्ला ने अपनी बेटी को दुलार से थपथपाते हुए कहा—"ठीक कहती है, मेरी रानी बेटी। अच्छा, मैं ठीक हूँ। अब जा, तू खेल आ।"

"मम्मी दवाई खाना न भूलना," यह कहती हुई, वह बाहर भाग गई। मैंने

कहा—"बहन, काश अगर सभी की बेटियाँ ऐसी बन जायँ, तब माताओं की तो बड़ी मौज है।"

वे बोली—"दीदी, सिखाने से बच्चे सब सीख जाते हैं। देखो न, एक साल पहले की बात है, पुष्पा की आया ने पुष्पा को ऐसी आदत डाल दी थी कि पाँव दबवाये बिना यह सोती ही न थी, मैं बड़ी परेशान थी। एक दिन मैंने इससे कहा—'बेबी, अब तो तुम बड़ी हो गई हो, तुम भी दूसरो को सुलाना सीखो।' बोली—'अच्छा माँ, हम तुम्हें सुला दिया करेंगे।' बस, अब जब दोपहर को इसके सोने का समय होता है, आकर मुझे कहती है, 'चलो माँ, तुम्हे सुला दे।' बस, मेरी पीठ से लगकर लेट जाता है, कुछ देर तक मेरी पीठ पर हाथ फेरती रहती है, मैं भी सो जाती हूँ और यह भी।"

सहयोग की प्रशंसा से बच्चों को प्रेरणा मिलती है—बच्चो को अगर यह विश्वास हो जाय कि हमारी सेवा तथा सहयोग से कोई प्रसन्न होता है, हम पर कोई निर्भर है, तो उन्हे बड़ी प्रसन्नता होती है। वे दौड़-दौड़कर काम करते है। 'मुन्नी फुलका लायेगी, तब मै रोटी खाऊँगा—पिता जी के ऐसा कहने पर मुन्नी दौड़-दौड़-कर फुलका ला-लाकर देगी। खाने के समय पर, मुन्नी नित्य ही बड़े चाव से यह काम करेगी। माँ अगर छोटे मुन्ने को तकियों के बीच मे सहारे से लिटाकर, मुन्नी को दूध की बोतल पकड़ा दे, तो मुन्नी अपना सारा स्नेह मुन्ने पर उंड़ेलकर, कितने चाव से दूध पिलायेगी। इसी प्रकार वह अपने छोटे भाई का मनोरंजन झुनझुना बजा-कर बाते करके, लोरी गाकर सभी तरह से करेगी।

बच्चों को निषेधात्मक आदेश न दे, परन्तु अपना सहयोग देकर उन्हें उपयोगी कामों में लगायँ। 'आओ मुन्ना खिलौने सजायँ'; 'मुन्ना भैय्या ! चलो तुम्हारा पलंग बिछा ले'; 'मुन्नी बिटिया, चलो जरा मटर छीले'; 'जाओ, जरा माली से एक गुलदस्ता तो बनवा लाओ'; 'जरा अपने कुत्ते (टामी) को दूध-रोटी, तो दे दो। देखो, वह दुम हिला-हिलाकर मानो कह रहा है,—मैं भूखा हूँ, तुम मुझे रोटी देना भी भूल गई"। बस, यह सुनकर मुन्नी की ममता उमड़ उठती है, वह उसका कटोरा धोकर, रोटी और दूध मिलाकर टामी के आगे रखती है। टामी दुम हिला-हिलाकर, कृतज्ञता प्रकट करता हुआ, प्याला सफाचट कर देता है और फिर मुन्नी और वह दोनों गेंद खेलने जाते है।

इसी प्रकार मुन्ना भी पिता जी की शेविंग के लिए पानी ला देता है, हाथ पोंछने के लिए तौलिया लेकर खड़ा रहता है। और जब उसके पिता जी—'थैंक्यू' कहते है, तो उसे कितनी प्रसन्नता होती है। उसकी आँखो में खुशी चमकने लगती है। अपने जूतों पर उसे खुद पालिश करना अच्छा लगता है, इसी प्रकार अपनी छोटी

साइकिल को वह खुद ही साफ करना नहीं भूलता। अपने पिता जी की देखा-देखी, उसे ऐसे सब काम करने आ गये हैं। मुन्ना देखता है पिता जी अपनी रुचि या पसन्द किसी पर लादते नहीं हैं। बड़े भैया जब उनकी सलाह लेते हैं, तब पिता जी अपनी राय बता तो देते हैं, पर, जबरदस्ती नहीं करते। भैय्या ने एक-दो बार पिता जी की सलाह के अनुसार काम नहीं किया था, तब वे असफल रहे और बहुत पछताये थे। पिता जी ने उन्हें दिलासा देते हुए कहा था—'ख़ैर, दुनिया में बहुत कुछ अनुभव से भी सीखते हैं, तुम तो समझदार हो, अब भी बात सुधर सकती है।' उस दिन से मुन्ना ने तो निश्चय कर लिया कि पिता जी के अनुभव का मैं पूरा-पूरा लाभ अवश्य उठाऊँगा।

समझदार मुन्ना-मुन्नी—मुन्ना-मुन्नी जब सब को घर में काम करते देखते हैं, जब सभी को आत्मनिर्भर पाते हैं तो वे भला किस प्रकार दूसरों के सिर अपना काम डाल छोड़ें। जहाँ तक बन पड़ता है, वे अपना सभी काम खुद ही करते हैं, या एक दूसरे के सहयोग से कर लेते हैं। इस प्रकार वे दोनों छोटे होते हुए भी घर के उपयोगी प्राणी हैं। एक दूसरे का हाथ बटाने में हमेशा तत्पर रहते हैं। मुन्ना की माता जी को यह कहते किसी ने नहीं सुना कि— 'हाय बच्चों ने तंग कर दिया, इनके मारे मैं परेशान हूँ। वे जी का जंजाल बन गये हैं, इनका काम ही नहीं ख़त्म होता। मुझे फ़ुरसत कैसे हो ?'

उनके मुन्ना-मुन्नी तो अगर दो दिन के लिए भी बाहर चले जायँ, तो सभी असुविधा का अनुभव करते हैं। जहाँ जाते हैं, वहीं उन्हें बढ़ाई मिलती है। सभी उनके माँ-बाप के भाग्य की सराहना करते हैं।

तेतीसवाँ अध्याय

बच्चों में बुरी आदतें क्यों ?

'सच्ची बात तो यह है कि सारी खराबी हमारे घर मे ही है। घर से ही वह शुरू होती है और चारों ओर फैलकर समाज को बिगाड़ती है। बालक-बालिकाओं पर आज के संसार में बड़ी जिम्मेदारी है। आगे का भारत वैसा ही होगा, जैसे कि उसके अपने जीवन से उसे बनायँगे।'

—बाबू श्रीप्रकाश जी

कहावत है—'खाली दिमाग़ शैतान का।' बड़ा हो या बच्चा कोई भी व्यक्ति जिसके जीवन में रुचिकर काम या मनोरंजन का अभाव है, जिसे प्रतिकूल वातावरण में अपनी इच्छाओं के विरुद्ध पाबन्दियों से जकड़बंद होकर, जीवन व्यतीत करना पड़ता है, वह प्रतिक्रियावादी बन जाता है। उसमें अनेक दुर्गुण आ जाते हैं, उसे हर समय अनिष्टकारी कार्यों को करने और अहितकर बातों को सोचने में एक प्रकार का सुख मिलता है। उसकी शक्तियाँ बुरे मार्ग में क्रियाशील हो जाती हैं। उसमें सद्गुणों का



अभाव रहता है। अपने घर, समाज और मंडली से तिरस्कृत होकर वह भीरु, फरेबी, द्वेषी, चुगलखोर, असहनशील तथा क्रूर बन जाता है। एक बुराई दूसरी बुराई को जन्म देती है। फलस्वरूप वह अनेक दुर्गुणों का शिकार हो जाता है। कालान्तर में उसका मनुष्यत्व भी नष्ट हो जाता है और वह बुराई-भलाई, शुभ-अशुभ, ऊँच-नीच में भेद भी नहीं कर पाता। ऐसे मनुष्य की दशा बहुत ही दयनीय हो जाती है। बड़े-बड़े अपराधी तथा दुराचारियों के अतीत का अगर हम विश्लेषण करें, तो हमें पता चलेगा कि बाल्यकाल में वे भी साधारण बच्चों के सदृश्य ही भोले-भाले और दयालु थे, परन्तु प्रतिकूल वातावरण, कठोर शासन, समाज के अत्याचार तथा दुःख के थपेड़ों ने उनकी शक्तियों को गुमराह कर दिया।

बच्चा चोर, झूठा और फरेबी क्यों बनता है—बच्चों में बहुत से दुर्गुण स्नेह के अभाव और अधिक दबाव के कारण आ जाते हैं। एक विद्वान् का कहना है कि अनभीष्ट तथा प्रेमवंचित बालक संसार में दुःखी-सा रहता है। यदि उसकी आन्तरिक शक्तियाँ प्रबल हैं तब तो उसमें विद्रोह तथा प्रतिकार की उत्पत्ति हो जायगी। उद्धतपन, चोरी, असत्य भाषण तथा अन्य ऐसे ही उपायों से अपने गुरुजनों को नीचा दिखाने, तंग करने तथा अपनी ओर आकर्षित करने में प्रयत्नशील रहेगा। ऐसे बालक प्रायः बिस्तरे पर मूत्र तथा शौच भी करने लगते हैं। इच्छा शक्ति का दुर्बल बालक हीन भावना की ग्रन्थि से पीड़ित होगा। अपने को छोटा समझने के कारण वह अपने पतन के मार्ग की ओर अग्रसर होगा।

जितना व्यय आज की सभ्य सरकारें पुलिस पर करती हैं, उसका यदि एक छोटा अंश भी बाल-अपराध के समझने वालों पर करतीं तो शायद समाज कई गुना सुखी होता। तब कदाचित् इन पुलिस और जेल-अधिकारियों का काम भी बहुत हल्का हो जाता।

बच्चा अपने संगी-साथियों को खाते-पीते और खेल-तमाशों में जाते देखता है, तो उसका भी मन होता है कि मैं भी खेलूँ, अच्छा खाना खाऊँ। पर माता कंजूसी के कारण तथा स्वास्थ्य की दृष्टि से बच्चे को पैसा खर्चने को नहीं देती। वह डाँट-डपटकर बच्चे की इच्छाओं का दमन करना चाहती है, सो बच्चा चुराकर पैसा खर्चता है, पकड़े जाने पर वह झूठ बोलता है, झूठ के खुल जाने पर वह किसी और के सिर अपराध मढ़ देता है। इस प्रकार एक के बाद वह दूसरा अपराध करता है।

आठ वर्ष का सुभाष गणित में दो बार फेल हो गया, इस पर मास्टर ने पिता जी से शिकायत कर दी और उसका जेब-खर्च बंद करवा दिया गया। सुभाष अपनी बहनों को पैसा खर्चते देखता था, तो उसका भी जी ललचाता था। उसकी बहनें शाम को जब बगीचे में खेलने जातीं, तो कभी-कभी खट्टे छोले या मूँगफली लेकर खाती थीं। सुभाष का मन भी खाने को करता था, उसने बहनों से पैसे माँगे, पर उन्होंने यह कहकर देने से इनकार कर दिया कि—"तू हमारे पैसे कैसे चुकायेगा, तेरा तो पाकेट-मनी तब तक के लिए बंद हो गया है जब तक तू गणित में पास नहीं होता, और गणित तो तुझे आता ही नहीं, सो पाकेट-मनी चालू होने की भी कुछ उम्मीद नहीं है।"

यह सुनकर सुभाष को एक तरकीब और सूझी। उसने कहा—"अगर तुम मुझे पैसे खर्चने को नहीं दोगी तो मैं माता जी से कहूँगा कि इन्होंने खट्टे छोले खाये थे। फिर देखो, कैसी डाँट पड़ती है। तुम्हारा भी पाकेट-मनी बंद करवाऊँगा।"

यह धमकी काम कर गई। अब सुभाष पर बहनों का डेढ़ रुपया उधार चढ़ गया। पर वह चुकाने से लाचार था, क्योंकि उसके पास पैसे नहीं थे। इधर बहनें

अपने पैसो के लिए तकाज़ा कर रहीं थीं। आखिरकार बहनों ने माँ से कहा—"माँ सुभाष को हमारा डेढ़ रुपया देना है, क्योंकि इसने अपने फाउंटेनपैन में ट्यूब डलवाई थी, और एक मैप ड्राइंग लाया था।"

इस प्रकार के बहाने कर बहनों ने अपने पैसे वसूल कर लिए। सुभाष ने भी सोचा पैसे प्राप्त करने का यह अच्छा तरीका है, वह हर आठवें-दसवे दिन कभी पेंसिल के बहाने, कभी रबड़ के बहाने, पैसे माँगने लगा। एक दिन उसने अपनी एक डेढ़ रुपये की कीमत की पुस्तक आठ आने में बेच दी। जब उसने पैसे खर्चे तो बहनों ने घर पर शिकायत कर दी कि आज इसके पास आठ आने थे. इसने चाकलेट खरीदी है। खोज करने पर सारी बात का जब पता चला तो माता-पिता को अपनी भूल पर पछतावा हुआ कि अगर हमने इसको ऐसी कठोर सज़ा न दी होती तो यह झूठ और बहाने-बाज़ी का आश्रय नहीं लेता। दूसरी बात बच्चो का अगर कुछ खाने को जी करे, तो वह वस्तु या तो घर पर बना दी जाय या खुद ही किसी साफ दुकान से खरीदकर लाई जाय। बच्चों को पाकेट-मनी को उचित ढग से खर्चना सिखायें। अगर आप उन्हें कभी भी पैसा खर्चने को नही देगे, तो एक तो, वह गलत ढंग से पैसा प्राप्त करने की चेष्टा करेंगे—दूसरे, उसे छिपाकर गलत ढंग से खर्च कर डालेंगे।

बच्चा जो कुछ करता है उसकी प्रेरणा वह आसपास के वातावरण से पाता है। एक विद्वान का कहना है कि सब समस्याओं के साथ लगी समस्या है—सग का प्रभाव। आज ऐसे तपोवन तो है नहीं कि वहाँ योगप्रधान समाज को वायु प्रवेश न कर सके। बालक अन्ततः बालक ही तो है—चाट और मिठाइयों की दुकानें, सिनेमाओं के गली-गली चिपके विज्ञापन और आज की पत्र-पत्रिकाएँ—बालक इसी समाज से आता है। माता-पिता के संस्कार एवं शैशव का संग उसका जैसा होता है, सभी जानते है। अब इन वस्तुओं से हम उसे बलपूर्वक दूर तो रख सकते है, किन्तु उसके मन में जो लालसा जागती है और उसे दबाने का जो मनोवैज्ञानिक प्रभाव जीवन एवं आचरण पर पड़ता है, उसकी उपेक्षा नहीं की जा सकती।

मूल कारण का पता लगायँ—भूल हर एक से हो जाती है। बच्चे के अपराध करने पर इस बात का पता लगायँ कि उसको ऐसा करने की किस बात से प्रेरणा मिली। अगर आप कारण को दूर न करके बच्चे को डाँट-डपट द्वारा सुधारने की चेष्टा करेंगे तो वह झूठ और फरेब का सहारा लेकर बचने की चेष्टा करेगा। बच्चों की सभी इच्छाएँ तो पूर्ण नहीं हो सकतीं। हाँ, उनकी उचित माँगों की पूर्ति अवश्य होनी चाहिए। घर की आर्थिक कठिनाइयों तथा अभावों को सुलझाने और मुकाबिला करने में मुन्ना-मुन्नी का भी सहयोग लें, मुसीबतों का सामना करने के योग्य उन्हें भी बनायँ। इस विषय में बड़ों का वृष्टान्त बच्चों के लिए प्रेरणात्मक होगा।

१५ वर्ष का मोहन जे० एस० डब्ल्यू० की परीक्षा में पास हो गया। परन्तु उसके पिता गरीब थे। कुल दो सौ रुपए उन्हें मासिक तनख्वाह मिल ती थी। मोहन का साल के आरम्भ में ५०० रुपए खर्चा था, बाद में हर मास लगभग चालीस रुपए खर्चा और पड़ता। माता-पिता ने सोचा कि अब अग खर्च के कारण होनहार मोहन को आगे पढ़ने से रोक दिया जायगा, तो बहुत अन्याय होगा। घर में सब ने सलाह की कि किस प्रकार इस समस्या को हल किया जाय। मोहन के पिता जी ने कहा कि मैंने साइकिल लेने के लिए ढ़ाई सौ रुपये बचाये थे, पर अब वह नहीं लूंगा। दो सौ रुपये माता जी ने वक्त-बे-वक्त के लिए बचाये हुए थे, वे निकालकर दे दिये—मोहन की बहन सीता ने भी अपने भैया-दूज और राखी आदि के चालीस रुपये जोड़े थे, वह उसने भी सहर्ष दे दिये। फिर भला दस वर्ष का मुन्नू क्यों पीछे रहने वाला था। अब केवल कुछ रुपयों की कमी और रह गई थी, रुपये जल्द जमा करवाने थे। यह देखकर मुन्नू अपने कमरे में गया और लौटकर, शरमाते हुए, उसने अपना छोटा-सा बटुआ माँ के हाथ में चुपके से थमा दिया। जब माँ ने खोलकर देखा तो उसमें पन्द्रह रुपये थे। बच्चे के लिए पन्द्रह रुपयों का त्याग पन्द्रह हज़ार के बराबर था। यह देखकर मोहन की आँखों में आँसू आ गये। माता ने छोटे मुन्नू को हृदय से लगा लिया और बोली—"बेटे ! बड़ा भैया जब पास होकर नौकरी करेगा तब तक तू कॉलेज में आ जायगा। तेरी पढ़ाई का सारा खर्च वह देगा।" घर भर के त्याग से पाँच सौ रुपयों की समस्या हल हो गई। मोहन ने भी आगे जाकर कुल तीस रुपये महीने में ही गुजारा कर लिया। इधर उसकी बहन सीता और मुन्नू ने भी पाकेट-मनी के लिए माँ से कभी भी तकाजा नहीं किया। वे जानते थे कि बड़ी मुश्किलों से पिता जी मोहन भैया के लिए तीस रुपये महीना बचा पाते हैं।

बड़ों के चरित्र की बच्चों पर छाप—बच्चे जब देखते हैं कि हमारे माता पिता भी स्वार्थी हैं, वे अपने ऊपर तो खूब खर्चते हैं, हमारे लिए ही उनकी नसीहतें हैं, पर वे स्वयं उस पर अमल नहीं करते, तो बच्चों के चरित्र में दृढ़ता नहीं आती। जिनके घर चोरबाज़ारी से कमाई आती है, उनके बच्चे तो अवश्य ही फिजूलखर्च, धोखेबाज़ और फरेबी होते हैं। धन की अधिकता के कारण वे आरामतलब, सुस्त तथा बेपरवाह भी बन जाते हैं। उनमें असहनशीलता तथा दम्भ भी पाया गया है। यही कारण है कि जिनके घर बेईमानी की अंधाधुंध कमाई आती है, उनके बच्चे चरित्रहीन और दुर्गुणी हो जाते हैं।

बच्चों पर अपने बड़ों के रोजमर्रा के व्यवहारों का भी बड़ा प्रभाव पड़ता है। आपकी छोटी-छोटी भूलें उन्हें अपराध करने की प्रेरणा देती हैं। यथा—भाजी बेचने वाला आया, माँ ने तुलवाने के पश्चात् ऊपर से एक-दो आलू चुपके से और डाल लिए;

चूड़ी वाली से चूड़ियाँ लीं, उसे भुलावे में डालकर चार चूड़ियाँ अधिक बंधवा लीं; मेहमान के लिए पन्द्रह दिन का राशनकार्ड बनवाया, पर वे शनिवार को ही चले गये, जाने पर माँ ने नौकर को कहा कि 'कल इतवार को भी राशन जरूर ले आइयो, अगले हफ्ते के राशन का फायदा हो जायगा। कोई पूछताछ करे तो कह देंगे, मेहमान इतवार को गये थे।' इसी तरह पिता जी घर में बैठे होते हैं, पर कोई अनचाहे मित्र या किराए के लिए मकान-मालिक के आने पर, मुन्ने से कहला दिया जाता है कि पिता जी घर पर नहीं हैं। किसी पड़ौसी के कोई चीज़ माँगने पर झूठे बहाने कर दिये जाते हैं। मुन्ना-मुन्नी अपने बड़ों के ऐसे व्यवहार से ही झूठ और बहानेबाज़ी का पाठ पढ़ते हैं।

हिंसात्मक वृत्ति—किसी-किसी बच्चे में ईर्ष्या, द्वेष और प्रतिहिंसा की भावना बहुत होती है। वे अपने प्रतिद्वन्द्वी के प्रति प्रशंसात्मक दृष्टिकोण न रखकर उसकी आलोचना करते हैं, चुगली और निन्दा करके उसकी शोहरत को मिटाने की चेष्टा में रहते हैं। यह प्रवृत्ति कमज़ोर और असफल बच्चों में पाई जाती है। इसका एक कारण यह भी हो सकता है कि बच्चे को ऐसी परिस्थिति में रखा गया हो कि उसे हमेशा अपने से अधिक योग्य, बड़े तथा बलवान बच्चों के साथ प्रतियोगिता करनी पड़ती हो। बच्चे के असफल होने पर माता-पिता अपने पड़ौसी के विजयी बच्चे की कटु आलोचना कर, उसके प्रति अपनी ईर्ष्या और द्वेष प्रकट करने लगते हैं। इस प्रकार बच्चा भी अपने आत्मसम्मान की रक्षा के लिए प्रतिद्वन्द्वी की सफलता को श्रेय न देकर, उसकी जीत को निर्णायकों का पक्षपात अथवा अनुग्रह बताने लगता है। माता-पिता और गुरू को चाहिए कि बच्चे को समवयस्क और समान योग्यता वाले बच्चों में ही प्रतियोगिता करने का अवसर दें। हमेशा हारने से बच्चे का आत्मविश्वास मिट जाता है।

कभी-कभी माता-पिता स्वयं भी अपने बच्चे की तुलनात्मक आलोचना करने लगते हैं। यथाशक्ति चेष्टा करने पर भी अगर बच्चे की भर्त्सना की जाय तो वह हतोत्साहित हो जाता है। अपनी सार्थकता छिपाने के लिए वह काम करने से इन्कार कर देता है। बड़ों की आज्ञा-उल्लंघन का अपराध भी करता है। इस सब का हेतु है, बच्चे से उसकी योग्यता और सामर्थ्य से अधिक आशा करना। हारकर अपने प्रतिद्वन्द्वी से वह ईर्ष्या और द्वेष करने लगता है। हिंसात्मक प्रवृत्ति जाग्रत होने पर वह उसकी निन्दा कर अथवा किसी बहाने से उससे लड़ाई छेड़कर मार-पीट करने पर उतारू हो जाता है। अगर इस प्रकार अपना क्रोध प्रकट करने में असफल रहा, तो वह मन-ही-मन कुढ़ता रहता है, उसका मिज़ाज चिड़चिड़ा हो जाता है और वह ज़रा-सी ठेस लगने पर रो देता है। मानसिक स्वास्थ्य के दुर्बल होने से, वह बड़ों की सहानुभूति प्राप्त करने के लिए कई बहानेबाज़ी करता है, काल्पनिक बीमारियाँ खड़ी

कर पढ़ाई और खेल में भाग लेने से इनकार कर देता है। ऐसे व्यक्तियों को बड़ा होकर वर्त्तमान में काम करके, भविष्य को उन्नतिशील बनाने की चेष्टा में आनन्द नहीं आता, वे तो अपने अतीत का गीत गाकर अपनी असफलता और अकर्मण्यता से बरी होना चाहते हैं, यथा—मैं तो बचपन में पढ़ने में बड़ा तेज था, अब तक पढ़ता रहता तो प्रथम नम्बर में बी० ए० पास कर लेता, पर क्या करूँ मैं तो बीमार हो गया; फिर हमारे पिता जी की इधर-उधर बदली होती रही, मैं जब से टाइफाइड से पीड़ित हुआ, मेरा स्वास्थ्य भी अच्छा नहीं रहा, इसलिए बोर्डिंग हाऊस में माता जी ने रखना उचित नहीं समझा, इन्हीं सब कारणों से मुझे पढ़ाई छोड़नी पड़ी।"

दुलार से बिगड़े बच्चे—जिस प्रकार अधिक दबाये हुए बच्चों की लुक-छिपकर अपराध करने की प्रवृत्ति हो जाती है, उसी प्रकार अधिक दुलारे बच्चे भी ज़िद्दी, दुराग्रही तथा निकम्मे हो जाते हैं। उनका सामाजिक संतुलन बिगड़ जाता है। इसलिए बचपन से ही बच्चों को बहन-भाई, संगी-साथी, अड़ौस-पड़ौस के साथ मेल-मिलाप, हेल-मेल तथा परस्पर आदान-प्रदान और सहयोगपूर्ण व्यवहार करना सिखायें। दूसरों के अधिकारों, सुविधाओं तथा सम्मान की रक्षा करना भी बच्चा देखा-देखी ही सीखता है। अगर उसके साथ बड़े धांधली करते हैं, तो वह भी अनधिकार चेष्टा करना सीख जाता है।

आलस्य और दीर्घसूत्रता—कई बच्चे अपने नहाने, खाने, कपड़े बदलने,



कहीं जाने अथवा अन्य कोई काम करने में अनावश्यक देरी करते हैं। इसके दो कारण हो सकते हैं या तो उनकी दिनचर्या दिलचस्प नहीं है अथवा उस काम के पश्चात् उन्हें

जो काम बाध्य होकर करना पड़ रहा है, उससे वे बचना चाहते हैं। कारण का पता चल जाने पर उसमें सुधार होना चाहिए। आलस और दीर्घसूत्रता की आदत अच्छी नहीं है। बड़े होकर उन्हें जब किन्हीं ऐसे लोगों के साथ काम करना पड़ेगा, जो समय का मूल्य समझते हैं तथा ठीक समय पर, नियमित समय के अन्दर काम करने के आदी हैं, तो सुस्त व्यक्ति की उनके साथ नहीं बनेगी, क्योंकि उन्हें सुस्त और टालमटोल करने वाले सहयोगी बहुत अखरते हैं। मैं एक ऐसे व्यक्ति को जानती हूँ, जो अपने सुस्त और दीर्घसूत्री स्वभाव से लाचार है। सौभाग्य से उसकी पत्नी बहुत फुर्तीली है और कल के लिए काम टाल रखना उसे बहुत नागवार लगता है। अब उनके विवाह को दस वर्ष हो गए हैं। पति की सुस्ती और दीर्घसूत्रता के कारण समय पर काम न होने से व्यापार में काफी घाटा उठाना पड़ा है। इस पर मियाँ-बीवी में आए दिन चखचख रहती है। पर मियाँ अपनी आदत नहीं सुधारता है, उल्टा अपनी असफलता को दूसरों के सिर मढ़कर छिपाने की चेष्टा में रहता है। पति कहता है, "सुबह उठते ही हर एक बात में जल्दबाज़ी मुझे पसन्द नहीं—ऐसी क्या दुनिया उलट चली है।" पर पत्नी कहती है, "अगर तुम सुबह पिछड़ गये तो दिन भर पिछड़े रहोगे। जो काम करना है, उसे समय पर कर डालो, ताकि शेष समय बेफिक्री से कटे। जब कामों का ढेर लग जाता है, तब तुम घबड़ाकर कई काम भूल जाते हो, ऐसा भी नहीं करते कि लिख-कर सूची बना लो, उस समय जल्दबाज़ी में तुम्हारा मिज़ाज भी बिगड़ा रहता है और काम भी ठीक से नहीं हो पाता। अगर कुछ समय रहते काम कर लिया करो तो अन्त में जाकर हाय-तोबा तो न मचे।" अन्त में पति झुंझलाकर कह देता है, "मैं क्या करूँ, मेरी तो आदत ही ऐसी है, बचपन से जो आदत पड़ गई वह तो पड़ ही गई है, उसके आगे मैं लाचार हूँ।"

जो बच्चे अपने काम को ठीक ढंग से यथासमय नहीं करते वह अपने स्कूल तथा खेल के मैदान में कभी भी समय पर नहीं पहुँचते। वक्त की बरबादी करने की उनकी आदत-सी पड़ जाती है। क्योंकि अपने काम में वे एकाग्रता से नहीं जुटते। उन्हें हमेशा समय का अभाव-सा बना रहता है। उनमें व्यवस्थाप्रियता का अभाव होने के परिणामस्वरूप समय पर उन्हें कोई वस्तु ही नहीं मिलती। पिछड़ जाने के कारण वे बहुत से अवसर चूक जाते हैं।

बचपन में समय पर काम करने की वृत्ति को विशेष प्रोत्साहन दिया जाय। नियमित समय के अन्दर काम करने की टेव डालने के लिए प्रतियोगिता के खेल रखें। यथा—नियमित समय के अन्दर अमुक वस्तु लेकर भागकर वापस आना, या काम समाप्त करना, अथवा बिखरी हुई चीज़ें संभालना। बच्चों को अनुभव से यह पता चल जायगा कि समय पर एकाग्रता से किया हुआ काम ठीक से और समय के अन्दर हो

जाता है, उससे सफलता और प्रशंसा भी प्राप्त होती है। पर अधिक देर लगाकर, टालमटोल करते हुए जो काम किया जाता है, वह समय पर पूरा भी नहीं होता और उसमें श्रेय भी नहीं मिलता।

भीरुता—कई बच्चे बड़े डरपोक होते हैं। उनमें साहस और चरित्रबल की कमी होती है। क्लास में किसी अन्य बच्चे को मार पड़ी या पिता जी घर पर किसी पर चिल्लाये कि डरपोक बच्चा सहम जाता है। उसके चरित्र में यह भीरुता कई कारणों से आ जाती है। यथा—पिता के डाँटने पर माँ को डरा हुआ देखकर, या मास्टर के क्रूर स्वभावी होने के कारण कि वह बिना बात के किसी भी बच्चे को पीट देता हो, या फिर दण्ड के भय से बच्चे में अपना अपराध स्वीकार करने या सच बोलने का साहस न हो।

माता-पिता का स्वभाव अगर डरपोक है, वे अगर कठिनाइयों के उपस्थित होने पर डरने लगें, ज़रा-सी विपत्ति को बड़ा समझने लगें, तो अपने बड़ों की भीरुता का बच्चे पर भी अवश्य प्रभाव पड़ता है। जब बच्चा किसी साधारण बात से डर जाय, उस समय उसके डर को सहानुभूतिपूर्वक निर्मूल प्रमाणित करने के स्थान पर बच्चे को झिड़कना या उसकी हँसी उड़ाना भी भूल है। अवश्यंभावी दुःख को सहने के लिए बच्चे की मानसिक तैयारी न करके, उसे यह कहना उचित नहीं कि 'घाव पर टिंचर के लगाने में जलन नहीं होगी, लगवालो।' बाद में जब उसे जलन होती है तो वह अपने बड़ों के प्रति अविश्वास करने लगता है। आगे जाकर उनके आश्वासन और आश्रय में उसे सुरक्षा का अनुभव नहीं होता। ख़तरे की दुविधा उसके मन मे बनी रहती है और वह मन-ही-मन डरता रहता है।

कठोरता—कई बच्चे अपने संगी-साथियों और छोटे बहन-भाई के प्रति बड़े कठोर होते हैं। इसका कारण यह हो सकता है कि घर में उनके प्रति बड़ों का व्यवहार बहुत कठोर हो, या फिर यह कि छोटे बहन-भाई माता-पिता के अधिक दुलारे हों, उन्हें अधिक सुविधा और प्रशंसा प्राप्त हो। बड़ों का अनुकूल रुख़ देखकर छोटे बहन-भाई जब अपने बड़े बहन-भाई की चीजें उनसे बिना पूछे ले लेते हैं, तो बड़े बहन-भाई इस बात का प्रतिरोध करते हैं, या छोटों की अनधिकार चेष्टा देखकर उन्हें मार भी देते हैं। ऐसे समय माता या पिता बड़े बच्चे को धिक्कारते हुए कहते हैं कि 'तुझे शर्म नहीं आती अपने छोटे भाई-बहन से लड़ते, तेरी चीज ले ली तो कौन गजब हो गया, वे छोटे हैं, नासमझ हैं।' बड़े बहन-भाई को डाँट-डपट पड़ते देख, छोटे बहन-भाई खुश होकर उन्हें चिढ़ाते हुए, धमकाते हुए कहते हैं, 'अच्छा हुआ डाँट पड़ी, अब हमें मारकर देख, तेरी शिकायत कर देंगे।' यह सब देख-सुनकर बड़े भाई-बहन के हृदय में ईर्ष्या व्याप्त हो जाती है। वह मौका पाकर अपने छोटे बहन-भाई के प्रति कठोरता से व्यव-

हार करते हैं, उनको पढ़ाते समय पीट देते हैं, या खेलते समय उन्हें पारी नहीं देते। इस प्रकार बदले की भावना उन्हें अधिक हिंसक और कठोर बना देती है। चिढ़कर उत्तेजित होने पर बड़ा भाई किटकिटाकर, तड़पकर, अपने प्रतिद्वन्द्वी पर आक्रमण भी करता है, उसे पकड़कर मरोड़ता, नोचता, गाली-गलौज करता हुआ चोट पहुँचाता है। कभी-कभी बच्चा टोली में शामिल होकर देखा-देखी कठोर व्यवहार करने लगता है। बच्चे की कठोर तथा हिंसक वृत्ति को खेल, व्यायाम तथा कठिन कामों से जूझ सफलता प्राप्त करने में लगाना चाहिए, ताकि उनका सदुपयोग हो जाय और उनकी तीव्रता मिट जाय।

चिड़चिड़ेपन और हीनता की भावना—उपेक्षित बच्चों का स्वभाव बहुत नाजुक हो जाता है। उनके दुःखी हृदय में ज़रा-सी बात की ठेस लगने से वह रोने लगते हैं। अपना पक्ष दुर्बल पाकर वे मन-ही-मन कुढ़ते तथा अप्रसन्न रहते हैं। प्यार-दुलार से सन्तुष्ट बच्चे जिन बातों की परवाह भी नहीं करते, वे ही मामूली-सी बातें नाजुक मिज़ाज और दुःखी बच्चे को विचलित कर देती हैं। उसमें स्फूर्ति और दिलचस्पी का अभाव रहता है। दूसरों की आलोचना का मुकाबिला करने या अपनी योग्यता प्रदर्शित करने की एक तो उनमें हिम्मत ही नहीं होती, दूसरी बात यह है कि उनमें दबे रहने के कारण हीनता की भावना घर कर जाती है—'मैं वहाँ कैसे जाऊँ, कोई रोक-टोक देगा, मेरे कपड़े भी अच्छे नहीं हैं, मुझे वहाँ कोई पूछेगा भी नहीं।' एक उपेक्षित बच्चा प्रायः इस प्रकार सोचता है और वह चार आदमियों के बीच में जाने, बोलने अथवा सामाजिक जीवन में भाग लेने से डरता है। अपने पिछले कटु अनुभव और निरादर को याद कर वह मेल-मिलाप बढ़ाने में भी हिचकता है। उसे अपना अभाव तथा अपमान मानसिक क्लेश देने लगता है। अपनी कमियाँ उसे कचोटती हैं, अपनी की हुई गलतियों का स्मरण कर वह लज्जित होता है। वह यह नहीं समझ सकता कि गलतियाँ करके ही सब आगे बढ़ते हैं। 'वे लोग मेरी ओर ही ताक रहे हैं, अवश्य मुझ पर ही हँस रहे हैं, मेरी ही आलोचना हो रही है', मंडली के बीच में होने पर बस इसी प्रकार की शंकाएं उसके हृदय को मथती रहती हैं। उसका मानसिक तनाव ढीला नहीं हो पाता, वह उधेड़-बुन में ही अपने मन को अशान्त बना लेता है। प्रतिक्रियारूप जो अपने से विद्या, बुद्धि, रूप, गुण आदि में कम हैं उन लोगों के बीच में शोखियां मारकर उसे विशेष सन्तोष होता है। उनकी संगति उसे विशेष रुचिकर होती है। कारण वे उसकी खुशामद करते हैं। इस प्रकार आत्मप्रशंसा करके तथा खुशामद करवाकर उसको एक विशेष प्रकार की तृप्ति होती है। अपने जिन बहन-भाइयों और मित्रों की सफलता और व्यक्तित्व के आगे उसे बबना पड़ता है, उनकी वह निन्दा और आलोचना करके विशेष प्रसन्न होता है। वह ऐसे मौकों की ताक में रहता है जब कि दूसरों को साधन बनाकर, अपने

प्रतिद्वन्द्वियों को शारीरिक या मानसिक दुःख पहुँचाया जा सके।

हीनता की भावना को दूर करें—बच्चे मे इस प्रकार असामाजिक वृत्ति जाग्रत न हो इसके लिए यह आवश्यक है कि जो बच्चा रूप-रंग या बल में न्यून अथवा पढ़ाई में पिछड़ा हुआ है, उसको अपना कोई अन्य गुण विकसित करने की प्रेरणा दी जाय, यथा—गाने, पेंटिंग अथवा अन्य किसी कला में अथवा खेल मे वह अधिक उन्नति कर जाय, जिससे उसे हीनता की भावना न कचोटे। अगर वह विकृत अंगी है, तो उस ओर ध्यान न देकर वह समाज मे अपने मधुर और हँसमुख स्वभाव के कारण लोकप्रिय बनने की चेष्टा करे। जो बच्चे घर मे बहुत लाड़ले तथा सुरक्षित रहते है, वे जब बाहरी दुनिया से बरतते है, तब उन्हें पता चलता है कि घर-सदृश्य प्रधानता उन्हें बाहर नहीं मिलती। इस पर वे हीनता अनुभव करने लगते है। अतएव माँ-बाप को बच्चों को दुलार और मान-सम्मान से इतना भी नहीं सिर चढ़ाना चाहिए कि वे बाहरी दुनिया से अपने को उपेक्षित अनुभव करें और सरलता से हेल-मेल न बढ़ा सकें।

अधिक कड़ाई, आदेशों मे सादृश्यता का अभाव, घर का प्रतिकूल वातावरण, बड़ों का बुरा उदाहरण, आर्थिक कठिनाइयाँ आदि बातें ऐसी है कि बच्चे में उनके कारण अनेक दोष आ जाते है। वे बहानेबाज, आलसी, जिद्दी, बिगाड़ू, बेपरवाह, फिजूलखर्ची या अधिक कजूस, असहनशील, तुनकमिजाज आदि बन जाते है। बच्चे में जब भी कोई दोष दिखाई पड़े, उसके कारण को अवश्य खोजना चाहिए अन्यथा सुधार होना कठिन है।

चरित्रविषयक् इन दोषों के अतिरिक्त बच्चों में कुछ कुटेव भी पड़ जाती है—यथा—नाखून कुतरना, अँगूठा चूसना, ओठ चबाना, कमीज का कालर चूसना आदि। कई माताएँ अपनी सुविधा के लिए बच्चे को चूसनी या अंगूठा चूसने की आदत खुद ही डाल देती है। यह आदत सोते समय दूध की बोतल मुंह में लगी रहने से भी पड़ जाती है। काफी उम्र तक ऐसे बच्चे जब कोई बात सोचते या सोते समय अँगूठा मुंह में दे लेते है। आरम्भ में ही यह आदत, रात को हाथों में थैलियाँ पहनाकर, छुड़ा देनी चाहिएँ। नहीं तो बच्चे का तालू ऊपर उठ जाता है और मुख का आकार बिगड़ कर दाँत बाहर निकल आते है। दिन के समय बच्चे के हाथों को व्यस्त रखा जाय। इसी प्रकार गलत ढंग से बैठना और चलना, आँख-मुंह मटकाकर बातचीत करना, या तुतलाकर बोलना, हकलाना, विचित्र प्रकार की भाव-भंगी करना आदि दोष धीरता और प्रयत्न से ही छुड़ाये जा सकते है। इसमें प्यार और प्रोत्साहन देकर बच्चे का सहयोग प्राप्त किया जाय।

अवगुणों और बुरी आदतों के कारण बच्चे का चरित्र और व्यक्तित्व दोषपूर्ण हो जाता है, और बाद में बड़े होकर वह भी अपने स्वभाव और आदतों से लाचार हो

जाता है। उनके कारण उसे अपने सामाजिक जीवन में बडी कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है, पर इच्छा होते हुए भी वह उन्हें छोड नहीं पाता। इसलिए माता-पिता और गुरू का यह कर्तव्य है कि बच्चे का पालन-पोषण और शिक्षण ऐसे सुन्दर ढंग से हो कि उसके चरित्र का विकास बहुत ही सन्तोषजनक हो, जिससे उसका व्यक्तित्व प्रभावशाली बन सके।

एक अनुभवी पिता का कथन है कि बालक हमारे राष्ट्र के अतीत, वर्तमान और भविष्य तीनो का समाहार है, और वही बालक आज मूर्च्छित है, अचेत है। न उसे पता है, न उसके अभिभावक जानते है और न राष्ट्र के नेताओं को ज्ञान है कि उसे कहाँ जाना है, क्या बनना है, कैसे और क्या ढलना है। इसीलिए हलचलों और आन्दोलनों के इस तूफान में भी, जहाँ वाणी आज सबसे सस्ती हो गई है, कुछ हो नहीं पाता है। राष्ट्र का रथ आगे बढ़ नहीं पा रहा है क्योंकि राष्ट्र की आत्मा आज सो गई है, मूर्च्छित है।

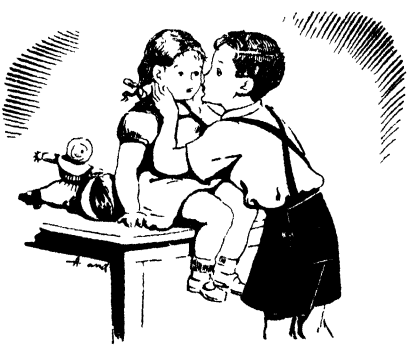
चौतीसवाँ अध्याय

सद्गुणों का विकास

'बालक ही राष्ट्र की आधारभित्ति है। उनके विकृत हो जाने से राष्ट्र-का-राष्ट्र पतित एवं निकम्मा बन जाता है। आजकल तो गंदे साहित्य, उपन्यास, नाटकों, कहानियों, मासिक-साप्ताहिक-दैनिक पत्रों, उनके अश्लील चित्रों, विज्ञापनों तथा चलचित्रों आदि द्वारा अधिकांश चारित्रिक पतन बढ़ते जा रहे हैं। कहना न होगा कि बालकों पर उन के माता-पिता द्वारा भी उपर्युक्त वस्तुओं के उपयोग का प्रभाव पड़ता है। बालक ही राष्ट्र की निधि हैं। उन्हीं में से ही विद्वान्, बलवान्, धर्मनिष्ठ, ब्रह्मनिष्ठ, योगी, सिद्ध तथा स्व-पर-कल्याणकारी बनने वाले हैं। अतः उनके निर्माण और रक्षण में अधिक सावधान होना आवश्यक है। सर्वप्रथम माता, पिता, समाज एवं राष्ट्र को अपना आचार-विचार तथा वातावरण शुद्ध बनाना आवश्यक है। साहित्य, नाटक, सिनेमा, विज्ञापनादि में क्रान्तिकारी परिवर्तन करना होगा। शिक्षा और शिक्षकों का परिष्कार भी सर्वप्रथम आवश्यक है। सत्-शिक्षा से ही सद्बुद्धि, सद्बुद्धि से ही सदिच्छा और तदनन्तर ही सत्प्रयत्न और सत्फल सम्भव होगा।

—स्वामी करपात्री जी महाराज

बड़ों का अनुकरणीय उदाहरण—प्रत्येक माता-पिता की यह इच्छा होती है कि उनकी सन्तान सदाचारी तथा सद्गुणी हो। वे सत्यप्रिय, दृढ़प्रतिज्ञ, दयालु, ब्रह्मचारी, आत्मविश्वासी, परोपकारी, स्नेहशील, परिश्रमी, सहनशील, ईमानदार तथा आत्मनिर्भर हों। परन्तु उनके चाहने मात्र से तो बच्चे में वे गुण नहीं आ सकते। उसके लिए तो बचपन से ही बच्चे की नियमित और स्वस्थ दिनचर्या, प्रसन्नतापूर्ण और प्रेरणात्मक वातावरण, बड़ों का अनुकरणीय उदाहरण तथा चेष्टाएँ होनी आवश्यक है। बड़े यह समझते हैं कि हम बड़े हैं, घर की व्यवस्था और नियम बनाने का हमें अधिकार है, छोटे बच्चों को हमारे व्यवहार और दिनचर्या में बाधा उपस्थित करने तथा उसकी आलोचना करने का कोई अधिकार नहीं। ठीक है, डरकर चाहे बच्चे प्रकट रूप से चुप रहेंगे, परन्तु



आपके सभी कथनों और कर्मों की छाप उसके चरित्र पर धीरे-धीरे उतरती रहती है। मानो बच्चा आपके सद्-असद् कार्यों का आइना है। अतएव घर में बच्चे की उपस्थिति एक चेतावनी है कि 'संभलकर व्यवहार करो, मुझे देखो, मैं कितना स्वच्छ, पवित्र और प्राकृतिक हूँ, मेरे मन में विकार नहीं, मेरे कार्यों में हिंसा नहीं, मुझ से ही तुम कुछ सीख लो।'

कवियों ने कहा है—'बच्चा मनुष्य का पिता है, गुरू है, आदर्श है।' पर यह कहने भर से काम नहीं चलेगा, उस पर अमल करना चाहिए। मनुष्य कितने विपरीत ढंग से व्यवहार करता है, वह अपनी मूर्खतावश, अहंकारवश, प्रत्यक्ष और परोक्ष रूप से बच्चे के निर्मल हृदय में भी झूठ, फरेब, स्वार्थता, हिंसा, ईर्ष्या, द्वेष, आदि विकार उत्पन्न कर उसको गुमराह करता रहता है और अपने इस कार्य में सफलता मिलती ख वह गौरव के साथ कहता है—'ओहो ! अब मेरे बच्चे होशियार हो गये है, उन्हें दुनियादारी आ गई है, वे व्यवहार-कुशल बन चले है। अपनी बुराई-भलाई, हित-अहित परखना सीख गये है।' यह तो वह बात रही कि दुमकटे कुत्तों के समुदाय में एक झब्बेदार दुमवाला कुत्ता अगर पहुँच जाय, तो वह बदसूरत गिना जाता है।

आज संसार में छल, प्रपंच और धोखेबाजी का बाजार गर्म है, परन्तु मानव समाज इस पाप के बोझ के नीचे कराह रहा है। सभी अनुभव करते है कि घरों में, स्कूलों में, कालिजों में, संस्थाओं में, समाज, देश, यहाँ तक कि संसार भर में, लोग मर्यादा उल्लंघन कर रहे है। सभी ओर हाय-तोबा मची हुई है, पर भेड़चाल सदृश्य सभी उसी दिशा को चले जा रहे है। इस बीमारी का इलाज, इस बुराई का सुधार होना चाहिए, घरों मे अर्थात् बच्चों के प्रति हम अपने कर्तव्य तथा जिम्मेदारी को समझे। परमात्मा की इस महान् धरोहर के प्रति अगर हम कर्तव्यशील रहें तो हमारे बच्चों के सदाचारी होने में कोई संदेह नहीं है।

बच्चे की महानता उसके बाल रूप में छिपी है। डा० वासुदेवशरण अग्रवाल के शब्दों में—बालक अमृत का सेतु और अजर प्राण का केतु है। बालक के मन में मृत्यु की कल्पना नहीं होती। बालक के चैतन्य मे मृत्यु का अनुभव नहीं होता। प्राण और जीवन की ओजायमान ओजस्वी धारा बालक में बहती है। बालक का मन अमृत का ऐसा कुंड है, जो कभी विषाक्त या विकृत नहीं होता। यही सृष्टि की बड़ी आशा है। प्रत्येक शती में मानव-जाति पुनः बाल, पुनः युवा और पुनः वृद्ध बनती है। काल के जरा-जीर्ण अंश से भूल होने के लिए वह पुनः-पुनः बालभाव में आती रहेगी, यही जीवन का स्वर्ण विज्ञान है। व्यक्ति और राष्ट्र को चाहिए कि अपने ही कल्याण के लिए उमंगकर बालभाव की उपासना करें।

सुसंस्कार बनायँ—जैसा मैने पहले ही कहा कि बच्चे में सात्विक वृत्तियों

का विकास हो इसके लिए तो माता-पिता को गर्भाधान के समय से ही चेष्टाशील होना चाहिए। माता के व्यवहार और विचारों का गर्भस्थ बालक पर बड़ा प्रभाव पड़ता है। इसलिए माता की दिनचर्या और परिजनो का सहयोग ऐसा हो कि माता की मानसिक और शारीरिक स्थिति प्रसन्न और सन्तोषजनक रहे। जन्म के पश्चात् बच्चे की दिनचर्या को उसके शारीरिक और मानसिक विकास के अनुकूल बनाने का भार माता पर है। इस कार्य मे परिजनों को भी माता को पूर्ण सहयोग देना चाहिए, ताकि वह शिशु-पालन का कार्य प्रसन्नता और सुविधा के साथ कर सके। माँ अगर गृहस्थी की अनेक जिम्मेदारियों से परेशान है, अगर वह पूरे मन से शिशु-पालन में सहयोग नहीं दे सकती तो बच्चे का भी मिज़ाज बिगड़ा रहता है, वह प्रसन्नतापूर्वक अपनी दूध पीने, सोने, खेलने आदि क्रियाओं को नहीं कर पाता। बस पालने में ही उसके चरित्र में दोष प्रकट होने लगते है। वह रोदू, अधीर, अस्थिर, डरपोक, गुस्सालु, तथा बदमिज़ाज प्रतीत होने लगता है। जब बच्चे की दिनचर्या मे खलल पड़ता है; जब माँ झुंझलाकर उसे एक ओर पटककर पिता की आज्ञा-पालन या घर का काम करने चल देती है; जब बड़े बहन-भाई उसे एक खिलौना समझ कभी घुड़ककर, कभी डराकर, कभी पुचकारकर, उसका एक तमाशा बनाते है; और उसके हित चाहने वाले उसे पाबन्दियों से जकड़-कर उसको काबू में रखने की चेष्टा करते है; तो प्रतिक्रियारूप बच्चा भी रोकर, मचलकर, बीमारी का ढोंग रचकर सहानुभूति प्राप्त करने की चेष्टा करता है। इस का मतलब यह हुआ कि वातावरण उसे अच्छाई से बुराई की ओर धकेल देता है।

आत्मविश्वास—डरे हुए, दबाये हुए बच्चे में आत्मविश्वास नहीं रहता। वह हर समय दूसरों के सहारे का आसरा ताकता है। बड़ों को चाहिए कि बच्चे की योग्यता और सामर्थ्य को समझकर उस पर जिम्मेदारी छोड़ें। आरम्भ में जितनी देर



बच्चा एकान्त मे प्रसन्नतापूर्वक खेल सके उसे खेलने दिया जाय। 'हाय अकेले में उसे कुछ हो न जाय, कहीं वह गिर न पड़े, अरे कहीं वह कोई चीज़ उठाकर सिर मे न

मार ले,' इत्यादि भयोत्पादक तथा अविश्वासपूर्ण उद्‌गारों द्वारा माताएँ अपने बच्चे के आत्मविश्वास को हिला देती है। 'यह मत छू', 'वहां मत जा', 'संभलकर चीज़ उठा', 'गिर न पड़ना', 'वहाँ तुझे कहीं कुछ हो न जाय'—अभिभावकों के ऐसे कथन बच्चे को बहादुर और आत्मविश्वासी नहीं बनने देते। बच्चा जब कभी खेल के मैदान से चोट लगा आये, माता-पिता को चाहिए कि आवश्यक मलहम-पट्टी तो अवश्य कर दें, परन्तु इसके लिए बच्चे को डाँटें-डपटें नहीं। खेल-कूद में लग ही जाती है। चोट खा कर ही बच्चे अपने बल का अन्दाज लगा पाते है। आगे के लिए कितना साहस करना चाहिए या कितना जोखिम उठाना चाहिए, इसका उन्हे स्वयं ही पता चल जाता है।

माता-पिता को हर समय अपने बच्चे को अपनी आँचल की ओट में रखकर सुरक्षित अनुभव करने की चेष्टा नहीं करनी चाहिए। परिजनों का प्रेम, प्रशंसा और सहयोग ही उसे सुरक्षा का अनुभव कराने के लिए पर्याप्त है। परन्तु उसे कार्य तथा निर्णय करने की स्वतन्त्रता होनी चाहिए। वह अपना अवकाश का समय किस प्रकार के मनोरंजन या हॉबी में लगाये, अपना पाकेट-मनी कैसे खर्चे, कौनसे खेल-खेले, क्या रंग चुने, किस विषय में अधिक दिलचस्पी ले, इस विषय में उसे स्वतन्त्रता होनी चाहिए। माता-पिता पथ-प्रदर्शक का काम करें, अगर बच्चे में योग्यता होगी, उसकी ओर रुझान होगी, तो उसे आपका सुझाव रुचिकर लगेगा। अन्यथा उसकी योग्यता और रुझान को देखकर आप अनुकूल सुविधाएँ जुटाएँ, आगे बढ़ने की प्रेरणा दे, अड़चनो को हल करने में सहयोग दें। बच्चा अपने निर्णय और आत्मविश्वास का जब सम्मान करना सीख जायगा, तो वह अपनी पूरी कोशिश करके सफलता प्राप्त करने की चेष्टा करेगा। अपने जीवन मे प्रयोगों को अजमाने की बच्चे को भी स्वतन्त्रता दी जाय। बच्चा जो नसीहत अनुभव से प्राप्त करता है, वह सौ उपदेशों से अधिक प्रभावशाली होती है।

आत्मनिर्णय—जिन बच्चों को अपनी योग्यता को अजमाने का मौका मिलता है वे धनवान, पर निर्णय में परनिर्भर बच्चों से जीवन में अधिक सफल होते है। जिन बच्चों को स्वयं सोच-विचारकर कोई निर्णय करने का अधिकार नहीं मिलता, वे अपने निर्णय में परनिर्भर हो जाते है। उनके व्यक्तित्व का विकास ही नहीं होता। बड़े होकर भी वे माँ के आँचल से बंधे-से रहते हैं। ऐसे बच्चों को कई माँ-बाप बहुत ही आज्ञाकारी तथा विनम्र समझते हैं। 'हमारा मुन्ना हमारी अनुमति लिए बिना कुछ नहीं करता, वह तो ऐसा है कि पानी की घूंट भी हमारी आज्ञा के बिना नहीं पियेगा,' यह वे बहुत गौरव के साथ कहते हैं।

ऐसे ही एक भोले लड़के से मेरी एक सखी का विवाह हुआ है। यह लड़का अभी पढ़ता ही था जब कि उसका विवाह हो गया था। माता-पिता ने बच्चे की निर्णयात्मक बुद्धि पर यहाँ तक अधिकार किया हुआ था कि वह उनकी आज्ञा के

बिना अपनी पत्नी से बात भी करने का साहस नहीं कर पाता था। विवाह से पहले उसने जब एक-दो बार कहा कि 'मैं अभी विद्यार्थी जीवन में विवाह नहीं करना चाहता,' तो माता-पिता ने उसके इस निर्णय की खूब धज्जियाँ उडाईं, "क्या बक रहा है ? हमारा जब विवाह हुआ था, हम १२-१३ वर्ष के थे, तू तो अब २३-२४ वर्ष का हो गया, फिर क्या बूढ़ा होकर विवाह करेगा ? तब भला बहू को हमारे पास रहने, हमारे घर में घुलने-मिलने का कब अवसर मिलेगा, तेरे सिर पर कौन बहू की जिम्मेदारी डालता है, तू तो अपनी पढ़ाई में मन लगाए रख। यह न हो कि अभी तो शादी की मनाही कर रहा है, फिर बहू के पीछे बावला हो जाय कि लोक-लाज खोकर उसी के पास बैठा रहे, या पढ़ाई में मन ही न लगे। आजकल की लड़कियाँ चिट्ठियाँ भी खूब लिखती हैं, लड़कों का मन ही पढ़ाई से उचट जाता है, सो हम ऐसा व्यवहार पसन्द नहीं करेंगे।"

खैर, लड़के की एक न चली और विवाह हो गया।

लड़की ने उसी साल मैट्रिक किया था, वह स्वयं यह बात सोच रही थी कि पति से सलाह करके मैं भी अपनी पढ़ाई चालू रखूँ। कुछ मास बाद जब मैं उससे मिली तो उसने अपनी कहानी सुनाई, उसको सुनकर मैं तो इस निर्णय पर पहुँची कि उसके पति में स्वयं निर्णय करने की बुद्धि ही नहीं है। बाल्यकाल से ही माता-पिता के अधिक दुलार और मोह ने उसे ऐसा जकड़बंद कर रखा है कि उसको निर्णय करने या स्वयं क्रिया करने का अधिकार ही नहीं दिया। फलस्वरूप आज उसकी नकेल उसके माता-पिता के हाथ में है। विवाह के पश्चात् उसकी दशा बहुत ही शोचनीय हो गई है। क्योंकि बिना माता-पिता की आज्ञा के वह अपनी पत्नी से मिल भी नहीं सकता, न ही उसको साथ लेकर किसी सामाजिक कार्य में भाग ही ले सकता है। यहाँ तक कि जब उसकी पत्नी ने पीहर से उसे पत्र लिखे, तो उसने डरते-डरते जवाब तो दे दिये, पर बाद में जब उसके पिता को यह पता चला कि लड़का बहू को हमारी आज्ञा के बिना पत्र लिखता रहा है तो पूछे जाने पर, डरकर, वह साफ मुकर गया। इससे उस की पत्नी उसको बहुत दुर्बल-चरित्र समझने लगी। उसे इस बात का बड़ा अफ़सोस है कि उसका पति स्वावलम्बी नहीं है, वह स्वयं निर्णय करने का अधिकार खो बैठा है। पति को अन्याय का प्रतिरोध करने तथा निर्णयात्मक बुद्धि अपनाने की प्रेरणा देने के कारण, बहू अपने सास-ससुर की नज़रों में रड़कने लगी। इधर उसका भीरु पति सिर झुकाकर चुपचाप सब सहता रहा, परन्तु कुछ कहने की हिम्मत नहीं कर सका। अब आत्माभिमानी बहू तथा दम्भी सास-ससुर में संघर्ष छिड़ गया है।

बहू ने पीहर आकर अपनी पढ़ाई चालू रखी। आज इस बात को दस वर्ष हो गये, आखिरकार माता-पिता के अन्याय से तंग आकर लड़के का मन उनकी ओर

से फट गया। इधर एक अच्छी बहू को मास-ससुर ने सब तरह से बदनाम करने की चेष्टा करके, अपने कुल की बदनामी भी करवाई, साथ ही अपने छोटे लड़के और लड़की पर भी बुरा प्रभाव डाला। छोटा लड़का अपने बड़े भाई की यह दुर्दशा देख पहले ही से सावधान हो गया, वह अपने माँ-बाप को मुंह पर ही कोरी-कोरी सुनाता है। लड़की भी इतनी कुसस्कारी हो गई है कि बदनामी हो जाने के कारण उसकी अब शादी ही नहीं होती है। इस प्रकार माता-पिता ने अपनी मूर्खता और अनधिकारप्रियता से सब बच्चों का चरित्र व जीवन बिगाड़ दिया।

जो बच्चे निर्भय तथा साहसी होते है, वे ही सत्यनिष्ठ, निष्कपट और आत्माभिमानी भी होते है। दबे हुए, डराये हुए तथा सम्मान, अधिकार, स्नेह और सुविधाओं से वंचित बच्चे डरपोक, छली, झूठे और प्रपंची निकल जाते है। बच्चा सच बोले, ईमानदारी से व्यवहार करे तथा न्यायप्रिय हो, इसके लिए उसे बड़ो के उदाहरण से प्रेरणा मिलती है। वे जब अपने माता-पिता को चार आदमियों में झूठी शेखियाँ मारते, अपनी स्वार्थ-सिद्धि के लिए झूठ बोलते तथा दबाव मे आकर खुशामद और और आदर्शों के विरुद्ध व्यवहार करते देखते है, तो वह भी वैसा करने की प्रेरणा पाते है।

एक विद्वान् का कथन है कि सभी बालक शुद्ध होते है, योग-सिद्ध अवस्था उनको सहज ही सिद्ध रहती है। सभी मे दिव्य भाव प्रारम्भ में बालपन में रहता है, पर जैसी जिसको शिक्षा मिलती है, वैसा ही वह आगे बन जाता है—यह सबको स्मरण रखना चाहिए और अपने से जितनी उत्तम शिक्षा देना सम्भव हो, उतनी उत्तम शिक्षा बालकों को देनी चाहिए।

सत्य की उपासना—बच्चा जब कुछ उत्सुकता और जिज्ञासावश कोई प्रश्न करता है, तो उसकी समझ के मुताबिक ठीक उत्तर देकर उसकी जिज्ञासा-वृत्ति को विकसित करना चाहिए। कई बार बच्चे के कौतूहलवश कुछ पूछने पर माता-पिता डाँट-डपटकर या झूठी बात कहकर, उसे चुप कराने की चेष्टा करते है। जिज्ञासा-वृत्ति के वशीभूत होकर ही बच्चा अन्वेषण और साहस के कार्यों में दिलचस्पी लेता है। अपना कौतूहल मिटाने तथा जानकारी प्राप्त करने के लिए ही वह खिलौनों को तोड़ता-मरोड़ता है, उन्हें उखेड़कर फिर जोड़ने की चेष्टा करता है। परन्तु अधिकांश बच्चों को ऐसा करने पर मार पड़ती है, और वे सजा के डर से झूठ भी बोल देते है।

अगर बड़े बच्चे के शासक न होकर सच्चे स्नेही, हितषी और मित्र के सदृश्य व्यवहार करें, तो बच्चा भी अपनी योग्यता और असमर्थता स्वीकार कर, अपनी असफलता में माता-पिता का सहयोग प्राप्त कर, यथाशक्ति उन्नति करने की चेष्टा

करेगा। माता-पिता को चाहिए कि फल को महत्त्व न देकर बच्चे के प्रयत्न की सराहना करें। बच्चा नन्हा-मुन्ना है उसके काम करने का ढंग, रफ़्तार और समझ सभी उसकी आयु के अनुसार है। वह बड़ों के सदृश्य अभी हद तक सफलता नहीं प्राप्त कर सकता। अतएव आशाजनक सफलता न मिलने पर अगर आप बच्चे की भर्त्सना करते है, तो यह आपका अन्याय है। अगर आपका व्यवहार बच्चे के प्रति सच्चा है; उससे की हुई प्रतिज्ञाओं को आप निभाते है; उसे भुलावे मे नहीं डालते है; अगर आप अपने दैनिक व्यवहार मे अपने वचन और कर्मों मे सामंजस्य रखकर कार्य करते है; तो आपका बच्चा भी सत्यनिष्ठ होगा।

बच्चा अपनी रचनात्मक वृत्ति को तृप्त करने, अपने कौतूहल को मिटाने और अपनी कल्पना को साकार देखने के लिए अनेक चेष्टाएँ करता है। अगर उसकी इन चेष्टाओं को प्रोत्साहन दिया जाय तो वह वैज्ञानिक, अन्वेषक, नृत्यकार, चित्रकार, कहानीकार, संगीतज्ञ आदि बन जाता है। 'ऐसा करने से क्या होगा?' 'इसके आगे क्या है?' 'ऐसा करूँ तो कैसा लगेगा?' 'यह मिटा दूँ, यह जोड़ दूँ, तो फिर क्या रूप होगा?' इस प्रकार के विचार बच्चे को कुछ करने की प्रेरणा देते है और वह कार्यशील बन जाता है, उसकी बुद्धि का विकास होता है, वह जिज्ञासावश यथार्थता तक पहुँचने की सच्चाई को खोज निकालने की चेष्टा में लीन हो जाता है। यही सत्य की सच्ची उपासना है। परन्तु कितने बच्चों को ऐसी उपासना करने की प्रेरणा दी जाती है? अधिकांश बच्चे रट्टू तोते के सदृश्य दूसरो के उपदेशो और कार्यों को दोहरा भार देते है। 'हमारे बड़ों ने ऐसा किया, उन्होंने ऐसा कहा, किताबो मे ऐसा लिखा है, दुनिया इसी राह चल रही है, इसीलिए यह हमारे लिए भी आँख मींचकर अनुकरणीय है।' अधिकांश बच्चों को इसी प्रकार सोचना और करना सिखाया जाता है। बापू के सदृश्य सच का पुजारी युगों के बाद ही कोई निकलता है। उपदेशक तो संसार मे बहुत होते है, परन्तु पैगम्बर या अवतार वे ही माने जाते है, जो सचाई की कसौटी पर अपने जीवन को भी कसकर खरा प्रमाणित कर दें।

माता-पिता का कठोर और अन्यायपूर्ण व्यवहार जब बच्चे को भयभीत कर देता है, तो वह सच्चाई से विमुख होकर झूठ और बहानेबाज़ी की शरण लेता है।

ब्रह्मचर्य का विकास—बच्चा जैसे-जैसे बड़ा होता है, शरीर की बढ़त के साथ-ही-साथ उसमे काम-वासना की भी उत्पत्ति होती है। अन्य शारीरिक शक्तियों के सदृश्य काम-शक्ति भी एक महत्त्वपूर्ण शक्ति है। इस विषय मे बच्चे की उत्सुकता को बहुत सुन्दरता के साथ शान्त करना चाहिए। उसके प्रश्न को 'गंदी बात' कहकर भुलाने की चेष्टा नहीं करनी चाहिए। माँ का दुलार, पिता का प्यार, संगी-साथियों की प्रशंसा की चाहना तथा अपने से भिन्न सेक्स की सगति के प्रति आकर्षण, सजने-

संवरने का शौक, अपने रूप और गुणों की प्रशंसा सुन प्रसन्न होना आदि बातें इस बात का प्रमाण है कि बच्चे में स्वस्थ काम-वृत्ति का विकास हो रहा है। अगर आप उन्हें रोकेंगे तो वह विपथगामी हो जायगा। बच्चे को ब्रह्मचारी बनाने के लिए यह आवश्यक है कि उसके प्रेम-भावना की तृप्ति हो, उसके जीवन में पर्याप्त मनोरंजन की सामग्री हो, उसकी सौन्दर्यप्रियता को सन्तुष्ट करने के लिए कला की सच्ची उपासना सिखाई जाय। उसे अपनी वेशभूषा और रहन-सहन में पवित्रता, सफाई और व्यवस्था-प्रिय बनायें। उसमें वीर-पूजा की भावना पैदा करें, ताकि अपना ध्येय और आदर्श बनाने में उसे सरलता हो। वह अपना प्रेम, आराधना तथा सम्मान और भक्ति, उस पूजनीय व्यक्ति पर उंडेल सके, जिससे उसे अपने जीवन को आदर्श बनाने की प्रेरणा मिलती है।

खाली दिमाग में ही बुरे विचार चक्कर मारते हैं। बच्चे के विचारों को पवित्र रखने के लिए यह बहुत आवश्यक है कि उसे मनोरंजक कार्यों में व्यस्त रखा जाय। उसे स्वस्थ और सच्चरित्र बनने की प्रेरणा दी जाय। उसे भक्ति और त्यागपूर्ण प्रेम तथा वीररस की कहानियाँ सुनाई जायें ताकि उसका प्रेम वासना से अछूता रहे, पर साथ ही उसे प्रकाशित करने का सही मार्ग का पता चल जाय। बच्चा जब छोटा होता है उसकी ममता के केन्द्र उसके माता-पिता तथा बहन-भाई ही होते हैं। जैसे-जैसे वह बड़ा होता है अपने संगी-साथी तथा गुरू को अपना आदर्श बना लेता है। बच्चे के चरित्र के विकास में इन सभी का बड़ा हाथ होता है। इनके व्यवहार और आदर्शों की बच्चे के चरित्र पर परोक्ष और प्रत्यक्ष रूप से छाप पड़ती रहती है। अतएव माता-पिता को इस बात की भी सावधानी रखनी चाहिए कि बच्चा किसी बुरे व्यक्ति के प्रभाव में न रहे। जिस बच्चे में आत्मसम्मान की भावना होगी, जो आदर्श का पुजारी होगा, जो कुल और संस्था के सुनाम को महत्त्व देता होगा, वह बालक अपने चरित्र को कभी भी नहीं गिरने देगा।

एक ओर माता-पिता जहाँ बच्चे के शारीरिक स्वास्थ्य की ओर सजग रहते हैं वे उसके मानसिक स्वास्थ्य को परखने की भी चेष्टा नहीं करते। जिस प्रकार शारीरिक बल शारीरिक स्वास्थ्य की भित्ति पर खड़ा रहता है, उसी प्रकार चरित्रबल की आधार शिला मानसिक स्वास्थ्य है। वह जितना मज़बूत होगी, बच्चे का चरित्र भी उतना ही दृढ़ होगा तथा उस में सद्गुणों का स्वाभाविक विकास होगा। सन्तोषजनक विकास अनुकूल वातावरण पर ही निर्भर है और इस वातावरण को पैदा करने का भार माता पिता पर है।

स्वभाव में लोच पैदा करें—बच्चे की योग्यता और सद्गुणों की कसौटी उसके स्वभाव की लोच। मनुष्य की जीवन-यात्रा संघर्षपूर्ण है। उसमें कर्मयोगी

सफलता प्राप्त कर सकते हैं। दुर्बल मनुष्य परिस्थितियों का दास बन जाता है, परन्तु कर्मशील व्यक्ति परिस्थितियों से जूझकर उन्हें गढ़ता और संवारता है। ऐसा मनुष्य अपने साथ दस अन्यों को भी तार देता है। बच्चों में इसी योग्यता को पैदा करना, सच्ची शिक्षा है। इसके लिए धीरता, सहनशील तथा दूरंदेशी और व्यवहार-कुशलता चाहिए, दूसरों का सहयोग प्राप्त करके, सफलता की ओर बढ़ने की दृढ़ता चाहिए। यह तभी सम्भव है जब मनुष्य में लीडरशिप हो, वह निस्वार्थ तथा चरित्रवान हो। अपने से पहले दूसरे की सोचे। जीवन को सुखी बनाना एक कला है। अगर कोई मनुष्य असन्तोषी है, वह हर समय अपने ही अभाव और असफलता का रोना रोकर सहानुभूति प्राप्त करने की चेष्टा करता है, तो वह अपने सहयोगियों के लिए एक भार बन जाता है। जहाँ घर का वातावरण ऐसा हो कि बड़ों का व्यवहार बच्चों को परस्पर सहयोग से काम करना, वर्तमान को सुन्दर बनाने की चेष्टा तथा अनिवार्य विपत्तियों का धीरता के साथ सामना करने का पाठ पढ़ाये, वहाँ बच्चों में सद्गुणों का विकास होते देर नहीं लगती, वे सच्चे कर्मयोगी बनते हैं। उनके जीवन में हाय! हाय! कभी नहीं मचती।

बचपन के संस्कार—पवित्रता, सफाई, व्यवस्थाप्रियता, समय पर काम करने की आदत आदि बातें भी बच्चे बचपन से सीखते हैं। यह आदतें अभ्यास से पड़ती हैं। अगर शिशु-काल से बच्चा साफ-सुथरे ढंग से पला है, अगर उसकी दिनचर्या नियमित रखी गई है, तो अभ्यस्त होने के कारण वह बड़ा होकर भी सफाई और व्यवस्थाप्रिय होगा तथा समय पर काम करने का आदी होगा।

'सफाई सबसे जरूरी चीज़ है। बच्चों में स्वच्छ रहने की आदत डलवानी चाहिए। उनका आचार-व्यवहार सुन्दर होना चाहिए। वे रोज दाँतों को साफ करें, स्नान करें, बालों को कंघी करें, नाखून साफ रखें, साफ कपड़े पहनें और अपने पास रूमाल रखें। उन्हें सिखाया जाय कि शौच के लिए नियत स्थान ही इस्तेमाल करें। भोजन करने से पहले हाथ धोयें। खाने की चीज़ों पर मक्खियाँ न बैठने दें, और जिन वस्तुओं पर मक्खियाँ बैठी हों उन्हें न खायें। व्यायाम जरूर करें। माता-पिता को चाहिए कि बच्चों को पौष्टिक तत्त्व वाला भोजन दें, उनके स्वास्थ्य के प्रति जागरूक रहें और बीमार होने पर तुरन्त डाक्टर से सलाह लें।

'कहने का अभिप्राय यह है कि बीमारी के प्रति सजग रहने और बच्चों को साफ रखने से बीमारी से बहुत कुछ रक्षा हो सकती है। न सिर्फ़ यही, बल्कि शरीर स्वस्थ रहने से मानसिक उन्नति भी होती है। मन स्वस्थ होता है, अगर शरीर स्वस्थ रहे।'

—राजकुमारी अमृतकौर

शिष्टतापूर्ण व्यवहार का पाठ भी बच्चे अपने बड़ों से ही सीखते हैं। इसका अभ्यास दिखाने के लिए नहीं करवाना चाहिए। दैनिक जीवन में जो शिष्टता सिखाई जाती है, उसी से संस्कार पड़ते हैं।

प्रेम बच्चों का मानसिक भोजन है, उसके अभाव में वह मुरझा जाते हैं। प्रेम के कवच से सुरक्षित होकर ही बच्चा असहाय होता हुआ भी बादशाहों का बादशाह माना गया है। जो बच्चे बाल्यकाल में प्रेम से वंचित रहते हैं, जिनके अधिकार और सम्मान को कुचल दिया जाता है, प्रशंसा के स्थान पर जिन्हें हमेशा तुलनात्मक आलोचना ही सुननी पड़ती है, जिन्हें बड़ों की धाँधली के कारण अपना बचपन एक अभिशाप-सा दिखता है, ऐसे बच्चे ही प्रतिक्रियावादी होकर नृशंस, कठोर, हिंसात्मक और स्वार्थी बनते हैं। जिन्हें प्रेम, विश्वास और सेवा मिली ही नहीं, भला वे दूसरों को ये सब कहाँ से दे देंगे ?

मानवता का पाठ पढ़ायें—बच्चा स्वभाव से दयालु होता है, वह जब किसी जीव-जन्तु को कष्ट में देखता है, उसके हृदय में ममता उमड़ आती है। और वह उसे मदद करना चाहता है। 'हटा-हटा इस कुत्ते को,' 'अरे, यह भिखमंगे यहाँ क्यों इकट्ठे कर लिए ? ये माँगने वाले सब चोरों के भेदिये हैं, इन्हें देखकर दरवाजा बन्द कर लिया करो,' माता-पिता के ऐसा कहने पर मुन्ना दया और सुरक्षा इन दो के पाट में आ जाता है। जब बच्चे घर आकर अपने माता-पिता से अपने गरीब संगी-साथी की बात बताते हैं, कि 'उन्हें दिन में एक बार भी पेट भरकर भोजन नसीब नहीं होता, या उनके पास सर्दी से बचने के लिए एक फटा स्वेटर भी नहीं है अथवा किताबें खरीदने के लिए पैसे भी नहीं है,' तब भला कितने माँ-बाप अपने बच्चों को उस गरीब साथी की मदद करने, अपने भोजन, या कपड़े अथवा जेब-खर्च में से हिस्सा बटाने का प्रोत्साहन देते हैं ? बहुत हुआ तो मौखिक सहानुभूति भर दिखाकर वे अपना फ़र्ज़ अदा कर देते हैं।

यही समय है कि बच्चों को त्याग का पाठ पढ़ाया जाय। वे अपने जेब-खर्च में से कुछ बचाकर, या अपना एक पुराना स्वेटर देकर अपने साथी की मदद करें। समर्थ रहते हुए किसी को क्षमा कर देना, अभाव न होते हुए भी त्यागपूर्ण जीवन बिताने की चेष्टा करना, मानवमात्र के प्रति दया, यही तो यथार्थ धर्म-शिक्षा है; ईश्वर की सच्ची उपासना है। धर्म के नाम पर नित्य स्नान, सफाई, व्रत-उपवास, दान-धर्म आदि का असली महत्त्व यही है कि मनुष्य पवित्रता, त्याग और सेवा का पाठ पढ़े। अपने बच्चे को इसी मानवधर्म की शिक्षा दी जाय। ताकि वे ऊँच-नीच, गरीब-अमीर, छूत-अछूत आदि भेदभाव को भूलकर स्कूलों में सहपाठियों के संग मानवमात्र के प्रति प्रेम करना सीखें। तभी आगे जाकर वे देश के सच्चे सिपाही और कर्त्तव्यशील नागरिक बन सकेंगे।